Ekottarasati—101 Select Poems of Rabindranath Tagore in devanagari transliteration with explanatory notes. Frontispiece: Self-portrait in colour by Rabindranath. Sahitya Akademi, New Delhi (1958). Price: *de luxe* edition, Rs. 10; ordinary, Rs. 8.

विश्वभारती प्रकाशन विभाग के सौजन्य से
प्रस्तुत संस्करण का प्रकाशन
प्राप्तिस्थान :
राजकमल प्रकाशन (प्राइवेट) लि०
फैजबाजार, दरियागंज, दिल्ली
मुद्रक :
श्री शैलेन्द्रनाथ गुहराय,
श्री सरस्वती प्रेस लि०, कलकत्ता ९
मूल्य :
विशेष संस्करण १० रुपया
सामान्य संस्करण ८ रुपया

भूमिका

रवीन्द्रनाथ उन साहित्य-स्रष्टाओं में हैं जिन्हें काल की परिधि में बाँधा नहीं जा सकता। केवल रचनाओं के परिमाण की दृष्टि से भी कम ही लेखक उनकी बराबरी कर सकते हैं। उन्होंने एक हज़ार से भी अधिक कविताओं तथा दो हज़ार से भी अधिक गीतों की रचना की है। इनके अलावा बहुत-सारी कहानियाँ, उपन्यास, नाटक तथा विविध विषयों (जैसे धर्म, शिक्षा, राजनीति और साहित्य)-संबंधी निबंध उन्होंने लिखे हैं। एक शब्द में उन सभी विषयों की ओर उनकी दृष्टि गई है जिनमें मनुष्य की अभिरुचि है। रचनाओं के गुणगत मूल्यांकन की दृष्टि से वे उस ऊँचाई तक पहुँचे हैं जहाँ कभी ही कभी कुछ ही महान् व्यक्ति पहुँचे हैं। जब हम उनकी रचनाओं के विशाल क्षेत्र और महत्त्व का स्मरण करते हैं तो इसमें आश्चर्य नहीं मालूम पड़ता कि उनके प्रशंसक उन्हें इतिहास में शायद सबसे बड़ा साहित्य-स्रष्टा मानते हैं।

किसी प्रतिभावान महान व्यक्ति के आविर्भाव का कारण बतलाना कठिन है, क्योंकि वे साधारण से व्यतिक्रम ही होते हैं। साथ ही प्रतिभावान व्यक्ति की यह भी विशेषता होती है कि वे जाति के अवचेतन या अर्द्धचेतन मन को अनुप्रेरित करने वाले आवेगों और भावनाओं को रूप देते हैं। इस प्रकार अपनी जाति के साथ उनका एक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। इसीसे यह बात समझी जा सकती है कि जब प्रतिभाशाली व्यक्ति का आविर्भाव होता है तब लोग क्यों श्रद्धा और आश्चर्य से उसका अभिनंदन करते हैं? जनचित्त उसके शब्दों और कार्यों में अपनी उन भावनाओं और आशा-आकांक्षाओं का मूर्त्त रूप पाता है जिनके हल्के-से स्पन्दन का अनुभव तो उसने किया है, लेकिन उसे व्यक्त नहीं कर सका है। प्रतिभावान व्यक्ति भी इस प्रकार के संबंध से लाभान्वित होते हैं। जाति के मस्तिष्क को अनुप्रेरित करने वाली अपरिपक्व भावनाओं और अस्पष्ट आशा-आकांक्षाओं से वह शक्ति

ग्रहण करता है। इन दोनों ही दृष्टियों से रवीन्द्रनाथ प्रतिभा के अनूठे नमूने हैं। उनकी असाधारणता के सम्बन्ध में कोई प्रश्न ही नहीं उठता। लेकिन साथ ही, साधारण लोगों के जीवन से भी, जिन्हें उन्होंने प्यार किया था और जिनके लिए वे जिए थे, उनका संबंध गहरा और घनिष्ठ था।

अपने जन्म के स्थान और काल की दृष्टि से भी रवीन्द्रनाथ सौभाग्यशाली थे। पश्चिमी जातियों के आगमन ने भारतीय जीवन की शान्त धारा में आलोड़न पैदा कर दिया था और समस्त देश में एक नये जागरण का संचार हो रहा था। इसके प्रारम्भिक धक्के ने भारतीय मानस में चकाचौंध पैदा कर दी थी और उस काल के प्रारम्भिक सुधारकों को पश्चिम का अन्धानुयायी वना दिया था। रवीन्द्रनाथ का जन्म तव हुआ जब प्रथम-प्रथम की यह अन्ध श्रद्धा खत्म हो रही थी, लेकिन पश्चिमी जातियों के लाए हुए आदर्श अभी भी क्रियाशील और शक्तिशाली थे। साथ ही विरासत में पाए हुए भारतीय मूल्यों के स्वीकार की प्रवृत्ति भी बढ़ती जा रही थी। इसलिए यह काल एक ऐसी विशिष्ट प्रतिभा के आविर्भाव के लिए उपयुक्त था, जो अपने में पूर्वी और पश्चिमी मूल्यों का समन्वय कर सके।

केवल काल ही नहीं वल्कि स्थान भी उनके उपयुक्त था। भारतवर्ष के अन्य भागों की अपेक्षा संभवतः बंगाल ने इस धक्के का अधिक अनुभव किया था। बंगाल में भी जीवन के इस नये स्पन्दन का प्रभाव सव से ज्यादा कलकत्ता में ही दीख पड़ा। रवीन्द्रनाथ की प्रतिभा के विकसित होने में उनका पारिवारिक वातावरण भी सहायक था। इनका परिवार भी भारतीय जागरण के अग्रदूतों में था। उसने प्राचीन विरासत को छोड़े विना ही नये ज़माने की इस चुनौती को स्वीकार किया था। ब्राह्मण होने के नाते रवीन्द्रनाथ ने प्राचीन भारतीय परंपराओं को वड़े सहज और स्वाभाविक ढंग से अपना लिया। वे केवल साहित्य से ही प्रभावित नहीं हुए, वल्कि संस्कृति में पिरोए धार्मिक और सांस्कृतिक आदर्शों से भी। वे भूस्वामी-वर्ग के थे, इसलिए

मध्ययुगीन मुग़ल दरबार की मिश्र संस्कृति को विना किसी हिचक के स्वीकार कर सके थे। उन दोनों बातों में उन दिनों के अन्य ब्राह्मण ज़मींदारों से वे संभवतः भिन्न नहीं थे, लेकिन उनमें से वहुतों के विपरीत आधुनिक जगत् की नई धाराओं के प्रति भी वे सचेतन थे। प्राचीन और मध्ययुगीन भारतीय परंपराओं से सरावोर उनका परिवार एक ही साथ पाश्चात्य शिक्षा और जीवन-प्रणाली के अग्रणियों में भी था। रवीन्द्रनाथ की भारतीय विरासत अत्यंत समृद्ध थी और उनके मन में व्यक्त या अव्यक्त द्विधा या द्वन्द्व नहीं था। उनकी पारिवारिक पृष्ठ-भूमि को ध्यान में रखा जाय, तो इस बात को समझना कोई मुश्किल न होगा। उनका समंजस व्यक्तित्त्व उस भेद-भाव से मुक्त था जो उनके वहुतेरे समकालीनों की शक्ति का ह्रास कर रहा था।

सचमुच रवीन्द्रनाथ इस विषय में भाग्यशाली थे कि प्राचीन और मध्यकालीन भारतीय मूल्यों को विना छोड़े ही उन्होंने नवीन की चुनौती स्वीकार कर ली। जो लोग अपनी ही संस्कृति से विमुख हो चले थे और पश्चिम से प्राप्त प्रेरणा पर ही अधिक निर्भर रहने लगे थे, वे जातीय जीवन से उखड़-से गये। इसीसे उनकी प्रेरणाओं के स्रोतों में कमी हो गई और उनकी आध्यात्मिक पूँजी का ह्रास हो गया। यही कारण है कि उनमें से अनेक, प्रतिभाशाली और गुणज्ञ होने के वावजूद, भारतीय जीवन और साहित्य पर गहरा और स्थायी प्रभाव नहीं डाल सके। प्रतिभावान महान व्यक्ति जाति की अन्तरतम अनुप्रेरणाओं के साथ अपने-आपको एक करके जो शक्ति प्राप्त करता है, उसका उन लोगों में अभाव था।

एक और दूसरी चीज़ थी जिससे रवीन्द्रनाथ को जन-जीवन के साथ अपने-आपको एक करने में सहायता मिली। जीवन के प्रारंभिक काल में पद्मा नदी के दियारों पर वे महीनों एक बजरे में रहे और इस प्रकार से देश की ग्रामीण संस्कृति के बड़े निकट संपर्क में आए। देश के उस अंचल में जीवन की जो अनुभूति उन्हें हुई, उसका मूल देश के आदिम और प्राचीन इतिहास में था। मध्ययुग में पनपने वाली

नागरिक संस्कृति से कहीं अधिक गहराई तक यह संस्कृति लोगों के जीवन में अपनी जड़ें जमा चुकी थी। इस प्रकार से रवीन्द्रनाथ ने एक ऐसे जगत् में प्रवेश पाया जिससे शहर के लोग अपरिचित होते हैं। जातीय चेतना के कुछ गंभीरतम तलों में उनकी जड़ें जमीं। साधारण लोगों के भरे-पूरे जीवन का संस्पर्श ही उनकी अशेष सृजनी शक्ति के मूल में है और यही कारण है कि उन्हें प्रेरणा-शक्ति की कभी कमी नहीं हुई।

रवीन्द्रनाथ के जीवन और उनकी रचनाओं पर विचार करते समय उनकी प्रतिभा की अद्भुत जीवनी-शक्ति से बार-बार चकित हुए बिना कोई नहीं रह सकता। वे प्रमुख रूप से कवि थे, लेकिन उनकी दिलचस्पियाँ कविता तक ही सीमित नहीं थीं। साहित्य के विविध क्षेत्रों में उनकी देन का संकेत हम पहले ही कर चुके हैं। साहित्य को यदि हम व्यापकतम अर्थ में भी लें, तो भी हम पाते हैं कि यह क्षेत्र उनकी समस्त उद्दामता को समेट नहीं सकता। वे संगीतज्ञ तथा बहुत बड़े चित्र-शिल्पी भी थे। इसके अलावा धर्म और शिक्षा-संबंधी तत्त्व-चिंतन, राजनीति और सामाजिक सुधार, नैतिक उत्थान और आर्थिक पुनर्निर्माण के क्षेत्रों में भी उनकी देन बड़े महत्त्व की है। वस्तुतः इन क्षेत्रों में इनका कार्य इतने महत्त्व का है कि वे आधुनिक भारत के निर्माताओं में गिने जा सकते हैं।

जीवन को पूर्ण और अविभाज्य इकाई मानने में ही रवीन्द्रनाथ की शक्ति निहित है। आदर्शों अथवा संस्कृतियों के द्वंद्व या विखंडन में उनकी शक्ति को कभी भी विभाजित नहीं किया। इसलिए इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि कला और जीवन को उन्होंने अलग-अलग नहीं माना। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में सौन्दर्य-शास्त्र के एक नये सिद्धान्त ने यूरोप पर आधिपत्य जमा लिया था। बहुत लोग ऐसे थे जिनका कहना था कि कला के उद्देश्य से ही कला को अपनाना चाहिए; यह कोई ज़रूरी नहीं कि जीवन से उसका संबंध हो ही। हवाई महल या गजदंत-मीनारें ही कलात्मक प्रयासों के प्रतीक और नमूने बन गई थीं। इस

सिद्धान्त के पुजारी कहने लगे थे कि कवि और कलाकार सर्व प्रथम स्वप्नचारी हैं। रवीन्द्रनाथ ने इस मत को कभी भी स्वीकार नहीं किया कि कला जीवन से विच्छिन्न है। उन्होंने सौंदर्य को ढूँढ़ा तो, लेकिन जीवन की अभिव्यक्ति के रूप में ही। साथ ही उनका यह भी विश्वास था कि जीवन में माधुर्य तब तक नहीं आता जब तक कि वह सौन्दर्य से स्निग्ध न हो जाय। रवीन्द्रनाथ की दृष्टि में कवि-धर्म ही मानव-धर्म है।

(२)

रवीन्द्रनाथ संसार के श्रेष्ठतम गीति-कवियों में गिने जाते हैं। संवेदनाओं की सचाई और भाव-चित्रों की सजीवता उनके पदों के संगीत से मिल कर एक ऐसे काव्य की सृष्टि करती है कि शब्दों के भूल जाने पर भी पद-संगीत पाठक के मन को विभोर किये रहता है। संवेदना, भाव-चित्र और संगीत का इस प्रकार से घुल-मिल जाना उनके प्रारंभिक जीवन से ही दीख पड़ने लगता है। 'निर्झरेर स्वप्नभंग' की रचना उस समय हुई जब वे बीस वर्ष के भी नहीं थे; लेकिन वह आज भी बंगला, और यदि सच पूछा जाय तो किसी भी भाषा की श्रेष्ठतम गीतियों में है। यह कविता केवल अपने संगीत और तीव्रता के कारण ही विशिष्ट नहीं है, बल्कि अपने भाव-चित्रों की सबलता के कारण भी है। और शायद इससे भी महत्त्व की बात यह है कि इसमें प्रकृति और मनुष्य को एकता के ऐसे योग-सूत्र में बाँधा गया है जो कभी टूटने वाला नहीं है। प्रकृति और मनुष्य का यह सायुज्य रवीन्द्रनाथ के काव्य की एक बहुत बड़ी विशेषता रहा है और यह बात उनमें उनके समस्त जीवन बनी रही।

धरती को इतने प्राण-पण से प्यार करने वाला कोई दूसरा कवि शायद कभी नहीं हुआ। रात या दिन अथवा ऋतु-चक्र की शायद ही कोई भावभंगी या मुहूर्त ऐसा होगा, जिसका गान रवीन्द्रनाथ नें अपनी कविता में नही गाया हो। उनके काव्य के जादू ने बंगाल के दृश्य रूपों की छवि और उसकी ध्वनियों के दृश्यों को बारंबार अपने भीतर उतार-

उतार लिया है। कालिदास के ज़माने से ही भारतीय कवियों ने वर्षा ऋतु का गुण-गान अपूर्व उल्लास के साथ किया है। अपने सैकड़ों गीतों और कविताओं में रवीन्द्रनाथ ने वर्षा के बदलते रूपों का चित्रण किया है। वास्तव में वर्षा-ऋतु-संबंधी उनके गीत और उनकी कविताएँ हमारी जातीय विरासत का एक अंग हो गई हैं। वर्षा के आगमन के ठीक पहले झुलसी हुई धरती की प्रतीक्षा, पहले-पहल के दौंगरे के बाद भींगी मिट्टी से उठती सौंधी सौंधी गन्ध, नई-नई उगी घास के हरे अंकुरों में प्राणों का स्पन्दन, काले-काले बादल जो प्रातःकालीन स्वच्छ प्रकाश को धुँधला कर देते हैं तथा सायंकालीन छाया में जादू भर देते हैं, रात्रि की स्तब्धता में पड़ती वर्षा की अविराम टप टप; ये तथा सैकड़ों अन्य चित्र रवीन्द्रनाथ के मुग्धकारी काव्य में प्राणवान हो-हो उठते हैं। उनमें उन्होंने मानव-हृदय के सुख-दुःख का ताना-बाना बुन दिया है। यहाँ तक कि प्रकृति और मनुष्य एक-दूसरे की मनोदशा को प्रतिबिंबित करने लगते हैं और उनका पार्थक्य ओझल हो जाता है।

रवीन्द्रनाथ ने दूसरी ऋतुओं को भी आँखों से ओझल नहीं होने दिया। शरद् और वसन्त के भिन्न-भिन्न भावों का चित्रण उन्होंने किया है। नव वसन्त का उद्दाम उन्माद, शिशिर ऋतु का बन्धनों से मुक्ति पाने का भाव, क्षिप्र गति से फूट-फूट उठे रंग और ध्वनियाँ आदि उनकी वहुत-सी कविताओं और गीतों में प्रतिबिंवित हैं। उनमें केवल वसन्त का आनन्द और शक्तिमत्ता ही नहीं बल्कि उसकी अनित्यता और क्षण-भंगुरता के भाव भी प्रतिफलित हुए हैं। पूर्णता और परिपक्वता के भाव लिए शरत् का मेघ-धुला आकाश रवीन्द्रनाथ की वहुत-सी कविताओं में विशेष रूप से प्रकट हुआ है। उनके एक अत्यन्त सफल गीति-नाट्य की रचना शरद् को ले कर ही हुई है, जिसमें कार्यसंकुलता के बोझ से मुक्ति पाने का भाव है। शीत और ग्रीष्म-काल को भी उन्होंने नहीं भुलाया। अपनी एक सुप्रसिद्ध कविता में रवीन्द्रनाथ ने ग्रीष्म को एक ऐसा कठोर तपस्वी माना है, जो साँसें रोके नवजीवन के आविर्भाव की प्रतीक्षा कर रहा है।

रवीन्द्रनाथ को धरती से इतने अटूट बन्धन में केवल प्रकृति-सौन्दर्य ने ही नहीं बाँधा। उन्होंने धरती को इसलिए भी प्यार किया कि वह मनुष्य की वासस्थली है। अनगिनत कविताओं और गीतों में उन्होंने मनुष्य के प्रति अपने प्रेम को उँड़ेला है। मनुष्य के हृदय की शायद ही कोई ऐसी संवेदना हो जिसने उनके हृदय को स्पंदित नहीं किया। सुख-दु:ख से भरे मानव की गहन प्रेम-लीला की हज़ारों अभिव्यक्तियाँ कुछ ऐसे शब्दों में केलासित हो गई हैं कि जिन्हें कभी भुलाया नहीं जा सकता। नैराश्य, मन की व्यथा तथा निष्फल प्रतीक्षा की असह्य पीड़ा का सजीव चित्रण पाठक को विस्मय में डाल देता है। उन्होंने मनुष्य के भावावेगों के चिरन्तन साथी के रूप में भी प्रकृति को चित्रित किया है। वे जानते थे कि जीवन नाना संघर्षों और प्रचेष्टाओं से भरा हुआ है और यह संसार त्रुटियों से रहित नहीं है, लेकिन उनका विश्वास यह भी था कि त्रुटियों, दोषों, क्लेशों और लालसाओं के कारण हमारा यह सांसारिक जीवन मनुष्य के लिए और भी प्रिय हो उटता है।

रवीन्द्रनाथ ने संसार को केवल ऐसा रंगमंच ही नहीं माना, जहाँ मनुष्य जीवन में पूर्णता प्राप्त करने का प्रयास करता है, वल्कि उसे स्नेहमयी माँ के रूप में भी देखा है, जो जीवन के विविध अनुभवों में सारगर्भित अर्थ खोजने की साधना में लगे मनुष्य की निगरानी करती रहती है। रवीन्द्रनाथ कोई संन्यासी नहीं थे, और न ही वह कोई सुख-विलासी या इंद्रिय-सर्वस्ववादी ही थे। एक ओर तो उन्होंने उस आदर्श का जान-बूझकर प्रत्याख्यान किया, जो शरीर-धर्मों और नानाविध भोगों को अस्वीकार करता है, तथा दूसरी ओर उन्होंने केवल इंद्रिय-सुख या केवल भोग-लिप्सा को ही सब-कुछ कभी नहीं माना। जीवन के सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति की साधना में सतत लगे रहने को ही वे जीवन का वास्तविक गौरव मानते थे। जीवन की इस परिपूर्णता को पाने की यह आकांक्षा बार-बार उनकी कविताओं में प्रकट हुई है। 'वसुन्धरा' नामक अपनी कविता में उन्होंने

पृथ्वी के भरे-पूरे जीवन और सृष्टि की आदिम शक्ति के उफनते ज्वार के साथ मनुष्य के अंतरंग संबंध का गीत गाया है। अपनी एक सुप्रसिद्ध गीति 'स्वर्ग हइते विदाय' (स्वर्ग से विदाई) में उन्होंने उच्छ्वास-रहित शान्त स्वर्ग-सुख के साथ सांसारिक जीवन के अजस्र सुख-दुःख के ज्वार-भाटों की तुलना की है। रवीन्द्रनाथ ने हमें किसी प्रकार के भ्रम में नहीं रहने दिया कि वे किस जीवन को अधिक पसन्द करते हैं।

रवीन्द्रनाथ मुख्यतः गीतिकार ही हैं, लेकिन उनके प्रकृति-प्रेम और जीवन के वैविध्य के साथ उनकी अन्तरंगता ने उनकी बहुत-सी कविताओं में एक सुसमृद्ध नाट्य-गुण ला दिया है। रवीन्द्रनाथ के गंभीर मानव-धर्म और न्याय के लिए उनकी आकुलता को देखते हुए इस बात में कोई आश्चर्य नहीं कि वह सामाजिक एवं राजनीतिक विषयों की ओर भी आकृष्ट हुए। किसी प्रकार का कोई विशेष अनुभव भले ही सामयिक क्यों न रहा हो, लेकिन जिसको भी उन्होंने छू दिया है वह एक ऊँचे दरजे पर पहुँच गया है और सार्वभौम हो गया है। अपने ही लोगों के पूर्वग्रहों और कुसंस्कारों के खिलाफ़ उन्होंने कुछेक कटु व्यंग्यों की रचना भी की है। लेकिन उन रचनाओं में शायद ही कोई ऐसी हों जिनमें उनके भीतर की मानवता उनके रोष और क्रोध के स्तर से ऊपर न उठ गई हो। यहाँ तक कि उनकी देशभक्ति-पूर्ण कविताएँ भी समग्र मानव जाति की भावना से अनुप्रेरित हैं। रवीन्द्रनाथ के लिए देश-प्रेम एक सहज गुण था जिसमें अपने देश और देशवासियों के लिए प्रेम तो था, लेकिन दूसरे देश-वालों के प्रति घृणा या हिंसा-भाव नहीं था, और इस प्रकार से वह देश-प्रेम नकारात्मक कभी नहीं था। इसका एक अत्यन्त सुन्दर उदाहरण उनकी कविता 'गुरु गोविन्द' में मिलता है। इसमें अपने देश तथा देशवासियों के लिए उनका गंभीर प्रेम समग्र मानव जाति के प्रति प्रेम की गहराई में उतर आता है। रवीन्द्रनाथ ने इस बात को कभी भी स्वीकार नहीं किया कि जिसमें मानवीय तत्त्व है वह भी कभी उनके लिए विदेशी हो सकता है। अपनी सुप्रसिद्ध कविता

'प्रवासी' में उन्होंने कहा है कि सभी जगह मेरा घर है और संसार के सभी हिस्से में मेरा देश है। समग्र मानव-जाति के साथ एकात्म-बोध का यह भाव बड़े सुन्दर ढंग से हमारे राष्ट्रीय गीत में प्रकट हुआ है। इसमें रवीन्द्रनाथ ने भारत-भाग्य-विधाता के रूप में समस्त संसार के जनगणमन-अधिनायक का आह्वान किया है।

मनुष्य के प्रति रवीन्द्रनाथ का यह प्रेम अनजाने तथा अपरिहार्य रूप से भगवान् के प्रति प्रेम का रूप ले लेता है। हम यह देख चुके हैं कि उनकी कल्पना में जीवन की अभिरुचि का जो विकसन हुआ है, उसमें प्रकृति और मानव एकाकार हो गए हैं। उन्होंने यह कभी भी नहीं सोचा कि भगवान् मनुष्य के जीवन से दूर और अलग की वस्तु हैं। उनके लिए प्रेम ही भगवान् था। सन्तान के प्रति माता का वात्सल्य अथवा प्रेमिका के प्रति प्रेमी का प्रेम उस महत् प्रेम के उदाहरण-मात्र हैं और यह प्रेम ही परमात्मा है। और यह प्रेम केवल रहस्यवादी भाव-विह्वलता में ही नहीं प्रकट होता वल्कि साधारण मनुष्य की नित्य-प्रति की जीवन-यात्रा में भी प्रकट होता है। रवीन्द्रनाथ ने बार-बार कहा है कि जीवन के सहज साधारण संबंधों में और नित्य-प्रति की उस कार्यावलि में, जिन पर कि संसार टिका हुआ है, भगवान् को प्रत्यक्ष करना चाहिए। इसमें कोई सन्देह नहीं कि रवीन्द्रनाथ वैष्णव काव्य और सूफ़ी-रहस्यवाद से अत्यधिक प्रभावित थे। उनकी कविता और उनके गीत ऐसे भाव-चित्रों से भरे हैं तथा उनका वक्तव्य विषय कुछ इस प्रकार का है कि हमें रहस्यवादियों के भावोल्लास की याद आ जाती है; लेकिन साथ-साथ उनमें दिन-प्रतिदिन की जीवन-यात्रा की वास्तविकताओं के प्रति भी एक तीव्र जागरूकता है। उनके शब्दों और वाक्यांशों में प्रकाशन-भंगी की एक ऐसी यथार्थता है जो व्यक्तिगत अनुभव के विना संभव नहीं। संवेदना के चित्रण की बारीकियाँ प्रकृति के भिन्न-भिन्न भाव-रूपों से इस प्रकार घुल-मिल गई हैं कि संसार के काव्य-साहित्य में वैसा चित्रण कम ही देखने को मिलता है।

उनके रहस्यवादी काव्य की विशेषता की कुछ चर्चा कर लेनी चाहिए। जब 'गीतांजलि' का अंग्रेजी अनुवाद पहले-पहल प्रकाशित हुआ, तब युद्ध से जर्जर और तिक्त बने संसार में इसके प्रेम और शान्ति के संदेश के लिए पश्चिमी देशों ने इसका खूब ज़ोरों से स्वागत किया। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उस पतले-से संस्करण की कविताएँ एक गंभीर शान्ति की भावना से ओत-प्रोत हैं।

इस पुस्तक में रवीन्द्रनाथ की कविता का जो विषय है, वह हमारी दैनंदिनी अभिज्ञता से ही लिया गया है। उनकी भाषा बोल-चाल की और भाव-चित्र सरल हैं। फिर भी सौंदर्य और सुदूर के इंगित का एक ऐसा गुण उनमें निहित है, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। यूरोप तथा अमेरिका के पाठकों के लिए ये कविताएँ आश्चर्य-मिश्रित हर्ष उत्पन्न करने वाले एक नये आविष्कार–जैसी थीं। लेकिन रवीन्द्रनाथ की रचनाओं को मूल बंगला में पढ़ने वाले पाठकों के लिए ये कविताएँ उनकी प्रारम्भिक रचनाओं की स्वाभाविक परिणति-मात्र थीं। प्रकृति और मनुष्य के प्रति उनका प्रेम अनजाने भाव से भगवान् के प्रति उनके प्रेम में विलीन हो गया था। उनके निजी जीवन की गंभीर व्यथा ने उनके भाव-चित्रों और वक्तव्य विषय को अत्यन्त मधुर और गहन बना दिया था। उनके अनुभव के विकास-क्रम ने उन पर यह द्विधा-रहित सत्य प्रकट कर दिया था कि जीवन मात्र रहस्य से आवेष्टित है। मनुष्य-जीवन की करुणा और विस्मय ने उनकी रचनाओं में एक नई सहानुभूति और मर्मस्पर्शिता ला दी थी।

रवीन्द्रनाथ की, अंतिम दिनों की, बहुत-सी गीतियों की एक विशेषता यह रही है कि वे अत्यन्त सहज-सरल हैं। प्रारंभिक काल की अपनी रचनाओं में उन्होंने संस्कृत के बहुत-से प्रसंगों और ध्वनि-साम्यों का अधिक-से-अधिक प्रयोग किया है। बहुत सी कविताओं में प्राचीन भारतीय साहित्य की वस्तु-योजना और भावभंगी का समावेश हो गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उन्होंने पुराने को

नये साँचे में ढाला है, लेकिन फिर भी यह समझने में भूल नहीं हो सकती कि सुसमृद्ध भारतीय पुराण-साहित्य से उसका गहरा सम्बन्ध है। मनुष्य और परमात्मा के प्रति निवेदित अपनी कविताओं में उन्होंने सभी प्रकार के अलंकरण का परित्याग कर दिया है। मनुष्य की साधारण-से-साधारण परिस्थिति का भी उपयोग उन्होंने सत्य की अपनी अनुभूति को अभिव्यक्त करने के लिए किया है। उनकी भाषा भी सर्व-साधारण की भाषा-जैसी सहज, सरल और स्पष्ट हो गई है। वाद के इन वहुत-से गीति-काव्यों और गीतों में हम अनुभूति के सामीप्य का साक्षात्कार अनुभव करते हैं। शव्द विलकुल पारदर्शक और स्वच्छ हो गए हैं। विशुद्ध संगीत की ध्वनियों की नाईं उनमें ऐसी सवलता और स्पष्टता आ गई है, जिससे हम वहुधा अवाक् रह जाते हैं।

हम यह भी नहीं भूल सकते कि रवीन्द्रनाथ अपने समस्त जीवन में सत्य के निर्भीक और सच्चे खोजी रहे। उनकी वुद्धि के तेज ने प्रवंचना और पाखण्ड के वाह्य दिखावटी स्वरूप को, जिसका निर्माण हम अपने दैन्य को छिपाने के लिए करते हैं, छिन्न-भिन्न कर दिया है। उनकी रचनाओं की ऊर्जस्विता और शौर्य वाले गुण से वे लोग वहुत दूर तक अपरिचित ही हैं, जिन्होंने उन्हें मूल में नहीं पढ़ा है। इसका एक कारण यह है कि अनुवाद के लिए चुनी हुई रचनाएँ ही ली गई हैं; और उनमें कुछ ऐसी कविताएँ छाँट दी गई हैं जिनसे रवीन्द्रनाथ की वुद्धि के पैनेपन और प्रसार-मात्र का पता चल पाता। दूसरा कारण यह है कि वहुत-से अनुवाद छाया-मात्र हैं, और उनमें मूल की खुरदरी और दुर्दम शक्तिमत्ता प्रायः खो-सी गई है। मनुष्य तथा उसकी नियति के प्रति रवीन्द्रनाथ की दिलचस्पी उनके जीवन के प्रारंभिक काल से ही दीख पड़ने लगती है। 'सन्ध्या संगीत' में भी, जो कि उनके प्रथम-प्रथम के काव्य-संग्रहों में है, हम उन्हें मानव के अस्तित्व की समस्या को ले कर उलझते हुए पाते हैं। मनुष्य का स्वार्थ जव प्रेम का वाना पहन लेता है तो उससे एक असुन्दरता-सी

उत्पन्न होती है। अल्पवयस्क तरुण होते हुए भी रवीन्द्रनाथ ने इस असुंदरता का वर्णन किया है। 'नैवेद्य' तक आते-आते उनमें यह दार्शनिक पुट गंभीर और गाढ़ हो उठा है, लेकिन बौद्धिकता और भावावेग के समन्वय का सुन्दरतम रूप हम शायद 'वलाका' में ही पाते हैं। 'वलाका' की कुछ कविताएँ विचार और संवेदना के समन्वय को प्रकाश में लाती हैं। और इस समन्वय के फलस्वरूप दर्शन-शास्त्र के सिद्धान्त विशुद्ध गीति-काव्य का रूप ले लेते हैं।

अपने जीवन के प्रायः अन्तिम दिनों तक रवीन्द्रनाथ नई अनु-भूतियों और नई अभिव्यक्तियों के लिए सतत-प्रयासी रहे। साठवें साल के वाद तो उनकी गीति-रचनाओं की जैसे वाढ़-सी आ गई थी। और वे रचनाएँ उनकी युवावस्था के प्रारम्भिक काल की उत्कृष्ट रचनाओं तक से होड़ लगा सकती हैं। इस काल की कविताओं में गंभीर संवेदना और भावोद्वेग का एक नया सुर है जो दुख से तपकर विशुद्ध हो चुका है। इस दशक में व्यक्तित्व के जो घनिष्ठ सुर और निजत्व-भाव मिलते हैं, उसका स्थान अगले दशक में एक गहन एवं गभीर मानव-धर्म ने ले लिया है। पहले की उनकी रचनाओं में भाव और भाषा का जो प्राचुर्य था, उसके स्थान पर अव भाव और भाषा की एक अपूर्व किफ़ायतशारी देखने को मिलती है। अन्त की उनकी कुछ कविताओं में सामर्थ्य और आत्म-विश्वास का एक ऐसा भाव है जिसका वुद्धि-तेज हमें चकित कर देता है। इसके अलावा जीवन के चरम लक्ष्य के संवंध में उन्होंने कुछ प्रश्न नये सिरे से भी उठाए हैं और साथ ही वड़े शान्त और स्निग्ध भाव से जीवन को उसकी सभी न्यूनताओं और संभावनाओं के साथ स्वीकार किया है।

(३)

रवीन्द्रनाथ ने एक हज़ार से अधिक कविताएँ और दो हज़ार गीत लिखे हैं। वे मुश्किल से पन्द्रह वर्ष के रहे होंगे जव उनकी प्रथम पुस्तक प्रकाश में आई और अन्तिम कविता उनकी मृत्यु के ठीक

पहले की लिखी हुई है। इस बात से यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि उनकी रचनाओं का चुनाव करना इतना कठिन क्यों है। वास्तव में साहित्यिक रचनाओं का संग्रह तैयार करना बराबर ही मुश्किल होता है। कोई भी संग्रह संकलनकर्ता के अपने ही विचारों और रुचि के अनुसार होता है और ऐसी आशा कोई भी नहीं कर सकता कि उसकी पसन्द सबको संतुष्ट करेगी। यही कारण है कि कोई भी संग्रह हमें पूरा संतोष नहीं दे पाता। अगर गद्य के लिए यह बात सत्य हो तो काव्य के लिए तो यह और भी अधिक सत्य है। भिन्न-भिन्न पाठकों की भिन्न-भिन्न रुचि होती है। इसके अलावा किसी कविता का आवेदन पाठक के अपने निजी अनुभव तथा मनोदशा पर भी निर्भर करता है। कोई एक ही कविता अगर किसी पाठक के हृदय को छू लेती है तो दूसरे पाठक को बिलकुल निरुत्साह छोड़ जाती है। यहाँ तक कि एक ही पाठक भिन्न-भिन्न काल में तथा मन की भिन्न-भिन्न स्थितियों में अलग-अलग ढंग से प्रभावित होता है। चाहे चुनाव कितनी भी बुद्धिमत्ता से क्यों न किया गया हो और संकलनकर्ता कितना भी विवेकशील क्यों न हो, यह असंभव-सा ही है कि कोई ऐसा संग्रह निकले जो सदा-सर्वदा सभी पाठकों को सन्तुष्ट कर सके।

रवीन्द्रनाथ की रचनाओं का परिमाण, विस्तार और वैचित्र्य एक ओर तो चुनाव के काम को कठिन बना देते हैं तो दूसरी ओर चुनाव को और भी आवश्यक बना देते हैं। महान-से-महान कवि भी सब समय अन्तःप्रेरणा के शिखर पर नहीं रह सकता। समय-समय पर उसे भी भारमुक्त होना पड़ता है और कभी-कभी तो उसे घाटी में भी उतर आना पड़ता है। औसत पाठक को न समय मिलता है और न उसमें वैसी प्रवृत्ति ही होती है कि वह महान साहित्यकार की सभी रचनाओं को पढ़ने का कष्ट उठा, उसकी सर्वोत्कृष्ट कृति को खोज निकाले और उसका आनंद ले। विदेशी पाठकों के बीच रवीन्द्रनाथ की ख्याति को कुछ धक्का लगा है, क्योंकि मुख्य रूप से उनकी रचनाओं

का एक ही पहलू उनके सामने रखा गया है और यह बात भी नहीं कि वह भी सब समय कोई उनका सबसे महत् और सबसे श्रेष्ठ पहलू ही हो। यह बात केवल विदेशी पाठकों पर ही लागू नहीं होती, बल्कि बंगाल के बाहर के भारतीय पाठकों पर भी लागू होती है। दो अर्थों में यह एक राष्ट्रीय दुर्भाग्य है। एक तो इस अर्थ में कि भारतवर्ष के बहु-संख्यक लोग भारतवर्ष के सबसे बड़े कवि की कुछ सर्वोत्कृष्ट रचनाओं से अपरिचित ही रह गए हैं और दूसरे इस अर्थ में कि भारतवर्ष की दृष्टि का प्रसार कहाँ तक है, इसे समझने और जानने का अवसर बाहर की दुनिया को नहीं मिला है। इसलिए यह आवश्यक है कि राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय हित के लिए रवीन्द्रनाथ की रचनाओं का एक नया संग्रह प्रस्तुत किया जाय। साहित्य अकादेमी ने इस चुनौती को स्वीकार किया है और वह रवीन्द्रनाथ की चुनी हुई कविताओं, गीतों, नाटकों, उपन्यासों, कहानियों और निबंधों के आठ अलग-अलग संग्रह निकालने जा रही है। सभी भारतीय भाषाओं के पाठकों को रवीन्द्रनाथ की प्रतिभा के शौर्य, पैनेपन और विस्तार का सुन्दर-सा ज्ञान करा देना उनका पहला ध्येय होगा। उनका एक दूसरा अतिरिक्त ध्येय होगा कि वे संसार के दूसरे देशों के पाठकों को वही उपहार भेंट करेंगे।

१०१ कविताओं का यह संग्रह प्रस्तावित चुनी हुई रचनाओं की पहली क़िस्त है। ये कविताएँ पहले तो देवनागरी अक्षरों में प्रकाशित की जा रही हैं और बाद में भारत की सभी प्रमुख भाषाओं में अनूदित होंगी। और उसके बाद वे संसार की प्रमुख भाषाओं में भी अनूदित हो सकती हैं। उत्तर भारत की सभी भाषाओं में एक ऐसा निकट का संबंध है कि वे पाठक भी, जो बंगला नहीं जानते—जिस भाषा में रवीन्द्रनाथ ने लिखा था—अगर किसी कविता को पढ़ सकें तो वे उसे समझ ले सकते हैं। यह निकट का संबंध केवल भाषा में ही नहीं है, बल्कि समान परंपरा, समान अनुभूति, समान कथा-प्रसंग से उत्पन्न भावावेगों और मनोभावों में भी है। दक्षिण भारत की भाषाओं से अलबत्ता मौखिक रूप में निस्सन्देह बहुत

वड़ा अन्तर है, लेकिन आवेग, अनुभूति और परंपरा के क्षेत्र में दोनों का संबंध अत्यन्त घनिष्ठ है। अनुवादों की सहायता से प्रायः सभी भारतीय भाषाओं के पाठक देवनागरी अक्षरों में प्रकाशित रवीन्द्रनाथ की मौलिक रचनाओं के सौन्दर्य और अभिव्यंजना को ठीक-ठीक परखने में समर्थ हो सकेंगे। वाद में जव इन कविताओं का अनुवाद संसार की अन्य भाषाओं में होगा, तव, ऐसी आशा की जा सकती है कि, अव तक के संग्रहों और अनुवादों से वे अधिक प्रतिनिधि-मूलक होंगी और रवीन्द्रनाथ को कुछ अधिक समझने में सहायक सिद्ध होंगी।

१०१ की संख्या कुछ खास पवित्र नहीं है। अगर कोई पाठक यह कहे कि यह संख्या दुगुनी भी कर दी जाय तो इसमें केवल उत्कृष्ट रचनाएँ ही रहेंगी, तो कम-से-कम मैं उस वक्तव्य को ग़लत नहीं मानूँगा। और मैं इस आक्षेप को भी स्वीकार कर लूँगा कि उस संग्रह में कुछ ऐसी कविताएँ वाद में पड़ गई हैं जो संग्रह की कविताओं से और भी अधिक अच्छी नहीं तो कम-से-कम उन-जैसी अच्छी तो हैं ही। इसमें मतभेद की गुंजाइश वरावर वनी रहेगी कि किसी महान कवि की कौन-सी एक सौ या दो सौ कविताएँ उत्कृष्ट हैं। वैसे इस संग्रह के वारे में दो वातों का दावा मैं अवश्य करूँगा। इसमें कोई भी ऐसी कविता नहीं है जो प्रथम कोटि की न हो। और यह भी कि संग्रह प्रतिनिधि-मूलक है और इसमें इस वात का ध्यान रखा गया है कि रवीन्द्रनाथ की भिन्न भिन्न शैलियों और मनोदशाओं का परिचय देने वाली कुछ कविताएं नमूने के तौर पर आ जायँ। लेकिन एक वात की ओर ध्यान दिलाना आवश्यक है कि गीत जान-वूझ-कर इस संग्रह से छोड़ दिए गए हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि रवीन्द्रनाथ के संगीत-परक गीतों में उनके कुछ उत्कृष्ट काव्य भी हैं, लेकिन गीतों का एक संग्रह अलग से निकालने की योजना है, इसलिए इस संग्रह में उन्हें छोड़ देना ही ठीक समझा गया है।

इस संग्रह का प्रारंभ 'निर्झरेर स्वप्नभंग' से हुआ है जिसकी चर्चा हम कर चुके हैं। रवीन्द्रनाथ ने इस कविता को अपनी ही काव्य-

प्रतिभा का जागरण माना था। इसमें गीति-काव्य का जो सुर है उसे रवीन्द्रनाथ के लंबे कवि-जीवन में बार-बार आमंत्रित किया गया है। कभी-कभी यह सुर रहस्यात्मक उत्कण्ठा और तीव्र इच्छा से रंग गया है, जैसा कि हम 'सोनार तरी' (संख्या ८) अथवा 'निरुद्देश यात्रा' (सं० १५) में देखते हैं। और कभी-कभी तो यह सुर गंभीर मानवीय वासना और अभिप्राय से ओत-प्रोत हो उठा है; जैसे 'येते नाहि दिव' (सं० ११), 'वसुन्धरा' (सं० १४) अथवा' भारत-तीर्थ' (सं० ६०) में। कभी-कभी संगीत ही प्रधान हो उठा है और उस समय ऐन्द्रियिकता और बौद्धिकता का सुन्दर समन्वय देखने को मिलता है जैसे 'उर्वशी' (सं० १९), 'छवि' (सं० ६५) अथवा 'चञ्चला' (सं० ६७) में। इस समन्वय का एक अत्यन्त उत्कृष्ट नमूना 'प्रहर शेषेर आलोय राङा' (सं० ८७) नामक टुकड़े में मिलता है।

रवीन्द्रनाथ की दृष्टि में मनुष्य का सबसे बड़ा कृतित्व इस बात में है कि वह अपनी निजी व्यथा और संसार की विकराल वेदना पर विजय प्राप्त करे। स्वार्थपरता के कारण उत्पन्न होने वाले दुःखों और वैयक्तिक कलहों पर मनुष्य जय-लाभ करता है। वह उस गंभीर वेदना से भी ऊपर उठता है जो जीवन की क्षणभंगुरता का अनिवार्य परिणाम है। 'बिदाय-अभिशाप' (सं० १३) में कच जब देवयानी के शाप के बदले उसे वरदान देता है, उसकी मंगल-कामना करता है तो वह सचमुच में मनुष्य हो उठता है। 'ब्राह्मण' (सं० १७) में गुरु ने पाया है कि मनुष्य का महत्त्व वंश-गौरव में नहीं, बल्कि इस बात में है कि बिना किसी दुराव, बिना किसी अन्तर की दुविधा के वह सत्य को स्वीकार करता है। 'येते नाहि दिव' (सं० ११) में कवि ने इस बात को समझा है कि कभी-कभी एक छोटा बच्चा भी मानव-प्रकृति के सहज सत्य को प्रकट कर सकता है, जब कि अधिक समझदारी का भान करने वाले स्त्री-पुरुष इसमें असफल हो सकते हैं। 'गान्धारीर आवेदन' (सं० ३१) तथा 'कर्ण-

कुन्तीसंवाद' (सं० ३०) में स्नेह, आकांक्षा अथवा भय के ऊपर मनुष्य के गौरव की विजय की बड़ी सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। मानवीय संबंधों के सौन्दर्य तथा करुण भाव को हम उनकी शिशुसंबंधी कविता-माला में पाते हैं जो 'जन्मकथा' (सं० ४६) से प्रारंभ होती है।

रवीन्द्रनाथ ने प्रायः ही परंपराभुक्त प्रसंगों और विषयों को लिया है। प्राचीन भारतीय साहित्य उनका उपजीव्य रहा है। वैसे तो उन्होंने जिस चीज़ का भी स्पर्श किया है, उसमें रूपान्तर ला दिया है। कालिदास के प्रति रवीन्द्रनाथ की अत्यधिक श्रद्धा थी और उनसे वे विमुग्ध होते रहे हैं, लेकिन जब उन्होंने उनसे भी कोई प्रसंग या विषय ग्रहण किया है तो उसको इस ढंग से मोड़ा है कि उनकी अपनी रचना प्रधान रूप से आधुनिक हो गई है। रवीन्द्रनाथ के लिए 'मेघदूत' (सं० ६) किसी पौराणिक यक्ष का अपनी प्रिया को भेजा हुआ संदेश नहीं है, बल्कि प्रत्येक युग और स्थान के सभी प्रेमियों की तीव्र उत्कण्ठा की अभिव्यंजना है। 'अहल्यार प्रति' (सं० ७), 'भ्रष्ट लग्न' (सं० २५) तथा 'स्वप्न' (सं० २६) में एक लुप्त हो चुके अतीत के वातावरण को उन्होंने फिर से लौटाया है, लेकिन यह स्पष्ट कर दिया है कि अतीत फिर से हम लोगों के आज के आवेगों और मनोदशाओं में ही बस रहा है। अतीत और वर्तमान तथा पुराण और अनुभव के संबंध को जितने कौशल से 'मदनभस्मेर पर' (सं० २७) जैसी कविताओं में प्रतिष्ठित किया गया है, वह शायद ही कहीं देखने को मिले। अतीत की परंपराओं को फिर से ला कर उसमें प्राण-प्रतिष्ठा करने की प्रवृत्ति उनकी अंतिम कविताओं में देखने को नहीं मिलती। 'तपोभङ्ग' (सं० ७७) में एक प्राचीन पौराणिक कथा की एक अत्यन्त ही मार्मिक व्याख्या की गई है और उसे सुन्दर रूप दिया गया है। इस कविता में संन्यास के ऊपर नूतन जीवन के उफान की अन्तिम विजय की घोषणा की गई है।

रवीन्द्रनाथ ने केवल विषय और प्रसंग को ले कर ही प्रयोग नहीं किये बल्कि काव्य के रूप-विधान को ले कर भी किये हैं। अपने पूर्व-

र्वातियों के प्रभाव से वे कभी आतंकित नहीं हुए। बंगला के परंपरा-भुक्त वैष्णव-काव्य से उन्होंने बिना संकोच लिया है और स्वयं ही विहारीलाल-जैसे बंगाली कवियों का आभार माना है। अपने वातावरण अथवा युग से कोई अछूता नहीं रह सकता। इस तरह के प्रयास सफल कम ही हो पाते हैं और वास्तव में ऐसा प्रयास साधारणत: कवि में आत्म-विश्वास के अभाव का लक्षण-मात्र है। रवीन्द्रनाथ का विकास अपने समसामयिक समाज के प्रभाव में ही हुआ; लेकिन विकास की इस प्रक्रिया ने ही उन्हें ऐसा समर्थ वना दिया कि समय पा कर वे इन सबसे ऊपर उठ सके। एक वार माध्यम के संबंध में निश्चय कर लेने के वाद अपनी कविता के वक्तव्य-विषय और रूप-विधान दोनों में ही वे प्रयोग करने में हिचकते नहीं थे और उन अनुभव-क्षेत्रों से प्रेरणा ग्रहण करते थे जिनकी ओर पहले बंगला-काव्य में ध्यान नहीं दिया गया था। सच तो यह है कि उन्होंने इस विवाद को बहुत दूर तक ख़त्म ही कर दिया कि कविता का विषय क्या है और क्या नहीं है। 'क्षणिका' में हम उन्हें ऐसे प्रसंग का चुनाव करते हुए देखते हैं जिसमें प्रथम दृष्टि में किसी भी प्रकार की काव्यगत संभावना नहीं दीख पड़ती, लेकिन अपनी प्रतिभा के बल पर वे उसे सामान्य धरातल से ऊपर उठा देते हैं और सौन्दर्य के प्रकाश से उसे प्रकाशमय वना देते हैं। वर्ड्सवर्थ का यह दावा कि गंभीरतम अनुभूति को सहज ढंग से अभिव्यक्त किया जा सकता है और दैनंदिन जीवन की वास्त-विकताओं को रहस्य के आलोक से आलोकित किया जा सकता है, रवीन्द्रनाथ की उस काल की वहुत सी कविताओं द्वारा समर्थित हो जाता है। हास्य और रुदन, विनोद और आवेग घुल-मिल कर अभिलाषा, उत्कंठा और तीव्र उपहास का अपरूप संयोग सम्पन्न कर देते हैं। 'कृष्णकली' (सं० ३५), 'यथास्थान' (सं० ३९) और 'सेकाल' (सं० ४०) आदि कविताओं में मनुष्य की चित्त-वृत्ति, आवेग और संवेदना का आश्चर्यजनक पारस्परिक घात-प्रतिघात देखने को मिलता है।

रवीन्द्रनाथ की प्रतिभा प्रधान रूप से गीति-काव्यात्मक थी, लेकिन कभी-कभी हम उनमें समाज की बुराइयों के विरुद्ध अगर कटूक्ति नहीं तो व्याजोक्ति का तीव्र स्वर अवश्य पाते हैं। वे जानते थे कि प्रचलित धारणा के अनुसार आध्यात्मिकता के संबंध में जो भारतीय दावा है, वह वहुत-कुछ तो विचार करने की अक्षमता अथवा अनिच्छा के सिवा और कुछ नहीं है। अपनी कविता 'हिं टिं छट्' (सं० ९) में रवीन्द्रनाथ ने निर्मम हो कर गंभीरता के उस घटाटोप को छिन्न-भिन्न कर दिया है जो वहुधा एक खाली दिमाग को छिपाए रहता है। 'दुइ पाखी' (सं० १०) में उन्होंने उन निष्प्राण परंपराओं और अर्थहीन आधारों की खिल्ली उड़ाई है, जिन्होंने जीवन को जटिल कर रखा है। 'देवतार ग्रास' (सं० २८) में उन्होंने वद्धमूल धारणा और मनुष्य के धर्म के बीच होने वाले संघर्ष का चित्रण किया है और दिखलाया है कि किस प्रकार से वाह्याचार के ऊपर सत्य की अन्तिम विजय होती है। वाह्याचारों में मनुष्य सत्य को खो देता है। 'अपमानित' (सं० ६१) और 'धूलामन्दिर' (सं० ६२) में हम मनुष्य की अवमानना के विरुद्ध घृणा और रोष के अन्तर को पाते हैं। जीविका-निर्वाह के लिए अपनाई गई वृत्ति के आधार पर किसी को छोटा और किसी को वड़ा मानने को वे कदापि तैयार नहीं थे।

कुछ आलोचक यह आपत्ति उठा सकते हैं कि इस संग्रह में उनके उत्तरकालीन जीवन की कविताएँ ही अधिक हैं। इस अभियोग में शायद कुछ तथ्य भी है, क्योंकि इस संग्रह में सन् १९२८ ई० से सन् १९४१ ई० तक की २० से अधिक कविताएँ हैं और सन् १८८२ ई० से सन् १९२४ ई० तक की केवल ८० ही कविताएँ ली गई हैं। इसका एक कारण यह है कि अभी तक के मूल वंगला के संग्रह में अथवा दूसरी भाषाओं के अनुवादों में प्रारंभिक काल की रचनाओं का तो आम तौर पर वहुत-कुछ वेहतर और अधिकतर समावेश हो चुका है। उत्तर-कालीन रचनाओं से कुछ अधिक चुनाव करने का दूसरा कारण यह है इस काल की कविताओं में विचार और अभिव्यंजना की दृष्टि से

अधिक संयम से काम लिया गया है। टेकनीक की श्रेष्ठता और विचारों की गहनता ने मिल कर इस काल की कविताओं को अधिक गंभीर और मार्मिक बना दिया है। अपनी युवावस्था के प्रारंभिक दिनों में रवीन्द्रनाथ ने प्रेम-संबंधी बहुत-सी सुन्दर कविताएँ लिखी हैं, लेकिन वे जीवन के ऊपरी तल को ही छूने वाली लगती हैं तथा उस गहराई तक नहीं जातीं जहाँ मनोराग की आग जल रही होती है। समय-समय पर आलोचकों ने कहा है कि प्रेम की अनुभूति की अपेक्षा वे शब्दों और अभिव्यक्ति के ढंग पर अधिक ध्यान देते रहे। लेकिन यह सम्पूर्ण सत्य नहीं है, क्योंकि हमारे सामने 'रात्रे ओ प्रभाते' (सं० २२) अथवा 'स्वर्ग हइते बिदाय' (सं० २०) की तीव्र लालसा भरी पंक्तियाँ हैं। अगर इन कविताओं को कोई उनकी उत्तरकालीन कविताओं के पास रखें तो यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि बाद की कविताओं में गहराई और वज़न है जिनका पहले की कविताओं में अपेक्षाकृत अभाव है। किसी भी भाषा में कम ही कविताएँ ऐसी होंगी जो संयम और मनोराग की गाढ़ता में 'पूर्णता' (सं० ७८) अथवा 'आशंका' (सं० ८०) की बराबरी कर सकें।

तीव्रता और प्रगाढ़ता की अभिवृद्धि के अलावा उनकी उत्तर-कालीन कविताओं में जीवन के रहस्यों के प्रति उनका आकर्षण उत्तरोत्तर बढ़ता हुआ दीख पड़ता है। प्रचुर समृद्धि और वैचित्र्य के होने पर भी बंगला-काव्य में प्रादेशिकता का गुण प्रायः ही दीख पड़ता है। यहाँ तक कि कुछ अत्यन्त सुन्दर वैष्णव गीति-काव्य भी आंचलिक वातावरण से इतने अधिक ओत-प्रोत हैं कि उसे छोड़ कर उनके लिए ऊपर उठना कठिन है। रवीन्द्रनाथ का यह एक बहुत बड़ा कृतित्व है कि उन्होंने सार्वभौमिकता और शिष्टता के एक नये सुर को बंगला काव्य में प्रविष्ट कराया। इसीलिए उनकी कविताएँ जिस प्रकार से बंगाल के किसी आदमी को प्रभावित करती हैं, ठीक उसी तरह से अमेरिका या यूरोप के निवासी को भी। सार्वभौमिकता और शिष्टता का यह सुर उनके लंबे जीवन में उत्तरोत्तर गहरा होता गया और

उनके अन्तिम दिनों की कविताओं में तो वह और भी स्पष्ट दीखता है। मनुष्य के प्रयत्न और प्रचेष्टाएँ, उसकी आशाओं और असफलताओं तथा अपनी आकांक्षाओं और नित्य-प्रति के कार्य के साथ अपने को एक कर देने के उसके प्रयास भी इन उत्तरकालीन कविताओं में परिलक्षित होते हैं। अपने अन्तिम दिनों में रवीन्द्रनाथ को जो शारीरिक कष्ट भोगने पड़े थे, उसकी अभिव्यक्ति उन कविताओं में इतनी स्पष्टता और तीव्रता से की गई है, जिसकी समता शायद ही कहीं देखने को मिले। 'अवसन्न चेतनार गोधूलिवेलाय' (सं० ८८) अथवा 'ऋणशोध' (सं० ९१) आदि कविताओं में भाषा और अभिव्यक्ति का जो संयम दीख पड़ता है उसके साथ उनकी युवावस्था के प्रारंभिक काल की रचनाओं के प्राचुर्य और वेफ़िक्री का बहुत बड़ा अन्तर है। पिछले दिनों की कविताओं में न केवल संयम और किफ़ायतशारी का ही भाव है वल्कि उनमें पूर्णता और भरा-पूरा होने का भी भाव है। लगता है जैसे संसार और जीवन के साथ उन्होंने समझौता कर लिया है। संसार में दुःख और कष्ट हैं, जीवन में मृत्यु की छाया सदा ही पीछे लगी रहती है, लेकिन इन सभी कमियों के वावजूद जीवन अर्थपूर्ण है और अपने-आप में उसका एक महत्त्व है। 'ए जीवने सुन्दरेर' (सं० ९५), अथवा 'मधुमय पृथिवीर धूलि' (सं० ९६) आदि कविताओं में मृत्यु की घाटी की छाया में जीवन की विजय का भाव है।

किसी कवि के मानसिक विकास पर प्रकाश डालना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। अनुभव के दूसरे-दूसरे क्षेत्रों में विकास का एक क्रम होता है, जो कुछ नियमों का अनुसरण करता है। लेकिन जहाँ तक काव्य का प्रश्न है, अन्तःप्रेरणा में रहस्यात्मक ढंग से ज्वार-भाटा आता रहता है और उसकी व्याख्या नहीं हो सकती। कभी-कभी किसी कवि की उत्कृष्ट कविताएँ तो उसकी युवावस्था के प्रारंभिक काल की लिखी हुई होती हैं और प्रौढ़ावस्था की रचनाएँ साधारण और पारंपरिक होती हैं। रवीन्द्रनाथ भी इसके अपवाद नहीं हैं। उनकी

प्रारंभिक काल की कुछ कविताएँ अति उत्कृष्ट हैं और बाद की कुछ कविताएँ ऐसी हैं मानो वे बिना किसी प्रेरणा के लिखी गई हों। चाहे जो हो, अस्सी वर्ष की अपनी लंबी उम्र में अपनी अन्त:प्रेरणा को उन्होंने जिस प्रकार से जिलाए रखा, वह उन्हें युग-युग तक जीवित रहने वाले महान कवियों की कोटि में रख देता है। जिस उद्दाम तेज, उद्यम और जीवनी-शक्ति से वे ऐसा करने में समर्थ हो सके उसके पीछे उनके व्यक्तित्व की पूर्णता और अखण्डता है। उन विभिन्न सूत्रों को उन्होंने अपने में एकत्र कर लिया था जिनसे आज के भारत की समन्वयात्मक संस्कृति का निर्माण हुआ है। यह गौरव उन्हींको प्राप्त है कि उन्होंने भारत के बहुमुखी जीवन के भिन्न-भिन्न पहलुओं को लिया और उन्हें आलोकित किया। संस्कृत-साहित्य से उन्होंने बहुत-कुछ लिया और बंगला की शब्दावलि और छन्द को समृद्ध किया। वैष्णव-गीति-काव्यात्मकता और सूफी रहस्य-भावना के पूर्ण एकीकरण का श्रेय उन्हींको प्राप्त है। मध्य युग की सामन्तशाही प्रथा में जिस दरबारी ढंग का विकास हुआ, उसकी व्याख्या करने में उन्होंने पूरी सहानुभूति और कल्पना से काम लिया है। इसीके साथ सर्व-साधारण के जीवन से भी उन्होंने ऐसा बहुत-कुछ लिया, जिसका उपयोग पहले नहीं हुआ था। बंगाल के गाँवों के भाव-चित्रों और प्रतीकों का ताना-बाना उनकी कविता में बड़े कौशल से बुना गया है। बंगला-साहित्य में उन्होंने यूरोप के आदर्शों और चिन्तन का भी सुन्दर सामंजस्य उपस्थित किया। 'बलाका' संग्रह की बहुत-सी कविताओं में शक्ति और गति के भाव का समावेश यूरोप की प्रेरणा कहा जा सकता है। मनुष्य-जाति ने अति प्राचीन काल में ही यह समझ लिया था कि सब-कुछ क्षण-स्थायी है। इसे सभी वस्तुओं में छिपी गति का प्रतीक बना कर रवीन्द्रनाथ ने इसमें एक नया अर्थ भर दिया है।

थोड़े में, प्राचीन भारतीय साहित्य की विरासत, मुग़ल दरबार के विशिष्ट तौर-तरीक़े, बंगाल के सर्व-साधारण के जीवन के सहज सत्य और आधुनिक यूरोप की उद्दाम शक्ति और बौद्धिक सबलता के

संमिश्रण से रवीन्द्रनाथ की कविता का प्रादुर्भाव हुआ। वे सभी युगों और सभी संस्कृतियों के उत्तराधिकारी हैं। इन भिन्न-भिन्न सूत्रों और प्रसंगों के संयोग ने उनकी कविता को लोच, सार्वभौमिकता और अशेष हृदयग्राहिता प्रदान की है।

२२ अप्रेल १९५७ हुमायून कबिर

इस खंड के लिप्यंतर तथा शब्दार्थ श्री राम पूजन तिवारी, हिंदी भवन, शांति निकेतन, ने प्रस्तुत किये है। प्रत्येक कविता के साथ उसकी रचना-तिथि दी गयी है। जिन कविताओं की रचना-तिथियाँ उपलब्ध नहीं हैं, उनके साथ उनके पुस्तक-रूप में प्रकाशन की तिथि वड़े कोष्ठकों में दी गयी है। इन तिथियों को श्री पुलिनविहारी सेन तथा श्री जगदिन्द्र भौमिक ने मिला कर देख लिया है, जिसके लिए हम उनके आभारी हैं।

—प्रकाशक

सूचीपत्र

पृष्ठ-संख्या

पृष्ठ-संख्या

पृष्ठ-संख्या

निर्झरेर स्वप्नभङ्ग

आजि ए प्रभाते रविर कर
केमने पशिल प्राणेर 'पर,
केमने पशिल गुहार आँधारे प्रभातपाखिर गान।
ना जानि केन रे एतदिन परे जागिया उठिल प्राण।
जागिया उठेछे प्राण,
ओरे उथलि उठेछे वारि,
ओरे प्राणेर वेदना प्राणेर आवेग रुधिया राखिते नारि।
थर थर करि काँपिछे भूधर,
शिला राशि राशि पड़िछे खसे,
फुलिया फुलिया फेनिल सलिल
गरजि उठिछे दारुण रोषे।

हेथाय होथाय पागलेर प्राय
घुरिया घुरिया मातिया वेड़ाय—
वाहिरिते चाय, देखिते ना पाय कोथाय कारार द्वार।
केन रे विधाता पाषाण हेन,
चारिदिके तार वाँधन केन !
भाङ रे हृदय, भाङ रे वाँधन,
साध् रे आजिके प्राणेर साधन,

रविर कर—सूर्य की किरणें ; **केमने**—किस प्रकार से ; **पशिल**—प्रवेश किया ; **केन**—क्यों ; **एतदिन**—इतने दिन ; **उथलि**—उद्वेलित ; ...धिया......**नारि**—अवरुद्ध नहीं कर पाता; **पड़िछे खसे**—टूट कर गिरता है।
हेथाय होथाय—यहाँ वहाँ; **पागलेर प्राय**—पागल के समान; **मातिया**—मत्त ...किर ; **वेड़ाय**—घूमता है ; **वाहिरेते चाय**—वाहर होना चाहता है ; ...थाय—कहाँ; **हेन**—ऐसा; **तार**—उसके; **वाँधन**—बन्धन; **भाङ**—तोड़ो;

लहरीर 'परे लहरी तुलिया
आघातेर 'परे आघात कर् ।
मातिया यखन उठेछे परान
किसेर आँधार, किसेर पाषाण !
उथलि यखन उठेछे वासना,
जगते तखन किसेर डर !

आमि ढालिब करुणाधारा,
आमि भाङ्गिब पाषाणकारा,
आमि जगत् प्लाविया बेड़ाव गाहिया
आकुल पागल-पारा ।
केश एलाइया, फुल कुड़ाइया,
रामधनु-आँका पाखा उड़ाइया,
रविर किरणे हासि छड़ाइया दिव रे परान ढालि ।
शिखर हइते शिखरे छुटिव,
भूधर हइते भूधरे लुटिब,
हेसे खलखल गेये कलकल ताले ताले दिब तालि ।
एत कथा आछे, एत गान आछे, एत प्राण आछे मोर,
एत सुख आछे, एत साध आछे—प्राण हये आछे भोर ।।

तुलिया—उठा कर, उत्तोलित कर; यखन—जब; किसेर—किसका; तखन–तब ।

आमि—मैं; ढालिव—ढालूंगा; गाहिया—गाते हुए; पागल-पारा—पागल के सदृश; एलाइया—आलुलायित कर, खोल कर; कुड़ाइया—चुन कर, बटोर कर; रामधनु-आँका—इन्द्रधनुष अंकित किया हुआ; पाखा—पंख; हासि—हँसी; छड़ाइया—विकीर्ण कर; दिब—दूंगा; हइते–से; छुटिव–दौड़ूंगा, वेग से प्रवाहित होऊँगा; लुटिब—लोटूंगा; हसे—हँस कर; गेये—गा कर; एत—इतना; कथा—बात; आछे—है; मोर—मेरा; भोर—विभोर।

की जानि की हल आजि, जागिया उठिल प्राण,
दूर हते शुनि येन महासागरेर गान ।
ओरे चारिदिके मोर
ए की कारागार घोर,
भाङ भाङ भाङ कारा, आघाते आघात कर् ।
ओरे आज की गान गेयेछे पाखि,
एसेछे रविर कर ।।

१८८२ 'प्रभात संगीत'

प्राण

मरिते चाहि ना आमि सुन्दर भुवने,
मानवेर माझे आमि बाँचिवारे चाइ ।
एइ सूर्यकरे एइ पुष्पित कानने
जीवन्त हृदय-माझे यदि स्थान पाइ !
धराय प्राणेर खेला चिरतरङ्गित,
विरह मिलन कत हासि-अश्रुमय—
मानवेर सुखे दुःखे गाँथिया संगीत
यदि गो रचिते पारि अमर-आलय !
ता यदि ना पारि तबे बाँचि यत काल
तोमादेरि माझखाने लभि येन ठाँइ,

की—क्या ; हल—हुआ ; हत—से ; शुनि—सुनता हूँ ; येन—जैसे ; एसेछे—आया है ।

मरिते....ना—मरना नहीं चाहता ; माझे—मध्य में, बीच में; बाँचिबारे—बँचना, जीना; एइ—इस; धराय—पृथ्वी पर; कत—कितना; गाँथिया—गूँथ कर ; रचिते पारि—रच सकूँ, बना सकूँ ; ता—उसे; यत—जितना ; तोमादेरि—तुमलोगों के ; माझखाने—मध्य में, बीच में; लभि—लाभ करूँ, प्राप्त करूँ ; येन—जिसमें ; ठाँइ—जगह, स्थान;

तोमरा तुलिबे बले सकाल विकाल
नव नव संगीतेर कुसुम फुटाइ।
हासिमुखे नियो फुल, तार परे हाय
फेले दियो फुल, यदि से फुल शुकाय ।।

[नवम्बर १८८६] 'कड़ि ओ कोमल'

निष्फल कामना

रवि अस्त याय।
अरण्येते अन्धकार, आकाशेते आलो।
सन्ध्या नत-आँखि
धीरे आसे दिवार पश्चाते।
बहे कि ना बहे
बिदायविषादश्रान्त सन्ध्यार बातास।
दुटि हाते हात दिये क्षुधार्त नयने
चेये आछि दुटि आँखि-माझे ।।

खुँजितेछि, कोथा तुमि,
कोथा तुमि !

तोमरा तुलिबे बले—तुमलोग तोड़ोगे इसलिये ; **सकाल**—सवेरे ; **विकाल**—अपराह्न; **फुटाइ**—प्रस्फुटित करता हूँ ; **नियो**—लेना ; **तार परे**—उसके वाद ; **फेले दियो**—फेंक देना; **शुकाय**—सूख जाय ।

आलो—आलोक, प्रकाश; **आसे**—आता है; **दिवार पश्चाते**—दिन के पीछे ; **वातास**—हवा ; **हात**—हाथ ; **दुटि**—दो ; **चेये आछि**—देख रहा हूँ ।

खुँजितेछि—खोज रहा हूँ; **कोथा**—कहाँ ; **तुमि**—तुम;

ये अमृत लुकानो तोमाय
से कोथाय !
अन्धकार सन्ध्यार आकाशे
विजन तारार माझे काँपिछे येमन
स्वर्गेर आलोकमय रहस्य असीम,
ओइ नयनेर
निविड़ तिमिरतले, काँपिछे तेमनि
आत्मार रहस्यशिखा ।
ताइ चेये आछि ।
प्राण मन सब लये ताइ डुवितेछि
अतल आकाङ्क्षापारावारे ।
तोमार आँखिर माझे,
हासिर आड़ाले,
वचनेर सुधास्रोते,
तोमार वदनव्यापी
करुण शान्तिर तले
तोमारे कोथाय पावो—
ताइ ए क्रन्दन ॥

वृथा ए क्रन्दन ।
हाय रे दुराशा,
ए रहस्य, ए आनन्द तोर तरे नय ।

लुकानो—छिपा हुआ; **तोमाय**—तुझमें; **से**—वह; **कोथाय**—कहाँ; **येमन**—जैसे; **ओइ**—उस; **तेमनि**—तैसे; **लये**—ले कर; **ताइ**—इसलिये; **आड़ाले**—आड़ में, अन्तराल में; **तोमारे**—तुम्हें; **पावो**—पाऊँगा; **ताइ**—इसलिये ।

ए—यह; **तोर....नय**—तुम्हारे लिये नहीं है

याहा पास ताइ भालो—
हासिटुकु, कथाटुकु,
नयनेर दृष्टिटुकु, प्रेमेर आभास।
समग्र मानव तुइ पेते चास,
ए की दुःसाहस!
की आछे बा तोर!
की पारिबि दिते!
आछे कि अनन्त प्रेम?
पारिबि मिटाते
जीवनेर अनन्त अभाव?
महाकाश—भरा
ए असीम जगत्-जनता,
ए निबिड़ आलो-अन्धकार,
कोटि छायापथ, मायापथ,
दुर्गम उदय-अस्ताचल,
एरि माझे पथ करि
पारिबि कि निये येते
चिर सहचरे
चिर रात्रि दिन
एका असहाय?
ये-जन आपनि भीत, कातर, दुर्बल,
म्लान, क्षुधातृषातुर, अन्ध, दिशाहारा,

याहा—जो; पास—पाओ; हासिटुकु—थोड़ी सी हँसी (टु का प्रयोग अत्यल्प परिमाण का बोध कराने के लिये किया जाता है।); तुइ....चास—तू पाना चाहता है; की.....तोर—तुम्हारे पास क्या है; की.....दिते—क्या दे सकोगे; आछे कि—क्या है; पारिबि मिटाते—मिटा सकेगा; जनता—भीड़; एरि....येते—इसीके बीच पथ बना कर क्या ले जा सकोगे; एका—अकेला, निःसंग; ये-जन—जो मनुष्य; आपनि—अपने ही; दिशाहारा—दिग्भ्रान्त;

आपन हृदयभारे पीड़ित जर्जर,
से काहारे पेते चाय चिरदिन-तरे !

क्षुधा मिटावार खाद्य नहे ये मानव,
केह नहे तोमार आमार ।
अति सयतने
अति संगोपने,
सुखे दुःखे, निशीथे दिवसे,
विपदे सम्पदे,
जीवने मरणे,
शत ऋतु-आवर्तने
शतदल उठितेछे फुटि--
सुतीक्ष्ण वासना-छुरि दिये
तुमि ताहा चाओ छिंड़े निते ?
लओ तार मधुर सौरभ,
देखो तार सौन्दर्यविकाश,
मधु तार करो तुमि पान,
भालोवासो, प्रेमे हओ बली--
चेयो ना ताहारे ।
आकाङ्क्षार धन नहे आत्मा मानवेर ।।

भारे---भार से, बोझा से; से....तरे---वह चिरदिन के लिये किसे पाना चाहता है ।

मिटावार---मिटाने का ; नहे--नहीं है ; केह.....आमार---कोई तुम्हारा हमारा नहीं है ; उठितेछे फुटि--प्रस्फुटित हो उठता है ; छुरि दिये--छुरी से, छुरी द्वारा ; तुमि....निते---तुम उसे तोड़ लेना चाहते हो ; लओ---लो ; तार---उसका ; भालोबासो---प्यार करो, प्रेम करो; हओ---होओ; चेयोना ताहारे--उसे देखो मत; नहे---नहीं है ।

शान्त सन्ध्या, स्तब्ध कोलाहल।
निबाओ वासनावह्नि नयनेर नीरे।
चलो धीरे घरे फिरे याइ॥

२८ नवम्बर १८८७ 'मानसी'

वधू

'बेला ये पड़े एल, जल्के चल्।'
पुरोनो सेइ सुरे के येन डाके दूरे—
कोथा से छाया सखी, कोथा से जल!
कोथा से बाँधा घाट, अशथतल!
छिलाम आनमने एकेला गृहकोणे,
के येन डाकिल रे 'जल्के चल्'॥

कलसी लये काँखे, पथ से बाँका—
वामेते माठ शुधु सदाइ करे धु धु,
डाहिने बाँशबन हेलाये शाखा।
दिघिर कालो जले साँझेर आलो झले,
दुधारे घन वन छायाय-ढाका।
गभीर थिर नीरे भासिया याइ धीरे,
पिक कुहरे तीरे अमियमाखा।

निबाओ—बुझाओ।

बेला....एल—दिन ढल गया; **पुरोनो**—पुराना; **के येन**—कौन जैसे; **डाके**—पुकारता है; **कोथा**—कहाँ; **अशथतल**—अश्वत्थ तल, पीपल के नीचे; **आनमने**—अनमना; **एकेला**—अकेला (-ली)।

वामेते—बाँयी ओर; **माठ**—मैदान; **शुधु**—केवल; **सदाइ**—सदा ही; **डाहिने**—दाहिने; **हेलाये**—झुलाता है, झोंका देकर झुकाता है; **दिघिर**—पुष्करिणी का, सरोवर का (दिघि–दीर्घिका); **आलो**—आलोक, प्रकाश; **दुधारे**—दोनों ओर; **छायाय-ढाका**—छाया से ढँका; **भासिया**—वह कर; **अमियमाखा**—अमृत से घोला हुआ;

पथे आसिते फिरे, आँधार तरु शिरे
सहसा देखि चाँद आकाशे आँका ।।

अशथ उठियाछे प्राचीर टूटि,
सेखाने छुटिताम सकाले उठि ।
शरते धरातल शिशिरे झलमल,
करबी थोलो थोलो रयेछे फुटि ।
प्राचीर वेये वेये सवुजे फेले छेये
वेगुनि-फुले-भरा लतिका दुटि ।
फाटले दिये आँखि आड़ाले वसे थाकि,
आँचल पदतले पड़ेछे लुटि ।।

माठेर परे माठ, माठेर शेषे
सुदूर ग्रामखानि आकाशे मेशे ।
एधारे पुरातन श्यामल ताल वन
सघन सारि दिये दाँड़ाय घेंसे ।
वाँधेर जलरेखा झलसे, याय देखा,
जटला करे तीरे राखाल एसे ।

आँका—अंकित ।

सेखाने—वहाँ; **छुटिताम**—दौड़ कर जाती; **सकाले**—सवेरे; **शिशिरे**—हिमकण से; **करवी**—कनेर; **थोलो थोलो**—थोक थोक; **प्राचीर .....वेये**—प्राचीर का सहारा ले ले कर फैलने वाली; **सवुजे**—हरियाली; **फेले छेये**—फैलाती हुई; **दुटि**—दो; **फाटले**—दरार में; **दिये आँखि**—दृष्टि लगा कर; **आड़ाले.....थाकि**—ओट में वैठी रहती हूँ; **पड़ेछे लुटि**—लोट पड़ा है ।

माठेर....माठ—मैदान के वाद मैदान, विस्तीर्ण क्षेत्र; **ग्रामखानि**—ग्राम, गाँव; **मेशे**—मिला हुआ; **एधारे**—इस तरफ़, इस ओर; **ताल**—ताड़; **सारि**—पंक्ति; **सघन....घेंसे**—(तालवन की) सघन पंक्ति स्पर्श करती हुई खड़ी है; **झलसे**—चमकती है; **जटला....एसे**—तीर पर आ कर चरवाहे इकट्ठा होते हैं;

चलेछे पथखानि　　　कोथाय नाहि जानि,
　के जाने कत शत नूतन देशे ।।

　हाय रे राजधानी पाषाण काया !
विराट मुठितले　　　चापिछे दृढ़बले
　व्याकुल बालिकारे, नाहिको माया ।
कोथा से खोला माठ,　　　उदार पथघाट,
　पाखिर गान कइ, वनेर छाया ।।

　के येन चारिदिके दाँड़िये आछे,
　खुलिते नारि मन शुनिबे पाछे ।
हेथाय वृथा काँदा,　　　देयाले पेये बाधा
　काँदन फिरे आसे आपन-काछे ।।

आमार आँखि जल केह ना बोझे ।
　अवाक हये सबे कारण खोँजे ।
'किछुते नाहि तोष,　　　ए तो विषम दोष,
　ग्राम्य बालिकार स्वभाव ओ ये ।

चलेछे......जानि—नहीं जानती पथ कहाँ जाता है; **के.....देशे**—कौन जानता है कितने सैकड़ों नवीन देश में।

मुठितले—मूठी में; **चापिछे**—दबाता है; **बालिकारे**—बालिका को; **नाहिको माया**—ममता नहीं है; **खोला माठ**—खुला मैदान; **उदार**—प्रशस्त; **पाखिर गान**—पक्षियों का गान; **कइ**—कहाँ।

के येन....पाछे—कौन जैसे चारों ओर (घेर कर) खड़ा है, (अपना) मन खोल नहीं पाती, पीछे सुन न ले; **हेथाय**—यहाँ; **काँदा**—क्रन्दन; **देयाले....काछे**—दीवार की बाधा पा कर क्रन्दन अपने ही पास लौट आता है।

केह......बोझे—कोई नहीं समझता; **अवाक......खोँजे**—अवाक हो कर सभी कारण खोजते हैं; **किछुते.....तोष**—किसी (वस्तु) से संतोष नहीं होता; **ओ ये**—वह है जो;

स्वजन प्रतिवेशी   एत ये मेशोमेशि
ओ केन कोणे वसे नयन वोजे !'

केह वा देखे मुख, केह वा देह—
केह वा भालो वले, वले ना केह ।
फुलेर मालागाछि   विकाते आसियाछि—
परख करे सवे, करे ना स्नेह ।।

सवार माझे आमि फिरि एकेला ।
केमन करे काटे साराटा वेला ।
इँटेर 'परे इँट,   माझे मानुष-कीट—
नाइको भालोवासा, नाइको खेला ।।

कोथाय आछ तुमि कोथाय मा गो,
केमने भुले तुइ आछिस हाँगो !
उठिले नव शशी   छादेर 'परे वसि
आर कि रूपकथा वलिवि ना गो ?
हृदयवेदनाय   शून्य विछानाय
बुझि मा, आँखिजले रजनी जाग !
कुसुम तुलि लये   प्रभाते शिवालये
प्रवासी तनयार कुशल माग ।।

प्रतिवेशी—पड़ोसी; एत—इतना; मेशोमेशि—मिलना जुलना; ओ.....वोजे—वह कोने में आँखें वन्द कर क्यों वैठी रहती है ।

केह......केह—कोई अच्छा कहता है, कोई नहीं कहता; फुलेर मालागाछि .....आसियाछि—(मैं) फूल की माला मात्र (हूं), विकने आई हूँ ।

सवार...एकेला—सवके वीच अकेली फिरती हूँ; केमन...वेला—कैसे सव समय कटे; इँटेर....इँट—ईंट के ऊपर ईंट है; नाइको....खेला—न स्नेह है, न क्रीड़ा (का आयोजन) ।

कोथाय.....हाँगो—कहाँ हो तुम कहाँ हो माँ, कैसे तू (मुझे) भूली हुई हो; उठिले.....वलिवि ना गो—नव-चन्द्रमा के उदय होने पर छत पर वैठ क्या और दन्तकथाएँ नहीं सुनाओगी ; माग—मांगती हो ।

हेथाओ ओठे चाँद छादेर पारे,
   प्रवेश मागे आलो घरेर द्वारे।
आमारे खुँजिते से फिरिछे देशे देशे,
   येन से भालोवेसे चाहे आमारे।
निमेष-तरे ताइ आपना भुलि
   व्याकुल छुटे याइ दुयार खुलि।
अमनि चारिधारे नयन उँकि मारे,
   शासन छुटे आसे झटिका तुलि॥

देवे ना भालोवासा, देवे ना आलो!
   सदाइ मने हय, आँधार छायामय
दिघिर सेइ जल शीतल कालो,
   ताहारि कोले गिये मरण भालो।
डाक लो डाक तोरा, वल् लो वल्—
   'वेला ये पड़े एल, जल्के चल्।'
कवे पड़िवे बेला, फुरावे सव खेला,
   निवावे सव ज्वाला शीतल जल,
      जानिस यदि केह आमाय वल्॥

२३ मई १८८८ 'मानसी'

हेथाओ—यहाँ भी; **छादेर पारे**—छत के पार; **आमारे......आमारे**—मुझे खोजते वह स्थान-स्थान घूम रहा है, जैसे वह मुझसे प्रेम करना चाहता है; **निमेष-भरे......खुलि**—इसीलिये क्षण भर के लिये अपनेको भूल व्याकुल दौड़ कर जाती हूँ (और) दरवाजा खोलती हूँ; **अमनि......तुमि**—वैसे ही चारों ओर से आँखें छिप छिप कर देखने लगती हैं (और) शासन (सास आदि) झाड़ू उठाये दौड़ा आता है।

देवे ना—नहीं देगा; **सदाइ......हय**—सदा ही मन में होता है; **कालो**—काला; **ताहारि**—उसीकी; **कोले**—गोद में; **गिये**—जा कर; **डाक**—पुकार; **कवे......वेला**—कव समय पूरा होगा; **फुरावे......खेला**—सव खेल समाप्त होगा; **निवावे**—वुझा देगा; **जानिस......वल्**—(तुम में से) कोई यदि जानती हो तो मुझे वतला दे।

व्यक्त प्रेम

केन तवे केड़े निले लाज-आवरण !
हृदयेर द्वार हेने वाहिरे आनिले टेने,
शेषे कि पथेर माझे करिवे वर्जन ।।

आपन अन्तरे आमि छिलाम आपनि,
संसारे शत काजे छिलाम सवार माझे,
सकले येमन छिल आमिओ तेमनि ।।

तुलिते पूजार फुल येतेम यखन—
सेइ पथ छाया-करा, सेइ वेड़ा लता-भरा,
सेइ सरसीर तीरे करवीर वन—

सेइ कुहरित पिक शिरीषेर डाले,
प्रभाते सखीर मेला, कत हासि कत खेला,
के जानित की छिल ए प्राणेर आड़ाले ।।

वसन्ते उठित फुटे वने वेलफुल,
केह वा परित माला, केह वा भरित डाला,
करित दक्षिण वायु अञ्चल आकुल ।।

केन......निले—क्यों तव काढ़ लिया (हटा दिया); हेने—तोड़ कर, आघात कर; आनिले टेने—खींच लाए; करिवे—करोगे; वर्जन—त्याग ।

आमि—मैं; छिलाम—थी; सवार माझे—सवके मध्य, सवके वीच; येमन—जैसा; छिल—था; आमिओ—मैं भी; तेमनि—उसी प्रकार, वैसा ।

तुलिते—चुनने; येतेम—जाती; सेइ—उस; करवीर वन—कनेर का वन ।

कुहरित—कूजित; कत—कितना; के—कौन; जानित—जानता; की—क्या; आड़ाले—अन्तराल में ।

उठित फुटे—प्रस्फुटित हो उठता; केह—कोई; परित—पहनता; भरित—भरता; डाला—फूल की डलिया ।

बरषाय घन घटा, बिजुलि खेलाय,
प्रान्तरेर प्रान्तदिशे मेघे वने येत मिशे,
जुँइगुलि विकशित विकालबेलाय ।।

वर्ष आसे वर्ष याय, गृहकाज करि—
सुख दुःख भाग लये प्रतिदिन याय बये,
गोपन स्वपन लये काटे विभावरी ।।

लुकानो प्राणेर प्रेम पवित्र से कत !
आँधार हृदयतले मानिकेर मतो ज्वले,
आलोते देखाय कालो कलङ्केर मतो ।।

भाङिया देखिले छि छि नारीर हृदय ।
लाजे-भये-थरथर भालोबासा सकातर
तार लुकावार ठाँइ काड़िले, निदय ।।

आजिओ तो सेइ आसे वसन्त शरत् ।
बाँका सेइ चाँपाशाखे सोना-फुल फुटे थाके,
सेइ तारा तोले एसे, सेइ छाया पथ ।।

येत मिशे—मिल जाता; **जुँइगुलि**—जूही के फूल; **बिकालबेलाय**—तीसरे पहर।

आसे—आता है; **लये**—ले कर; **सुख......बये**—सुख-दुःख का भाग ले कर (सुख से दुःख से) दिन बीत जाता है; **गोपन.....विभावरी**—गोपन स्वप्नों को ले कर रात कट जाती है।

लुकानो—छिपा हुआ; **मतो**—जैसा, समान; **ज्वले**—प्रज्वलित होना; **आलोते**—प्रकाश में; **देखाय**—दीख पड़ता है।

भालोवासा—प्रेम; **तार**—उसका; **लुकाबार ठाँइ**—छिपने का स्थान।

आजिओ—आज भी; **बाँका**—वक्र, टेढ़ा; **चाँपा**—चम्पा; **तारा......एसे** वे आ कर तोड़ती हैं।

सबाइ येमन छिल, आछे अविकल;
सेइ तारा काँदे हासे, काज करे, भालोवासे,
करे पूजा; ज्वाले दीप, तुले आने जल ।।

केह उँकि मारे नाइ ताहादेर प्राणे,
भाङिया देखेनि केह हृदय गोपनगेह,
आपन मरम तारा आपनि ना जाने ।।

आमि आज छिन्न फुल राजपथे पड़ि,
पल्लवेर सुचिकन छायास्निग्ध आवरण
तेयागि धूलाय हाय याइ गड़ागड़ि ।।

नितान्त व्यथार व्यथी भालोवासा दिये
सयतने चिरकाल रचि दिवे अन्तराल,
नग्न करेछिनु प्राण सेइ आशा निये ।।

मुख फिरातेछ सखा, आज की वलिया !
भूल करे एसेछिले ? भूले भालोवेसेछिले ?
भूल भेङे गेछे ताइ येतेछ चलिया ?

सबाइ—सभी; अविकल—अविकृत, हू-ब-हू; काँदे—रोते हैं; ज्वाले—जलाते हैं; तुले आने—खींच लाते हैं।

उँकि मारे—झाँकता है; तारा—वे सब।

तेयागि—त्याग कर; गड़ागड़ि—भूलुण्ठित।

सयतने—यत्न पूर्वक; करेछिनु—किया था। निये—ले कर।

फिरातेछ—फिरा रहे हो; वलिया—वोल कर, कह कर; भूले.....एसेछिले—भूल से आए थे; भूले भालोवेसेछिले—भूल से प्यार किया था; भूले......गेछे—भ्रान्ति दूर हो गई है; ताइ—इसीलिये; येतेछ चलिया—चले जा रहे हो।

तुमि तो फिरिया याबे आज वइ काल,
आमार ये फिरिबार पथ राख नाइ आर,
धूलिसात् करेछ ये प्राणेर आड़ाल ।।

ए की निदारुण भूल, निखिलनिलये
एत शत प्राण फेले भूल करे केन एले
अभागिनी रमणीर गोपन हृदये ।।

भेबे देखो, आनियाछ मोरे कोन्खाने—
शत लक्ष-आँखि-भरा कौतुक-कठिन धरा
चेये रबे अनावृत कलङ्केर पाने ।।

भालोबासा ताओ यदि फिरे नेबे शेषे
केन लज्जा केड़े निले एकाकिनी छेड़े दिले
विशाल भवेर माझे विवसना वेशे ।।

२४ मई १८८८ 'मानसी'

फिरिवार—फिरने का, लौटने का; **राख नाइ**—नहीं रखा; **आर**—और।
फेले—छोड़ कर; **एले**—आए।
भेवे—सोच कर; **आनियाछ**—ले आए हो; **मोरे**—मुझे; **कोन्खाने**—कहाँ, किस स्थान पर; **चेये रबे**—देखती रहेगी; **पाने**—ओर।
भालोवासा......शेषे—अगर (अपने) प्यार को अन्त में लौटा लोगे; **केन......निड़े**—क्यों लज्जा को काढ़ लिया; **एकाकिनी......वेशे**—विवस्त्र (इस) विशाल संसार में अकेली क्यों छोड़ दिया।

मेघदूत

कविवर, कवे कोन् विस्मृत वरषे
कोन् पुण्य आषाढ़ेर प्रथम दिवसे
लिखेछिले मेघदूत ! मेघमन्द्र श्लोक
विश्वेर विरही यत सकलेर शोक
राखियाछे आपन आँधार स्तरे स्तरे
सघन संगीत-माझे पुञ्जीभूत क'रे ।।

सेदिन से उज्जयिनी-प्रासाद शिखरे
की ना जानि घनघटा, विद्युत्-उत्सव,
उद्दाम पवन वेग, गुरु गुरु रव !
गम्भीर निर्घोष सेइ मेघसंघर्षेर
जागाये तुलियाछिल सहस्र वर्षेर
अन्तर्गूढ़ वाष्पाकुल विच्छेद क्रन्दन
एक दिने । छिन्न करि कालेर वन्धन
सेइ दिन झरे पड़ेछिल अविरल
चिरदिवसेर येन रुद्ध अश्रुजल
आर्द्र करि तोमार उदार श्लोकराशि ।।

सेदिन कि जगतेर यतेक प्रवासी
जोड़हस्ते मेघ-पाने शून्ये तुलि माथा

कवे—कव; कोन्—किस; लिखेछिल—लिखा था; यत—जितने; राखियाछे—रखा है; क'रे—कर।

सेदिन—उस दिन; की......जानि—न-जाने कितनी ; सेइ—उसी; जागाये तुलियाछिल—जगा दिया था।

यतेक—जितने भी ; जोड़हस्ते—हाथ जोड़ कर ; मेघ-पाने—मेघ की ओर; तुलि माथा—सिर उठा कर;

गेयेछिल समस्वरे विरहेर गाथा
फिरि प्रियगृह-पाने ? बन्धनविहीन
नवमेघपक्ष'परे करिया आसीन
पाठाते चाहियाछिल प्रेमेर बारता
अश्रुबाष्पभरा—दूर वातायने यथा
विरहिणी छिल शुये भूतलशयने
मुक्तकेशे, म्लानवेशे, सजलनयने ?

तादेर सबार गान तोमार संगीते
पाठाये कि दिले, कवि, दिवसे निशीथे
देशे देशान्तरे खुंजि विरहिणी प्रिया ?
श्रावणे जाह्नवी यथा याय प्रवाहिया
टानि लये दिश-दिशान्तेर वारिधारा
महासमुद्रेर माझे हते दिशाहारा।
पाषाणशृंखले यथा बन्दी हिमाचल
आषाढ़े अनन्त शून्ये हेरि मेघदल
स्वाधीन गगनचारी कातरे निश्वासि
सहस्र कन्दर हते बाष्प राशि राशि
पाठाय गगन-पाने; धाय तारा छुटि

गेयेछिल—गाया था; **फिरि......पाने**—प्रियतमा के गृह की ओर मुँह फेर कर; **नवमेघ......वारता**—नवमेघ के पंखों पर बैठा कर प्रेम की वार्ता (संदेश) भेजना चाहा था; **छिल शुये**—सोई हुई थी।

तादेर.....दिले—उन सभी के गान अपने संगीत में क्या तुमने भेज दिए; **खुंजि**—खोज कर; **श्रावणे.....दिशाहारा**—श्रावण की जाह्नवी जैसे प्रवाहित हो कर सब ओर से वारिधारा को खींच कर महासमुद्र में विलीन होने जाती है; **हेरि**—देख कर; **कन्दर हते**—कन्दरे से; **पाठाय**—भेजता है; **गगन-पाने**—आकाश की ओर; **धाय.....सम**—वे निरुद्देश दौड़ने वाली कामना के समान दौड़ कर जाती हैं;

उधाओ कामना सम, शिखरेते उठि
सकले मिलिया शेषे हय एकाकार,
समस्त गगनतल करे अधिकार ।।

सेदिनेर परे गेछे कत शतवार
प्रथम दिवस स्निग्ध नव वरषार।
प्रति वर्षा दिये गेछे नवीन जीवन
तोमार काव्येर 'परे करि वरिषन
नव वृष्टिवारिधारा, करिया सञ्चार
नव नव प्रतिध्वनि जलदमन्द्रेर,
स्फीत करि स्रोतोवेग तोमार छन्देर
वर्षातरङ्गिणीसम ।।

कत काल धरे
कत सङ्गीहीन जन प्रियाहीन घरे
वृष्टिक्लान्त वहुदीर्घ लुप्तताराशशी
आषाढ़ सन्ध्याय, क्षीण दीपालोके वसि
ओइ छन्द मन्द मन्द करि उच्चारण
निमग्न करेछे निज विजन-वेदन।
से-सवार कन्ठस्वर कर्णे आसे मम
समुद्रेर तरङ्गेर कलध्वनि सम
तव काव्य हते ।।

मिलिया—मिल कर; शेषे—अन्त में; हय—हो जाते हैं।

सेदिनेर......वरषार—उस दिन के वाद स्निग्ध नव वर्षा का प्रथम दिवस कई सौ वार (आया) गया है; दिये गेछे—दे गया है।

कत......धरे—कितने काल से; वसि—वैठ कर; ओइ छन्द—उस छन्द को; करि—कर; से-सवार—वह सभी का; आसे—आता है; हते—से।

भारतेर पूर्वशेषे
आमि वसे आछि सेइ श्याम वङ्गदेशे
येथा जयदेव कवि कोन् वर्षादिने
देखेछिला दिगन्तेर तमालविपिने
श्यामच्छाया, पूर्ण मेघे मेदुर अम्बर ।।

आजि अन्धकार दिवा, वृष्टि झरझर,
दुरन्त पवन अति, आक्रमणे तार
अरण्य उद्यतबाहु करे हाहाकार ।
विद्युत् दितेछे उँकि छिँड़ि मेघभार
खरतर वक्रहासि शून्ये बरषिया ।।

अन्धकार रुद्धगृहे एकेला वसिया
पड़ितेछि मेघदूत । गृहत्यागी मन
मुक्तगति मेघपृष्ठे लयेछे आसन,
उड़ियाछे देशदेशान्तरे । कोथा आछे
सानुमान आम्रकूट, कोथा बहियाछे
विमल विशीर्ण रेवा विन्ध्यपदमूले
उपलव्यथित गति, वेत्रवतीकूले
परिणतफलश्याम जम्बुवनच्छाये
कोथाय दशार्ण ग्राम रयेछे लुकाये

पूर्वशेषे—पूर्वी सीमा; **आमि......आछि**—मैं बैठा हूँ; **येथा**—यहां; **देखेछिला**—देखा था।

उद्यतबाहु—हाथ उठाए हुए; **विद्युत्......मेघभार**—मेघ-समूह को चीर कर बिजली झाँकती है।

एकेला—अकेला; **बसिया**—बैठ कर; **पड़ितेछि**—पढ़ रहा हूँ; **मुक्त-गति**—स्वच्छन्द गति वाले; **मेघपृष्ठे**—मेघ की पीठ पर; **लयेछे**—लिया है; **कोथा आछे**—कहाँ है; **विशीर्ण**—अतिशय शीर्ण, कृश; **रयेछे लुकाये**—छिपा हुआ है;

प्रस्फुटित केतकीर बेड़ा दिये घेरा,
पथतरुशाखे कोथा ग्रामविहङ्गेरा
वर्षाय बाँधिछे नीड़ कलरवे घिरे
वनस्पति। ना जानि से कोन् नदीतीरे
यूथीवनविहारिणी वनाङ्गना फिरे;
तप्त कपोलेर तापे क्लान्त कर्णोत्पल
मेघेर छायार लागि हतेछे विकल।
भ्रूविलास शेखे नाइ कारा सेइ नारी
जनपदवधूजन गगने नेहारि
घनघटा उर्ध्वनेत्रे चाहे मेघ-पाने;
घननील छाया पड़े सुनील नयाने।
कोन् मेघश्यामशैले मुग्ध सिद्धाङ्गना
स्निग्ध नवघन हेरि आछिल उन्मना
शिलातले; सहसा आसिते महा झड़
चकित चकित हये भये-जड़सड़
सम्वरि वसन फिरे गुहाश्रय खुँजि,
वले, 'मागो, गिरिशृंग उड़ाइल बुझि!'
कोथाय अवन्तीपुरी, निर्विन्ध्या तटिनी,
कोथा शिप्रानदीनीरे हेरे उज्जयिनी
स्वमहिमच्छाया। सेथा निशि द्विप्रहरे

केतकीर......घेरा—केतकी के वाड़ेसे घिरा हुआ है; वर्षाय—वर्षा में; विहङ्गेरा—पक्षीगण; मेघेर......विकल—मेघ की छाया के लिये व्याकुल हो रही है; शेखे नाइ—सीखा नहीं है; कारा......नारी—वे कौन स्त्रियां हैं: नेहारि—निहारती हुई; चाहे.....पाने—मेघ की ओर देखती हैं; नयाने—नयनों में; हेरि—देख कर; आछिल—थी; सहसा.....झड़—सहसा भयंकर आँधी के आने पर; चकित.....जड़सड़—भयाक्रान्त हो कर कांप रही है; सम्वरि—संभाल कर; सम्वरि.....खुंजि—वस्त्र संभाल कर आश्रय के लिये गुफा खोजती फिरती है; वले......वुझि——कहती है 'मां री, लगता है (आँधी) गिरिशृङ्ग उड़ा देगी'; निर्विन्ध्या—विन्ध्या से अलग; हेरे—देखती है; सेथा—वहां;

प्रणयचाञ्चल्य भुलि भवनशिखरे
सुप्त पारावत; शुधु विरह विकारे
रमणी बाहिर हय प्रेम-अभिसारे
सूचीभेद्य अन्धकारे राजपथ-माझे
क्वचित्-विद्युतालोके। कोथा से विराजे
ब्रह्मावर्ते कुरुक्षेत्र। कोथा कनखल,
येथा सेइ जह्नु कन्या यौवन-चञ्चल
गौरीर भ्रुकुटिभङ्गी करि अवहेला
फेनपरिहासच्छले करितेछे खेला
लये धूर्जटिर जटाचन्द्रकरोज्ज्वल॥

एइ मतो मेघरूपे फिरि देशे देशे
हृदय भासिया चले उत्तरिते शेषे
कामनार मोक्षधाम अलकार माझे,
विरहिणी प्रियतमा येथाय विराजे
सौन्दर्येर आदिसृष्टि। सेथा के पारित
लये येते तुमि छाड़ा करि अवारित
लक्ष्मीर विलासपुरी—अमर भुवने!
अनन्त वसन्ते येथा नित्य पुष्पवने
नित्य चन्द्रालोके, इन्द्रनील शैलमूले
सुवर्णसरोजफुल्ल सरोवर कूले,

भुलि—भूल कर; **शुधु**—केवल; **बाहिर हय**—बाहर होती है; **येथा**—जहां; **करि**—कर के; **फेन......खेला**—फेन के रूप में परिहास करती हुई क्रीड़ा कर रही है; **लये**—ले कर।

एइ मतो—इसी तरह से; **एइ मतो.....माझे**—इसी प्रकार से (मेरा) हृदय मेघ के रूप में देश-देश में बहता-फिरता अन्त में कामना के मोक्षधाम अलका में उत्तीर्ण होने के लिये जाता है; **सेथा.....अमर भुवने**—तुम्हारे सिवा लक्ष्मी की विलासपुरी अमरलोक में निर्बाध कौन ले जा सकता था।

मणिहर्म्ये असीम सम्पदे निमगना
काँदितेछे एकाकिनी विरहवेदना।
मुक्त वातायन हते याय तारे देखा—
शय्याप्रान्ते लीनतनु क्षीण शशीरेखा
पूर्वगगनेर मूले येन अस्तप्राय।
कवि, तव मन्त्रे आजि मुक्त हये याय
रुद्ध एइ हृदयेर वन्धनेर व्यथा।
लभियाछि विरहेर स्वर्गलोक येथा
चिरनिशि यापितेछे विरहिणी प्रिया
अनन्त सौन्दर्य-माझे एकाकी जागिया॥

आवार हाराये याय। हेरि, चारिधार
वृष्टि पड़े अविश्राम। घनाये आँधार
आसिछे निर्जन निशा। प्रान्तरेर शेषे
केँदे चलियाछे वायु अकूल-उद्देशे।
भावितेछि अर्धरात्रि अनिद्रनयान—
के दियेछे हेन शाप, केन व्यवधान?
केन उर्ध्वे चेये काँदे रुद्ध मनोरथ?

काँदितेछे—रो रही है; **मुक्त......देखा**—खुली खिड़की से उसे देखा जा सकता है; **येन**—जैसे; **एइ**—यह; **लभियाछि**—प्राप्त की है; **येथा**—जहाँ; **यापितेछे**—यापन कर रही है; **जागिया**—जाग कर।

आवार.....याय—फिर खो जाता है; **हेरि......अविश्राम**—देखता हूँ, चारों ओर विना थमे वृष्टि पड़ रही है; **घनाये......निशा**—निर्जन निशा अंधकार को घन (गाढ़) करती हुई आती है; **प्रान्तरेर.....उद्देशे**—हवा असीम के संधान में क्रन्दन करती हुई प्रान्तर (खुले विस्तृत मैदान) की अन्तिम छोर से हो कर चली है; **भावितेछि**—सोच रहा हूँ; **अनिद्रनयान**—आँखों में नींद नहीं है; **के.....व्यवधान**—किसने ऐसा शाप दिया है, क्यों (ऐसा) व्यवधान है; **केन.....मनोरथ**—क्यों ऊपर की ओर देखता हुआ रुद्ध मनोरथ क्रन्दन करता है;

केन प्रेम आपनार नाहि पाय पथ ?
सशरीरे कोन् नर गेछे सेइखाने,
मानससरसीतीरे विरहशयाने,
रविहीन मणिदीप्त प्रदोषेर देशे
जगतेर नदी गिरि सकलेर शेषे !

२०-२१ मई १८९० 'मानसी'

अहल्यार प्रति

की स्वप्ने काटाले तुमि दीर्घ दिवानिशि,
अहल्या, पाषाणरूपे धरातले मिशि
निर्वापित-होम-अग्नि तापस-विहीन
शून्य तपोवनच्छाये ! आछिले विलीन
बृहत् पृथ्वीर साथे हये एकदेह,
तखन कि जेनेछिले तार महास्नेह ?
छिल कि पाषाणतले अस्पष्ट चेतना ?
जीवधात्री जननीर विपुल वेदना,
मातृधैर्ये मौन मूक सुख दुःख यत
अनुभव करेछिले स्वप्नेर मतो
सुप्त आत्मा माझे ? दिवारात्रि अहरह
लक्षकोटि परानिर मिलन, कलह—

केन.....पथ—क्यों प्रेम अपना पथ नहीं पाता ; **गेछे**—गया है ; **सेइखाने**—उस स्थान पर।

की.....तुमि—तुमने किस स्वप्न में काट दिया (बिता दिया); **धरातल मिशि**—मिट्टी से मिल कर; **निर्वापित**—बुझाया हुआ; **आछिले......एकदेह**—बृहत् पृथ्वी के साथ एक देह हो कर (तुम) विलीन थी; **तखन.....महास्नेह**—उस समय क्या उसके महास्नेह को जाना था; **छिल कि**—क्या था; **यत**—जितना; **अनुभव.....माझे**—सुप्त आत्मा में स्वप्न के समान (क्या तुमने) अनुभव किया था; **अहरह**—सर्वदा; **लक्षकोटि परानिर**—लाखों, करोड़ों प्राणियों का ;

आनन्दविषादक्षुब्ध क्रन्दन, गर्जन,
अयुत पान्थेर पदध्वनि अनुक्षण
पशित कि अभिशापनिद्रा भेद क'रे
कर्ण तोर—जागाइया राखित कि तोरे
नेत्रहीन मूढ़ रूढ़ अर्धजागरणे ?
बुझिते कि पेरेछिले आपनार मने
नित्य-निद्राहीन व्यथा महाजननीर ?
येदिन वहित नव वसन्तसमीर
धरणीर सर्वाङ्गेर पुलकप्रवाह
स्पर्श कि करित तोरे ? जीवन-उत्साह
छुटित सहस्रपथे मरुदिग्विजये
सहस्र आकारे, उठित से क्षुब्ध हये
तोमार पाषाण घेरि करिते निपात
अनुर्वरा-अभिशाप तव; से आघात
जागात कि जीवनेर कम्प तव देहे ? ।।

यामिनी आसित यवे मानवेर गेहे
धरणी लइत टानि श्रान्त तनुगुलि
आपनार वक्ष-'परे। दुःखश्रम भुलि

अयुत—दस सहस्र; वहुसंख्य; पान्थेर—पथिकों की; अनुक्षण—निरन्तर; पशित ......तोर—अभिशापनिद्रा का भेदन कर क्या तुम्हारे कानों में प्रवेश करता; जागाइया.....तोरे—क्या तुम्हें जगा रखता; मूढ़—जड़; रूढ़—अप्रिय; बुझिते .....महाजननीर—महाजननी (पृथ्वी) की नित्य-निद्राहीन व्यथा को क्या अपने मन में (तुम) समझ सकी थी; येदिन—जिस दिन; वहित—वहता; स्पर्श..... तोरे—तुम्हें क्या स्पर्श करता; छुटित—दौड़ता, वेग से प्रवाहित होता; उठित ......घेरि—तुम्हारे पाषाण को घेर कर वह आलोड़ित हो उठता; करिते..... तव—तुम्हारे अनुर्वर अभिशाप को ध्वंस करने के लिये ; से.....देहे—वह आघात क्या तुम्हारे शरीर में जीवन का कंपन जाग्रत करता।

आसित—आती; यवे—जव; धरणी......'परे—पृथ्वी श्रान्त शरीरों (शरीरवालों) को अपनी छाती पर खींच लेती; भुलि—भूल कर ;

घुमात असंख्य जीव—जागित आकाश—
तादेर शिथिल अङ्ग, सुषुप्त निश्वास
विभोर करिया दित धरणीर बुक।
मातृ-अङ्गे सेइ कोटि-जीवस्पर्शसुख,
किछु तार पेयेछिले आपनार माझे ?
ये गोपन अन्तःपुरे जननी विराजे—
विचित्रित यवनिका पत्रपुष्पजाले
विविध वर्णेर लेखा, तारि अन्तराले
रहिया असूर्यम्पश्य नित्य चुपे चुपे
भरिछे सन्तानगृह धनधान्यरूपे
जीवने यौवने—सेइ गूढ़ मातृकक्षे
सुप्त छिले एतकाल धरणीर वक्षे
चिररात्रिसुशीतल विस्मृति-आलये—
येथाय अनन्तकाल घुमाय निर्भये
लक्ष जीवनेर क्लान्ति धूलिर शय्याय,
निमेषे निमेषे येथा झ'रे प'ड़े याय
दिवातापे शुष्क फूल, दग्ध उल्का तारा,
जीर्ण कीर्ति, श्रान्त सुख, दुःख दाहहारा।।

घुमात—सोते रहते; **जागित**—जागता रहता; **तादेर**—उन सबों के; **करिया दित**—कर देता; **धरणीर बुक**—पृथ्वी की छाती (हृदय); **सेइ**—वह; **किछु.....माझे**—अपने भीतर उसका कुछ (क्या तुमने) पाया था; **ये**—जिस; **विचित्रित**—नाना भाव से चित्रित; **तारि अन्तराले रहिया**—उसीके अन्तराल में रह कर; **भरिछे**—भर रहा है; **सेइ**—उसी; **गूढ़**—निगूढ़; **सुप्त छिले**—सुप्त थी; **एतकाल**—इतने काल; **येथाय**—जहाँ; **घुमाय**—सोता है; **निमेषे.....फूल**—क्षण-क्षण में जहाँ दिन की गर्मी से सूखे हुए फूल झरते पड़ते रहते हैं; **हारा**—पराजित।

सेथा स्निग्ध हस्त दिये पापतापरेखा
मुछिया दियाछे माता। दिले आजि देखा
धरित्रीर सद्योजात कुमारीर मतो
सुन्दर सरल शुभ्र। हये वाक्यहत
चेये आछ प्रभातेर जगतेर पाने।
ये शिशिर पड़ेछिल तोमार पाषाणे
रात्रिबेला, एखन से काँपिछे उल्लासे
आजानुचुम्बित मुक्त कृष्ण केशपाशे।
ये शैवाल रेखेछिल ढाकिया तोमाय
धरणीर श्यामशोभा अञ्चलेर प्राय
वहुवर्ष हते, पेये वहु वर्षाधारा
सतेज सरस घन, एखनो ताहारा
लग्न हये आछे तव नग्न गौर देहे
मातृदत्त वस्त्रखानि सुकोमल स्नेहे॥

हासे परिचित हासि निखिल संसार।
तुमि चेये निर्निमेष। हृदय तोमार
कोन् दूर कालक्षेत्रे चले गेछे एका
आपनार धूलिलिप्त पदचिह्नरेखा

सेथा......माता—वहाँ स्निग्ध हाथों द्वारा माता ने पाप ताप रेखा को पोंछ दिया है ; **दिले......देखा**—आज दीख पड़ी ; **मतो**—समान, जैसी ; **हये......पाने**—वाक्यहीन हो कर प्रभातकालीन जगत् की ओर देख रही हो; **ये......रात्रिबेला**—रात में जो शिशिर-कण तुम्हारे पाषाण पर गिरे थे; **एखन**—इस समय; **से**—वे; **ये**—जो; **शैवाल**—सेवार; **रेखेछिल......तोमाय**—तुम्हें ढँक रखा था; **अञ्चलेर प्राय**—अञ्चल के समान; **वहुवर्ष हते**—अनेक वर्षों से; **पेये**—पा कर; **एखनो......स्नेहे**—सुकोमल स्नेह से माता के दिए हुए वस्त्र के समान अभी भी वे तुम्हारी नग्न गौर देह से लगे हुए हैं।

हासे.....संसार—समस्त संसार (वही) सुपरिचित हँसी हँस रहा है; **तुमि चेये निर्निमेष**—तुम निर्निमेष देख रही हो; **कोन्.....चिने चिने**—अपनी धूलिलिप्त पद-चिह्न-रेखा को पद-पद पर पहचानते पहचानते किसी दूर कालक्षेत्र में अकेला

पदे पदे चिने चिने। देखिते देखिते
चारिदिक हते सब एल चारिभिते
जगतेर पूर्व परिचय। कौतूहले
समस्त संसार ओइ एल दले दले
सम्मुखे तोमार; थेमे गेल काछे एसे
चमकिया। विस्मये रहिल अनिमेषे।।

अपूर्व रहस्यमयी मूर्ति विवसन,
नवीन शैशवे स्नात सम्पूर्ण यौवन—
पूर्णस्फुट पुष्प यथा श्यामपत्रपुटे
शैशवे यौवने मिशे उठियाछे फुटे
एक वृन्ते। विस्मृतिसागर-नीलनीरे
प्रथम उषार मतो उठियाछ धीरे।
तुमि विश्व-पाने चेये मानिछ विस्मय,
विश्व तोमा-पाने चेये कथा नाहि कय;
दोँहे मुखोमुखि। अपार रहस्यतीरे
चिरपरिचय-माझे नव परिचय।।

२४-२५ मई १८९०। 'मानसी'

चला गया है; **देखिते देखिते**—देखते देखते; **चारिदिक हते**—चारों ओर से; **सब एल**—सब आए; **कौतूहले.....तोमार**—समस्त संसार दल बाँध बाँध कर तुम्हारे सामने वह आया; **थेमे......चमकिया**—विस्मित हो कर पास आ कर ठहर गया; **विस्मये......अनिमेषे**—विस्मय से टकटकी बाँध कर रह गया।

विवसन—निर्वसन, बिना वस्त्र के; **शैशवे.....वृन्ते**—शैशव, यौवन मिल कर एक वृन्त पर प्रस्फुटित हुए हो; **प्रथम......धीरे**—प्रथम उषा के समान धीरे उठी हो; **तुमि.....विस्मय**—तुम संसार की ओर देख कर विस्मय कर रही हो; **विश्व .....कय**—विश्व तुम्हारी ओर देखता हुआ बात नहीं करता (बोलता नहीं); **दोँहे मुखोमुखि**—दोनों आमने-सामने (हैं); **माझे**—मध्य, बीच।

सोनार तरी

गगने गरजे मेघ घन वरषा।
कूले एका वसे आछि, नाहि भरसा।
राशि राशि भारा भारा धान-काटा हल सारा,
भरा नदी क्षुरधारा खर-परशा।
काटिते काटिते धान एल वरषा।।

एकखानि छोटो खेत आमि एकेला,
चारिदिके बाँका जल करिछे खेला।
परपारे देखि आँका तरुछाया मसी-माखा
ग्रामखानि मेघे-ढाका प्रभात वेला।
ए पारेते छोटो खेत, आमि एकेला।।

गान गेये तरी वेये के आसे पारे।
देखे येन मने हय, चिनि उहारे।

घन वरषा—प्रवल वृष्टि; **एका**—अकेला; **वसे आछि**—बैठा हूँ; **नाहि भरसा**—आशा (भरोसा) नहीं है। **राशि**—स्तूप; **भारा**—मचान; **धान-काटा**—धान का काटना; **हल सारा**—पूरा हुआ; **राशि......सारा**—(पूर्व वंग का एक प्रकार का धान जो पानी के बढ़ने के साथ बढ़ता है और जिसकी वालियाँ काटी जाती हैं; इसे काटने के लिये वहते हुए मचान को काम में लाते हैं।); **भरा नदी**—भरी हुई नदी; **क्षुरधारा**—उस्तरे के समान तीक्ष्ण धारा; **खर-परशा**—तीक्ष्ण स्पर्श वाली।

एकखानि—एक; **आमि**—मैं; **एकेला**—अकेला; **चारिदिके......खेला**—चारों ओर वक्र जल (जल की वक्र गति) खेल कर रहा है; **परपारे**—दूसरे पार; **देखि**—देखता हूँ; **आँका**—अंकित; **मसी**—स्याही; **माखा**—पुता हुआ; **मेघे-ढाका**—मेघ से ढका हुआ; **ए पारेते**—इस पार।

गेये—गाता हुआ; **वेये**—खेता हुआ; **के......पारे**—कौन पार आ रहा है। **देखे......उहारे**—देखने से लगता है जैसे उसे पहचानता हूँ;

भरा पाले चले याय, कोनो दिके नाहि चाय,
ढेउगुलि निरुपाय भाङे दुधारे—
देखे येन मने हय चिनि उहारे ॥

ओगो तुमि कोथा याओ कोन् विदेशे।
बारेक भिड़ाओ तरी कूलेते एसे।
येयो येथा येते चाओ, यारे खुशि तारे दाओ,
शुधु तुमि निये याओ क्षणिक हेसे
आमार सोनार धान कूलेते एसे ॥

यतो चाओ तत लओ तरणी-'परे।
आर आछे?—आर नाइ, दियेछि भरे।
एतकाल नदीकूले याहा लये छिनु भुले
सकलि दिलाम तुले थरे बिथरे—
एखन आमारे लहो करुणा क'रे ॥

भरा पाले—भरे हुए पाल से; **चले याय**—चला जा रहा है; **कोनो......चाय**—किसी तरफ नहीं देखता; **ढेउगुलि**—लहरें; **निरुपाय**—असहाय; **भाङे दुधारे**—दोनों ओर टूटती हैं।

ओगो......विदेशे—ओ, तुम कहाँ जा रहे हो, किस विदेश में; **बारेक...... एसे**—किनारे पर आ कर एक बार नौका लगाओ; **येयो.....चाओ**—जहाँ जाना चाहो चले जाना; **यारे......दाओ**—जिसे खुशी हो उसे देना; **शुधु......हेसे**—सिर्फ क्षण भर हँस तुम ले जाओ; **आमार.....एसे**—किनारे पर आ कर मेरे सोना के धान को।

यतो चाओ—जितना चाहो; **तत लओ**—उतना ले लो; **तरणी 'परे**—नौका पर; **आर आछे?**—और है; **आर नाइ**—और नहीं है; **दियेछि भरे**—भर दिया है; **एतकाल**—इतने काल (तक); **नदीकूले**—नदी के किनारे; **याहा लये**—जिसे ले कर; **छिनु भूले**—भूला हुआ था; **सकलि.....विथरे**—सब उठा कर नाना स्तरों में सजा कर रख दिया है; **एखन**—अब; **आमारे लहो**—मुझे लो; **करुणा क'रे**—दया करके।

ठाँइ नाइ, ठाँइ नाइ, छोटो से तरी
आमारि सोनार धाने गियेछे भरि।
श्रावणगगन घिरे घन मेघ घुरे फिरे,
शून्य नदीर तीरे रहिनू पड़ि—
याहा छिल निये गेल सोनार तरी ।।

फरवरी-मार्च १८९२ 'सोनार तरी'

हिं टिं छट्

(स्वप्नमङ्गल)

स्वप्न देखेछेन रात्रे हवुचन्द्र भूप—
अर्थ तार भावि भावि गवुचन्द्र चुप।
शियरे बसिया येन तिनटे वाँदरे
उकुन वाछितेछिल परम आदरे,
एकटु नड़िते गेले गाले मारे चड़,
चोखे मुखे लागे तार नखेर आँचड़।
सहसा मिलालो तारा, एल एक वेदे,
'पाखि उड़े गेछे' व'ले मरे केँदे केँदे।

ठाँइ......नाइ—जगह नहीं है, जगह नहीं है; **छोटो......तरी**—वह छोटी नौका है; **आमारि......भरि**—मेरे ही सोना के धान से भर गई है; **घुरे फिरे**—घूमते फिरते हैं; **शून्य......पड़ि**—शून्य नदी के तीर पर अकेला पड़ा रह गया; **याहा......तरी**—जो कुछ था सोने की नौका ले गई।

देखेछेन—देखा है; **तार**—उसका; **भावि भावि**—सोच-सोच; **शियरे...... वाँदरे**—सिरहाने बैठ कर जैसे तीन वन्दर; **उकुन......आदरे**—परम आदर (दुलार) के साथ उत्कुण (ढील) निकाल रहे हैं; **एकटु......चड़**—ज़रा-सा हिलने-डुलने पर गाल पर चपत लगाते हैं; **चोखे......आँचड़**—आँख, मुंह में उनके नखों की खरोंच लगती है; **सहसा......तारा**—सहसा वे विलीन हो गए; **एल**—आया; **वेदे**—घुमक्कड़ जाति (Bedouin) का एक आदमी; **पाखि......केँदे**—'पक्षी उड़ गया है' कह कह रोते रोते मर रहा है;

सम्मुखे राजारे देखि तुलि निल घाड़े,
झुलाये वसाये दिल उच्च एक दाँड़े।
निचेते दाँड़ाये एक बुड़ि थुड़थुड़ि,
हासिया पायेर तले देय सुड़सुड़ि।
राजा बले 'की आपद' केह नाहि छाड़े,—
पा दुटा तुलिते चाहे, तुलिते ना पारे।
पाखिर मतन राजा करे छट्पट्,
बेदे काने काने बले—हिं टिं छट्।
स्वप्नमङ्गलेर कथा अमृतसमान,
गौड़ानन्द कवि भने, शुने पुण्यवान॥

हबुपुर राज्ये आज दिन छयसात
चोखे कारो निद्रा नाइ, पेटे नाइ भात।
शीर्ण गाले हात दिये नत करि शिर
राज्यशुद्ध बालवृद्ध भेबेइ अस्थिर।

सम्मुखे......घाड़े—सामने राजा को देख गर्दन पर उठा लिया; **झुलाये......दिल**—झुला कर बैठा दिया; **दाँड़े**—पालतू पक्षी के बैठने का दण्ड; **निचेते**—नीचे से; **दाँड़ाये**—खड़ी हो कर; **बुड़ि**—बुढ़िया; **थुड़थुड़ि**—अति वृद्ध; **हासिया**—हँस कर; **पायेर......सुड़सुड़ि**—पैर के तलवे में गुदगुदाती है; **राजा......छाड़े**—राजा कहते हैं 'क्या दुर्गति है,' कोई छोड़ता नहीं है; **पा......पारे**—दोनों पैर उठाना चाहता है (लेकिन) उठा नहीं पाता; **पाखिर......छट्पट्**—पक्षी जैसा राजा छटपट करता है; **बेदे.....छट्**—बेदे कान में कहता है, 'हिं टिं छट्'; **स्वप्नमंगलेर......पुण्यवान**—स्वप्नमंगल की कथा अमृत के समान है; गौड़ानन्द कवि कहते हैं, (और) पुण्यवान सुनते हैं।

हबुपुर......भात—हबुपुर राज्य में आज छः सात दिनों से किसीकी आँख में नींद नहीं है (और) न पेट में भात है; **शीर्ण......अस्थिर**—शीर्ण गाल पर हाथ रखे और सिर नीचा कर समस्त राज्य के बाल-वृद्ध सोच सोच कर अस्थिर (चंचल) हैं;

छेलेरा भुलेछे खेला, पण्डितेरा पाठ,
मेयेरा करेछे चुप एतइ विभ्राट।
सारि सारि वसे गेछे कथा नाहि मुखे,
चिन्ता यत भारी हय माथा पड़े झुँके।
भुँइफोँड़ तत्त्व येन भूमितले खोँजे,
सवे येन वसे गेछे निराकार भोजे।
माझे माझे दीर्घश्वास छाड़िया उत्कट,
हठात् फुकारि उठे—हिं टिं छट्।
स्वप्नमङ्गलेर कथा अमृतसमान,
गौड़ानन्द कवि भने, शुने पुण्यवान॥

चारिदिक हते एल पण्डितेर दल,—
अयोध्या कनोज काञ्ची मगध कोशल।
उज्जयिनी हते एल वुध-अवतंश
कालिदास कवीन्द्रेर भागिनेयवंश।
मोटा मोटा पुँथि लये उल्टाय पाता,
घन घन नाड़े वसि टिकिसुद्ध माथा।

छेलेरा......पाठ—बच्चे खेलना भूल गए हैं और पण्डितगण पाठ; **मेयेरा..... विभ्राट**—स्त्रियाँ चुप हैं इतना वड़ा विभ्राट (जो हो गया है); **सारि सारि......मुखे**—झुंड के झुंड (लोग) वैठ गए हैं, मुख में वात नहीं है; **चिन्ता......झुंके**—चिन्ता जितनी भारी होती है (उतना ही) सिर झुक पड़ता है; **भुँइ फोँड़.....खोँजे**—भूतत्त्ववेत्ता जैसे पृथ्वी के नीचे तत्त्व खोजता है; **सवे...... भोजे**—सव जैसे निराकार भोज के लिये वैठ गए हैं; **माझे......छट्**—वीच-वीच में दीर्घ-श्वास छोड़ कर हठात् उत्कट चीत्कार कर उठते हैं 'हिं टिं छट्'।

चारिदिक......दल—चारों ओर से पण्डितों का दल आया; **हते**—से; **एल**—आया; **वुध–अवतंश**—पंडित-श्रेष्ठ, पंडित-शिरोमणि; **भागिनेयवंश**—भांजा-वंश का; **मोटा.....पाता**—मोटी मोटी पोथी ले कर पन्ना उलटते हैं; **घन......माथा**—वार वार चुटिया-सहित सिर हिलाते हैं;

बड़ो बड़ो मस्तकेर पाका शस्यखेत
वातासे दुलिछे येन शीर्ष-समेत।
केह श्रुति, केह स्मृति, केह वा पुराण,
केह व्याकरण देखे केह अभिधान।
कोनोखाने नाहि पाय अर्थ कोनोरूप,
वेड़े ओठे अनुस्वर-विसर्गेर स्तूप।
चुप करे वसे थाके विषम संकट,
थेके थेके हेँके ओठे—हिं टिं छट्।
स्वप्नमङ्गलेर कथा अमृतसमान,
गौड़ानन्द कवि भने, शुने पुण्यवान॥

कहिलेन हताश्वास हबुचन्द्र राज,
'म्लेच्छदेशे आछे नाकि पण्डित समाज—
ताहादेरे डेके आनो ये येखाने आछे,
अर्थ यदि धरा पड़े ताहादेर काछे।'
कटाचुल नीलचक्षु कपिशकपोल
यवन पण्डित आसे, बाजे ढाक ढोल।

बड़ो बड़ो—बड़े-बड़े; **मस्तकेर.....खेत**—मस्तक का पका हुआ शस्यखेत (अर्थात् सिर के उजले केश); **वातासे....समेत**—हवा में जैसे शीर्ष-समेत झुलते हैं; **केह**—कोई; **केह वा**—अथवा कोई; **देखे**—देखता है; **अभिधान**—कोष; **कोनोखाने.... कोनोरूप**—कहीं भी किसी प्रकार का अर्थ नहीं पाते; **वेड़े......स्तूप**—अनुस्वार और विसर्ग का स्तूप बढ़ उठता है; **चुप....संकट**—चुप हो कर बैठे रहते हैं, विषम संकट है; **थेके थेके**—रह-रह कर; **हेंके ओठे**—उच्चस्वर से बोल उठते हैं।

कहिलेन—कहा; **हताश्वास**—निराश हो कर; **म्लेच्छ देशे......समाज**—कहते हैं म्लेच्छ देश में पण्डितों का समाज है; **ताहादेरे**—उनलोगों को; **डेके आनो**—बुला लाओ; **ये**—जो; **येखाने**—जहाँ, जिस स्थान पर; **आछे**—है; **अर्थ......काछे**—अर्थ यदि उनके निकट पकड़ाई दे, अर्थात् शायद उन्हें अर्थ का पता चले; **कटाचुल**—पिङ्गलवर्ण केश; **नीलचक्षु**—नील वर्ण की आँखें; **कपिश**—मटमैला, धूल के रंग का; **आसे**—आता है; **बाजे**—बजता है; **ढाक**—ढक्का, एक प्रकार का बाजा;

गाये कालो मोटा मोटा छाँटा छोँटा कुर्ति;
ग्रीष्म तापे उष्मा वाड़े, भारि उग्रमूर्ति।
भूमिका ना करि किछु घड़ि खुलि कय,
'सतेरो मिनिट मात्र रयेछे समय,
कथा यदि थाके किछु वलो चट्पट्।'
सभासुद्ध वलि उठे—हिं टिं छट्।
स्वप्नमङ्गलेर कथा अमृतसमान,
गौड़ानन्द कवि भने, शुने पुण्यवान ॥

स्वप्न शुनि म्लेच्छमुख राङा टक्टके,
आगुन छुटिते चाय मुखे आर चोखे।
हानिया दक्षिण मुष्टि वाम करतले,
'डेके एने परिहास' रेगेमेगे वले।
फरासी पण्डित छिल हास्योज्ज्वल मुखे,
कहिल नोयाये माथा, हस्त राखि वुके,
'स्वप्न याहा शुनिलाम राजयोग्य वटे,
हेन स्वप्न सकलेर अदृष्टे ना घटे।

गाये......कुर्ति—शरीर में मोटा मोटा छाँटाछुंटा कुरता है; **उष्मा वाड़े**—ताप वढ़ता है; **भारि**—भारी, अत्यधिक; **भूमिका.....कया**—विना किसी भूमिका के घड़ी खोल कर कहता है; **सतेरो**—सत्रह; **रयेछे**—रह गया है; **कथा......चट्पट्**—अगर कुछ वात हो तो चटपट वोलो; **सभासुद्ध......उठे**—समस्त सभा वोल उठी।

शुनि—सुन कर; **राङा टक्टके**—खूव गाढ़ा लाल; **आगुन**—अग्नि; **छुटिते चाय**—दौड़ना चाहती है; **आर**—और; **चोखे**—आँख में; **हानिया**—मार कर, आघात कर; **दक्षिण मुष्टि**—दाहिनी मुट्ठी; **वाम**—वायीं; **करतले**—तलहथी; **रेगेमेगे वले**—क्रुद्ध हो कर वोलता है; **फरासी**—फ्रांसीसी (फ्रेन्च); **कहिल......माथा**—सिर नीचा कर वोला; **हस्त......वुके**—छाती पर हाथ रख कर; **याहा**—जो; **शुनिलाम**—सुना; **राजयोग्य वटे**—सचमुच ही राजा के योग्य है; **हेन......घटे**—ऐसा स्वप्न सव के भाग्य में नहीं जुटता;

किन्तु तबु स्वप्न ओटा करि अनुमान
यदिओ राजार शिरे पेयेछिल स्थान।
अर्थ चाइ, राजकोषे आछे भूरि भूरि,—
राजस्वप्ने अर्थ नाइ यत माथा खुँड़ि।
नाइ अर्थ किन्तु तबु कहि अकपट
शुनिते की मिष्ट आहा—हिं टिं छट्।'
स्वप्नमङ्गलेर कथा अमृतसमान,
गौड़ानन्द कवि भने, शुने पुण्यवान ।।

शुनिया सभास्थ सबे करे धिक् धिक्,
कोथाकार गण्डमूर्ख पाषण्ड नास्तिक।
स्वप्न शुधु स्वप्नमात्र मस्तिष्कविकार,
ए कथा केमन करे करिब स्वीकार।
जगत्-विख्यात मोरा 'धर्मप्राण' जाति,—
स्वप्न उड़ाइया दिबे ! दुपुरे डाकाति !
हबुचन्द्र राजा कहे पाकालिया चोख,
'गबुचन्द्र, एदेर उचित शिक्षा होक।

तबु—तौभी; **ओटा**—वह; **करि**—करता हूँ; **यदि......स्थान**—यद्यपि राजा के सिर स्थान पाया था; **अर्थ......भूरि**—अर्थ (धन) चाहिए, राजकोष में वह बहुत अधिक है; **राजस्वप्ने.....खुँड़ि**—राजा के सपने का कोई अर्थ नहीं है जितना सिर ठोकता हूँ; **नाइ......अकपट**—अर्थ नहीं है किन्तु तौभी अकपट (भाव से) कहता हूँ; **शुनिते......छट्**—अहा, सुनने में क्या मीठा है, हिं टिं छट्।

शुनिया......धिक्—सुन कर सभा के सभी (लोग) धिक् करते हैं; **कोथाकार**—कहाँ का; **गण्डमूर्ख**—बिल्कुल मूर्ख; **पाषण्ड**—पाखण्डी; **स्वप्न......विकार**—स्वप्न केवल स्वप्नमात्र है, मस्तिष्क का विकार है; **ए......स्वीकार**—यह बात कैसे स्वीकार करूँ; **जगत्......डाकाति**—हमलोग जगत्-विख्यात धर्मप्राण जाति हैं, स्वप्न उड़ा देना, (यह तो) दिन-दहाड़े डकैती है; **पाकालिया चोख**—आँखें लाल कर; **एदेर**—इन सब की; **होक**—हो;

हेंटोय कन्टक दाओ, उपरे कन्टक,
डालकुत्तादेर माझे करह् बन्टक।'
सतेरो मिनिटकाल ना हइते शेष
म्लेच्छपण्डितेर आर ना मिले उद्देश।
सभास्थ सवाइ भासे आनन्दाश्रुनीरे,
धर्मराज्ये पुनर्वार शान्ति एल फिरे।
पण्डितेरा मुखचक्षु करिया विकट
पुनर्वार उच्चारिल—हिं टिं छट्।
स्वप्नमङ्गलेर कथा अमृतसमान,
गौड़ानन्द कवि भने, शुने पुण्यवान ।।

अतःपर गौड़ हते एल हेन वेला
यवन पण्डितदेर गुरुमारा चेला
नग्नशिर, सज्जा नाइ, लज्जा नाइ धड़े,—
काछा कोंचा शतवार ख'से ख'से पड़े।

हेंटोय.....कन्टक—नीचे (निम्नभाग) काँटा दो, उपर काँटा दो; **डालकुत्ता**—(greyhound) शिकारी कुत्ता; **डालकुत्तादेर.....बन्टक**—शिकारी खूंख्वार कुत्तों के वीच वाँट दो; **सतेरो......उद्देश**—सतरह मिन्ट समय शेप होते ना होते म्लेच्छ पंडित का और पता नहीं पाया गया; **सभास्थ.....फिरे**—सभा के सभी लोग आनन्दाश्रु में वह चले, धर्म राज्य में फिर से शान्ति लौट आई; **पण्डितेरा......छट्**—पंडितों ने आँख मुंह विकट करके फिर दुवारा हिं टिं छट् उच्चारित किया।

अतःपर—अनन्तर; **गौड़ हते**—गौड़ देश से; **एल**—आया; **हेन वेला**—उस मौके पर; **यवन......चेला**—यवन पंडितों के गुरु को नीचा दिखाने वाला चेला; **सज्जा नाइ**—साज-सज्जा नहीं है; **लज्जा......धड़े**—शरीर में लज्जा नहीं; **काछा**—कच्छ (धोती का वह अंश जो पीछे खोंसा जाता है); **कोंचा**—धोती का वह अंश जो आगे खोंसा जाता है; **शतवार**—सौवार, वार वार; **ख'से ख'से पड़े**—गिर गिर पड़ता है, खुल खुल जाता है;

अस्तित्व आछे ना आछे, क्षीण खर्वदेह,
वाक्य यबे वाहिराय ना थाके सन्देह।
एतटुकु यन्त्र हते एत शब्द हय
देखिया विश्वेर लागे विषम विस्मय।
ना जाने अभिवादन, ना पुछे कुशल,
पितृनाम शुधाइले उद्यतमुषल।
सगर्वे जिज्ञासा करे, 'की लये विचार!
शुनिले वलिते पारि कथा दुइचार,
व्याख्याय करिते पारि उलट्पालट।'
समस्वरे कहे सबे—हिं टिं छट्।
स्वप्नमङ्गलेर कथा अमृतसमान,
गौड़ानन्द कवि भने, शुने पुण्यवान।।

स्वप्नकथा शुनि मुख गम्भीर करिया
कहिल गौड़ीय साधु प्रहर धरिया,
'नितान्त सरल अर्थ, अति परिष्कार,
बहु पुरातन भाव, नव आविष्कार।

अस्तित्व......खर्वदेह—क्षीण, लघु शरीर (को देख कर लगता है जैसे) अस्तित्व है या नहीं; **वाक्य......सन्देह**—वाक्य जब बाहर निकलता है (अर्थात् जब वह बोलता है तब उसके अस्तित्व में) सन्देह नहीं रह जाता; **एतटुकु...... विस्मय**—इतने छोटे यन्त्र (अर्थात् क्षीण काय) से इतना शब्द होता है (निकलता है), (यह) देख कर संसार को अत्यन्त विस्मय होता है; **ना जाने......मुषल**—न अभिवादन जानता है और न कुशल पूछता है, पिता का नाम पूछने पर मूसल उठाता है; **सगर्वे....करे**—गर्व (अहंकार) के साथ पूछता है; **की......दुइचार**—क्या ले कर विचार हो रहा है, सुनने पर दो-चार बातें कह सकता हूँ; **व्याख्याय .....उलट्पालट**—व्याख्या द्वारा उलटा पलटा कर सकता हूँ; **समस्वरे......सबे**—समस्वर से सभी कह उठते हैं।

शुनि—सुन कर; **करिया**—करके; **कहिल......साधु**—गौड़ देशीय साधु ने कहा; **प्रहर धरिया**—पहर भर में;

त्र्यम्बकेर त्रिनयन त्रिकाल त्रिगुण
शक्तिभेदे व्यक्तिभेद द्विगुण विगुण।
विवर्तन आवर्तन संवर्तन आदि
जीवशक्ति शिवशक्ति करे विसम्वादी।
आकर्षण विकर्षण पुरुष प्रकृति
आणव चौम्बकबले आकृति विकृति।
कुशाग्रे प्रवहमान जीवात्मविद्युत्
धारणा परमा शक्ति सेथाय उद्भूत।
त्रयी शक्ति त्रिस्वरूपे प्रपञ्चे प्रकट
संक्षेपे वलिते गेले—हिं टिं छट्।'
स्वप्नमङ्गलेर कथा अमृतसमान,
गौड़ानन्द कवि भने, शुने पुण्यवान॥

'साधु साधु साधु' रवे काँपे चारिधार,—
सबे वले, 'परिष्कार, अति परिष्कार।'
दुर्बोध या-किछु छिल हये गेल जल,
शून्य आकाशेर मतो अत्यन्त निर्मल।
हाँप छाड़ि उठिलेन हवुचन्द्रराज,
आपनार माथा हते खुलि लये ताज

त्र्यम्वकेर—शिव का; **शक्तिभेदे**—शक्ति भेद से; **करे**—करता है; **विसम्वादी**—विरोधपूर्ण, वेमेल; **आणव**—अणु-संबंधी; **चौम्बकवले**—चुम्बक शक्ति के वल से; आकर्षशक्ति के वल से; **कुशाग्रे**—कुश के अग्र भाग में; **सेथाय**—वहाँ; **संक्षेपे......गेले**—संक्षेप में कहा जाय।

साधु......धार—चारों ओर 'साधु साधु' (धन्य धन्य) रव से काँप उठा; **सबे वले**—सभी कहते हैं; **परिष्कार**—स्पष्ट; **दुर्बोध......जल**—जो-कुछ दुर्बोध था जल (के समान सरल, सहज) हो गया; **शून्य.....निर्मल**—शून्य आकाश की नाईं अत्यन्त निर्मल (हो गया); **हाँप......राज**—हवुचन्द्र राजा ने (दुश्चिन्ता मिटने से) लंवी साँस छोड़ी; **आपनार.....शिरे**—अपने सिर से ताज खोल कर क्षीणकाय वंगाली के सिर पर पहना दिया;

पराइया दिल क्षीण बाङालिर शिरे,—
भारे तार माथाटुकु पड़े बुझि छिँड़े।
वहुदिन परे आज चिन्ता गेल छुटे,
हाबुडुबु हबुराज्य नड़िचड़ि उठे।
छेलेरा धरिल खेला, वृद्धेरा तामुक,
एकदण्डे खुले गेल रमणीर मुख।
देशजोड़ा माथाधरा छेड़े गेल चट्
सबाइ बुझिया गेल—हिं टिं छट्।
स्वप्नमङ्गलेर कथा अमृतसमान,
गौड़ानन्द कवि भने, शुने पुण्यवान।।

ये शुनिबे एइ स्वप्नमङ्गलेर कथा
सर्वभ्रम घुचे याबे नहिबे अन्यथा।
विश्वे कभु विश्व भेबे हबे ना ठकिते
सत्येरे से मिथ्या वलि बुझिबे चकिते।
या आछे ता नाइ, आर नाइ याहा आछे,
ए कथा जाज्वल्यमान हबे तार काछे।

भारे.....छिँड़े—लगता है उसके भार से सिर फटने लगता है; **वहु.....छुटे**—वहुत दिनों के वाद आज चिन्ता छूट गई; **हाबुडुबु**—अव डूवा तव डूवा; **हवुराज्य**—हवुचन्द्र का राज्य; **नड़िचड़ि उठे**—क्रियाशील हो गया, संचरण करने लगा; **छेलेरा......तामुक**—लड़कों ने खेलना शुरू किया और वृद्धों ने तम्वाकू पीना; **एक......मुख**—एक क्षण में स्त्रियों का मुंह खुल गया (अव वे बातें करने लगीं); **देश......छट्**—समस्त देश का सिर दर्द चट छूट गया, सव लोगों ने हिं टिं छट् समझ लिया।

ये......अन्यथा—जो इस स्वप्नमङ्गल की कथा को सुनेगा, (उसके) सव भ्रम दूर हो जाएंगे, कभी भी अन्यथा नहीं होगा; **विश्वे......ठकिते**—विश्व को कभी भी विश्व समझ कर ठगना नहीं पड़ेगा (ठगा जाना संभव नहीं होगा); **सत्येरे......चकिते**—सत्य को मिथ्या कह कर उसे वह चकित हो कर समझेगा; **या......आछे**—जो है वह नहीं है, और जो नहीं है वह है; **ए.....काछे**—यह वात उसके निकट जाज्वल्यमान होगी;

सवाइ सरलभावे देखिबे या-किछु,
से आपन लेजुड़ जुड़िबे तार पिछु।
एसो भाइ, तोलो हाइ शुये पड़ो चित,
अनिश्चित ए संसारे ए कथा निश्चित—
जगते सकलि मिथ्या, सब मायामय,
स्वप्न शुधु सत्य आर सत्य किछु नय।
स्वप्नमङ्गलेर कथा अमृतसमान,
गौड़ानन्द कवि भने, शुने पुण्यवान ॥

३० मई १८९२ 'सोनार तरी'

दुइ पाखि

खाँचार पाखि छिल सोनार खाँचाटिते,
वनेर पाखि छिल वने !
एकदा की करिया मिलन हल दोँहे,
की छिल विधातार मने।
वनेर पाखि बले, 'खाँचार पाखि भाइ,
वनेते याइ दोँहे मिले।'

सवाइ......पिछु—सहज भाव से सभी जो-कुछ देखेंगे उसके पीछे वे अपनी पूंछ जोड़ देंगे (अर्थात् जो सहज है उसे कठिन बना देंगे); एसो......चित—आओ भाई, जम्हाई लो (और) चित (हो कर) सो पड़ो; अनिश्चित......निश्चित—इस अनिश्चित संसार में यह बात निश्चित है; जगते......नय—संसार में सब मिथ्या है, सब मायामय है; स्वप्न केवल सत्य है और कुछ सत्य नहीं है।

दुइ पाखि—दो पक्षी; खाँचार—पिंजड़े का; खाँचार......वने—पिंजड़े का पक्षी सोने के पिंजड़े में था (और) वन का पक्षी वन में था; एकदा......मने—एक समय (न-जाने) कैसे दोनों का मिलन हुआ, (पता नहीं) विधाता के मन में क्या था; बले—कहा; खाँचार......मिले—पिंजड़े के पक्षी भाई (चलो) दोनों मिल कर वन में जाँय;

खाँचार पाखि बले, 'वनेर पाखि, आय
खाँचाय थाकि निरिबिले।'
वनेर पाखि बले, 'ना,
आमि शिकले धरा नाहि दिब।'
खाँचार पाखि बले, 'हाय
आमि केमने वने वाहिरिब!'

वनेर पाखि गाहे बाहिरे बसि बसि
वनेर गान छिल यत,
खाँचार पाखि पड़े शिखानो बुलि तार;—
दोँहार भाषा दुइ-मतो।
वनेर पाखि बले, 'खाँचार पाखि भाइ,
वनेर गान गाओ दिखि।'
खाँचार पाखि बले, 'वनेर पाखि भाइ,
खाँचार गान लहो शिखि।'
वनेर पाखि बले, 'ना,
आमि शिखानो गान नाहि चाइ।'
खाँचार पाखि बले, 'हाय,
आमि केमने वनगान गाइ!'

आय—आओ; **खाँचाय**—पिंजड़े में; **थाकि**—रहें; **निरिबिले**—एकान्त में; **आमि**—मैं; **शिकले**—जञ्जीर में, शृङ्खल में; **धरा......दिब**—पकड़ाई नहीं दूँगा; **आमि......वाहिरिब**—मैं कैसे वन में वाहर होऊँगा।

गाहे......बसि—वन का पक्षी वाहर वैठ वैठ कर गाता; **वनेर......यत**—वन के जितने गान थे; **पड़े**—पढ़ता; **शिखानो......तार**—सिखाई हुई अपनी वोली; **दोँहार**—दोनों का; **दुइ मतो**—दो प्रकार; **दिखि**—देखें; **लहो शिखि**—सीख लो; **शिखानो**—सिखाया हुआ; **नाहि चाइ**—नहीं चाहता; **केमने**—कैसे; **गाइ**—गावें।

वनेर पाखि वले, 'आकाश घन नील,
कोथाओ वाधा नाहि तार।'
खाँचार पाखि वले, 'खाँचाटि परिपाटि
केमन ढाका चारिधार।'
वनेर पाखि वले, 'आपना छाड़ि दाओ
मेघेर माझे एकेवारे।'
खाँचार पाखि वले, 'निराला सुखकोणे
वाँधिया राखो आपनारे।'
वनेर पाखि वले, 'ना,
सेथा कोथाय उड़िवारे पाइ!'
खाँचार पाखि वले, 'हाय,
मेघे कोथाय वसिवार ठाँइ!'

एमनि दुइ पाखि दोँहारे भालोवासे
तवुओ काछे नाहि पाय।
खाँचार फाँके फाँके परशे मुखे मुखे,
नीरवे चोखे चोखे चाय।

कोथाओ......तार—कहीं भी उसमें वाधा नहीं है; **परिपाटि**—सुशृंखल, सुविन्यस्त; **केमन**—किस प्रकार से; **ढाका**—ढका हुआ; **चारिधार**—चारों ओर; **आपना......एकेवारे**—अपने को मेघों के वीच सम्पूर्ण रूप से छोड़ दो; **निराला**—निभृत, निर्जन; **सुखकोणे**—सुखदायक कोने में; **वाँधिया राखो**—वाँध रखो; **आपनारे**—अपनेको; **सेथा**—वहाँ; **कोथाय......पाइ**—कहाँ उड़ पाऊँगा; **मेघे......ठाँइ**—मेघों में वैठने का स्थान कहाँ है।

एमनि—इसी प्रकार से; **दोँहारे भालोवासे**—एक दूसरे को प्यार करते; **तवुओ**—तौभी; **काछे**—निकट; **नाहि पाय**—नहीं पाते; **खाँचार......फाँके**—पिंजड़े के छिद्र से; **परशे**—स्पर्श करते हैं; **चोखे चोखे**—आँखों आँखों से; **चाय**—देखते हैं;

दुजने केह कारे बुझिते नाहि पारे,
बुझाते नारे आपनाय।
दुजने एका एका झापटि मरे पाखा,
कातरे कहे, 'काछे आय।'
वनेर पाखि बले, 'ना,
कबे खाँचाय रुधि दिबे द्वार।'
खाँचार पाखि बले, 'हाय,
मोर शकति नाहि उड़िबार।'

२ जुलाई १८९२ 'सोनार तरी'

येते नाहि दिब

दुयारे प्रस्तुत गाड़ि, वेला द्विप्रहर।
शरतेर रौद्र क्रमे हतेछे प्रखर।
जनशून्य पल्लिपथे धूलि उड़े याय
मध्यान्हबातासे। स्निग्ध अशत्थेर छाय
क्लान्त वृद्धा भिखारिणी जीर्ण वस्त्र पाति
घुमाये पड़ेछे, येन रौद्रमयी राति

दुजने—दोनों; **केह**—कोई; **कारे**—किसी को; **बुझिते......पारे**—समझ नहीं पाता; **बुझाते......आपनाय**—(और) न अपने को समझा पाता; **एका एका**—अकेले अकेले; **झापटि**—झपट्टा मार मार कर; **मरे**—मरते हैं; **पाखा**—पंख; **कातरे कहे**—कातर स्वर में कहते हैं; **काछे आय**—निकट आओ; **कबे**—कब; **रुधि.....द्वार**—दरवाज़ा बन्द कर देगा; **मोर......उड़िबार**—मेरी शक्ति उड़ने की नहीं है।

येते नाहि दिव—जाने नहीं दूँगी; **दुयारे**—दरवाज़े पर; **गाड़ि**—गाड़ी; **शरतेर......प्रखर**—शरद् की धूप क्रमशः तेज़ होती जा रही है; **पल्लिपथे**—गाँव के रास्ते पर; **याय**—जाय; **वातासे**—हवा से; **अशत्थेर छाय**—अश्वत्थ (पीपल) की छाया; **पाति**—बिछा कर; **घुमाये पड़ेछे**—सो गई है; **येन**—जैसे; **राति**—रात्रि;

झाँझाँ करे चारिदिके निस्तब्ध निःझुम।
शुधु मोर घरे नाहि विश्रामेर घुम ।।

गियेछे आश्विन। पूजार छुटिर शेषे
फिरे येते हवे आजि वहुदूर देशे
सेइ कर्मस्थाने। भृत्यगण व्यस्त हये
वाँधिछे जिनिसपत्र दड़ादड़ि लये,
हाँकाहाँकि डाकाडाकि एघरे ओघरे।
घरेर गृहिणी, चक्षु छलछल करे,
व्यथिछे वक्षेर काछे पाषाणेर भार,
तवुओ समय तार नाहि काँदिवार
एकदण्ड-भरे। विदायेर आयोजने
व्यस्त हये फिरे, यथेष्ट ना हय मने
यत वाड़े बोझा। आमि वलि, 'ए की काण्ड !
एत घट, एत पट, हाँड़ि सरा भाण्ड,
वोतल विछाना वाक्स, राज्येर वोझाइ
की करिव लये ! किछु एर रेखे याइ,
किछु लइ साथे।'

चारिदिके–चारों ओर; शुधु.....घुम–केवल मेरे घर में विश्राम की निद्रा नहीं है।
गियेछे—चला गया है; छुटिर शेषे—छुट्टी के शेष में; फिरे......हवे—लौट जाना होगा; आजि—आज; सेइ—उसी; व्यस्त हये—अस्थिर हो कर; वाँधिछे—वाँध रहे हैं ; जिनिसपत्र—सामान ; दड़ादड़ि—विभिन्न प्रकार की रस्सी; लये–ले कर; एघरे ओघरे–इस घर में उस घर में; व्यथिछे.....भार—हृदय के पास पाषाण के भार जैसी व्यथा हो रही है; तवुओ......भरे—तोभी एक क्षण के लिये भी उसे रोने का समय नहीं है; विदायेर......फिरे—विदाई के आयोजन में अस्थिर हो कर घूम रही है !; यथेष्ट......वोझा—यथेष्ट नहीं मालूम होता (चाहे) जितना वोझा वढ़े; ए की काण्ड—यह सव क्या हो रहा है; एत—इतना; हाँड़ि—हंडिका; सरा—मिट्टी का ढक्कन; राज्येर......लये —संसार भर की (इस) वोझाइ को ले कर क्या करुँगा; किछु.....साथे—कुछ इसका रख जाऊँ और कुछ साथ ले जाऊँ।

से कथाय कर्णपात
नाहि करे कोन जन। 'की जानि दैवात्
एटा ओटा आवश्यक यदि हय शेषे
तखन कोथाय पाबे बिभुँइ विदेशे!
सोनामुग सरुचाल सुपारि ओ पान,
ओ-हाँड़िते ढाका आछे दुइ-चारिखान
गुड़ेर पाटालि; किछु झुना नारिकेल,
दुइ भाण्ड भालो राइसरिषार तेल,
आमसत्त्व आमचुर, सेर दुइ दूध;
एइ सब शिशि कोटा ओषुधबिषुध।
मिष्टान्न रहिल किछु हाँड़िर भितरे,
माथा खाओ, भुलियोना, खेयो मने करे।'
बुझिनु युक्तिर कथा वृथा वाक्यव्यय।
वोझाइ हइल उँचु पर्वतेर न्याय।
ताकानु घड़िर पाने, तार परे फिरे
चाहिनु प्रियार मुखे, कहिलाम धीरे,

से कथाय......जन—उस वात पर किसीने भी कर्णपात नहीं किया; **की जानि......विदेशे**—कौन जाने अकस्मात इसकी, उसकी अवश्यकता अन्त में अगर पड़ जाय तव उस दूर विदेश में कहाँ पाओगे; **सोनामुग**—सोना मूंग; **सरुचाल**—महीन चावल; **सुपारि**—सुपारी; **ओ-हाँड़िते......पाटालि**—उस हाँड़ि में दो चार सूखे गुड़ की वरफी ढक कर रखी हुई है; **किछु**—कुछ; **झुना नारिकेल**—पका सख्त नारियल; **दुइ......तेल**—दो पात्रों में राइ-सरसों का अच्छा तेल; **आमसत्त्व**—अमावट; **आमचुर**—खटाई; **सेर दुइ**—दो सेर; **एइ**—यह; **शिशि**—शीशी; **कोटा**—डव्वा; **ओषुध-बिषुध**—दवा आदि; **मिष्टान्न......भितरे**—हाँड़ी के भीतर कुछ मिष्टान्न है; **माथा......करे**—मेरे सिर की सौगन्द, भूलना नहीं, याद कर खाना; **बुझिनु......व्यय**—युक्ति-तर्क की वात मैंने समझ ली, वाक्य व्यय (और कुछ कहना) वृथा था; **वोझाइ......न्याय**—ऊँचे पर्वत के समान वोझाइ हुई; **ताकानु......पाने**—घड़ी की ओर ताका; **तार......मुखे**—इसके वाद घूम कर प्रिया के मुख की ओर देखा; **कहिलाम धीरे**—धीरे से कहा;

'तवे आसि।' अमनि फिराये मुखखानि
नतशिरे चक्षु 'परे वस्त्राञ्चल टानि
अमङ्गल-अश्रुजल करिल गोपन ।।

वाहिरेर द्वारेर काछे वसि अन्यमन
कन्या मोर चारि वछरेर। एतक्षण
अन्य दिने हये येत स्नान समापन;
दुटि अन्न मुखे ना तुलिते आँखिपाता
मुदिया आसित घुमे; आजि तार माता
देखे नाइ तारे। एत वेला हये याय,
नाइ स्नानाहार। एतक्षण छायाप्राय
फिरितेछिल से मोर काछे काछे घेंसे,
चाहिया देखितेछिल मौन निर्निमेषे
विदायेर आयोजन। श्रान्तदेहे एवे
वाहिरेर द्वारप्रान्ते की जानि की भेवे
चुपिचापि वसे छिल। कहिनु यखन
'मागो आसि' से कहिल विषण्णनयन

तवे आसि—अच्छा तव आ रहा हूँ (जाने के समय वंगाल में 'जाता हूँ' ऐसा नहीं कहते, इसके वदले 'आता हूँ' कहते हैं।); **अमनि......मुखखानि**—वैसे ही मुख फिरा कर; **चक्षु......टानि**—आखों पर अंचल खींच कर; **अमङ्गल.....गोपन**—अमङ्गल-सूचक अश्रुजल को गोपन किया।

वाहिरेर......वछरेर—वाहर के दरवाज़े के पास अनमनी मेरी चार वर्ष की कन्या वैठी है; **एतक्षण......समापन**—अन्य दिन इतने समय तक (उसका) स्नान समाप्त हो जाता; **दुटि......घुमे**—दो कौर खाते न खाते आँखों के पलक वन्द कर सो जाती; **आजि......तारे**—आज उसकी माता उसे नहीं देखती; **एत.....याय**—इतनी वेला हो गई; **नाइ स्नानाहार**—स्नानाहार नहीं किया; **एतक्षण......घेंसे**—इतने समय छाया के समान मेरे पास लगी-लगी वह फिरती थी; **चाहिया......आयोजन**—मौन निर्निमेष विदाई का आयोजन देख रही थी; **एवे**—इस क्षण; **वाहिरेर**—वाहर के; **की......छिल**—क्या जाने क्या सोचती हुई चुपचाप वैठी थी; **कहिनु यखन**—जव कहा; **मागो आसि**—माँ जाता हूँ (वंगाल में पुत्री को भी 'माँ' संवोधन करते हैं।); **से कहिल**—उसने कहा; **विषण्ण**—दुःखित;

म्लानमुखे, 'येते आमि दिब ना तोमाय।'
येखाने आछिल बसे, रहिल सेथाय,
धरिल ना बाहु मोर, रुधिल ना द्वार,
शुधु निज हृदयेर स्नेह-अधिकार
प्रचारिल, 'येते आमि दिब ना तोमाय।'
तबुओ समय हल शेष, तबु हाय
येते दिते हल।।

ओरे मोर मूढ़ मेये,
के रे तुइ, कोथा हते की शकति पेये
कहिलि एमन कथा, एत स्पर्धाभरे,
'येते आमि दिब ना तोमाय'! चराचरे
काहारे राखिबि धरे दुटि छोटो हाते
गरबिनी, संग्राम करिबि कार साथे
बसि गृहद्वारप्रान्ते श्रान्तक्षुद्रदेहे
शुधु लये ओइटुकु बुकभरा स्नेह!

येते......तोमाय—मैं तुम्हें जाने नही दूँगी; **येखाने**—जहाँ; **आछिल बसे**—बैठी थी; **रहिल सेथाय**—वही रही; **धरिल......द्वार**—न मेरी बाँहों को पकड़ा (और) न दरवाज़ा ही रोका; **शुधु......प्रचारिल**—केवल अपने हृदय के स्नेह-अधिकार को ही जताया; **तबुओ......शेष**—तौभी समय हो गया; **तबु.....हल**—तौभी हाय जाने देना पड़ा।

मोर.....मेये—मेरी निर्बोध पुत्री; **के रे तुइ**—तू कौन है; **कोथा.....कथा**—कहाँ से कौन-सी शक्ति पा कर (तूने) ऐसी बात कही; **एत......भरे**—इतना अहंकार पूर्ण; **चराचरे......गरबिनी**—(इस) जगत् में किसे दो छोटे हाथों से पकड़ रखेगी, गर्विणी; **संग्राम......साथे**—किसके साथ संग्राम करेगी; **बसि**—बैठ; **शुधु.....स्नेह**—स्नेह भरे केवल इतने-से (छोटे-से) हृदय को ले कर;

व्यथित हृदय हते वहु भये लाजे
मर्मेर प्रार्थना शुधु व्यक्त करा साजे
ए जगते। शुधु वले राखा, 'येते दिते
इच्छा नाहि।' हेन कथा के पारे वलिते
'येते नाहि दिव'! शुनि तोर शिशुमुखे
स्नेहेर प्रबल गर्ववाणी, सकौतुके
हासिया संसार टेने निये गेल मोरे;
तुइ शुधु पराभूत चोखे जल भ'रे
दुयारे रहिलि वसे छविर मतन
आमि देखे चले एनु मुछिया नयन।।

चलिते चलिते पथे हेरि दुइधारे
शरतेर शस्यक्षेत्र नत शस्यभारे
रौद्र पोहाइछे। तरुश्रेणी उदासीन
राजपथपाशे, चेये आछे सारादिन
आपन छायार पाने। वहे खरवेग
शरतेर भरा गङ्गा। शुभ्र खण्डमेघ

व्यथित......जगते—व्यथित हृदय से अत्यन्त भय और लज्जा के साथ मर्म (अन्त:) की प्रार्थना केवल व्यक्त करना मात्र इस जगत् में शोभा पाता है; **शुधु......नाहि**—केवल (इतनाही) कह देना, 'जाने देने की इच्छा नहीं है'; **हेन......दिव**—ऐसी बात कौन कह सकता है कि जाने नहीं दूंगा; **शुनि**—सुनता हूँ; **तोर**—तेरे; **सकौतुके**—कौतुक पूर्वक; **हासिया**—हँस कर; **संसार......मोरे**—संसार मुझे खींच ले गया; **तुइ**—तू; **छविर मतन**—चित्र की नाईं; **आमि......एनू**—मैं देख कर चला आया; **मुछिया नयन**—आँखें पोंछ कर।

चलिते चलिते—चलते चलते; **पथे........धारे**—रास्ते में दोनों ओर देखता हूँ; **शरतेर.......पोहाइछे**—शरद् काल के खेत शस्य (अन्न) के भार से नत हो कर धूपका सेवन कर रहे हैं; **पाशे**—किनारे; **चेये.....पाने**—समस्त दिन अपनी छाया की ओर देख रहा है; **खरवेग**—तीव्र वेग;

मातृदुग्धपरितृप्त सुखनिद्रारत
सद्योजात सुकुमार गोवत्सेर मतो
नीलाम्बरे शुये। दीप्त रौद्रे अनावृत
युगयुगान्तरक्लान्त दिगन्तविस्तृत
धरणीर पाने चेये फेलिनु निश्वास ।।

की गभीर दुःखे मग्न समस्त आकाश,
समस्त पृथिवी। चलितेछि यतदूर
शुनितेछि एकमात्र मर्मान्तिक सुर,
'येते आमि दिब ना तोमाय।' धरणीर
प्रान्त हते नीलाभ्रेर सर्वप्रान्ततीर
ध्वनितेछे चिरकाल अनाद्यन्त रवे,
'येते नाहि दिब। येते नाहि दिब।' सबे
कहे, 'येते नाहि दिब।' तृण क्षुद्र अति,
तारेओ बाँधिया वक्षे माता वसुमती
कहिछेन प्राणपणे, 'येते नाहि दिव।'
आयुक्षीण दीपमुखे शिखा निब-निब
आँधारेर ग्रास हते के टानिछे तारे
कहितेछे शतबार, 'येते दिब ना रे।'
ए अनन्त चराचरे स्वर्गमर्त्य छेये

मतो—समान; **शुये**—सोया हुआ है, पड़ा हुआ है; **धरणीर......निश्वास**—धरती की ओर देख कर निश्वास फेंका।

की......पृथ्वी—कितने गहरे दुःख में समस्त आकाश (और) समस्त पृथ्वी निमग्न हैं; **चलितेछि यतदूर**—जितनी दूर चलता हूँ; **शुनितेछि**—सुन रहा हूँ; **अनाद्यन्त**—अनन्त; **तारेओ**—उसेभी; **बाँधिया**—बाँध कर; **कहिछेन**—कह रही हैं; **निव-निव**—अव बुझा तव बुझा; **आँधारेर......शतवार**—अन्धकार के ग्रास से कौन उसे खींच रहा है और सैकड़ों वार कह रहा है; **छेये**—छाया हुआ, व्याप्त;

गभीर क्रन्दन, 'येते नाहि दिब।' हाय,
तबु येते दिते हय, तबु चले याय।
चलितेछे एमनि अनादिकाल हते।
प्रलयसमुद्रवाही सृजनेर स्रोते
प्रसारित व्यग्रबाहु ज्वलन्त आँखिते
'दिब ना दिब ना येते' डाकिते डाकिते
हुहु करे तीव्रवेगे चले याय सबे
पूर्ण करि विश्वतट आर्त कलरवे।
सम्मुख उर्मिरे डाके पश्चातेर ढेउ,
'दिब ना दिब ना येते।' नाहि शुने केउ,
नाहि कोनो साड़ा।।

चारिदिक हते आजि
अविश्राम कर्णे मोर उठितेछे बाजि
सेइ विश्वमर्म्मभेदी करुण क्रन्दन
मोर कन्याकण्ठस्वरे, शिशुर मतन
विश्वेर अबोध वाणी। चिरकाल ध'रे
याहा पाय ताइ से हाराय; तबु तो रे
शिथिल हल ना मुष्टि, तबु अविरत
सेइ चारि वत्सरेर कन्याटिर मतो

हाय.......याय—हाय, तौभी जाने देना होता (पड़ता) है, तौभी चला जाता है (चला जाना पड़ता है); **चलितेछे एमनि**—इसी तरह चल रहा है; **हते**—से; **डाकिते डाकिते**—चिल्लाते चिल्लाते; **हुहु.....कलरवे**—विश्वतट को आर्तस्वर से पूर्ण करते हुए सभी हूहू करते हुए तीव्र वेग से चले जाते हैं; **सम्मुख......येते**—सामने की लहर को पीछे वाली लहर चिल्लाती हुई कहती है, 'नहीं जाने दूंगी, नहीं जाने दूंगी'; **नाहि......साड़ा**—कोई नहीं सुनता, कोई ध्यान नहीं देता।

उठितेछे बाजि—बज उठता है, गूंज उठता है; **सेइ**—वही; **शिशुर...... वाणी**—शिशु जैसी विश्व की अबोध वाणी; **धरे**—से; **याहा.....हाराय**—वह (विश्व) जो पाता है उसे गँवा देता है; **तबु......मुष्टि**—तौभी तो (उसकी) मुट्ठी ढीली नहीं पड़ी; **सेइ**—उसी;

अक्षुण्ण प्रेमेर गर्वे कहिछे से डाकि,
'येते नाहि दिब।' म्लानमुख, अश्रु-आँखि,
दण्डे दण्डे पले पले टुटिछे गरब,
तबु प्रेम किछुते ना माने पराभव—
तबु विद्रोहेर भावे रुद्ध कण्ठे कय,
'येते नाहि दिब।' यतबार पराजय
ततबार कहे, 'आमि भालोबासि यारे
से कि कभु आमा हते दूरे येते पारे!
आमार आकाङ्क्षासम एमन आकुल,
एमन सकल-बाड़ा, एमन अकूल,
एमन प्रबल विश्वे किछु आछे आर!'
एत बलि दर्पभरे करे से प्रचार,
'येते नाहि दिब।' तखनि देखिते पाय
शुष्क तुच्छ धूलिसम उड़े चले याय
एकटि निश्वासे तार आदरेर धन;
अश्रुजले भेसे याय दुइटि नयन,
छिन्नमूल तरुसम पड़े पृथ्वीतले
हतगर्व नतशिर। तबु प्रेम बले,

कहिछे—कह रहा है; **से**—वह (विश्व); **टुटिछे गरब**—गर्व टूट रहा है, अहंकार चूर हो रहा है; **तबु......पराभव**—तौभी प्रेम किसी तरह पराभव (हार) नहीं मानता; **कय**—कहता है; **यतबार**—जितनी वार; **ततवार कहे**—उतनी वार कहता है; **आमि......पारे**—मैं जिसे प्यार करता हूँ वह क्या कभी मुझसे दूर जा सकता है; **आमार......आर?**—मेरी आकांक्षा के समान, इतना आकुल, इतना 'सबसे बढ़ा हुआ', ऐसा अकूल, इतना प्रबल संसार में और कुछ है; **एत वलि**—इतना कह कर; **दर्प......प्रचार**—दर्प के साथ वह कहता है; **तखनि......धन**—उसी समय देखता है शुष्क तुच्छ धूलि के समान एक निश्वास में उसके आदर का धन (प्रिय पात्र) उड़ कर चला जाता है; **अश्रु-जले......नयन**—(उसकी) दोनों आँखें अश्रुजल में वह जाती हैं; **बले**—कहता है;

'सत्यभङ्ग हबे ना विधिर। आमि ताँर
पेयेछि स्वाक्षर-देओया महा-अङ्गीकार
चिर-अधिकारलिपि।' ताइ स्फीतबुके
सर्वशक्ति मरणेर मुखेर सम्मुखे
दाँड़ाइया सुकुमार क्षीण तनुलता
बले, 'मृत्यु, तुमि नाइ।'—हेन गर्वकथा!
मृत्यु हासे बसि। मरणपीड़ित सेइ
चिरजीवी प्रेम आच्छन्न करेछे एइ
अनन्त संसार, विषण्ण नयन'-परे
अश्रुवाष्पसम, व्याकुल आशंका-भरे
चिरकम्पमान। आशाहीन श्रान्त आशा
टानिया रेखेछे एक विषाद-कुयाशा
विश्वमय। आजि येन पड़िछे नयने,
दुखानि अबोध बाहु विफल बाँधने
जड़ाये पड़िया आछे निखिलेरे घिरे
स्तब्ध सकातर। चञ्चल स्रोतेर नीरे
पड़े आछे एकखानि अचञ्चल छाया,
अश्रुवृष्टिभरा कोन् मेघेर से माया॥

सत्य.....विधि—विधि (विधाता) का सत्य भङ्ग नहीं होगा; **ताँर**—उनका; **पेयेछि........अङ्गीकार**—हस्ताक्षर किया हुआ महा-अङ्गीकार पाया है। **चिर-अधिकारलिपि**—हमेशा के लिये अधिकार देने वाली लिपि (लेखन); **ताइ**—इसीलिये; **स्फीतबुके**—छाती फुला कर; **सर्वशक्ति......नाइ**—सर्वशक्तिमान मृत्यु के मुख के सामने खड़ी हो कर सुकुमार क्षीण तनुलता (सुन्दर सुकुमार शरीर वाली) कहती है, मृत्यु तुम नहीं हो; **हेन गर्वकथा**—ऐसी गर्वोक्ति; **मृत्यु......बसि**—मृत्यु बैठ कर हँसती है; **मरण......संसार**—मृत्यु से पीड़ा पाने वाला वही चिरजीवी प्रेम इस अनन्त संसार को आच्छन्न किए हुए है; **टानिया......विश्वमय**—विश्वव्यापी एक विषाद-कुहासा फैला रखा है; **आजि......नयने**—आज जैसे आँखों के सामने आ जाता है; **दुखानि**—दो। **पड़े......छाया**—एक अचञ्चल छाया पड़ी हुई है; **कोन्.....माया**—किस मेघ की वह छलना है।

ताइ आजि शुनितेछि तरुर मर्मरे
एत व्याकुलता; अलस औदास्यभरे
मध्याह्नेर तप्तवायु मिछे खेला करे
शुष्क पत्र लये। बेला धीरे याय चले
छाया दीर्घतर करि अश्वत्थेर तले।
मेठो सुरे काँदे येन अनन्तेर बाँशि
विश्वेर प्रान्तर-माझे। शुनिया उदासी
वसुन्धरा वसिया आछेन एलोचुले
दूरव्यापी शस्यक्षेत्रे जाह्नवीर कूले
एकखानि रौद्रपीत हिरण्य-अञ्चल
वक्षे टानि दिया; स्थिर नयन-युगल
दूर नीलाम्बरे मग्न; मुखे नाहि वाणी।
देखिलाम ताँर सेइ म्लान मुखखानि
सेइ द्वारप्रान्ते लीन स्तब्ध मर्माहत
मोर चारि वत्सरेर कन्याटिर मतो।।

२९ अक्टूबर १८९२ 'सोनार तरी'

ताइ......व्याकुलता—इसीलिये आज वृक्षों के मर्मर में इतनी व्याकुलता सुन रहा हूँ; **औदास्यभरे**—उदासी से भरी; **मध्याह्नेर......लये**—मध्याह्न की तप्त वायु व्यर्थ ही सूखे पत्तों को ले कर खेला करती है; **बेला......तले**—अश्वत्थ (पीपल) के नीचे दीर्घतर छाया करती हुई बेला धीरे चली जाती है; **मेठो.....माझे**—जैसे अनन्त की वंशी विश्व के विस्तृत मैदान में मैदान वाले सुर में क्रन्दन कर रही है; **उदासी**—संन्यासिनी; **वसिया आछेन**—बैठी हुई हैं; **एलोचुले**—आलुलायित केशों वाली; **एकखानि**—एक; **टानि दिया**—खींच कर ; **देखिलाम......मुखखानि**—उनके उसी म्लान मुख को मैंने देखा।

झूलन

आमि परानेर साथे खेलिव आजिके मरणखेला
निशीथ वेला।
सघन वरषा, गगन आँधार,
हेरो वारिधारे काँदे चारिधार,
भीषण रङ्गे भवतरङ्गे भासाइ भेला;
वाहिर हयेछि स्वप्नशयन करिया हेला,
रात्रिवेला॥

ओगो पवने गगने सागरे आजिके की कल्लोल!
दे दोल् दोल्।
पश्चात् हते हाहा क'रे हासि
मत्त झटिका ठेला देय आसि,
येन ए लक्ष यक्षशिशुर अट्टरोल।
आकाशे पाताले पागले माताले हट्टगोल।
दे दोल् दोल्॥

आजि जागिया उठिया परान आमार वसिया आछे
वुकेर काछे।

परानेर साथे—प्राणों के साथ; **आजिके**—आज; **हेरो**—देखो; **वारिधारे**—वारिधारा में; **काँदे**—क्रन्दन करता है; **चारिधार**—चारों दिशाएँ; **भासाइ**—वहाएं; **भेला**—केले आदि के थम्भ द्वारा निर्मित पानी में वहने वाली एक प्रकार की छोटी सी तरी; **वाहिर हयेछि**—वाहर हुआ हूँ; **स्वप्न......हेला**—स्वप्न-शयन की अवहेला कर।

दे दोल्—झुलाओ; **पश्चात्......आसि**—पीछे से आकर प्रमत्त आँधी हाहा-कर हँसती है और धक्का देती है; **येन......रोल**—जैसे लक्ष लक्ष यक्ष शिशुओं की यह शोरगुल हो; **आकाशे......हट्टगोल**—आकाश पाताल में पागलों और मद्यपों का होहल्ला है।

आजि....काछे—आज मेरे प्राण जाग उठे हैं और हृदय के पास वैठे हैं;

थाकिया थाकिया उठिछे काँपिया,
धरिछे आमार वक्ष चापिया,
निठुर निविड़ बन्धनसुखे हृदय नाचे;
त्रासे उल्लासे परान आमार व्याकुलियाछे
बुकेर काछे ।।

हाय, एतकाल आमि रेखेछिनु तारे यतनभरे
शयन'-परे ।
व्यथा पाछे लागे, दुख पाछे जागे,
निशिदिन ताइ वहु अनुरागे
वासरशयन करेछि रचन कुसुमथरे;
दुयार रुधिया रेखेछिनु तारे गोपन घरे
यतनभरे ।।

कत सोहाग करेछि चुम्बन करि नयनपाते
स्नेहेर साथे ।
शुनायेछि तारे माथा राखि पाशे
कत प्रियनाम मृदु मधुभाषे,

थाकिया थाकिया—रह रह कर; **उठिछे काँपिया**—काँप उठते हैं; **धरिछे...... चापिया**—मेरे वक्ष को दवा कर पकड़ते हैं; **निठुर......नाचे**—निष्ठुर, गाढ़ वन्धन के सुख से हृदय नाचता है; **त्रासे......व्याकुलियाछे**—त्रास से, उल्लास से मेरे प्राण व्याकुल हो रहे हैं।

एतकाल......परे—इतने समय तक मैंने उसे आदर (स्नेह) पूर्वक शय्या पर रखा था; **व्यथा......जागे**—पीछे (मन को) व्यथा अनुभव हो, दुख लगे; **निशिदिन......कुसुमथरे**—इसीलिये अत्यन्त अनुराग के साथ फूलों के स्तर (तोड़) से सुहाग-शय्या की रचना की है; **दुयार......भरे**—दरवाज़े को वंद कर घर में स्नेह के साथ उसे गोपन कर रखा था।

कत—कितना; **सोहाग**—प्रणयपूर्ण यत्न; **करेछि**—किया है; **नयनपाते**—आँखों की पलकों पर ; **शुनायेछि**—सुनाया है ; **तारे**—उसे; **माथा राखि**—सिर रख कर; **पाशे**—पार्श्व में; **कत**—कितने; **भाषे**—भाषा में;

गुञ्जरतान करियाछि गान ज्योत्स्नाराते;
या-किछु मधुर दियेछिनु तार दुखानि हाते
स्नेहेर साथे ।।

शेषे सुखेर शयने श्रान्त परान आलसरसे,
आवेशवशे ।
परश करिले जागे ना से आर,
कुसुमेर हार लागे गुरुभार,
घुमे जागरणे मिशि एकाकार निशिदिवसे;
वेदनाविहीन असाड़ विराग मरमे पशे
आवेशवशे ।।

ढालि मधुरे मधुर वधूरे आमार हाराइ वुझि,
पाइने खुँजि ।
वासरेर दीप निवे निवे आसे,
व्याकुल नयने हेरि चारि पाशे,
शुधु राशि राशि शुष्क कुसुम हयेछे पुँजि;
अतल स्वप्न-सागरे डुविया मरि ये युझि
काहारे खुँजि ।।

करियाछि—किया है; **ज्योत्स्नाराते**—चाँदनी रात में; **या-किछु....साथे**—जो कुछ मधुर है (उसे) स्नेह के साथ उसके दोनों हाथों में दिया था।

परान—प्राण; **परश.......आर**—स्पर्श करने पर भी वह और नहीं जगता; **मिशि**—मिल कर; **असाड़**—अवश; **मरमे**—मर्म में; **पशे**—प्रवेश करता है।

वासरेर दीप—वासर गृह (सुहाग-गृह) का दीपक; **निवे......आसे**—वुझने वुझने को हो गया है; **व्याकुल......पाशे**—व्याकुल आँखों से चारों ओर देखता हूँ; **शुधु.....पुँजि**—केवल राशि-राशि सूखे फूलों का ढेर लगा है; **डुविया**—डूव कर; **मरि......युझि**—जूझ कर मर रहा हूँ; **काहारे खुंजि**—किसको खोजते हुए ।

ताइ भेबेछि आजिके खेलिते हइबे नूतन खेला
रात्रिबेला।
मरणदोलाय धरि रशिगाछि
बसिब दुजने बड़ो काछाकाछि,
झंझा आसिया अट्ट हासिया मारिबे ठेला,
आमाते प्राणेते खेलिब दुजने झुलन खेला
निशीथ बेला।।

दे दोल् दोल्
दे दोल् दोल्
ए महासागरे तुफान तोल्।
वधूरे आमार पेयेछि आबार, भरेछे कोल।
प्रियारे आमार तुलेछे जागाये प्रलय रोल।
वक्षशोणिते उठेछे आबार की हिल्लोल।
भितरे वाहिरे जेगेछे आमार की कल्लोल!
उड़े कुन्तल, उड़े अञ्चल,
उड़े वनमाला वायुचञ्चल,
बाजे कङ्कण वाजे किङ्किणी—मत्त बोल।
दे दोल् दोल्।।

ताइ......खेला—इसीलिये सोचा है कि आज नूतन खेला खेलना होगा; **मरणदोलाय**—मरण के झूले पर; **धरि**—पकड़ कर; **रशिगाछि**—रस्सी; **वसिब.....काछि**—(हम) दोनों अत्यन्त पास-पास बैठेंगे; **झंझा......ठेला**—झंझा (आँधी) आ कर अट्टहास कर धक्का मारेगी; **आमाते......खेला**—मैं और प्राण दोनों झुलन-खेला खेलेंगे (झूला झूलेंगे)।

ए.....तोल्—इस महासागर में तूफान उठाओ; **पेयेछि आवार**—फिर से पाया है; **भरेछे कोल**—गोद भर गई है; **तुलेछे......रोल**—प्रलय का चीत्कार जगा दिया है; **वक्ष......हिल्लोल**—हृदय के खून में न जाने फिर कौन-सा हिल्लोल उठा है; **भितरे.......कल्लोल**—हमारे बाहर और भीतर कौन-सा कल्लोल जग पड़ा है; **मत्त बोल**—मत्त करने वाला बोल (गत)।

आय रे झंझा, पराणवधूर
आवरणराशि करिया दे दूर,
करि लुन्ठन अवगुन्ठन-वसन खोल्।
दे दोल् दोल्॥

प्राणेते आमाते मुखोमुखि आज
चिनि लब दोँहे छाड़ि भय लाज,
वक्षे वक्षे परशिब दोँहे भावे विभोल।
दे दोल् दोल्।
स्वप्न टुटिया वाहिरेछे आज दुटो पागल।
दे दोल् दोल्॥

२७ मार्च १८९३ 'सोनार तरी'

विदाय-अभिशाप

कच। देहो आज्ञा, देवयानी देवलोके दास
करिबे प्रयाण। आजि गुरुगृहवास
समाप्त आमार। आशीर्वाद करो मोरे
ये विद्या शिखिनु ताहा चिरदिन ध'रे

आय रे झंझा—झंझा (आँधी) आ; **परानवधूर......दूर**—प्राण-वधू की आवरणराशि को दूर कर दे; **करि लुन्ठन**—अपहरण करके।

प्राणेते......आज—आज प्राण और मैं आमने-सामने हैं; **चिनि......लाज**—लाज और भय छोड़ कर दोनों (एक दूसरे को) पहचान लेंगे; **वक्षे.....बिभोल**—वक्ष से वक्ष मिलाएंगे (आलिंगित होंगे), दोनों भाव में विभोर हो जाएंगे; **स्वप्न टुटिया**—स्वप्न को चूर्ण कर; **वाहिरेछे......पागल**—दो पगले आज बाहर हुए हैं।

विदाय-अभिशाप—विदाई का अभिशाप; **देहो आज्ञा**—आज्ञा दो; **देवलोके**—देवलोक को; **करिबे**—करेगा; **आमार**—मेरा; **ये**—जो; **शिखिनु**—सीखी; **ताहा**—वह; **धरे**—तक के लिये;

अन्तरे जाज्वल्य थाके उज्ज्वल रतन
सुमेरुशिखरशिरे सूर्येर मतन,
अक्षय किरण।

देवयानी। मनोरथ पुरियाछे,
पेयेछ दुर्लभ विद्या आचार्येर काछे,
सहस्रवर्षेर तव दु:साध्य साधना
सिद्ध आजि; आर-किछु नाहि कि कामना,
भेबे देखो मने मने।

कच। आर किछु नाहि।

देवयानी। किछु नाइ? तबु आरबार देखो चाहि,
अवगाहि हृदयेर सीमान्त अवधि
करह सन्धान; अन्तरेर प्रान्ते यदि
कोनो वांछा थाके, कुशेर अंकुरसम
क्षुद्र दृष्टि-अगोचर, तबु तीक्ष्णतम।

कच। आजि पूर्ण कृतार्थ जीवन। कोनो ठाँइ
मोर माझे कोनो दैन्य कोनो शून्य नाइ,
सुलक्षणे।

देवयानी। तुमि सुखी त्रिजगत्-माझे।
याओ तबे इन्द्रलोके आपनार काजे
उच्चशिरे गौरव बहिया। स्वर्गपुरे

थाके—रहे; सूर्येर मतन—सूर्य के समान।

पुरियाछे—पूरा हो गया है; पेयेछ—पाया है; आचार्येर काछे—आचार्य के पास; आर......मने—मन ही मन चिन्ता कर देखो क्या और कोई कामना नहीं है; आर......नाहि—और कुछ नहीं है।

किछु नाइ—कुछ नहीं; तबु.....चाहि—तौभी फिर ध्यान दे कर देखो; अवधि—पर्यन्त; करह—करो; अन्तरेर......थाके—अन्तर में यदि कोई वांछा हो।

कोनो......नाइ—किसी जगह मेरे भीतर कोई दैन्य, कोई रिक्तता नहीं है।

याओ तबे—जाओ तब; आपनार काजे—अपने काज के लिये; गौरव बहिया—गौरव वहन करते हुए (गौरवान्वित हो कर);

उठिबे आनन्दध्वनि, मनोहर सुरे
बाजिबे मङ्गलशङ्ख, सुराङ्गनागण
करिबे तोमार शिरे पुष्प वरिषन
सद्यच्छिन्न नन्दनेर मन्दारमञ्जरी।
स्वर्गपथे कलकण्ठे अप्सरी किन्नरी
दिबे हुलुध्वनि। आहा विप्र, वहुक्लेशे
केटेछे तोमार दिन विजने विदेशे
सुकठोर अध्ययने। नाहि छिल केह
स्मरण कराये दिते सुखमय गेह,
निवारिते प्रवासवेदना। अतिथिरे
यथासाध्य पूजियाछि दरिद्रकुटिरे
याहा छिल दिये। ताइ ब'ले स्वर्गसुख
कोथा पाव, कोथा हेथा अनिन्दित मुख
सुरललनार। वड़ो आशा करि मने,
आतिथ्येर अपराध रबे ना स्मरणे
फिरे गिये सुरलोके।

कच। सुकल्याण हासे
प्रसन्न विदाय आजि दिते हबे दासे।

उठिबे—उठेगी; **करिबे......वरिषन**—तुम्हारे सिर पर पुष्प-वर्षा करेंगी; **सद्यच्छिन्न**—अभी की तोड़ी हुई; **नन्दनेर**—नन्दन की; **दिबे**—देंगी (करेंगी); **हुलुध्वनि**—मंगल, विवाहादि के समय स्त्रियाँ मुँह से एक प्रकार की ध्वनि करती हैं; यह वंगाल में प्रचलित है; **केटेछे....दिन**—तुम्हारे दिन कटे हैं (वीते हैं); **नाहि.... केह**—कोई नहीं था; **स्मरण कराये दिते**—(जो) स्मरण करा देता; **निवारिते**—निवारण करने के लिये, दूर करने के लिये; **प्रवास वेदना**—प्रवास की व्यथा; **अतिथिरे......दिये**—दरिद्र कुटी में जो कुछ था (उसे) दे कर यथासाध्य पूजा की है; **ताइ ब'ले**—तो इससे क्या; **कोथा पाव**—कहाँ पाऊँगी; **कोथा......सुरललनार**—कहाँ यहाँ अनिन्दित मुख वाली सुरललनाएँ हैं; **वड़ो......सुरलोके**—मन में वड़ी आशा है कि सुरलोक में जा कर आतिथ्य का अपराध स्मरण नहीं रहेगा।

सुकल्याण......दासे—आज दास को कल्याणकारी हँसी के साथ प्रसन्न विदाई देनी होगी।

देवयानी। हासि? हाय सखा, ए तो स्वर्गपुरी नय।
पुष्पे कीट सम हेथा तृष्णा जेगे रय
मर्म-माझे वांछा घुरे वांछितेरे घिरे
लांछित भ्रमर यथा बारम्बार फिरे
मुद्रित पद्मेर काछे। हेथा सुख गेले
स्मृति एकाकिनी बसि दीर्घश्वास फेले
शून्यगृहे; हेथाय सुलभ नाहि हासि।
याओ वन्धु, की हइबे मिथ्या काल नाशि,
उत्कण्ठित देवगण।—
येतेछ चलिया?
सकलि समाप्त हल दु कथा वलिया?
दशशत वर्ष परे एइ कि बिदाय!

कच। देवयानी, की आमार अपराध!

देवयानी। हाय,
सुन्दरी अरण्यभूमि सहस्र वत्सर
दियेछे वल्लभ छाया, पल्लवमर्मर,
शुनायेछे विहङ्गकूजन—तारे आजि
एतइ सहजे छेड़े याबे? तरुराजि

हासि—हँसी; **ए......नय**—यह तो स्वर्गपुरी नहीं है; **पुष्पे.....रय**—पुष्प में कीट के समान यहाँ तृष्णा जगी रहती है; **मर्म...घिरे**—हृदय के भीतर वांछित (वस्तु) को घेर कर वांछा घूमती रहती है; **लांछित**—अंकित; **फिरे**—घूमता है; **मुद्रित**—छपा हुआ; **पद्मेर काछे**—पद्म के पास; **हेथा**—यहाँ; **सुख**—प्रिय; **गेले**—जाने पर; **वसि......शून्यगृहे**—शून्यगृह में बैठ कर दीर्घश्वास फेंकती है; **हेथाय...हासि**—यहाँ हँसी सुलभ नहीं है; **याओ**—जाओ; **की......नाशि**—झूठमूठ समय वरवाद कर क्या होगा।

येतेछ चलिया—चले जा रहे हो; **सकलि......वलिया**—दो वातें कहने से (ही) सव कुछ समाप्त हो गया; **परे**—वाद; **एइ......विदाय**—क्या यही विदाई है; **की......अपराध**—क्या मेरा अपराध है।

दियेछे—दिया है; **वल्लभ**—प्रिय; **तारे......यावे**—उसे ही आज इतने सहज भाव से छोड़ चले जाओगे;

म्लान हये आछे येन, हेरो आजिकार
वनच्छाया गाढ़तर शोके अन्धकार,
केँदे ओठे वायु, शुष्क पत्र झरे पड़े;
तुमि शुधु चले यावे सहास्य अधरे
निशान्तेर सुखस्वप्नसम ?

कच। देवयानी,
ए वनभूमिरे आमि मातृभूमि मानि,
हेथा मोर नवजन्मलाभ। एर 'परे
नाहि मोर अनादर—चिरप्रीतिभरे
चिरदिन करिव स्मरण।

देवयानी। एइ सेइ
वटतल, येथा तुमि प्रति दिवसेइ
गोधन चराते एसे पड़िते घुमाये
मध्याह्नेर खरतापे; क्लान्त तव काये
अतिथिवत्सल दीर्घ छायाखानि
दित बिछाइया; सुख सुप्ति दित आनि
झर्झर पल्लवदले करिया बीजन
मृदुस्वरे;—येयो सखा, तबु किछुक्षण
परिचित तरुतले बसो शेषबार,
निये याओ सम्भाषण ए स्नेहछायार—

हये आछे—हो गए हैं; येन—जैसे; हेरो—देखो; आजिकार—आज की; केँदे ओठे—क्रन्दन कर उठती है; तुमि.....यावे—केवल तुम चले जाओगे।

ए.....मानि—इस वनभूमि को मैं मातृभूमि मानता हूँ; एर 'परे—इसके ऊपर; करिव—करूँगा।

एइ सेइ—यही वह; येथा—जहाँ; एसे—आ कर; पड़िते घुमाये—सो पड़ते (जाते); छायाखानि—छाया; दित बिछाइया—बिछा देती; सुख....आनि—सुख-निद्रा ले आ देती; करिया बीजन—व्यजन कर, पंखा झल कर; बसो—बैठो; निये याओ—ले जाओ; ए—इस; स्नेहछायार—स्नेह छाया का;

दुइ दण्ड थेके याओ, से विलम्बे तव
स्वर्गेर हवे ना कोनो क्षति।

कच। अभिनव
व'ले मने हय विदायेर क्षणे
एइ-सब चिरपरिचित बन्धुगणे;
पलातक प्रियजने बाँधिवार तरे
करिछे विस्तार सबे व्यग्र स्नेहभरे
नूतन बन्धनजाल, अन्तिम मिनति,
अपूर्व सौन्दर्यराशि। ओगो वनस्पति,
आश्रितजनेर वन्धु, करि नमस्कार।
कत पान्थ वसिवेक छायाय तोमार;
कत छात्र कत दिन आमार मतन
प्रच्छन्न प्रच्छायतले नीरव निर्जन
तृणासने पतङ्गेर मृदुगुञ्जस्वरे
करिवेक अध्ययन; प्रातःस्नान-परे
ऋषिवालकेरा आसि सजल वल्कल
शुकावे तोमार शाखे; राखालेर दल
मध्याह्ने करिवे खेला; ओगो तारि माझे
ए पुरानो वन्धु येन स्मरणे विराजे।

दुइ......याओ—दो दण्ड ठहर कर जाओ; **से......क्षति**—उस विलम्ब से तुम्हारे स्वर्ग की कोई क्षति नहीं होगी।

अभिनव.....वन्धुगणे—विदाई के क्षण में ये सब चिरपरिचित वन्धुगण अभिनव जैसे लगते हैं; **प्रियजने.....तरे**—प्रियजन को बांधने के लिये; **करिछे ......जाल**—सभी व्यग्र हो कर स्नेहपूर्ण नूतन जाल का विस्तार कर रहे हैं; **मिनति**—विनति; **करि**—करता हूँ; **कत पान्थ**—कितने पथिक; **वसिवेक**—बैठेंगे; **छायाय तोमार**—तुम्हारी छाया में; **आमार मतन**—मेरे समान; **पतङ्गेर**—पक्षियों के; **करिवेक**—करेंगे; **आसि**—आ कर; **सजल वल्कल**—जल से भीगा हुआ वल्कल; **शुकावे.....शाखे**—तुम्हारी शाखा (डाली) में सुखाएंगे; **राखालेर दल**—चरवाहों का दल; **करिवे**—करेंगे; **तारि......विराजे**—उन्हींके बीच यह पुराना वन्धु (तुम्हारी) स्मृति में विराजमान रहे।

देवयानी । मने रेखो आमादेर होमधेनुटिरे;
स्वर्गसुधा पान क'रे से पुण्यगाभीरे
भुलोना गरबे ।
कच । सुधा हते सुधामय
दुग्ध तार; देखे तारे पापक्षय हय,
मातृरूपा, शान्तिस्वरूपिणी, शुभ्रकान्ति
पयस्विनी । ना मानिया क्षुधातृष्णा श्रान्ति
तारे करियाछि सेवा; 'गहन कानने
श्यामशष्प स्रोतस्विनीतीरे तारि सने
फिरियाछि दीर्घ दिन; परितृप्तिभरे
स्वेच्छामते भोग करि निम्नतट'-परे
अपर्याप्त तृणराशि सुस्निग्ध कोमल
आलस्यमन्थरतनु लभि तरुतल
रोमन्थ करेछे धीरे शुये तृणासने
सारावेला; माझे माझे विशाल नयने
सकृतज्ञ शान्तदृष्टि मेलि गाढ़स्नेह
चक्षु दिया लेहन करेछे मोर देह ।
मने रबे सेइ दृष्टि स्निग्ध अचञ्चल,
परिपुष्ट शुभ्र तनु चिक्कण पिच्छल ।

रेखो—याद रखना; आमादेर—हमलोगों की; धेनुटि—गाय; क'रे—
ती है; से पुण्य गाभीरे—वह पुण्य की गाय को; भुलोना गरबे—गर्व में
न जाना ।

हते—से; तार—उसका; देखे......हय—उसको देखने से पापक्षय होता
ना......सेवा—क्षुधा, तृष्णा, श्रान्ति की चिन्ता किए विना उसकी सेवा की
शष्प—हरी कोमल घास; तारि सने—उसीके साथ; फिरियाछि—घूमता
हूँ; अपर्याप्त—प्रचुर, प्रयोजन से भी अधिक; लभि—प्राप्त कर; शुये—
कर; माझे माझे—बीच बीच में; सकृतज्ञ—कृतज्ञता पूर्वक; मेलि—
कर; गाढ़......देह—गाढ़ स्नेह से पूर्ण चक्षु द्वारा मेरी देह को चाटा है;
......दृष्टि—वह दृष्टि मन में (बनी) रहेगी ।

देवयानी। आर, मने रेखो आमादेर कलस्वना
स्रोतस्विनी वेणुमती।

कच। तारे भुलिब ना।
वेणुमती, कत कुसुमित कुञ्ज दिये
मधुकण्ठे आनन्दित कलगान निये
आसिछे शुश्रूषा वहि ग्राम्यवधूसम
सदा क्षिप्रगति, प्रवाससङ्गिनी मम
नित्य शुभव्रता।

देवयानी। हाय बन्धु, ए प्रवासे
आरो कोनो सहचरी छिल तव पाशे,
परगृहवासदुःख भुलावार तरे
यत्न तार छिल मने रात्रिदिन ध'रे—
हाय रे दुराशा!

कच। चिरजीवनेर सने
तार नाम गाँथा हये गेछे।

देवयानी। आछे मने—
येदिन प्रथम तुमि आसिले हेथाय
किशोर ब्राह्मण, तरुण अरुण प्राय
गौरवर्ण तनुखानि स्निग्ध दीप्तिढाला,
चन्दने चर्चित भाल, कण्ठे पुष्पमाला,

मने रेखो—मन में रखना (याद रखना)।

तारे—उसको; दिये—से हो कर; निये—ले कर; आसिछे—आ रही है; वहि—वह कर।

ए प्रवासे......पाशे—इस प्रवास में और कोई सहचरी तुम्हारे पार्श्व (पास) में थी; भुलावार तरे—भुलाने के लिये; छिल मने—मन में था।

चिरजीवनेर......गेछे—चिरजीवन के साथ उसका नाम गूँथ गया है।

आछे मने—मन में है (याद है); येदिन......हेथाय—जिस दिन प्रथम तुम यहाँ आए; प्राय—प्रायः, लगभग; तनुखानि—शरीर;

परिहित पट्टवास, अधरे नयने
प्रसन्न सरल हासि, होथा पुष्पवने
दाँड़ाले आसिया—

कच। तुमि सद्य स्नान करि
दीर्घ आर्द्र केशजाले नवशुक्लाम्वरी
ज्योतिःस्नात मूर्तिमती ऊषा, हाते साजि,
एकाकी तुलितेछिले नव पुष्पराजि
पूजार लागिया। कहिनु करि विनति,
'तोमारे साजे ना श्रम, देहो अनुमति
फुल तुले दिव, देवी।'

देवयानी। आमि सविस्मय
सेइक्षणे शुधानु तोमार परिचय।
विनये कहिले, 'आसियाछि तव द्वारे,
तोमार पितार काछे शिष्य हइवारे
आमि वृहस्पतिसुत।'

कच। शंका छिल मने,
पाछे दानवेर गुरु स्वर्गेर ब्राह्मणे
देन फिराइया।

देवयानी। आमि गेनु ताँर काछे।
हासिया कहिनु, 'पिता भिक्षा एक आछे

परिहित—सज्जित; **पट्टवास**—रेशम का वस्त्र; **होथा......आसिया**—वहाँ पुष्पवन में आ कर खड़े हुए।

हाते—हाथ में; **साजि**—फूल चुनने की डाली; **तुलितेछिले**—चुन रही थी; **पूजार लागिया**—पूजा के लिये; **कहिनु**—कहा; **करि विनति**—विनती कर; **तोमारे......देवी**—देवी, तुम्हें परिश्रम (करना) शोभा नहीं देता, (मुझे) अनुमति दो, फूल चुन दूँगा।

शुधानु......परिचय—तुम्हारा परिचय पूछा; **काछे**—निकट; **हइवारे**—होने के लिये।

पाछे—ऐसा न हो; **ब्राह्मणे**—ब्राह्मण को; **देन फिराइया**—लौटा दें।
आमि....काछे–मैं उनके पास गई; **हासिया कहिनु**–हँसकर बोली; **आछे**–है;

चरणे तोमार।' स्नेहे बसाइया पाशे
शिरे मोर दिये हात शान्त मृदु भाषे
कहिलेन, 'किछु नाहि अदेय तोमारे।'
कहिलाम, 'बृहस्पतिपुत्र तव द्वारे
एसेछेन, शिष्य करि लहो तुमि ताँरे,
ए मिनति।'—से आजिके हल कत काल,
तबु मने हय, येन सेदिन सकाल।

कच। ईर्षाभरे तिनवार दैत्यगण मोरे
करियाछे वध, तुमि देवी दया क'रे
फिराये दियेछ मोर प्राण; सेइ कथा
हृदये जागाये रबे चिरकृतज्ञता।

देवयानी। कृतज्ञता! भूले येयो, कोनो दुःख नाइ।
उपकार या करेछि हये याक छाइ—
नाहि चाइ दानप्रतिदान। सुखस्मृति
नाहि किछु मने? यदि आनन्देर गीति
कोनोदिन बेजे थाके अन्तरे वाहिरे,
यदि कोनो सन्ध्यावेला वेणुमतीतीरे

चरणे तोमार—तुम्हारे चरणों में; **स्नेहे......तोमार**—स्नेह पूर्वक वगल में वैठा कर मेरे शिर पर हाथ दे कर शान्त मृदु शब्दों में (उन्होंने) कहा, 'तुम्हारे लिये कुछ भी अदेय नहीं है'; **कहिलाम**—बोली; **एसेछेन**—आए हैं; **शिष्य......ताँरे**—उन्हें तुम शिष्य वना लो; **ए मिनति**—यही विनती है; **से...... सकाल**—वह आज कितना दिन हुआ; **तबु......सकाल**—तौभी मन में होता है जैसे (यह) उस दिन प्रभात की वात है।

तुमि....प्राण—तुमने देवी मेरे प्राण लौटा दिए हैं (वचा दिए हैं); **सेइ......रबे**—वही वात हृदय में जगाए रहेगी।

भुले......नाइ—भूल जाना, कोई दुःख नहीं; **उपकार......छाइ**—जो उपकार किया है (वह) राख हो जाय (उसका कोई मूल्य न रहे); **नाहि चाइ**—नहीं चाहिए; **सुखस्मृति**—प्रिय स्मृति; **नाहि किछु मने**—कुछ भी मन में नहीं है; **यदि......वाहिरे**—यदि (कोई) आनन्द देने वाली गीति अन्तर और बाहर किसी दिन वजे (स्पन्दित करे);

अध्ययन-अवसरे वसि पुष्पवने
अपूर्व पुलकराशि जेगे थाके मने,
फुलेर सौरभसम हृदय उच्छ्वास
व्याप्त करे दिये थाके सायाह्न-आकाश—
फुटन्त निकुञ्जतल, सेइ सुखकथा
मने रेखो। दूर हये याक कृतज्ञता।
यदि सखा, हेथा केह गेये थाके गान
चित्ते याहा दियेछिल सुख, परिधान
करे थाके कोनोदिन हेन वस्त्रखानि
याहा देखे मने तव प्रशंसार वाणी
जेगेछिल, भेवेछिले प्रसन्न-अन्तर
तृप्त चोखे 'आजि एरे देखाय सुन्दर'
सेइ कथा मने कोरो अवसर क्षणे
सुखस्वर्गधामे। कत दिन एइ वने
दिक्-दिगन्तरे आषाढ़ेर नीलजटा
श्यामस्निग्ध वरषार नवघनघटा
नेबेछिल, अविरल वृष्टि जलधारे
कर्महीन दिने सघन कल्पनाभारे

वसि—बैठे; जेगे......मने—मन में जाग्रत हो; व्याप्त.....तल—सायंकालीन आकाश एवं प्रस्फुटित होने वाले निकुञ्ज को व्याप्त कर दे; दूर......याक—दूर हो जाय; हेथा.......सुख—यहाँ किसीने गान गाया हो जिससे (तुम्हारे) मन को आनन्द प्राप्त हुआ हो; परिधान......वस्त्रखानि—किसीने ऐसा वस्त्र किसी दिन धारण किया हो; याहा......जेगेछिल—जिसे देख तुम्हारे मन में प्रशंसा की वाणी जग उठी थी; भेवेछिले....सुन्दर—प्रसन्न अन्तर और तृप्त आँखों से (तुमने) मन ही मन कहा था, 'आज यह सुन्दर दीखती है'; सेइ.....धामे—यही बात (अपने) प्रिय स्वर्गधाम में अवसर के क्षणों में याद करना; घटा नेबेछिल—बादल (बरसने के लिये) नीचे आ गए थे; कर्महीन दिने—ऐसे दिन जिस दिन कोई काम काज न हो;

पीड़ित हृदय; एसेछिल कतदिन
अकस्मात् वसन्तेर वाधावन्धहीन
उल्लासहिल्लोलाकुल यौवन-उत्साह,
संगीतमुखर सेइ आवेगप्रवाह
लताय पाताय पुष्पे वने वनान्तरे
व्याप्त करि दियाछिल लहरे लहरे
आनन्दप्लावन; भेवे देखो एकबार,
कत उषा, कत ज्योत्स्ना, कत अन्धकार
पुष्पगन्धघन अमानिशा एइ वने
गेछे मिशे सुखे दुःखे तोमार जीवने—
तारि माझे हेन प्रातः, हेन सन्ध्यावेला,
हेन मुग्धरात्रि, हेन हृदयेर खेला,
हेन सुख, हेन मुख देय नाइ देखा
याहा मने आँका रबे चिरचित्ररेखा
चिररात्रि चिरदिन? शुधु उपकार!
शोभा नहे, प्रीति नहे, किछु नहे आर?
कच। आर याहा आछे ताहा प्रकाशेर नय,
सखी। वहे याहा मर्म-माझे रक्तमय
वाहिरे ता केमने देखाव?

एसेछिल—आया था; **सेइ**—वही; **लताय**—लताओं में; **पाताय**—पत्तियों में; **करि दियाछिल**—कर दिया था; **भेवे......एकवार**—सोच कर देखो एक बार; **ज्योत्स्ना**—चाँदनी; **गेछे मिशे**—घुल-मिल गया है; **तोमार जीवने**—तुम्हारे जीवन में; **तारि माझे**—उसीके वीच; **हेन**—ऐसा; **देय नाइ देखा**—दिखाई नहीं देता; **याहा........रबे**—जो मन में अंकित रहेगा; **शुधु उपकार**—केवल उपकार; **किछु नहे आर**—और कुछ नहीं।

आर......नय—और जो है वह प्रकाश (प्रकट) करने के लिये नहीं है; **वहे......देखाव**—जो मर्म के भीतर रक्त में वह रहा है उसे वाहर कैसे दिखाऊँगा।

देवयानी। जानि सखे,
तोमार हृदय मोर हृदय-आलोके
चकिते देखेछि कतवार, शुधु येन
चक्षेर पलकपाते; ताइ आजि हेन
स्पर्धा रमणीर। थाको तवे, थाको तवे,
येयो नाको। सुख नाइ यशेर गौरवे।
हेथा वेणुमतीतीरे मोरा दुइ जन
अभिनव स्वर्गलोक करिव सृजन
ए निर्जन वनच्छाया साथे मिशाइया
निभृत विश्रब्ध मुग्ध दुइखानि हिया
निखिलविस्मृत। ओगो वन्धु, आमि जानि
रहस्य तोमार।
कच। नहे नहे, देवयानी।
देवयानी। नहे? मिथ्या प्रवञ्चना! देखि नाइ आमि
मन तव? जान ना कि प्रेम अन्तर्यामी?
विकशित पुष्प थाके पल्लवे विलीन,
गन्ध तार लुकावे कोथाय? कतदिन

जानि—जानती हूँ; तोमार......कतवार—अपने हृदय के आलोक में तुम्हारे हृदय को कितनी वार निमेष मात्र के लिये देखा है; शुधु......पाते—मात्र जैसे आँखों की पलकों के गिरते गिरते; ताइ......रमणीर—इसीलिये आज रमणी की ऐसी स्पर्धा है; थाको.....नाको—तव (यहीं) रह जाओ रह जाओ, जाना नहीं; सुख......गौरवे—यश के गौरव में सुख नहीं है; हेथा......सृजन—यहाँ वेणुमती के तीर पर हम दोनों अभिनव स्वर्गलोक की सृष्टि करेंगे; ए.....विस्मृत—इस निर्जन वनच्छाया के साथ निभृत, विश्वस्त, मुग्ध दो हृदयों को मिला कर (हम दोनों) समस्त को भुला देंगे; आमि......तोमार—मैं तुम्हारे रहस्य (मर्म) को जानती हूँ; नहे—नहीं।

देखि......तव—तुम्हारे मन को क्या मैंने देखा नहीं है; जान ना कि—जानते नहीं हो क्या; थाके—रहता है; पल्लवे—पल्लव में; गन्ध......कोथाय—उसकी गन्ध कहाँ छिपेगी;

येमनि तुलेछ मुख, चेयेछ येमनि,
येमनि शुनेछ तुमि मोर कण्ठध्वनि,
अमनि सर्वाङ्गे तव कम्पियाछे हिया—
नड़िले हीरक यथा पड़े ठिकरिया
आलोक ताहार। से कि आमि देखि नाइ?
धरा पड़ियाछ वन्धु, वन्दी तुमि ताइ
मोर काछे। ए वन्धन नारिबे काटिते।
इन्द्र आर तव इन्द्र नहे।

कच। शुचिस्मिते,
सहस्र वत्सर धरि ए दैत्यपुरीते
एरि लागि करेछि साधना?

देवयानी। केन नहे?
विद्यारि लागिया शुधु लोके दुःख सहे
ए जगते? करेनि कि रमणीर लागि
कोनो नर महातप? पत्नीवर मागि
करेननि सम्वरण तपतीर आशे
प्रखर सूर्येर पाने ताकाये आकाशे
अनाहारे कठोर साधना कत? हाय,
विद्याइ दुर्लभ शुधु, प्रेम कि हेथाय

कत दिन......ध्वनि—कितने दिन जैसे ही तुमने मुख उठाया है, जैसे ही (मुझे) देखा है, जैसे ही तुमने मेरा कण्ठस्वर सुना है; **अमनि......हिया**—वैसेही समग्र रूप से तुम्हारा हृदय कम्पित हुआ है; **नड़िले......ताहार**—जैसे हीरा के हिलने-डुलने से उसका आलोक छिटक पड़ता है; **से......नाइ**—वह क्या मैंने देखा नहीं है; **धरा......वन्धु**—वन्धु, तुम पकड़े गए हो; **वन्दी......काछे**—इसीलिये तुम मेरे पास वन्दी हो; **ए......काटिते**—इस वन्धन को नहीं काट सकोगे; **इन्द्र......नहे**—इन्द्र अव तुम्हारा इन्द्र नहीं है।

एरि......साधना—इसीके लिये साधना की है।

केन नहे—क्यों नहीं; **विद्यारि....जगते**—विद्या के लिये ही केवल लोग इस जगत् में दुःख सहते हैं; **करेनि......महातप**—रमणी के लिये क्या किसी पुरुष ने वड़ी तपस्या नहीं की है; **विद्याइ......सुलभ**—विद्या ही केवल दुर्लभ है प्रेम क्या

एतइ सुलभ ? सहस्र वत्सर ध'रे
साधना करेछ तुमि की धनेर तरे
आपनि जान ना ताहा। विद्या एक धाँरे,
आमि एकधारे—कभु मोरे कभु तारे
चेयेछ सोत्सुके; तव अनिश्चित मन
दोँहारेइ करियाछे यत्ने आराधन
संगोपने। आज मोरा दोँहे एकदिने
आसियाछि धरा दिते। लहो सखा, चिने
यारे चाओ ! वल यदि सरल साहसे
'विद्याय नाहिको सुख, नाहि सुख यशे,
देवयानी, तुमि शुधु सिद्धि मूर्तिमती,
तोमारेइ करिनु वरण', नाहि क्षति,
नाहि कोनो लज्जा ताहे। रमणीर मन
सहस्रवर्षेरि सखा, साधनार धन।
कच। देवसन्निधाने शुभे, करेछिनु पण
महासञ्जीवनी विद्या करि उपार्जन

यहाँ इतना सुलभ है; **सहस्र......ताहा**—सहस्र वर्षों से किस धन के लिये तुमने साधना की है, यह स्वयं नहीं जानते; **विद्या......सोत्सुके**—विद्या एक ओर, मैं एक ओर—कभी मेरी ओर, कभी उसकी ओर तुमने अत्यन्त उत्सुक हो कर देखा है; **तव......संगोपने**—तुम्हारे अनिश्चित मन ने अत्यन्त गोपन भाव से दोनों की आराधना बड़े अनुराग से की है; **आज......दिते**—आज हम दोनों एकही दिन पकड़ाई देने आए हैं; **लहो......चाओ**—जिसे चाहते हो सखा, (उसे) पहचान लो; **वल......साहसे**—सहज साहस से यदि बोलो; **विद्याय......ताहे**—'देवयानी, विद्या में सुख नहीं है, यश में सुख नहीं है; केवल तुम्ही मूर्तिमती सिद्धि हो, तुम्हें ही वरण किया' (तो) उसमें कोई क्षति नहीं, कोई लज्जा नहीं; **रमणीर....धन**—सखा, रमणी का मन सहस्र वर्षों की साधना का धन है।

देवसन्निधाने—देवताओं के निकट; **करेछिनु पण**—दृढ़ संकल्प किया था; **करि**—कर ;

देवलोके फिरे याव, एसेछिनु ताइ,
सेइ पण मने मोर जेगेछे सदाइ,
पूर्ण सेइ प्रतिज्ञा आमार, चरितार्थ
एतकाल परे ए जीवन; कोनो स्वार्थ
करि ना कामना आजि।

देवयानी। धिक् मिथ्याभाषी!
शुधु विद्या चेयेछिले? गुरुगृहे आसि
शुधु छात्ररूपे तुमि आछिले निर्जने
शास्त्रग्रन्थे राखि आँखि रत अध्ययने
अहरह? उदासीन आर सबा-'परे?
छाड़ि अध्ययनशाला वने वनान्तरे
फिरिते पुष्पेर तरे, गाँथि माल्यखानि
सहास्य प्रफुल्ल मुखे केन दिते आनि
ए विद्याहीनारे? एइ कि कठोर व्रत?
एइ तव व्यवहार विद्यार्थीर मतो?
प्रभाते रहिते अध्ययने, आमि आसि
शून्य साजि हाते लये दाँड़ातेम हासि—
तुमि केन ग्रन्थ राखि उठिया आसिते,
प्रफुल्ल शिशिरसिक्त कुसुमराशिते

फिरे याव—लौट जाऊँगा; **एसेछिनु ताइ**—इसीलिये आया था; **सेइ......सदाइ**—वही प्रतिज्ञा मेरे मन में सदा जाग्रत रही; **एतकाल परे**—इतने समय के बाद।

शुधु—केवल; **चेयेछिले**—चाहा था; **आसि**—आ कर; **आछिले**—थे; **राखि आँखि**—आँख रख कर; **उदासीन.....परे**—और सब से उदासीन; **छाड़ि**—छोड़; **फिरिते......तरे**—पुष्प के लिये घूमते; **गाँथि.....विद्याहीनारे**—माला गूँथ सहास्य प्रफुल्ल मुख से क्यों इस विद्याहीना को आ कर देते; **एइ.....व्रत**—क्या यही कठोर व्रत है; **एइ......मतो**—यही तुम्हारा विद्यार्थी जैसा व्यवहार है; **रहिते**—रहते; **आमि......हासि**—शून्य फूलों की डाली हाथ में ले कर मैं आती और हँस कर खड़ी होती; **तुमि......आसिते**—तुम क्यों ग्रन्थ रख उठ कर आते; **प्रफुल्ल......पूजा**—ओसकणों से सिक्त राशि-राशि फूलों से प्रफुल्ल (चित्त से)

करिते आमार पूजा? अपराह्णकाले
जलसेक करिताम तरु-आलवाले;
आमारे हेरिया श्रान्त केन दया करि
दिते जल तुले? केन पाठ परिहरि
पालन करिते मोर मृगशिशुटिके?
स्वर्ग हते ये संगीत एसेछिले शिखे
केन ताहा शुनाइते, सन्ध्यावेला यबे
नदीतीरे अन्धकार नामित नीरवे
प्रेमनत नयनेर स्निग्धछायामय
दीर्घ पल्लवेर मतो? आमार हृदय
विद्या निते एसे केन करिले हरण
स्वर्गेर चातुरीजाले? बुझेछि एखन,
आमारे करिया वश पितार हृदय
चेयेछिले पशिवारे—कृतकार्य हये
आज याबे मोरे किछु दिये कृतज्ञता,
लब्धमनोरथ अर्थी राजद्वारे यथा
द्वारीहस्ते दिये याय मुद्रा दुइ-चारि
मनेर सन्तोषे?

मेरी पूजा करते; **जलसेक करिताम**—जल सिंचन करती; **तरु.....आलवाले**—वृक्षों के थाले में; **आमारे.....तुले**—मुझे श्रान्त (थकी) देख दया कर क्यों जल खींच देते; **केन.....शिशुटिके**—पाठ छोड़ क्यों मेरे मृग-शिशु का पालन करते; **स्वर्ग......शुनाइते**—स्वर्ग से जो संगीत सीख कर आए थे क्यों उसे (मुझे) सुनाते; **सन्ध्या.....नीरवे**—संध्यावेला जब अंधकार चुपचाप उतरता; **आमार हृदय**—मेरा हृदय; **विद्या निते एसे**—विद्या लेनेके लिये आ कर; **केन**—क्यों; **करिले हरण**—हरण किया; **बुझेछि एखन**—अब समझी हूँ; **आमारे...... पशिवारे**—मुझे वश कर पिता के हृदय में प्रवेश करना चाहा था; **कृतकार्य हये**—कृतकार्य (सफल) हो कर; **आज....कृतज्ञता**—आज मुझे कुछ कृतज्ञता दे कर जाओगे; **अर्थी**—प्रार्थनाकारी; **द्वारी....सन्तोषे**—मन के सन्तोष से द्वारपाल के हाथ में दो-चार मुद्राएँ दे जाता है।

कच। हा अभिमानिनी नारी,
सत्य शुने की हइबे सुख? धर्म जाने,
प्रतारणा करि नाइ; अकपट प्राणे
आनन्द-अन्तरे तव साधिया सन्तोष,
सेविया तोमारे यदि करे थाकि दोष,
तार शास्ति दितेछेन विधि। छिल मने,
कब ना से कथा। बलो, की हइबे जेने
त्रिभुवने कारो याहे नाइ उपकार,
एकमात्र शुधु याहा नितान्त आमार
आपनार कथा। भालोबासि किना आज
से तर्के की फल? आमार या आछे काज
से आमि साधिब। स्वर्ग आर स्वर्ग ब'ले
यदि मने नाहि लागे, दूर वनतले
यदि घुरे मरे चित्त विद्ध मृगसम,
चिरतृष्णा लेगे थाके दग्ध प्राणे मम
सर्वकार्य-माझे—तबु चले येते हबे
सुखशून्य सेइ स्वर्गधामे। देव-सबे

शुने.....सुख—सुनने से क्या सुख होगा; **धर्म जाने**—धर्म जानता है (धर्म की साक्षी दे कर कहता हूँ); **प्रतारणा......नाइ**—प्रवञ्चना नहीं की है; **अकपट...**
...विधि—अकपट मन से, अन्तर के आनन्द से तुम्हारा सन्तोष साधन कर (सन्तोप पहुँचा कर), तुम्हारी सेवा कर अगर दोष किया है तो उसीका दण्ड विधाता दे रहे हैं; **छिल......कथा**—मन में था यह वात (कभी नहीं) कहूँगा; **वलो**—बोलो; **की हइबे....कथा**—(उसे) जान कर क्या होगा जिससे त्रिभुवन में किसीका कोई मंगल साधन न हो, जो एक मात्र केवल मेरी अपनी ही बात है; **भालोवासि......फल**—प्यार करता हूँ कि नहीं इस तर्क से आज क्या लाभ; **आमार......साधिव**—मेरा जो काज है वह मैं करुँगा; **स्वर्ग.....लागे**—स्वर्ग और स्वर्ग-सा यदि मन में नहीं लगे; **घुरे मरे**—घूमता मरता रहे; **लेगे थाके**—लगी रहे; **सर्वकार्य-माझे**—सभी कामों के बीच; **तबु.....धामे**—तौभी चला जाना होगा सुख-शून्य उसी स्वर्गधाम में; **देव-सबे**—देवताओं को;

एइ सञ्जीवनीविद्या करिया प्रदान
नूतन देवत्व दिया तवे मोर प्राण
सार्थक हइवे; तार पूर्वे नाहि मानि
आपनार सुख। क्षम मोरे, देवयानी,
क्षम अपराध।

देवयानी। क्षमा कोथा मने मोर!
करेछ ए नारीचित्त कुलिशकठोर
हे ब्राह्मण! तुमि चले यावे स्वर्गलोके
सगौरवे, आपनार कर्तव्यपुलके
सर्व दुःखशोक करि दूरपराहत;
आमार की आछे काज, की आमार व्रत!
आमार ए प्रतिहत निष्फल जीवने
की रहिल, किसेर गौरव! एइ वने
वसे रव नतशिरे निःसंग एकाकी
लक्ष्यहीना। ये-दिकेइ फिराइब आँखि,
सहस्र स्मृतिर काँटा विधिवे निष्ठुर;
लुकाये वक्षेर तले लज्जा अति क्रूर
वारम्वार करिवे दंशन। धिक् धिक्
कोथा हते एले तुमि, निर्मम पथिक,

तार पूर्वे.....सुख—उसके पहले (मैं) अपना सुख नहीं मानता; **क्षम**—क्षमा करो।

क्षमा......मोर—मेरे मन में क्षमा कहाँ है; **करेछ......कठोर**—इस नारी चित्त को कुलिश जैसा कठोर (तुमने) कर दिया है; **तुमि.....यावे**—तुम चले जाओगे; **सगौरवे**—गौरवपूर्ण; **आपनार.......दूरपराहत**—अपने कर्तव्य के पुलक से सब दुःख शोक को पराजित कर दूर कर दोगे; **आमार......व्रत**—मेरे लिये कौन-सा काम है, कौन-सा व्रत है; **आमार......गौरव**—मेरे इस आहत निष्फल जीवन में क्या रहा, किस (चीज़) का गौरव रहा; **एइ वने**—इस वन में; **वसे रव**—बैठी रहूँगी; **नतशिरे**—नतशिर किए हुए; **ये......आँखि**—जिस ओर आँखें फिराऊँगी; **सहस्र.....निष्ठुर**—हजारों स्मृतियों के कांटे विंधते रहेंगे; **लुकाये......दंशन**—हृदय के भीतर छिपी हुई अति क्रूर लज्जा वारवार दंशन करती रहेगी; **कोथा.....तुमि**—कहाँ से आए तुम;

वसि मोर जीवनेर वनच्छायातले
दण्ड-दुइ अवसर काटावार छले
जीवनेर सुखगुलि—फूलेर मतन
छिन्न क'रे निये—माला करेछ ग्रन्थन
एकखानि सूत्र दिये; याबार बेलाय
से माला निले ना गले, परम हेलाय
सेइ सूक्ष्म सूत्रखानि दुइभाग करे
छिँड़ि दिये गेले! लुटाइल धूलि-'परे
ए प्राणेर समस्त महिमा! तोमा-'परे
एइ मोर अभिशाप—ये विद्यार तरे
मोरे कर अवहेला, से-विद्या तोमार
सम्पूर्ण हबे ना वश; तुमि शुधु तार
भारवाही हये रबे, करिबे ना भोग;
शिखाइबे, पारिबे ना करिते प्रयोग।

कच। आमि वर दिनु, देवी, तुमि सुखी हबे।
भूले याबे सर्वग्लानि विपुल गौरवे।

१० अगस्त, १८९३ 'विदाय अभिशाप'

वसि.....छले—मेरे जीवन की वनच्छाया तले दो दण्ड समय काटने के छल से बैठ; **जीवनेर.....दिये**—जीवन के समस्त सुखों को फूल जैसा तोड़ कर एक सूत्र में माला जैसा गूँथ दिया है; **परम.....गेले**—अत्यन्त अवहेला के साथ उस सूक्ष्म सूत्र को दो भाग कर (तुमने) तोड़ दिया; **लुटाइल.....महिमा**—(मेरे) इस प्राण का समस्त गौरव धूलि-लुन्ठित हो गया; **तोमा.....अभिशाप**—तुम्हारे ऊपर (तुम्हें) यही मेरा अभिशाप है; **ये विद्यार......वश**—जिस विद्या के लिये तुमने मेरी अवहेला की वह विद्या संपूर्ण रूप से तुम्हारे वश नहीं होगी ; **तुमि .....रबे**—तुम केवल उसके ढोने वाले मात्र रहोगे; **करिबे ना भोग**—उसका भोग नहीं करोगे; **शिखाइबे.....प्रयोग**—सिखा सकोगे लेकिन प्रयोग नहीं कर सकोगे।

आमि.....गौरवे—मैंने वर दिया, देवि, कि तुम सुखी होओगी और अत्यन्त गौरव पा कर समस्त ग्लानि भूल जाओगी।

वसुन्धरा

आमारे फिराये लहो, अयि वसुन्धरे,
कोलेर सन्ताने तव कोलेर भितरे
विपुल अञ्चलतले। ओगो मा मृण्मयी,
तोमार मृत्तिका-माझे व्याप्त हये रइ,
दिग्विदिके आपनारे दिइ विस्तारिया
वसन्तेर आनन्देर मतो। विदारिया
ए वक्षपञ्जर, टुटिया पाषाणवन्ध
संकीर्ण प्राचीर, आपनार निरानन्द
अन्ध कारागार—हिल्लोलिया मर्मरिया
कम्पिया स्खलिया विकिरिया विच्छुरिया
शिहरिया–सचकिया आलोके पुलके
प्रवाहिया चले याइ समस्त भूलोके
प्रान्त हते प्रान्तभागे उत्तरे दक्षिणे
पुरवे पश्चिमे; शैवाले शाद्वले तृणे
शाखाय वल्कले पत्रे उठि सरसिया
निगूढ़ जीवनरसे; याइ परशिया
स्वर्णशीर्ष–आनमित शस्यक्षेत्रतल
अङ्गुलिर आन्दोलने; नव पुष्पदल

आमारे फिराये लहो—मुझे लौटा लो; **अयि**—ऐ; **कोलेर.....भितरे**—गोद की सन्तान को अपनी गोद के भीतर; **मृण्मयी**—मृत्तिकामयी; **तोमार.....रइ**—तुम्हारी मिट्टी के भीतर व्याप्त हो कर रहें; **आपनारे.....मतो**—वसन्त के आनन्द के समान अपनेको फैला दें; **विदारिया**—विदीर्ण कर; **टूटिया**—तोड़ कर; **पाषाणवन्ध**—पाषाण का वन्धन; **आपनार**—अपना; **विकिरिया**—विकीर्ण कर; **बिच्छुरिया**—विस्मृत हो कर; **शिहरिया**—सिहर कर; **सचकिया**—कम्पित हो कर; **प्रवाहिया**—प्रवाहित हो कर; **चले याइ**—चले जायँ; **प्रान्त....भागे**—किनारा से किनारा; **शाद्वले**—हरी, मुलायम घास से ढकी ज़मीन; **सरसिया**—रस युक्त हो कर; **याइ परशिया**—जा कर स्पर्श करें; **आनमित**—झुका हुआ।

करि पूर्ण संगोपने सुवर्णलेखाय
सुधागन्धे मधुबिन्दुभारे; नीलिमाय
परिव्याप्त करि दिया महासिन्धुनीर
तीरे तीरे करि नृत्य स्तब्ध धरणीर
अनन्त कल्लोलगीते; उल्लसित रङ्गे
भाषा प्रसारिया दिइ तरङ्गे तरङ्गे
दिक्-दिगन्तरे; शुभ्र उत्तरीयप्राय
शैलशृङ्गे बिछाइया दिइ आपनाय
निष्कलंक नीहारेर उत्तुंग निर्जने
निःशब्द निभृते ।।

ये इच्छा गोपने मने
उत्ससम उठितेछे अज्ञाते आमार
वहुकाल ध'रे, हृदयेर चारिधार
क्रमे परिपूर्ण करि वाहिरिते चाहे
उद्वेल उद्दाम मुक्त उदार प्रवाहे
सिञ्चिते तोमाय; व्यथित से वासनारे
वन्धमुक्त करि दिया शतलक्ष धारे
देशे देशे दिके दिके पाठाब केमने
अन्तर भेदिया। वसि शुधु गृहकोणे

नीलिमाय—नीलिमा (नील वर्ण) से; **प्रसारिया दिइ**—प्रसार कर दें; **शुभ्र......आपनाय**—शुभ्र उत्तरीय जैसे शैलशृंग पर अपनेको विछा दें।

ये......धरे—जो इच्छा अनजाने वहुत दिनों से उत्स के समान गोपन भाव से मेरे मन में उठ रही है; **हृदयेर......तोमाय**—समस्त हृदय को क्रम से परिपूर्ण कर उद्वेल, उद्दाम, मुक्त, उदार प्रवाह से तुम्हें सिञ्चित करने के लिये वाहर होना चाहती है; **व्यथित......से वासनारे**—वह (उद्दाम) आकांक्षा से पीड़ित है; **वन्धमुक्त......भेदिया**—वन्धन मुक्त कर शत लक्ष धाराओं में (उसे) देश-देश में, दिशाओं-दिशाओं में अन्तर को भेद कर कैसे पठाऊँ (भेजूंगा); **वसि ......गृहकोणे**—केवल घर के कोने में वैठ कर;

लुब्धचित्ते करितेछि सदा अध्ययन
देशे देशान्तरे कारा करेछे भ्रमण
कौतूहलवशे, आमि ताहादेर सने
करितेछि तोमारे वेष्टन मने मने
कल्पनार जाले ।।

सुदुर्गम दूरदेश—
पथशून्य तरुशून्य प्रान्तर अशेष,
महापिपासार रङ्गभूमि; रौद्रालोके
ज्वलन्त वालुकाराशि सूचि विँधे चोखे;
दिगन्तविस्तृत येन धूलिशय्या 'परे
ज्वरातुरा वसुन्धरा लुटाइछे पड़े
तप्तदेह, उष्णश्वास वह्निज्वालामय,
शुष्ककण्ठ, सङ्गहीन, निःशब्द, निर्दय ।
कतदिन गृहप्रान्ते वसि वातायने
दूरदूरान्तेर दृश्य आँकियाछि मने
चाहिया सम्मुखे ।—चारि दिके शैलमाला,
मध्ये नील सरोवर निस्तब्ध निराला

लुब्ध चित्ते—लुब्ध चित्त से; **करितेछि......कौतूहलवशे**—देश-देशान्तर में किन लोगों ने भ्रमण किया है कौतूहलवश (इसका) सदा अध्ययन कर रहा हूँ; **आमि....जाले**—कल्पना का जाल बिछा कर मैं उन्हीं लोगों के साथ मन ही मन तुम्हारा वेष्टन (प्रदक्षिण) करता हूँ।

प्रान्तर—फैला हुआ खाली-खाली सूना-सूना मैदान; **रौद्रालोके**—सूर्य के प्रकाश से; **ज्वलन्त......चोखे**—ज्वलन्त वालुकाराशि सूई की तरह आँखों को बिंधती है; **दिगन्त......पड़े**—जैसे दिगन्तविस्तृत धूलिशय्या पर ज्वर से छट-पट करती हुई वसुन्धरा लोट रही है; **कतदिन......सम्मुखे**—कितने दिन घर के किनारे वातायन (खिड़की) पर बैठ कर सामने देखता हुआ दूर-दूर के दृश्य को मन में अंकित (चित्रित) किया है; **चारिदिके**—चारों ओर; **मध्ये**—बीच में; **निराला**—निर्जन ;

स्फटिक निर्मल स्वच्छ; खण्ड मेघगण
मातृस्तनपानरत शिशुर मतन
पड़े आछे शिखर आँकड़ि; हिमरेखा
नीलगिरिश्रेणी 'परे दूरे याय देखा
दृष्टिरोध करि, येन निश्चल निषेध
उठियाछे सारि-सारि स्वर्ग करि भेद
योगमग्न धूर्जटिर तपोवनद्वारे।
मने मने भ्रमियाछि दूर सिन्धुपारे
महामेरुदेशे—येखाने लयेछे धरा
अनन्तकुमारीव्रत, हिमवस्त्र-परा,
निःसंग निस्पृह, सर्व-आभरणहीन;
येथा दीर्घ रात्रिशेषे फिरे आसे दिन
शब्दशून्य संगीतविहीन; रात्रि आसे,
घुमावार केह नाइ, अनन्त आकाशे
अनिमेष जेगे थाके निद्रातन्द्राहत
शून्यशय्या मृतपुत्रा जननीर मतो।

खण्ड......आँकड़ि—मेघ खण्ड, मातृस्तनपानरत शिशु के समान शिखर से चिपटे हुए हैं; **हिमरेखा........करि**—दृष्टि को अवरुद्ध करती हुई दूर नील पर्वतश्रेणी के ऊपर हिमरेखा दीख पड़ती है; **येन......द्वारे**—जैसे पंक्ति के पंक्ति अचल निषेध (पर्वतमालाएं) स्वर्ग को भेद कर योगमग्न धूर्जटि (शिव) के तपोवन के द्वार पर उठे हुए हों; **मने......सिन्धु-पारे**—मन ही मन दूर समुद्रपार भ्रमण किया है; **महामेरुदेशे**—उत्तरी-दक्षिणी ध्रुव प्रान्त में; **येखाने......व्रत**—जहाँ पृथ्वी ने अनन्त कुमारी (चिर कुमारी)-व्रत लिया है; **हिमवस्त्रपरा**—हिम (बर्फ) वस्त्र पहने हुए; **येथा......संगीत-विहीन**—जहाँ दीर्घ रात्रि के अन्त में शब्दशून्य, संगीतविहीन दिन आता है; **रात्रि...... नाइ**—रात्रि आती है (लेकिन) सोने वाला कोई नहीं है; **अनन्त......मतो**—निद्रातन्द्राहीन, शून्यशय्या पर (पड़ी हुई) मृत-पुत्रा जननी के समान अनन्त आकाश की ओर निर्निमेष दृष्टि से देखती हुई (रात्रि) जगी रहती है ;

नूतन देशेर नाम यत पाठ करि,
विचित्र वर्णना शुनि, चित्त अग्रसरि
समस्त स्पर्शिते चाहे।—समुद्रेर तटे
छोटो छोटो नीलवर्ण पर्वतसंकटे
एकखानि ग्राम; तीरे शुकाइछे जाल,
जले भासितेछे तरी, उड़ितेछे पाल,
जेले धरितेछे माछ, गिरिमध्यपथे
संकीर्ण नदीटि चलि आसे कोनोमते
आँकिया-वाँकिया। इच्छा करे, से निभृत
गिरिक्रोड़े-सुखासीन ऊर्मिमुखरित
लोकनीड़खानि हृदये वेष्टिया धरि
वाहुपाशे। इच्छा करे, आपनार करि
येखाने या-किछु आछे; नदीस्रोतोनीरे
आपनारे गलाइया दुइ तीरे तीरे
नव नव लोकालये करे याइ दान
पिपासार जल, गेये याइ कलगान
दिवसे निशीथे; पृथिवीर माझखाने
उदयसमुद्र हते अस्तसिन्धु-पाने

नूतन......करि—नूतन देशों का नाम जितना ही पाठ करता हूँ (पढ़ता हूँ); **विचित्र शुनि**—विचित्र वर्णन सुनता हूँ; **चित्त......चाहे**—चित्त अग्रसर हो कर सब का स्पर्श करना चाहता है; **संकटे**—अति संकीर्ण पथ में; **एकखानि**—एक; **शुकाइछे**—सूख रहा है; **जले....तरी**—नाव जल में वह रही है; **उड़ितेछे पाल**—पाल उड़ रहा है; **जेले....माछ**—धीवर मछली पकड़ रहे हैं; **गिरिमध्य पथे....वाँकिया**—पर्वत के वीच से पतली नदी किसी प्रकार से आँका-वाँका चली आती है; **इच्छा करे**–इच्छा होती है; **से....वाहुपाशे**—उस एकान्त, निर्जन पर्वत की गोद में आनन्द से स्थित तथा लहरों से मुखरित लोकालय (ग्राम आदि) को वाहुपाश में वाँध हृदय से लगा कर रखूँ; **आपनार......आछे**—जहाँ जो कुछ है अपना वना लूँ; **नदी....निशीथे**–प्रवाह युक्त नदी के जल में अपनेको धुला कर दोनों तीरों पर ग्रामों-ग्रामों को प्यास वुझाने वाले जल का दान कर जाऊँ तथा दिन रात कलगान गाता जाऊँ; **पृथिवीर माझखाने**—पृथ्वी के वीच; **उदय**

प्रसारिया आपनारे तुङ्ग गिरिराजि
आपनार सुदुर्गम रहस्ये बिराजि;
कठिन पाषाणक्रोड़े तीव्र हिमबाये
मानुष करिया तुलि लुकाये लुकाये
नव नव जाति। इच्छा करे मने मने,
स्वजाति हइया थाकि सर्वलोकसने
देशदेशान्तरे; उष्ट्रदुग्ध करि पान
मरुते मानुष हइ आरबसन्तान
दुर्दम स्वाधीन; तिब्बतेर गिरितटे
निर्लिप्त प्रस्तरपुरी-माझे बौद्ध मठे
करि विचरण। द्राक्षापायी पारसिक
गोलापकाननवासी, तातार निर्भीक
अश्वारुढ़, शिष्टाचारी सतेज जापान,
प्रवीण प्राचीन चीन निशिदिनमान
कर्म-अनुरत—सकलेर घरे घरे
जन्मलाभ क'रे लइ हेन इच्छा करे।
अरुग्ण, बलिष्ठ हिंस्र नग्न बर्बरता—
नाहि कोनो धर्माधर्म, नाहि कोनो प्रथा,

समुद्र......विराजि—उदय समुद्र (पूर्व) से अस्त सिन्धु (पश्चिम) की ओर अपने को प्रसारित कर उत्तुंग पर्वतमालाओं में अपने सुदुर्गम रहस्य में विराजें; **कठिन ......जाति**—कठिन पाषाण की गोद में तीव्र वर्फीली हवा में छिपे-छिपे नयी नयी जातियों को मनुष्य बना दें (उन्नत कर दें); **इच्छा......मने**—मन ही मन इच्छा होती है; **स्वजाति......देशान्तरे**—देशदेशान्तर में सब लोगों के साथ स्वजाति (उन्हीं का अपना) हो कर रहें; **उष्ट्र......स्वाधीन**—ऊँट के दूध का पान कर मरुभूमि में दुर्गम, स्वाधीन अरब जाति का होऊँ; **तिब्बतेर......विचरण**—तिब्बत के पहाड़ी तल में निर्लिप्त प्रस्तरपुरी के बीच बौद्ध मठ में विचरण करूँ; **द्राक्षापायी पारसिक**—द्राक्षारस पीने वाले पारसी (ईरानी); **गोलाप कानन-वासी**—गुलाब कानन के रहने वाले; **सकलेर......करे**—सब के घर जन्म ग्रहण करूँ ऐसी इच्छा होती है; **नाहि**—नहीं है; **कोनो**—कोई;

नाहि कोनो बाधाबन्ध; नाइ चिन्ताज्वर,
नाहि किछु द्विधाद्वन्द्व, नाइ घर-पर,
उन्मुक्त जीवनस्रोत बहे दिनरात
सम्मुखे आघात करि सहिया आघात
अकातरे; परिताप-जर्जर-पराने
वृथा क्षोभे नाहि चाय अतीतेर पाने,
भविष्यत् नाहि हेरे मिथ्या दुराशाय,
वर्तमान-तरङ्गेर चूड़ाय चूड़ाय
नृत्य करे चले याय आवेगे उल्लासि—
उच्छृङ्खल से-जीवन से-ओ भालोवासि;
कतबार इच्छा करे, सेइ प्राणझड़े
छुटिया चलिया याइ पूर्णपाल-भरे
लघुतरी सम ।।

हिंस्र व्याघ्र अटवीर—
आपन प्रचण्ड वले प्रकाण्ड शरीर
वहितेछे अवहेले; देह दीप्तोज्ज्वल
अरण्यमेघेर तले प्रच्छन्न-अनल

नाहि.....पर–(वर्बर जाति वालों के लिये) न कोई धर्माधर्म है, न कोई प्रथा है, न कोई बाधा-बन्धन है और न किसी प्रकार की चिन्ता है और न दुविधा और द्वन्द्व है, न घर-द्वार है; **सम्मुखे....अकातरे**—सामने आघात कर अकातर भाव से आघात को सहन करता है; **परिताप....पाने**—अत्यन्त दु:ख से जर्जर प्राण (वर्बर) वृथा क्षोभ से अतीत की ओर नहीं देखता; **भविष्यत्......दुराशाय**—मिथ्या दुराशा (दुराकांक्षा) से भविष्यत् को नहीं देखता; **वर्तमान......भालोवासि**—वर्तमान की तरङ्गों के ऊपर आवेग और उल्लास से नृत्य करता हुआ चला जाता है; वह उच्छृङ्खल जीवन है लेकिन उसे भी (वर्बर जाति के जीवन को भी) प्यार करता हूँ; **कतबार......सम**—कितनी बार इच्छा होती है उसी जीवन्त आँधी में पूर्ण रूप से उड़ते हुए पालों वाली छोटी नौका के समान दौड़ कर चला जाऊँ।

अटवीर—जंगल का; **आपन......अवहेले**—अपने प्रचण्ड बल से अवहेला के साथ अपने प्रकाण्ड (अत्यन्त विशाल) शरीर को वहन कर रहा है;

वज्रेर मतन, रुद्र मेघमन्द्रस्वरे
पड़े आसि अतर्कित शिकारेर 'परे
विद्युतेर वेगे; अनायास से महिमा,
हिंसातीव्र से आनन्द, से दृप्त गरिमा,
इच्छा करे, एकबार लभि तार स्वाद।
इच्छा करे, बार बार मिटाइते साध
पान करि विश्वेर सकल पात्र हते
आनन्दमदिराधारा नव नव स्रोते ।।

हे सुन्दरी वसुन्धरे, तोमा-पाने चेये
कतबार प्राण मोर उठियाछे गेये
प्रकाण्ड उल्लासभरे। इच्छा करियाछे,
सबले आँकड़ि धरि ए वक्षेर काछे
समुद्रमेखला-परा तव कटिदेश;
प्रभातरौद्रेर मतो अनन्त अशेष
व्याप्त हये दिके दिके—अरण्ये भूधरे
कम्पमान पल्लवेर हिल्लोलेर 'परे
करि नृत्य साराबेला, करिया चुम्बन
प्रत्येक कुसुमकलि, करि' आलिङ्गन

मतन—समान; **पड़े......वेगे**—असतर्क शिकार के ऊपर विद्युत्वेग से आ पड़ता है; **अनायास से महिमा**—वह महिमा आयास-रहित है; **लभि**—प्राप्त करूँ; **बार बार.....साध**—बार बार साध मिटाने की; **पान......हते**—संसार के सभी पात्रों से पान करें।

तोमा......भरे—तुम्हारी ओर देखते कितनी बार अत्यन्त उल्लास से भर मेरे प्राण गा उठे हैं; **इच्छा......कटि देश**—इच्छा हुई है कि समुद्र मेखला विभूषित तुम्हारे कटि देश को अपने हृदय के साथ जोर से दबा रखूँ; **प्रभात रौद्रेर......दिके**—प्रभातकालीन धूप के समान दिक् दिक् में अनन्त अशेष भाव से व्याप्त हो कर; **कम्पमान**—काँपते हुए; **करि......बेला**—समस्त बेला नृत्य करें;

सघन कोमल श्याम तृणक्षेत्रगुलि,
प्रत्येक तरङ्ग'-परे सारादिन दुलि,
आनन्द दोलाय। रजनीते चुपे चुपे
निःशब्द चरणे विश्वव्यापी निद्रारूपे
तोमार समस्त पशु-पक्षीर नयने
अङ्गुलि बुलाये दिइ, शयने शयने
नीड़े नीड़े गृहे गृहे गुहाय गुहाय
करिया प्रवेश, बृहत् अञ्चल-प्राय
आपनारे विस्तारिया ढाकि विश्वभूमि
सुस्निग्ध आँधारे ।।

आमार पृथिवी तुमि
बहु वरषेर। तोमार मृत्तिकासने
आमारे मिशाये लये अनन्त गगने
अश्रान्त चरणे करियाछ प्रदक्षिण
सवितृमण्डल असंख्य रजनीदिन
युगयुगान्तर धरि; आमार माझारे
उठियाछे तृण तव, पुष्प भारे भारे

प्रत्येक......दोलाय—प्रत्येक तरङ्ग के ऊपर सारा दिन आनन्द के झूले पर झूलूँ। **रजनीते......दिइ**—रात्रि में चुपचाप निःशब्द चरणों से विश्वव्यापी निद्रा के रूप में तुम्हारे समस्त पशु-पक्षियों की आँखों को उंगली से सहला दूँ; **शयने शयने**—विस्तरे-विस्तरे पर; **गुहाय-गुहाय**—गुफा-गुफा में; **करिया प्रवेश**—प्रवेश कर; **वृहत्.......आँधारे**—वृहत् अञ्चल जैसा अपना विस्तार कर सुस्निग्ध अंधकार से विश्वभूमि को ढँक दूँ।

आमार......वरषेर—तुम वहुत वर्षों की मेरी पृथ्वी हो; **तोमार......धरि**—अपनी मिट्टी के साथ मुझे मिश्रित कर (मिला कर) युग युगान्तर अश्रान्त चरणों से अनन्त आकाश में असंख्य रात्रि-दिन सूर्यमंडल की तुमने प्रदक्षिणा की है; **आमार.....तव**—मेरे वीच तुम्हारे तृण उगे हैं; **पुष्प.....भारे**—राशि-राशि पुष्प;

फुटियाछे, वर्षण करेछे तरुराजि
पत्रफुलफल गन्धरेणु। ताइ आजि
कोनोदिन आनमने बसिया एकाकी
पद्मातीरे सम्मुखे मेलिया मुग्ध आँखि
सर्व अङ्गे सर्व मने अनुभव करि—
तोमार मृत्तिका-माझे केमने शिहरि
उठितेछे तृणांकुर, तोमार अन्तरे
की जीवनरसधारा अहर्निशि ध'रे
करितेछे सञ्चरण, कुसुममुकुल
की अन्ध आनन्दभरे फुटिया आकुल
सुन्दर वृन्तेर मुखे, नव रौद्रालोके
तरुलतातृणगुल्म की गूढ़ पुलके
की मूढ़ प्रमोदरसे उठे हरषिया
मातृस्तनपानश्रान्त परितृप्तहिया
सुखस्वप्नहास्यमुख शिशुर मतन।
ताइ आजि कोनोदिन शरत् किरण
पड़े यबे पक्वशीर्ष स्वर्णक्षेत्र-'परे,
नारिकेल दलगुलि काँपे वायु भरे

फुटियाछे—प्रस्फुटित हुए हैं; **वर्षण......रेणु**—वृक्षों ने पत्र, फूल, फल, और पराग की वर्षा की है; **ताइ......एकाकी**—इसीलिये आज अनमना, एकाकी बैठ कर; **पद्मातीरे......करि**—पद्मा नदी के किनारे (बैठ कर) मुग्ध आँखें सामने की ओर लगाए, सर्वाङ्ग (एवं) सम्पूर्ण मन से अनुभव करता हूँ; **तोमार.....तृणांकुर**—तुम्हारी मिट्टी के भीतर किस प्रकार से तृणांकुर सिहर कर निकलते हैं; **तोमार......सञ्चरण**—तुम्हारे अन्तर में अहर्निशि कैसी प्राणधारा संचरित हो रही है; **कुसुम......मुखे**—फूलों की कलियां सुन्दर वृन्तों पर किस अन्ध आनन्द से आकुल हो कर खिलती हैं; **रौद्रालोके**—सूर्य के प्रकाश में; **की**—किस; **उठे हरषिया**—हर्षित हो उठते हैं; **मातृ.....मतन**—मातृस्तनपान किए हुए श्रान्त, परितृप्त हृदय एवं सुखस्वप्नहास्यमुख शिशु के समान; **ताइ......वायु भरे**—इसीलिये आज किसी दिन पके हुए सुनहले खेत की वालियों पर जब शरद् किरण पड़ती है; **नारिकेल.....व्याकुलता**—नारियल के दल के दल हवा से काँपते

आलोके झिकिया, जागे महाव्याकुलता—
मने पड़े बुझि सेइ दिवसेर कथा
मन यबे छिल मोर सर्वव्यापी हये
जले स्थले अरण्येर पल्लवनिलये
आकाशेर नीलिमाय। डाके येन मोरे
अव्यक्त आह्वानरवे शतवार क'रे
समस्त भुवन। से विचित्र से वृहत्
खेलाघर हते मिश्रित मर्मरवत्
शुनिबारे पाइ येन चिरदिनकार
सङ्गीदेर लक्षविध आनन्दखेलार
परिचित रव। सेथाय फिराये लहो
मोरे आरवार। दूर करो से विरह
ये विरह थेके थेके जेगे ओठे मने
हेरि यबे सम्मुखेते सन्ध्यार किरणे
विशाल प्रान्तर, यबे फिरे गाभीगुलि
दूर गोष्ठे माठपथे उड़ाइया धूलि,
तरुघेरा ग्राम हते उठे धूमलेखा
सन्ध्याकाशे, यबे चन्द्र दूरे देय देखा

रहते हैं तथा आलोक में चकमक करते हुए अत्यन्त व्याकुलता से जाग उठते हैं; **मने .....नीलिमाय**—लगता है जैसे उस दिन की बात याद आती है जब जल, स्थल, अरण्य के पल्लवों के भीतर एवं आकाश की नीलिमा में मेरा मन सर्वव्यापी हो कर (वर्तमान) था; **डाके......भुवन**—जैसे समस्त भुवन अव्यक्त आह्वान के स्वर में सैकड़ों बार मुझे पुकार रहा है; **से......मर्मरवत्**—वह विचित्र है, वह वृहत् है, खेलाघर (कृत्रिम संसार) से (आए हुए) मिश्रित मर्मर जैसा है; **शुनिबारे...... रव**—जैसे चिर दिन के साथियों की क्रीड़ा के नानाविध परिचित रव को सुन पाता हूँ; **सेथाय......आरबार**—वहाँ मुझे फिर लौटा लो; **दूर......विरह**—उस विरह को दूर करो; **ये विरह......मने**—जो विरह रह-रह कर मन में जग उठता है; **हेरि....प्रान्तर**—जब सामने सन्ध्याकालीन किरणों में विशाल प्रान्तर (सून-सान मैदान) को देखता हूँ; **यबे....धूलि**—जब दूर गोचारण भूमि में, मैदान के रास्ते में धूल उड़ाती हुई गायें लौटती हैं; **तरुघेरा......सन्ध्याकाशे**—वृक्षों से घिरे हुए ग्राम

श्रान्त पथिकेर मतो अति धीरे धीरे
नदीप्रान्ते जनशून्य वालूकार तीरे;
मने हय आपनारे एकाकी प्रवासी
निर्वासित, बाहु वाड़ाइया धेये आसि
समस्त बाहिरखानि लइते अन्तरे—
ए आकाश, ए धरणी, एइ नदी-'परे
शुभ्र शान्त सुप्त ज्योत्स्नाराशि। किछु नाहि
पारि परशिते, शुधु शून्ये थाकि चाहि
विषादव्याकुल। आमारे फिराये लहो
सेइ सर्व-माझे येथा हते अहरह
अंकुरिछे मुकुलिछे मुञ्जरिछे प्राण
शतेक-सहस्ररूपे, गुञ्जरिछे गान
शतलक्ष सुरे, उच्छ्वसि उठिछे नृत्य
असंख्य भङ्गीते, प्रवाहि येतेछे चित्त
भावस्रोते, छिद्रे छिद्रे बाजितेछे वेणु;
दाँड़ाये रयेछ तुमि श्याम कल्पधेनु,
तोमारे सहस्र दिके करिछे दोहन
तरुलता पशुपक्षी कत अगणन

से सन्ध्याकालीन आकाश में धुँआ उठता है; **यबे......तीरे**—जब श्रान्त पथिक के समान दूर नदी किनारे जनशून्य, वालुकामय तट पर चन्द्रमा दीख पड़ता है। **मने.......निर्वासित**—लगता है जैसे मैं एकाकी, प्रवासी तथा निर्वासित हूँ; **वाहु......राशि**—बाँहें बढ़ा कर समस्त 'बाहर' (बाह्य जगत्) को अन्तर में लेने के लिये दौड़ आता हूँ—इस आकाश, इस धरणी, इस नदी के ऊपर शुभ्र, शान्त, सुप्त ज्योत्स्ना राशि (चाँदनी) को; **किछु......व्याकुल**—कुछ छू नहीं पाता, केवल शून्य में विषाद व्याकुल हो कर देखता रहता हूँ; **आमारे......सर्व-माझे**—मुझे उसी 'सर्व-माझे' (सब के भीतर) लौटा लो; **येथा.....रूपे**—जहाँ से रात-दिन (सर्वदा) सैकड़ों-हज़ारों रूपों में प्राण अंकुरित, मुकुलित और मंजरित हो रहे हैं; **भङ्गीते**—भङ्गिमा में; **प्रवाहि.....स्रोते**—भावस्रोत में चित्त बह जाता है; **छिद्रे.....वेणु**—छिद्र छिद्र में वेणु बज रहा है; **दाँड़ाये.....धेनु**—(और) श्याम कामधेनु तुम खड़ी हुई हो; **तोमारे......यत**—हज़ारों दिशाओं में

तृषित परानी यत; आनन्देर रस
कत रूपे हतेछे वर्षण दिक् दश
ध्वनिछे कल्लोलगीते। निखिलेर सेइ
विचित्र आनन्द यत एक मुहूर्तेइ
एकत्रे करिब आस्वादन एक हये
सकलेर सने। आमार आनन्द लये
हबे ना कि श्यामतर अरण्य तोमार—
प्रभात-आलोक-माझे हवे ना सञ्चार
नवीन किरणकम्प? मोर मुग्धभावे
आकाश धरणीतल आँका हये यावे
हृदयेर रङे—या देखे कविर मने
जागिवे कविता, प्रेमिकेर दुनयने
लागिवे भावेर घोर, विहङ्गेर मुखे
सहसा आसिवे गान। सहस्रेर सुखे
रञ्जित हइया आछे सर्वाङ्ग तोमार,
हे वसुधे। प्राणस्रोत कत वारम्वार
तोमारे मण्डित करि आपन जीवने
गियेछे फिरेछे; तोमार मृत्तिका-सने

कितने पेड़-पौधे, कितने पशु-पक्षी तथा जितने अनगिनत तृपित प्राणी हैं तुम्हारा दोहन कर रहे हैं; **आनन्देर......वर्षण**—कितने रूपों में आनन्दरस की वर्षा हो रही है; **दिक्......गीते**—दशों दिशाओं में अत्यन्त आह्लादकारी गीत ध्वनित हो रहा है; **निखिलेर......सने**—समस्त जगत् का जितना चित्र-विचित्र आनन्द है उसे सब के साथ एक हो कर एक मुहूर्त में ही इकट्ठे आस्वादन करूँगा; **आमार..... तोमार**—मेरे आनन्द को ले कर क्या तुम्हारे अरण्य और भी श्याम (काले) नहीं होंगे; **माझे**—में; **हवे......कम्प**—नवीन किरण के कंपन का संचार नहीं होगा; **मोर......रङे**—मेरे मुग्ध भावसे आकाश, पृथिवीतल हृदय के रंग (आनन्द) से चित्रित हो जाएंगे; **या देखे.....गान**—जिसे देख कवि के मन में कविता जागेगी, प्रेमिक की आँखों में प्रणय का नशा लगेगा, और सहसा पक्षियों के मुख में गान आएंगे; **सहस्रेर.......वसुधे**—हे वसुधे, हजारों के आनन्द से तुम्हारा सर्वाङ्ग रञ्जित है; **प्राणस्रोत......फिरेछे**—प्राणधारा कितनी वार, वार वार तुम्हें

मिशायेछे अन्तरेर प्रेम, गेछे लिखे
कत लेखा, बिछायेछे कत दिके दिके
व्याकुल प्राणेर आलिङ्गन; तारि सने
आमार समस्त प्रेम मिशाये यतने
तोमार अञ्चलखानि दिब राङाइया
सजीव बरने; आमार सकल दिया
साजाव तोमारे। नदीजले मोर गान
पावे ना कि शुनिवारे कोनो मुग्ध कान
नदीकूल हते? उषालोके मोर हासि
पावे ना कि देखिवारे कोनो मर्त्यवासी
निद्रा हते उठि? आज शतवर्ष-परे
ए सुन्दर अरण्येर पल्लवेर स्तरे
काँपिबे ना आमार परान? घरे घरे
कत शत नरनारी चिरकाल धरे
पातिबे संसार खेला, ताहादेर प्रेमे
किछु कि रव ना आमि? आसिब ना नेमे—

मण्डित कर अपने जीवन में आई-गई है; **तोमार......आलिङ्गन**—तुम्हारी मिट्टी के साथ (अपने) अन्तर के प्रेम को मिलाया है, कितना-कुछ लिख गई है और दिशा-दिशा में व्याकुल प्राण के आलिङ्गन को बिछाया है; **तारि......बरने**—उसके साथ अपने समस्त प्रेम को बड़े यत्न से मिला कर तुम्हारे अञ्चल को सजीव रंग से रंगा दूँगा; **आमार सकल दिया**—अपना समस्त दे कर; **साजाव तोमारे**—तुम्हें सजाऊँगा; **नदी जले......हते**—नदी के जल में (गाए हुए) मेरे गान नदी के तट से सुनने वाले क्या कोई मुग्ध कान नहीं पाएंगे (अर्थात् नदी में गाए हुए मेरे गानों को तट पर से मुग्ध होकर सुनने वाला क्या कोई नहीं मिलगा); **उषालोके.....उठि**—उषा के आलोक में मेरी हँसी को निद्रा से उठ कर देखने वाला क्या कोई मर्त्यलोक का वासी नहीं मिलेगा; **आज.....परान**—आज सौ वर्षों के बाद इस सुन्दर अरण्य के पल्लवों के स्तर-स्तर में मेरे प्राण नहीं काँपेंगे; **घरे...... आमि**—घर-घर (कितने) सैकड़ों नर-नारी चिरकाल संसार खेला में प्रवृत्त होंगे, उनके प्रेम में मैं क्या कुछ भी नहीं रहूँगा; **आसिब ना नेमे**—उतर नहीं आऊँगा;

तादेर मुखेर 'परे हासिर मतन,
तादेर सर्वाङ्ग-माझे सरस यौवन,
तादेर वसन्तदिने अकस्मात् सुख,
तादेर मनेर कोणे नवीन उन्मुख
प्रेमेर अंकुररूपे? छेड़े दिवे तुमि
आमारे कि एकेबारे ओगो मातृभूमि
युगयुगान्तेर महा-मृत्तिकावन्धन
सहसा कि छिँड़े यावे? करिव गमन
छाड़ि लक्ष वरषेर स्निग्ध क्रोड़खानि?
चतुर्दिक हते मोरे लवे ना कि टानि—
एइ-सब तरुलता गिरि नदी वन,
एइ चिरदिवसेर सुनील गगन,
ए जीवनपरिपूर्ण उदार समीर,
जागरणपूर्ण आलो, समस्त प्राणीर
अन्तरे-अन्तरे-गाँथा जीवनसमाज?
फिरिव तोमारे घिरि, करिव विराज
तोमार आत्मीय-माझे; कीट पशु पाखि
तरु गुल्म लता रूपे वारम्वार डाकि

तादेर......मतन—हँसी के समान उनके मुख के ऊपर; **तादेर......यौवन**—उनके सर्वाङ्ग में सरस यौवन (के रूप में); **तादेर......अंकुर रूपे**—उनके मन के कोने में नवीन, व्यग्र प्रेम के अंकुर के रूप में; **छेड़े.....मातृभूमि**—ऐ मातृभूमि, क्या तुम मुझे विल्कुल ही छोड़ दोगी; **युगयुगान्तरे......यावे**—युगयुगान्तर का महा-मृत्तिकावन्धन (मिट्टी का सुदृढ़ वन्धन) क्या सहसा टूट जाएगा; **करिव......क्रोड़खानि**—लाखों वर्ष की कोमल गोद को छोड़ क्या गमन करूँगा; **चतुर्दिक......टानि**—चारों ओर से क्या मुझे खींच नहीं लेंगे; **ए-सव**—ये सव; **आलो**—आलोक; **समस्त......समाज**—समस्त प्राणियों के अन्तर-अन्तर में गूँथा हुआ जीवन-समाज; **फिरिव......घिरि**—तुम्हें घेर कर घूमूंगा; **करिव ......माझे**—तुम्हारे अपनों के वीच विराजूंगा; **पाखि**—पक्षी; **डाकि**—पुकार कर;

आमारे लइबे तव प्राणतप्त बुके;
युगे युगे जन्मे जन्मे स्तन दिये मुखे
मिटाइबे जीवनेर शतलक्ष क्षुधा
शत लक्ष आनन्देर स्तन्यरससुधा
निःशेषे निविड़ स्नेहे कराइया पान।
तार परे धरित्रीर युवक सन्तान
बाहिरिब जगतेर महादेश-माझे
अति दूर दूरान्तरे ज्योतिष्कसमाजे
सुदुर्गम पथे। एखनो मिटेनि आशा;
एखनो तोमार स्तन-अमृत-पिपासा
मुखेते रयेछे लागि; तोमार आनन
एखनो जागाय चोखे सुन्दर स्वपन;
एखनो किछुइ तव करि नाइ शेष।
सकलि रहस्यपूर्ण, नेत्र अनिमेष
विस्मयेर शेषतल खुँजे नाहि पाय;
एखनो तोमार बुके आछि शिशुप्राय
मुख-पाने चेये। जननी, लहो गो मोरे
सघनबन्धन तव बाहुयुगे धरे—

आमारे.....बुके—अपने प्राणतप्त (प्राण की गर्मी से उत्तप्त) हृदय से लगा लोगी; **मिटाइबे**—मिटाओगी; **कराइया पान**—पान करा कर; **तार......पथे**—उसके बाद धरित्री की युवक सन्तान (मैं) जगत् के महादेश के बीच ग्रह नक्षत्रों के समाज में दूर, बहुत दूर सुदुर्गम पथ से हो कर बाहर निकलूंगा; **एखनो......आशा**—अभी भी आशा नहीं मिटी; **एखनो......लागि**—अभी भी तुम्हारे स्तन की अमृत-पिपासा बनी हुई है; **तोमार......स्वपन**—तुम्हारा मुख अभी भी (मेरी) आँखों में सुन्दर स्वप्न जगाता है; **एखनो......शेष**—अभी भी तुम्हारा कुछ भी (मैंने) शेष नहीं किया है; **सकलि**—सम्पूर्ण; **नेत्र.....पाय**—अनिमेष आँखें विस्मय के शेष तल को खोज नहीं पातीं; **एखनो......चेये**—अभी भी तुम्हारी छाती से लगा हुआ, शिशु के समान तुम्हारे मुख की ओर देख रहा हूँ; **लहो......धरे**—अपनी दोनों बाहों से पकड़ मुझे कठिन बन्धन में लो;

आमारे करिया लहो तोमार बुकेर,
तोमार विपुल प्राण विचित्र सुखेर
उत्स उठितेछे येथा से-गोपनपुरे
आमारे लइया याओ—राखियो ना दूरे ।।

११ नवम्बर १८९३ 'सोनार तरी'

निरुद्देश यात्रा

आर कत दूरे निये यावे मोरे हे सुन्दरी ?
बलो कोन् पार भिड़िबे तोमार सोनार तरी ।
यखनि शुधाइ ओगो विदेशिनी,
तुमि हास शुधु, मधुरहासिनी—
बुझिते ना पारि की जानि की आछे तोमार मने ।
नीरवे देखाओ अङ्गुलि तुलि
अकूल सिन्धु उठिछे आकुलि,
दूरे पश्चिमे डुबिछे तपन गगनकोणे ।
की आछे होथाय, चलेछि किसेर अन्वेषणे ?

आमारे......बुकेर—अपनी छाती (हृदय) का (मुझे) कर लो; **तोमार......येथा**—जहाँ से तुम्हारे विशाल प्राण के विचित्र आनन्द का उत्स वाहर हो रहा है; **से......दूरे**—उस गोपन प्रान्त में मुझे ले जाओ—दूर न रखना ।

निरुद्देश यात्रा—उद्देश्य-विहीन यात्रा ; **आर......सुन्दरी**—और कितनी दूर मुझे ले जाओगी, हे सुन्दरी; **बलो......तरी**—बोलो, किस किनारे तुम्हारी सोने की नौका लगेगी; **यखनि......विदेशिनी**—ऐ विदेशिनी, जब (तुमसे) पूछता हूँ; **तुमि......शुधु**—तुम केवल हँसती हो; **बुझिते......मने**—समझ नहीं पाता कि तुम्हारे मन में क्या है; **नीरवे.....आकुलि**—चुपचाप तुम उंगली उठा कर दिखलाती हो, किनाराहीन समुद्र आकुल हो कर उठ रहा है; **दूरे......कोणे**—दूर पश्चिम में आकाश के कोने में सूर्य डूब रहा है; **की......अन्वेषणे**—वहाँ क्या है, किस (वस्तु) की खोज में चला हूँ ।

वलो देखि मोरे, शुधाइ तोमाय, अपरिचिता—
ओइ येथा ज्वले सन्ध्यार कूले दिनेर चिता,
झलितेछे जल तरल अनल,
गलिया पड़िछे अम्बरतल,
दिक्‌वधू येन छलछल-आँखि अश्रुजले,
होथाय कि आछे आलय तोमार
ऊर्मिमुखर सागरेर पार
मेघचुम्बित अस्तगिरिर चरणतले?
तुमि हास शुधु मुख पाने चेये कथा ना ब'ले ।।

हूहू करे वायु फेलिछे सतत दीर्घश्वास ।
अन्ध आवेगे करे गर्जन जलोच्छ्‌वास ।
संशयमय घननील नीर,
कोनो दिके चेये नाहि हेरि तीर,
असीम रोदन जगत् प्लाविया दुलिछे येन ।
तारि 'परे भासे तरणी हिरण,
तारि 'परे पड़े सन्ध्याकिरण—
तारि माझे बसि ए नीरव हासि हासिछ केन?
आमि तो बुझि ना की लागि तोमार विलास हेन ।।

वलो......अश्रुजले—हे अपरिचिता, तुमसे पूछता हूँ, बोलो तो देखें—वहाँ जहाँ सन्ध्या के तट पर दिन की चिता जल रही है, तरल अनल के समान जल झल झल कर रहा है, आकाश गल कर पड़ रहा है जैसे अश्रुजल से छल-छलायी दिग्वधुओं की आँखें हों; **होथाय......तोमार**—वहीं क्या तुम्हारा आवास है; **तुमि......ब'ले**—(कोई) वात न कह (मेरे) मुँह की ओर देखती हुई केवल हँसती हो ।

फेलिछे—फेंक रही है (ले रही है); **कोनो......तीर**—किसी ओर देखने पर तीर नहीं देख पाता; **असीम......येन**—जैसे असीम रोदन जगत् को प्लावित कर झूल रहा है; **तारि......किरण**—उसी पर सोने की नौका वह रही है और उसी पर सन्ध्याकिरण पड़ रही है; **तारि......केन**—उसी के बीच बैठ यह नीरव हँसी क्यों हँस रही हो; **आमि.....हेन**—मैं तो समझ नहीं पाता किस लिये यह तुम्हारी लीला है ।

यखन प्रथम डेकेछिले तुमि 'के यावे साथे'—
चाहिनु वारेक तोमार नयने नवीन प्राते।
देखाले समुखे प्रसारिया कर
पश्चिम-पाने असीम सागर,
चञ्चल आलो आशार मतन काँपिछे जले।
तरीते उठिया शुधानु तखन—
आछे की होथाय नवीन जीवन,
आशार स्वपन फले कि होथाय सोनार फले ?
मुख-पाने चेये हासिले केवल कथा ना व'ले।।

तार परे कभु उठियाछे मेघ, कखनो रवि,—
कखनो क्षुब्ध सागर, कखनो शान्तछवि।
वेला वहे याय, पाले लागे वाय,
सोनार तरणी कोथा चले याय,
पश्चिमे हेरि नामिछे तपन अस्ताचले।
एखन वारेक शुधाइ तोमाय—
स्निग्ध मरण आछे कि होथाय,

यखन.....साथे—जव प्रथम तुमने आह्वान किया था—'कौन साथ जायगा'; **चाहिनु......नयने**—तुम्हारी आँखों की ओर एक वार देखा; **देखाले......सागर**—सामने हाथ पसार कर (तुमने) पश्चिम की ओर असीम सागर को दिखलाया; **चञ्चल......जले**—आशा के समान चञ्चल आलोक जल में काँप रहा है; **तरीते.....जीवन**—नौका में चढ़ कर मैंने पूछा, 'क्या वहाँ नवीन जीवन है'; **आशार......फले**—आशा का स्वप्न क्या सोना के फल के रूप में वहाँ फलता है; **मुख-पाने.......व'ले**—विना कुछ वोले केवल मुँह की ओर देख कर तुम हँसी।

तार परे.......शान्तछबि—उसके वाद कभी वादल उठे हैं, कभी सूर्य, कभी सागर क्षुव्ध रहा है, कभी शान्त तस्वीर रही है; **वेला......अस्ताचले**—वेला वीत रही है, पाल में हवा लग रही है, सोने की नौका कहाँ चली जा रही है, पश्चिम की ओर देखता हूँ सूर्य अस्ताचल की ओर नीचे आ रहा है; **एखन.....तोमाय**—अव एक वार और तुमसे पूछता हूँ; **स्निग्ध......होथाय**—'क्या वहाँ मधुर मरण है';

आछे कि शान्ति, आछे कि सुप्ति तिमिरतले ?
हासितेछ तुमि तुलिया नयन कथा ना ब'ले ।।

आँधार रजनी आसिबे एखनि मेलिया पाखा,
सन्ध्या-आकाशे स्वर्ण-आलोक पड़िबे ढाका ।
शुधु भासे तव देहसौरभ,
शुधु काने आसे जलकलरव,
गाये उड़े पड़े वायु भरे तव केशेर राशि ।
विकल हृदय विवशशरीर
डाकिया तोमारे कहिब अधीर—
'कोथा आछो ओ गो, करह परश निकटे आसि ।
कहिबे ना कथा, देखिते पाव ना नीरव हासि ।।

—

११ दिसम्बर १८९३ 'सोनार तरी'

आछे......तिमिर तले—'(वहाँ) क्या शान्ति है, क्या अंधकार के तल में सुप्ति है'; हासितेछ......वले—कोई बात नहीं कह आँखें ऊँचीं कर तुम हँस रही हो।

आँधार......पाखा—अभी अंधेरी रात पंख खोले हुए आएगी; सन्ध्या-आकाशे ......ढाका—सन्ध्याकाश में सुनहला आलोक ढक जायगा; शुधु.....सौरभ—केवल तुम्हारे शरीर का सौरभ उड़ रहा है; शुधु......कलरव—केवल कानों में जल का कलरव आता है; गाये......राशि—हवा से उड़ कर तुम्हारी केश-राशि शरीर पर पड़ती है; विकल हृदय.......अधीर—विकल हृदय और अवश शरीर (में) तुम्हें पुकार कर अधीर हो कर कहूँगा; कोथा.....आसि—ओ, तुम कहाँ हो, निकट आ कर स्पर्श करो; कहिबे.......हासि—तुम (कोई) वात नहीं कहोगी, तुम्हारी नीरव हंसी नहीं देख पाऊँगा।

एबार फिराओ मोरे

संसारे सबाइ यबे साराक्षण शत कर्मे रत
तुइ शुधु छिन्नबाधा पलातक बालकेर मतो
मध्याह्ने माठेर माझे एकाकी विषण्ण तरुच्छाये
दूर वनगन्धवह मन्दगति क्लान्त तप्त वाये
सारादिन बाजाइलि बाँशि। ओरे तुइ ओठ् आजि।
आगुन लेगेछे कोथा? कार शङ्ख उठियाछे बाजि
जागाते जगत्-जने? कोथा हते ध्वनिछे क्रन्दने
शून्यतल? कोन् अन्ध कारा-माझे जर्जर बन्धने
अनाथिनी मागिछे सहाय? स्फीतकाय अपमान
अक्षमेर वक्ष हते रक्त शुषि करितेछे पान
लक्ष मुख दिया। वेदनारे करितेछे परिहास
स्वार्थोद्धत अविचार; संकुचित भीत क्रीतदास
लुकाइछे छद्मवेशे। ओइ-ये दाँड़ाये नतशिर
मूक सबे, म्लान मुखे लेखा शुधु शत शताब्दीर

एबार फिराओ मोरे—इस बार मुझे फिराओ (लौटाओ); **संसारे...... रत**—संसार में सभी लोग जब सभी क्षण सैकड़ों कर्म में रत हैं; **तुइ......मतो**—केवल तू ही बाधा को दूर कर पलातक (भागे हुए) बालक की नाईं; **माठेर माझे**—विस्तृत जनहीन मैदान के बीच; **तरुच्छाये**—पेड़ की छाया में; **तप्त बाये**—तप्त वायु में; **बाजाइलि बाँशि**—बाँसुरि बजाई; **ओरे.......आजि**—अरे, आज तू उठ; **आगुन......कोथा**—कहाँ आग लगी है; **कार......जने**—संसार के लोगों को जगाने के लिये किसका शंख बज उठा है; **कोथा.....शून्यतल**—शून्य (आकाश), कहाँ से आए हुए क्रन्दन (की आवाज़) से ध्वनित हो रहा है; **कोन.......सहाय**—किस अन्धकार-पूर्ण कारागृह के भीतर बन्धन से जर्जर अनाथिनी सहायता माँग रही है; **स्फीतकाय......मुख दिया**—स्फीतकाय (मोटे शरीर वाला) अपमान शोषण करता हुआ दुर्बल की छाती का रक्त लाखों मुँह से पान कर रहा है; **वेदनारे......अविचार**—स्वार्थ से उद्धत बना हुआ अविचार वेदना (से पीड़ित) की हँसी उड़ा रहा है; **लुकाइछे**—छिप रहा है; **ओइ ये दाँड़ाये नतशिर**—वह जो नतशिर खड़ा है; **लेखा**—लिखा हुआ है; **शुधु**—केवल;

वेदनार करुण काहिनी; स्कन्धे यत चापे भार
वहि चले मन्दगति यतक्षण थाके प्राण तार—
तार परे सन्तानेरे दिये याय वंश वंश धरि,
नाहि भर्त्से अदृष्टेरे, नाहि निन्दे देवतारे स्मरि,
मानवेरे नाहि देय दोष, नाहि जाने अभिमान,
शुधु दुटि अन्न खुँटि कोनोमते कष्टक्लिष्ट प्राण
रेखे देय बाँचाइया। से अन्न यखन केह काड़े,
से प्राणे आघात देय गर्वान्ध निष्ठुर अत्याचारे,
नाहि जाने कार द्वारे दाँड़ाइबे विचारेर आशे,
दरिद्रेर भगवाने बारेक डाकिया दीर्घश्वासे
मरे से नीरवे। एइ-सब मूढ़ म्लान मूक मुखे
दिते हबे भाषा, एइ-सब श्रान्त शुष्क भग्न बुके
ध्वनिया तुलिते हबे आशा; डाकिया बलिते हबे—
'मुहूर्त तुलिया शिर एकत्र दाँड़ाओ देखि सबे;

यत......भार—जितना बोझ लाद दिया जाय; **बहि......तार**—जब तक उसके प्राण रहते हैं मन्द गति से वहन करता हुआ चलता है; **तार.....वंश धरि**—उसके बाद पीढ़ी-पर-पीढ़ी आने वाली सन्तान को (वह बोझ ढोने के लिये) दे जाता है; **नाहि......अदृष्टेर**—भाग्य की भर्त्सना नहीं करता; **नाहि.......स्मरि**—देवाताओं को याद कर (उनकी) निन्दा नहीं करता; **मानवेरे......दोष**—मनुष्य को दोष नहीं देता; **नाहि.......अभिमान**—क्षोभ नहीं जानता (अनुभव नहीं करता); **शुधु......बाँचाइया**—केवल थोड़ा-सा अन्न मुँह में पहुँचा कर किसी प्रकार अपने दुःखी प्राण को बँचा रखता है; **से......काड़े**—उस अन्न को जब कोई छीनता है; **से......अत्याचारे**—गर्वान्ध निष्ठुर हो कर अत्याचार करने वाला जब उसके प्राणों को चोट पहुँचाता है (उसे मर्माहत करता है); **नाहि......आशे**—नहीं जानता है कि विचार (न्याय) की आशा से किसके दरवाज़े पर खड़ा होगा (जायगा); **दरिद्रेर......नीरवे**—दरिद्रों के भगवान् को एक बार पुकार कर, दीर्घ श्वास छोड़ कर वह चुपचाप मर जाता है; **एइ-सब**—इन सभी; **मुखे**—मुखों में; **दिते हबे भाषा**—भाषा देनी होगी; **एइ-सब......आशा**—इन सभी श्रान्त, शुष्क, टूटे हुए हृदयों में आशा का संचार करना होगा; **डाकिया बलिते हबे**—पुकार कर कहना होगा; **मुहूर्त......सबे**—एक मुहूर्त (के लिये) सभी एकत्र हो सिर ऊँचा कर खड़ा होओ तो, देखें;

यार भये तुमि भीत से अन्याय भीरु तोमा-चेये,
यखनि जागिवे तुमि तखनि से पलाइवे धेये।
यखनि दाँड़ाइवे तुमि सम्मुखे ताहार तखनि से
पथकुक्कुरेर मतो संकोचे सत्रासे यावे मिशे।
देवता विमुख तारे, केह नाहि सहाय ताहार;
मुखे करे आस्फालन, जाने से हीनता आपनार
मने मने।'

कवि, तबे उठे एसो—यदि थाके प्राण
तवे ताइ लहो साथे, तवे ताइ करो आजि दान।
बड़ो दुःख, वड़ो व्यथा—सम्मुखेते कष्टेर संसार
बड़ोइ दरिद्र, शून्य, वड़ो क्षुद्र, बद्ध, अन्धकार।
अन्न चाइ, प्राण चाइ, आलो चाइ, चाइ मुक्त वायु
चाइ वल, चाइ स्वास्थ्य, आनन्द-उज्ज्वल परमायु,
साहसविस्तृत वक्षपट। ए दैन्य-माझारे कवि,
एकवार निये एसो स्वर्ग हते विश्वासेर छवि।।

यार......चेये—जिसके भय से तुम भीत (डरे हुए) हो वह अन्यायी तुमसे भी अधिक भीरु है; **यखनि.......धेये**—जिस समय तुम जागोगे उस समय वह भाग खड़ा होगा; **यखनि.......मिशे**—जिस समय तुम उसके सामने जा कर खड़े होओगे उस समय वह रास्ते के कुत्ते के समान संकोच और भय से (तुमसे) मिल जायगा; **देवता.......तारे**—देवता उसके प्रतिकूल हैं; **केह......ताहार**—कोई उसका सहायक नहीं है; **मुखे......मने मने**—केवल मुंहसे लंबी हाँकता है, वह मन ही मन अपनी हीनता को जानता है।

तवे......एसे—तव उठ आओ; **यदि......दान**—यदि (तुम्हारे भीतर) प्राण है तव उसे ही साथ लो, आज तव उसे ही दान करो; **बड़ो.....व्यथा**—वहुत दुःख है, वड़ी व्यथा है; **सम्मुखे.......संसार**—सामने दुःखी संसार है; **बड़ोइ**—अत्यन्त ही; **चाइ**—चाहिए; **आलो**—आलोक; **चाइ वल**—वल चाहिए; **साहस......पट**—साहस से फैली हुई छाती; **ए दैन्य.......छबि**—हे कवि, इस दैन्य के वीच एक वार स्वर्ग से विश्वास की तस्वीर ले आओ।

एवार फिराओ मोरे, लये याओ संसारेर तीरे
हे कल्पने, रङ्गमयी ! दुलायो ना समीरे समीरे
तरङ्गे तरङ्गे आर, भुलायोना मोहिनी मायाय।
विजन विषादघन अन्तरेर निकुञ्जच्छायाय
रेखो ना वसाये आर। दिन याय, सन्ध्या हये आसे।
अन्धकारे ढाके दिशि, निराश्वास उदास वातासे
निश्वसिया केँदे ओठे वन। वाहिरिनु हेथा हते
उन्मुक्त अम्बरतले, धूसरप्रसर राजपथे
जनतार माझखाने।—कोथा याओ, पान्थ, कोथा याओ ?
आमि नहि परिचित, मोर पाने फिरिया ताकाओ।
वलो मोरे नाम तव, आमारे कोरो ना अविश्वास।
सृष्टिछाड़ा सृष्टि-माझे वहुकाल करियाछि वास
सङ्गीहीन रात्रिदिन; ताइ मोर अपरूप वेश,
आचार नूतनतर; ताइ मोर चक्षे स्वप्नावेश,
वक्षे ज्वले क्षुधानल।—येदिन जगते चले आसि,
कोन् मा आमारे दिलि शुधु एइ खेलावार बाँशि !

लये......तीरे—संसार के तीर पर ले जाओ; **दुलायो ना**—झुलाओ मत; **रेखो.....आर**—और वैठा न रखो; **याय**—जाय; **सन्ध्या......आसे**—सन्ध्या हो आती है; **अन्धकारे.......दिशि**—दिशाएँ अन्धकार से ढक जाती हैं; **निराश्वास ......वन**—सान्त्वनाहीन उदास हवा में दीर्घ श्वास ले कर वन क्रन्दन कर उठता है; **वाहिरिनु.......हते**—यहाँ से वाहर हुआ; **अम्बरतले**—आकाश के नीचे; **धूसर**—मटमैला; **प्रसर**—विस्तृत; **जनतार माझखाने**—भीड़ के वीच; **कोथा याओ**—कहाँ जाते हो; **आमि नहि**—मैं नहीं हूँ; **मोर......ताकाओ**—मेरी ओर फिर कर देखो; **वलो......तव**—अपना नाम मुझे वताओ; **आमारे...... अविश्वास**—मेरा अविश्वास न करो; **सृष्टिछाड़ा**—इस सृष्टि से अलग; **सृष्टि-माझे**—(कवि निर्मित) सृष्टि के वीच; **वहुकाल......रात्रिदिन**—रात्रि दिन वहुत दिनों तक विना किसी संगी के वास किया है; **ताइ......वेश**—इसी लिये मेरा अपूर्व वेश है; **आचार नूतनतर**—नवीन ढंग का व्यवहार है; **ताइ ....क्षुधानल**—इसीलिये मेरी आँखों में स्वप्न का आवेश है और छाती में भूख की अग्नि जल रही है; **ये दिन......सीमा**—जिस दिन जगत् में आया (पता

बाजाते बाजाते ताइ मुग्ध आपनार सुरे
दीर्घदिन दीर्घरात्रि चले गेनु एकान्त सुदूरे
छाड़ाये संसारसीमा। से बाँशिते शिखेछि ये सुर
ताहारि उल्लासे यदि गीतशून्य अवसादपुर
ध्वनिया तुलिते पारि, मृत्युञ्जयी आशार संगीते
कर्महीन जीवनेर एक प्रान्त पारि तरङ्गिते
शुधु मुहूर्तेर तरे—दुःख यदि पाय तार भाषा,
सुप्ति हते जेगे ओठे अन्तरेर गभीर पिपासा
स्वर्गेर अमृत लागि—तबे धन्य हबे मोर गान,
शत शत असन्तोष महागीते लभिबे निर्वाण।।

की गाहिबे, की शुनाबे! बलो, मिथ्या आपनार सुख,
मिथ्या आपनार दुःख। स्वार्थमग्न ये जन विमुख
बृहत् जगत् हते से कखनो शेखेनि बाँचिते।
महाविश्वजीवनेर तरङ्गेते नाचिते नाचिते

नहीं) किस माँ ने मुझे केवल यह खेलने वाली बाँसुरी दी; उसे ही बजाते अपने सुर पर मुग्ध हो कर संसार की सीमा को छोड़ अनेक दिन-रात्रि (चलता हुआ) सुदूर एकान्त में चला गया; **से......पारि**—उस बाँसुरी में जो सुर सीखा है उसीके उल्लास में यदि गीतशून्य, अवसाद-पूर्ण ध्वनि (सुर) निकाल सकूँ; **मृत्युञ्जयी ......तरे**—मृत्युञ्जयी आशा के संगीत से अकर्मण्य जीवन के एक भाग को (अगर) एक मुहूर्त के लिये भी तरंगित कर सकूँ; **दुःख.....भाषा**—दुःख (पीड़ित) को अगर भाषा दे सका; **सुप्ति.....लागि**—स्वर्ग के अमृत के लिये (अगर) अन्तर की गभीर पिपासा (मेरे सुर से) जाग उठे; **तबे.....निर्वाण**—तब मेरा गान धन्य होगा और शत-शत असन्तोष के महागीतों में निर्वाण लाभ करेगा (अपनी मुक्ति मानेगा)।

की गाहिबे—क्या गाओगे; **की शुनाबे**—क्या सुनाओगे; **बलो**—कहो; **आपनार**—अपना; **स्वार्थमग्न......बाँचिते**—स्वार्थमग्न जो मनुष्य बृहत् जगत् से उदासीन है उसने कभी भी बचा रहना नहीं सीखा; **महाविश्व......ध्रुवतारा**—(इस) विशाल जगत् की जीवन-तरङ्गों में सत्य को ध्रुवतारा (लक्ष्य)

निर्भयें छुटिते हबे सत्येरे करिया ध्रुवतारा।
मृत्युरे करि ना शंका। दुर्दिनेर अश्रुजलधारा
मस्तके पड़िबे झरि, तारि माझे याब अभिसारे
तार काछे—जीवनसर्वस्वधन अर्पियाछि यारे
जन्म जन्म धरि। के से? जानिना के। चिनि नाइ तारे—
शुधु एइटुकु जानि, तारि लागि रात्रि-अन्धकारे
चलेछे मानवयात्री युग हते युगान्तर-पाने
झड़झंझा-वज्रपाते ज्वालाये धरिया सावधाने
अन्तरप्रदीपखानि। शुधु जानि, ये शुनेछे काने
ताहार आह्वानगीत, छुटेछे से निर्भीक पराने
संकट-आवर्त-माझे, दियेछे से विश्व विसर्जन,
निर्यातन लयेछे से वक्ष पाति; मृत्युर गर्जन
शुनेछे से संगीतेर मतो। दहियाछे अग्नि तारे,
विद्ध करियाछे शूल, छिन्न तारे करेछे कुठारे;

बना कर निर्भय नाचते-नाचते दौड़ना होगा; **मृत्यु......शंका**—मृत्यु से नहीं डरता; **दुर्दिनेर......काछे**—दुर्दिन के अश्रुजल का प्रवाह मस्तक पर आ बहेगा उसीके बीच उसके पास अभिसार के लिये जाऊँगा; **अर्पियाछि......धरि**—जन्म-जन्म जिसे अर्पित किया है; **के से**—वह कौन है; **जानिना के**—जानता नहीं कौन है; **चिनि नाइ तारे**—उसे पहचानता नहीं; **शुधु.....खानि**—केवल इतना ही जानता हूँ, उसीके लिये (एक) युग से दूसरे युग की ओर आँधी, पानी (तथा) वज्रपात में अन्तर के प्रदीप को जलाए हुए सावधानी से मानव यात्री चला है; **शुधु जानि**—केवल (इतना ही) जानता हूँ; **ये.....आह्वानगीत**—जिसने उसके आह्वान-गीत को सुना है; **छुटेछे.....माझे**—वह निर्भीक हो कर संकट के आवर्त के भीतर दौड़ पड़ा है; **दियेछे......विसर्जन**—उसने सब कुछ को त्याग दिया है; **निर्यातन.....पाति**—छाती सामने कर उसने उत्पीड़न को ले लिया है; **मृत्यु.....मतो**—मृत्यु के गर्जन को संगीत के समान सुना है; **दहियाछे.....कुठारे**—वह अग्नि से जलाया गया है, सूली से विद्ध हुआ है (सूली पर चढ़ाया गया है), कुठार से टुकड़े-टुकड़े कर डाला गया है;

सर्व प्रियवस्तु तार अकातरे करिया इन्धन
चिरजन्म तारि लागि ज्वेलेछे से होमहुताशन।
हृत्पिण्ड करिया छिन्न रक्तपद्म-अर्घ्य-उपहारे
भक्तिभरे जन्मशोध शेष पूजा पूजियाछे तारे
मरणे कृतार्थ करि प्राण। शुनियाछि, तारि लागि
राजपुत्र परियाछे छिन्न कन्था, विषये विरागी
पथेर भिक्षुक। महाप्राण सहियाछे पले पले
संसारेर क्षुद्र उत्पीड़न, विंधियाछे पदतले
प्रत्यहेर कुशांकुर, करियाछे तारे अविश्वास
मूढ़ विज्ञजने, प्रियजन करियाछे परिहास
अतिपरिचित अवज्ञाय—गेछे से करिया क्षमा
नीरवे करुणनेत्रे, अन्तरे वहिया निरुपमा
सौन्दर्यप्रतिमा। तारि पदे मानी सँपियाछे मान,
धनी सँपियाछे धन, वीर सँपियाछे आत्मप्राण;
ताहारि उद्देशे कवि विरचिया लक्ष लक्ष गान
छड़ाइछे देशे देशे। शुधु जानि, ताहारि महान

सर्व प्रियवस्तु......हुताशन—अपनी सर्व प्रियवस्तु को निश्शंक भाव से ईधन वना उसीके लिये जीवन भर वह होमाग्नि जलाता रहा है; **हृत्पिण्ड......छिन्न**—हृत्पिण्ड को चीर कर; **जन्मशोध**—शेप वार, अन्तिम वार; **पूजियाछे तारे**—उसकी पूजा की है; **मरणे......प्राण**—मरण में अपने प्राण (जीवन) को कृतार्थ कर; **शुनियाछि......कन्था**—सुना है उसीके लिये राजपुत्र ने फटी हुई गुदड़ी धारण की थी; **विषये......भिक्षुक**—विपयों से विरक्त (हो) पथ का भिखारी (वन गया); **महाप्राण**—महामना; **सहियाछे**—सहा है; **बिंधियाछे**—विंधा है; **प्रत्यहेर**—रोज रोज के; **करियाछे**—किया है; **अवज्ञाय**—अवज्ञा के साथ; **गेछे......करुणनेत्रे**—नीरव, करुण नेत्रों से वह क्षमा कर गया है; **अन्तरे......प्रतिमा**—अन्तर में अनुपम सौन्दर्य-प्रतिमा (सत्य, आदर्श) को वहन करते हुए; **तारि......मान**—उसीके पैरों में अभिमानी ने अपना मान सौंपा है; **ताहारि......देशे**—उसीको लक्ष्य कर कवियों ने लाखों-लाख गान रच कर देश-विदेश में फैला दिये हैं; **शुधु जानि**—केवल जानता हूँ; **ताहारि**—उसीकी;

गम्भीर मङ्गलध्वनि शुना याय समुद्रे समीरे,
ताहारि अञ्चलप्रान्त लुटाइछे नीलाम्बर घिरे,
तारि विश्वविजयिनी परिपूर्णा प्रेममूर्तिखानि
विकाशे परमक्षणे प्रियजनमुखे। शुधु जानि,
से विश्वप्रियार प्रेमे क्षुद्रतारे दिया बलिदान
वर्जिते हइबे दूरे जीवनेर सर्व असम्मान,
सम्मुखे दाँड़ाते हबे उन्नत मस्तक उच्चे तुलि—
ये मस्तके भय लेखे नाइ लेखा, दासत्वेर धूलि
आँके नाइ कलंकतिलक। ताहारे अन्तरे राखि
जीवनकण्टकपथे येते हबे नीरवे एकाकी
सुखे दुःखे धैर्य धरि, विरले मुछिया अश्रु-आँखि,
प्रति दिवसेर कर्मे प्रतिदिन निरलस थाकि
सुखी करि सर्वजने; तार परे दीर्घ पथशेषे
जीवयात्रा-अवसाने क्लान्तपदे रक्तसिक्त वेशे
उत्तरिब एकदिन श्रान्तिहरा शान्तिर उद्देशे
दुःखहीन निकेतने। प्रसन्नवदने मन्द हेसे
पराबे महिमालक्ष्मी भक्तकण्ठे वरमाल्यखानि,
करपद्मपरशने शान्त हबे सर्वदुःखग्लानि

शुना याय—सुनी जाती है; **लुटाइछे**—लोट रहा है; **तारि**—उसीकी; **मूर्तिखानि**—मूर्ति; **विकाशे**—प्रकाशित होती है, प्रस्फुटित होती है; **से**—उस; **क्षुद्रतारे......असम्मान**—क्षुद्रता को वलिदान चढ़ा कर जीवन के सभी अपमानों को दूर हटाना होगा; **सम्मुखे......तुलि**—उन्नत सिर को ऊँचा उठा कर सामने खड़ा होना होगा; **ये.....लेखा**—जिस मस्तक पर भय ने कुछ लिखा नहीं है (अर्थात् जिसे भय नहीं है।); **दासत्वेर धूलि**—दासता की धूलि; **आँके....तिलक**—कलंक-तिलक अंकित नहीं किया; **ताहारे....धरि**—उसे अन्तर में रख जीवन के कटंकाकीर्ण पथ पर नीरव, अकेले, सुख-दुःख में धैर्य धारण कर जाना होगा; **विरले...... आँखि**—निर्जन स्थान में आँखों के आँसू पोंछ कर; **प्रति......सर्वजने**—प्रतिदिन के कर्मों में वरावर आलस्यहीन रह सब लोगों को सुखी करें; **तार परे**—उसके बाद; **उत्तरिव**—पहुँचूंगा; **शान्तिर उद्देशे**—शान्ति की खोज में; **हेसे**—हँस कर; **परावे**—पहनायगी; **वरमाल्यखानि**—वरमाल्य; **परशने**–स्पर्श से; **हबे**–होगा;

सर्व-अमङ्गल। लुटाइया रक्तिम चरणतले
धौत करि दिब पद आजन्मेर रुद्ध अश्रुजले।
सुचिरसञ्चित आशा सम्मुखे करिया उद्घाटन
जीवनेर अक्षमता काँदिया करिब निवेदन,
मागिब अनन्त क्षमा। हयतो घुचिबे दुःखनिशा,
तृप्त हबे एक प्रेमे जीवनेर सर्वप्रेमतृषा॥

६ मार्च १८९४ 'चित्रा'

ब्राह्मण

छान्दोग्योपनिषत्, ४, ४

अन्धकार वनच्छाये सरस्वतीतीरे
अस्त गेछे सन्ध्यासूर्य; आसियाछे फिरे
निस्तब्ध आश्रम-माझे ऋषिपुत्रगण
मस्तके समिध्भार करि आहरण
वनान्तर हते; फिराये एनेछे डाकि
तपोवनगोष्ठगृहे स्निग्धशान्त-आँखि
श्रान्त होमधेनुगणे; करि समापन
सन्ध्यास्नान सबे मिलि लयेछे आसन

लुटाइया—लोट कर; **धौत......अश्रुजले**—समस्त जीवन के रुद्ध अश्रुजल से (उसके) पैरों को धो कर साफ कर दूँगा; **सुचिरसञ्चित......क्षमा**—चिर-सञ्चित आशा को सामने प्रकट कर जीवन की अक्षमता को रो कर निवेदन करूँगा (और) अनन्त क्षमा माँगूँगा; **हय......तृषा**—हो सकता है दुःख-रात्रि का अवसान होगा और एक ही प्रेम से जीवन की सर्वप्रेम की प्यास मिटेगी।

वनच्छाये—वन की छाया में; **अस्त गेछे**—अस्त हो गया है; **आसियाछे ......हते**—वन से चुने हुए समिध के वोझ को सिर पर लिए हुए ऋषिपुत्रगण निस्तब्ध आश्रम में लौट आए हैं; **फिराये......गणे**—स्निग्ध शान्त आँखों वाली श्रान्त होम-धेनुओं को तपोवन के गोहाल (गोगृह) में लौटा लाए हैं; **करि...... आलोके**—सन्ध्यास्नान समाप्त कर होमाग्नि के प्रकाश में कुटी के आँगन में गुरु

गुरु गौतमेरे घिरि कुटिरप्राङ्गणे
होमाग्नि-आलोके। शून्ये अनन्त गगने
ध्यानमग्न महाशान्ति; नक्षत्रमण्डली
सारि सारि बसियाछे स्तब्ध कुतूहली
निःशब्द शिष्येर मतो। निभृत आश्रम
उठिल चकित हये; महर्षि गौतम
कहिलेन, 'वत्सगण, ब्रह्मविद्या कहि,
करो अवधान।'

हेनकाले अर्घ्य बहि
करपुट भरि पशिला प्राङ्गणतले
तरुण बालक। वन्दि फलफूलदले
ऋषिर चरणपद्म, नमि भक्तिभरे
कहिला कोकिलकण्ठे सुधास्निग्ध स्वरे,
'भगवन्, ब्रह्मविद्या-शिक्षा-अभिलाषी
आसियाछि दीक्षातरे कुशक्षेत्रवासी—
सत्यकाम नाम मोर।' शुनि स्मितहासे
ब्रह्मर्षि कहिला तारे स्नेहशान्त भाषे,
'कुशल हउक सौम्य, गोत्र की तोमार?
वत्स, शुधु ब्राह्मणेर आछे अधिकार

गौतम को घेर सभी मिल कर आसन ग्रहण किए हुए हैं; **शून्ये.....महाशान्ति**—शून्य अनन्त आकाश में ध्यानमग्न महाशान्ति है; **नक्षत्र.......मतो**—स्तब्ध, कौतूहल से भरे हुए, निःशब्द शिष्यों की तरह नक्षत्रमण्डली पंक्ति की पंक्ति बैठी हुई है; **निभृत**—एकान्त, निर्जन; **उठिल.....हये**—चौंक पड़ा; **कहिलेन**—कहा; **कहि**—कहता हूँ; **करो अवधान**—मनोयोग पूर्वक सुनो।

हेन.....वालक—उसी समय अंजलि में अर्घ्य लिए हुए तरुण बालक प्राङ्गण में प्रविष्ट हुआ; **वन्दि.....चरणपद्म**—ऋषि के चरण-कमल की फल फूल से वन्दना कर; **नमि भक्तिभरे**—भक्ति-पूर्वक प्रणाम कर; **कहिला**—कहा; **आसियाछि**—आया हूँ; **दीक्षातरे**—दीक्षा के लिये; **शुनि**—सुन कर; **कहिला तारे**—उससे कहा; **भाषे**—शब्दों में; **हउक**—हो; **शुधु**—केवल; **आछे**—है;

ब्रह्मविद्यालाभे।' वालक कहिला धीरे,
'भगवन्, गोत्र नाहि जानि। जननीरे
शुधाये आसिव कल्य, करो अनुमति।'
एत कहि ऋषिपदे करिया प्रणति
गेला चलि सत्यकाम घन-अन्धकार
वनवीथि दिया; पदव्रजे हये पार
क्षीण स्वच्छ शान्त सरस्वती, वालुतीरे
सुप्तिमौन ग्रामप्रान्ते जननीकुटिरे
करिला प्रवेश॥

घरे सन्ध्यादीप ज्वाला;
दाँड़ाये दुयार धरि जननी जवाला
पुत्रपथ चाहि; हेरि तारे वक्षे टानि
आघ्राण करिया शिर कहिलेन वाणी
कल्याणकुशल। शुधाइला सत्यकाम,
'कहो गो जननी, मोर पितार की नाम,
की वंशे जनम। गियाछिनु दीक्षातरे
गौतमेर काछे; गुरु कहिलेन मोरे—

नाहि जानि—नहीं जानता हूँ; **जननीरे......अनुमति**—अनुमति दें, कल माता से पूछ कर आऊँगा; **एत......सत्यकाम**—इतना कह ऋषि के पैरों में प्रणाम कर सत्यकाम चला गया; **पदव्रजे......पार**—पैदल ही पार हो कर; **वालुतीरे**—वालुकामय तट पर; **सुप्तिमौन.....प्रवेश**—निद्रा से मौन गाँव के किनारे माता की कुटी में प्रवेश किया।

घरे......ज्वाला—घर में संध्याकालीन दीपक जल रहा है; **दाँड़ाये.......चाहि**—माता जवाला पुत्र के रास्ते को देखती हुई दरवाजे को पकड़ कर खड़ी थी; **हेरि तारे**—उसे देख कर; **वक्षे.....कुशल**—(उसे) छाती के पास खींच (उसका) सिर सूँघ मंगल कामना की; **शुधाइला**—पूछा; **कहो......जनम**—माँ वतलाओ, मेरे पिता का नाम (तथा) किस वंश में (मेरा) जन्म हुआ; **गियाछिनु**—गया था; **गुरु......मोरे**—गुरु ने मुझसे कहा;

वत्स, शुधु ब्राह्मणेर आछे अधिकार
ब्रह्मविद्यालाभे। मातः, की गोत्र आमार ?'
शुनि कथा मृदुकण्ठे अवनतमुखे
कहिला जननी, 'यौवने दारिद्र्यदुखे
वहुपरिचर्या करि पेयेछिनु तोरे;
जन्मेछिस भर्तृहीना जबालार क्रोड़े;
गोत्र तव नाहि जानि, तात।'

परदिन
तपोवनतरुशिरे प्रसन्न नवीन
जागिल प्रभात। यत तापसबालक—
शिशिरसुस्निग्ध येन तरुण आलोक,
भक्ति-अश्रु-धौत येन नव पुण्यच्छटा,
प्रातःस्नात स्निग्धच्छवि आर्द्रसिक्तजटा,
शुचिशोभा सौम्यमूर्ति समुज्ज्वलकाये
वसेछे वेष्टन करि वृद्धवटच्छाये
गुरु गौतमेरे। विहङ्गकाकलिगान,
मधुपगुन्जनगीति, जलकलतान,
तारि साथे उठितेछे गम्भीर मधुर
विचित्र तरुणकण्ठे सम्मिलित सुर
शान्त सामगीति॥

करि—कर; पेयेछिनु तोरे—तुम्हें पाया था; जन्मेछिस्......क्रोड़े—पतिहीना जवाला की कोख में तू पैदा हुआ; गोत्र......जानि—तुम्हारा गोत्र नहीं जानती हूँ।

जागिल—जागा; यत—जितने; शिशिर......आलोक—शिशिर कण से सुस्निग्ध जैसे तरुण आलोक हों; वसेछे......करि—घेर कर बैठे हैं; तारि साथे—उसीके साथ; उठितेछे—उठ रहा है।

हेनकाले सत्यकाम
काछे आसि ऋषिपदे करिला प्रणाम;
मेलिया उदार आँखि रहिला नीरवे।
आचार्य आशिस करि शुधाइला तवे,
'की गोत्र तोमार, सौम्य, प्रियदरशन?'
तुलि शिर कहिला वालक, 'भगवन्,
नाहि जानि की गोत्र आमार। पुछिलाम
जननीरे, कहिलेन तिनि—सत्यकाम,
बहुपरिचर्या करि पेयेछिनु तोरे,
जन्मेछिस भर्तृहीना जवालार क्रोड़े—
गोत्र तव नाहि जानि।'

शुनि से वारता
छात्रगण मृदुस्वरे आरम्भिल कथा,
मधुचक्रे लोष्ट्रपाते विक्षिप्त चञ्चल
पतङ्गेर मतो। सवे विस्मयविकल;
केह-वा हासिल, केह करिल धिक्कार
लज्जाहीन अनार्येर हेरि अहंकार।
उठिला गौतम ऋषि छाड़िया आसन
बाहु मेलि, वालकेरे करि आलिङ्गन

हेनकाले—ऐसे ही समय; **काछे......प्रणाम**—निकट आ कर ऋषि के चरणों में प्रणाम किया; **मेलिया......नीरवे**—सरल आँखों को खोले हुए नीरव (खड़ा) रहा; **तुलि शिर**–सिर उठा कर; **पुछिलाम**–पूछा; **कहिलेन तिनि**–उन्होंने कहा।

शुनि से वारता—उस वृत्तान्त को सुन कर; **आरम्भिल कथा**—वात करना शुरू किया; **मधुचक्रे.......मतो**—मधु के छाते में ढेला लगने से अस्थिर, चञ्चल मधुमक्षिका के समान; **सबे**—सभी; **केह.......हासिल**—कोई हँसा; **केह...... धिक्कार**—किसीने धिक्कारा; **अनार्येर......अहंकार**—अनार्य के अहंकार को देख कर; **उठिला**—उठे; **छाड़िया आसन**—आसन छोड़ कर; **वाहु मेलि**—बाँहें फैला कर; **वालकेरे.......कहिलेन**—वालक का आलिङ्गन कर कहा;

कहिलेन, 'अब्राह्मण नह तुमि तात,
तुमि द्विजोत्तम, तुमि सत्यकुलजात।'

१८ फरवरी, १८९५ 'चित्रा'

पुरातन भृत्य

भूतेर मतन चेहारा येमन निर्बोध अति घोर—
या-किछु हाराय गिन्नि वलेन, केष्टा बेटाइ चोर।
उठिते वसिते करि वापान्त, शुनेओ शोने ना काने—
यत पाय वेत ना पाय वेतन, तबु ना चेतन माने।
वड़ो प्रयोजन, डाकि प्राणपण, चीत्कार करि 'केष्टा'—
यत करि ताड़ा नाहि पाइ साड़ा, खुँजे फिरि सारा देशटा।
तिनखाना दिले एकखाना राखे, वाकि कोथा नाहि जाने।
एकखाना दिले निमेष फेलिते तिनखाना क'रे आने।
येखाने सेखाने दिवसे दुपुरे निद्राटि आछे साधा।
महाकलरवे गालि देइ यबे 'पाजि हतभागा, गाधा'

अब्राह्मण......जात—तात, तुम अब्राह्मण नहीं हो, तुम द्विजोत्तम हो, तुम सत्य-कुल में जन्मे हो।

भूतेर......घोर—भूत के समान जैसा चेहरा है (वैसे ही) वह अत्यन्त मूर्ख है; **या-किछु.....चोर**—जो कुछ खो जाता है गृहिणी कहती हैं केष्टा बेटा ही (वदमाश ही) चोर है; **उठिते.......ना काने**—उठते-बैठते उसके बाप का नाम ले ले कर गाली देता हूँ, (और वह) सुन कर भी नहीं सुनता; **यत.......वेतन**—जितना बेंत पाता है (मार खाता है) उतना वेतन नहीं पाता; **तवु......माने**—तौभी उसे चेत (होश) नहीं होता; **वड़ो........देशटा**—बहुत जरूरी काज है, प्राणपण पुकारता हूँ, 'केष्टा' 'केष्टा' चिल्लाता हूँ, जितनी ही जल्दी मचाता हूँ उसका पता नहीं पाता, सब जगह उसे खोजता फिरता हूँ; **तिन......जाने**—तीन (वस्तुएं) देने पर एक रखता है, बाकी कहाँ हैं नहीं जानता; **एक......आने**—एक (वस्तु) देने पर क्षण भर में ही तीन (टुकड़े) करके लाता है; **येखाने....साधा**—जहाँ तहाँ दिन में दोपहर में निद्रा (उसकी) सधी हुई है (अर्थात् जब जहाँ जिस समय चाहता है सो जाता है।); **महाकलरवे......गाधा**—अत्यन्त

दरजार पाशे दाँड़िये से हासे, देखे ज्वले याय पित्त ।
तबु माया तार त्याग करा भार, बड़ो पुरातन भृत्य ।।

घरेर कर्त्री रुक्षमूर्ति वले, 'आर पारि नाको—
रहिल तोमार ए घर-दुयार, केष्टारे लये थाको ।
ना माने शासन, वसन वासन अशन आसन यत
कोथाय की गेल, शुधु टाकागुलो येतेछे जलेर मतो ।
गेले से वाजार सारा दिने आर देखा पाओया तार भार ।
करिले चेष्टा केष्टा छाड़ा कि भृत्य मेले ना आर !
शुने महा रेगे छुटे याइ वेगे, आनि तार टिकि ध'रे;
वलि तारे, 'पाजि, वेरो तुइ आजइ, दूर करे दिनु तोरे ।'
धीरे चले याय, भावि गेल दाय; परदिन उठे देखि
हुँकाटि वाड़ाये रयेछे दाँड़ाये वेटा वुद्धिर ढेंकि ।

ज़ोर से जब गाली देता हूँ 'पाजी, अभागा, गधा'; **दरजार......पित्त**—दरवाज़े के किनारे खड़ा हो कर वह हँसता है, देख कर मेरा जी जल उठता है; **तबु......भृत्य**—तौभी उसका मोह त्याग करना कठिन है, (क्योंकि वह) बहुत पुराना नौकर है ।

घरेर......थाको—घर की मालकिन उग्र मूर्ति (हो कर) कहती हैं, 'अब नहीं सहा जाता, यह रहा तुम्हारा घर-द्वार, केष्टा को ले कर रहो; **ना माने शासन**—कोई बात नहीं मानता; **वसन......की गेल**—वस्त्र, वर्तन, खाद्य-सामग्री, आसन जितने भी हैं कहाँ क्या गया (पता नहीं चलता); **शुधु......मतो**—केवल रुपया जल की तरह जा रहा है (रुपया नष्ट हो रहा है); **गेले.....आर**—वह जब वाज़ार जाता है तो समस्त दिन और उसका दिखाई पड़ना कठिन है, चेष्टा करने पर क्या केष्टा छोड़ कर दूसरा नौकर नहीं मिलेगा; **शुनि.....ध'रे**—सुन कर अत्यन्त क्रोध से वेग से दौड़ कर जाता हूँ और उसकी चुटिया पकड़ कर लाता हूँ; **वलि....... तोरे**—उससे कहता हूँ, पाजी तू आज ही वाहर हो जा, तुझको दूर कर दिया (निकाल दिया); **याय**—जाय; **भावि......दाय**—सोचता हूँ पिंड छूटा; **परदिन ......दाँड़ाये**—दूसरे दिन देखता हूँ हुक्का लिए हुए वह खड़ा है; **वुद्धिर ढेंकि**—प्रचण्ड मूर्ख;

प्रसन्न मुख, नाहि कोनो दुख, अति अकातरचित्त—
छाड़ाले ना छाड़े, की करिब तारे, मोर पुरातन भृत्य ।।

से वछरे फाँका पेनु किछु टाका करिया दालालगिरि ।
करिलाम मन, श्रीवृन्दावन बारेक आसिब फिरि ।
परिवार ताय साथे येते चाय, बुझाये बलिनु तारे—
पतिर पुण्ये सतीर पुण्य, नहिले खरच बाड़े ।
लये रशारशि करि कषाकषि पोँटला-पुँटलि बाँधि
वलय बाजाये बाक्स साजाये गृहिणी कहिल काँदि,
'परदेशे गिये केष्टारे निये कष्ट अनेक पाबे ।'
आमि कहिलाम, 'आरे राम राम, निबारण साथे याबे ।'
रेलगाड़ि धाय; हेरिलाम हाय नामिया वर्धमाने,
कृष्णकान्त अति प्रशान्त तामाक साजिया आने ।
स्पर्धा ताहार हेनमते आर कत-बा सहिब नित्य ?
यत तारे दुषि तबु हनु खुशि हेरि पुरातन भृत्य ।।

छाड़ाले ना छाड़े—छुड़ाने पर भी नहीं छोड़ता; **की......तारे**—उसका क्या करें।
से वछरे.....दालालगिरि—उस वर्ष सुयोग पा दलाली कर कुछ रुपया पाया; **करिलाम मन**—मन में विचारा; **बारेक......फिरि**—एक वार घूम आऊँ; **परिवार ......चाय**—इसीलिये परिवार (पत्नी) साथ जाना चाहता था; **बुझाये बलिनु तारे**—उसे समझाते हुए (मैं) बोला; **पतिर......बाड़े**—पति के पुण्य में ही सती का पुण्य है, नहीं तो खर्च वढ़ता है; **लये......बाँधि**—रस्सी ले कर खींच-खाँच कर पोटली वाँध-बूँध कर; **वलय.......काँदि**—कङ्कण वजाते हुए, बक्स सजा कर गृहिणी ने रोते हुए कहा; **परदेशे.....पाबे**—परदेश जा कर केष्टा को ले कर अनेक कष्ट पाओगे; **आमि.......याबे**—मैंने कहा, अरे राम राम, निवारण साथ में जायगा; **रेलगाड़ि......वर्धमाने**—रेलगाड़ी दौड़ती है, (लेकिन) हाय वर्दवान में उतर कर देखता हूँ; **कृष्णकान्त.......आने**—कृष्णकान्त (केष्टा) अत्यन्त शान्त भाव से (निर्विकार भाव से) तम्बाकू सजा कर लाया; **स्पर्धा......नित्य**—उसकी (ऐसी) स्पर्धा (दु:साहस), इस प्रकार से रोज और कितना सहन करूँगा; **यत.......भृत्य**—जितना उसको दोष दें फिर भी (अपने) पुरातन भृत्य को देख कर खुशी हुई।

नामिनु श्रीधामे; दक्षिणे वामे पिछने समुखे यत
लागिल पाण्डा, निमेषे प्राणटा करिल कण्ठागत।
जन-छय-साते मिलि एकसाथे परम वन्धुभावे
करिलाम वासा; मने हल आशा, आरामे दिवस यावे।—
कोथा ब्रजबाला, कोथा वनमाला, कोथा वनमाली हरि।
कोथा हा हन्त चिरवसन्त, आमि वसन्ते मरि।
वन्धु ये यत स्वप्नेर मतो वासा छेड़े दिल भङ्ग।
आमि एका घरे; व्याधिखरशरे भरिल सकल अङ्ग।
डाकि निशिदिन सकरुण क्षीण, 'केष्ट, आय रे काछे,
एत दिने शेषे आसिया विदेशे प्राण वुझि नाहि वाँचे।'
हेरि तार मुख भरे ओठे वुक, से येन परम वित्त;
निशिदिन ध'रे दाँड़ाये शियरे मोर पुरातन भृत्य।।

मुखे देय जल, शुधाय कुशल, शिरे देय मोर हात;
दाँड़ाये निझुम, चोखे नाइ घुम, मुखे नाइ तार भात।

नामिनु—उतरा; **श्रीधामे**—वृन्दावन धाम में; **दक्षिणे......पाण्डा**—दाहिने, वाँए, पीछे, सामने सब ओर से पण्डे लगे; **निमेषे......कण्ठागत**—एक मुहूर्त में ही प्राण कण्ठागत कर दिया; **जन.....वासा**—(हम)छः सात आदमियों ने मिल कर अत्यन्त वन्धु-भाव से एकसाथ रहने का प्रवन्ध किया; **मने......यावे**—मन में आशा हुई, आराम से दिन कट जाएंगे; **कोथा.......हरि**—(लेकिन हाय,) कहाँ व्रजवालाएँ हैं, कहाँ वनमाला है और कहाँ वनमाली कृष्ण हैं; **कोथा......मरि**—हाय, कहाँ वह चिर-वसन्त है, मैं यहाँ वसन्त (चेचक) से मर रहा हूँ; **वन्धु...... भङ्ग**—जितने साथी थे स्वप्न के समान स्थान छोड़ कर भाग खड़े हुए; **आमि ....अङ्ग**—अकेला मैं घर में था, व्याधि के तेज वाणों से समस्त शरीर भर गया (समस्त शरीर में चेचक के दाने निकल आए); **डाकि......वाँचे**—रात-दिन करुण, क्षीण स्वर में पुकारता हूँ, 'केष्टा, पास आओ, इतने काल वाद अन्त में विदेश आकर लगता है जैसे प्राण नहीं वचेंगे'; **हेरि.......वित्त**—उसका मुंह देख कर हृदय भर आता है, (लगता है) जैसे वह परम-धन हो; **निशिदिन......शियरे**—रातदिन सिरहाने खड़ा रहता है; **मोर**—मेरा।

मुखे......हात—मुँह में जल देता है, कुशल पूछता है और मेरे सिर पर हाथ रखता है; **दाँड़ाये......भात**—चुप-चाप खड़ा रहता है, उसकी आँखों में निद्रा नहीं

बले बार बार, 'कर्ता, तोमार कोनो भय नाइ, शुन—
यावे देशे फिरे, मा-ठाकुरानिरे देखिते पाइबे पुन।'
लभिया आराम आमि उठिलाम, ताहारे धरिल ज्वरे ;
निल से आमार कालव्याधिभार आपनार देह-'परे।
हये ज्ञानहीन काटिल दु दिन, बन्ध हइल नाड़ी।
एतवार तारे गेनु छाड़ावारे, एत दिने गेल छाड़ि।
बहुदिन परे आपनार घरे फिरिनु सारिया तीर्थ।
आज साथे नेइ चिरसाथि सेइ मोर पुरातन भृत्य॥

२३ फरवरी १८९५ 'चित्रा'

उर्वशी

नह माता, नह कन्या, नह वधू, सुन्दरी रूपसी,
हे नन्दनवासिनी उर्वशी।
गोष्ठे यबे सन्ध्या नामे श्रान्त देहे स्वर्णाञ्चल टानि
तुमि कोनो गृहप्रान्ते नाहि ज्वाल सन्ध्यादीपखानि,

और न उसके मुँह में भात है; **बले बार बार**—बार बार कहता है; **कर्ता.....पुन**—कर्ता (मालिक) तुम्हें कोई भय नहीं, सुनो तुम देश लौट कर मा-ठाकुरानी (मालकिन) को फिर से देख पाओगे; **लभिया.......ज्वरे**—रोगमुक्त हो कर मैं उठा (लेकिन) उसे ज्वर ने आ पकड़ा; **निल......परे**—मेरी कालव्याधि के भार को उसने अपने शरीर पर ले लिया; **हय......नाड़ी**—बेहोशी में दो दिन उसने काटे, (इसके बाद) नाड़ी बन्द हो गई; **एतवार.......छाड़ि**—इतनी बार उसे छुड़ाने गया (नौकरी से हटाने गया), (आज) इतने दिनों बाद (स्वयं) छोड़ कर चला गया; **बहुदिन.......तीर्थ**—बहुत दिनों बाद तीर्थ समाप्त कर अपने घर लौटा; **आज......भृत्य**—वह चिर-साथी मेरा पुराना नौकर आज (मेरे) साथ नहीं है।

नह माता—न माता हो; **गोष्ठे......नामे**—गोचारण-भूमि में जब श्रान्त शरीर सन्ध्या सुनहले अंचल को खींच कर उतरती है; **तुमि......खानि**—तुम किसी भी गृह में सन्ध्यादीप नहीं जलाती हो;

द्विधाय ज़ड़ित पदे कम्प्रवक्षे नम्र नेत्रपाते
स्मितहास्ये नाहि चल सलज्जित वासरसज्जाते
स्तब्ध अर्धराते।
उषार उदय-सम अनवगुण्ठिता
तुमि अकुण्ठिता ।।

वृन्तहीन पुष्पसम आपनाते आपनि विकशि
कबे तुमि फुटिले उर्वशी !
आदिम वसन्तप्राते उठेछिले मन्थित सागरे,
डान हाते सुधापात्र, विषभाण्ड लये वाम करे—
तरङ्गित महासिन्धु मन्त्रशान्त भुजङ्गेर मतो
पड़ेछिल पदप्रान्ते उच्छ्वसित फणा लक्षशत
करि अवनत।
कुन्दशुभ्र नग्नकान्ति सुरेन्द्रवन्दिता
तुमि अनिन्दिता ।।

कोनोकाले छिले ना कि मुकुलिका वालिकावयसी,
हे अनन्तयौवना उर्वशी !

द्विधाय.......पदे—द्विधा विजड़ित पदों से ; **कम्प्रवक्षे**—काँपते हुए वक्ष से ; **नम्र नेत्रपाते**—नत दृष्टिक्षेप से; **नाहि चल**—नहीं चलती हो; **सलज्जित**—सलज्ज भाव से; **वासरसज्जाते**—वासर शय्या (वर-कन्या की विवाह-रात्रि की शय्या) की ओर ; **उषार.......अकुण्ठिता**—उषा के उदय के समान (तुम) विना अवगुण्ठन के हो, तुम असंकुचिता हो।

आपनाते.......विकशि—अपने-आप विकसित हो; **कबे.......फुटिले**—कब तुम प्रस्फुटित हुई; **उठेछिले**—निकली थी; **डान हाते**—दाहिने हाथ में; **लये**—लिए हुए; **मतो**—समान; **पड़ेछिल**—पड़ा हुआ था।

कोनो काले.....वयसी—क्या किसी भी काल में कलिका-जैसी वालिका-वयस वाली (तुम) नहीं थी;

आँधार पाथारतले कार घरे वसिया एकेला
मानिक मुकुता लये करेछिले शैशवेर खेला,
मणिदीपदीप्त कक्षे समुद्रेर कल्लोलसंगीते
अकलंकहास्यमुखे प्रवालपालंके घुमाइते
कार अंकटिते ?
यखनि जागिले विश्वे, यौवने गठिता,
पूर्ण प्रस्फुटिता ।।

युगयुगान्तर हते तुमि शुधु विश्वेर प्रेयसी,
हे अपूर्वशोभना उर्वशी।
मुनिगण ध्यान भाङि देय पदे तपस्यार फल,
तोमारि कटाक्षघाते त्रिभुवन यौवनचञ्चल,
तोमार मदिर गन्ध अन्ध वायु बहे चारि भिते,
मधुमत्त भृङ्ग-सम मुग्ध कवि फिरे लुब्ध चिते
उद्दाम संगीते ।
नूपुर गुञ्जरि याओ आकुल-अञ्चला
विद्युत्चञ्चला ।।

सुरसभातले यवे नृत्य कर पुलके उल्लसि,
हे विलोलहिल्लोल उर्वशी,

आँधार—अंधकार; **पाथारतले**—समुद्र के तल में; **कार.......खेला**—किसके घर अकेली बैठी हुई माणिक, मुक्ता ले कर शैशव के खेल खेले थे; **अकलंक**—निर्दोष; **प्रवाल पालंके**—मूँगे के पलंग पर; **घुमाइते**—सोती; **कार अंकटिते**—किसकी गोद में; **यखनि.....विश्वे**—जब विश्व में जगी।

युग.......प्रेयसी—युग-युग से तुम केवल विश्व की प्रेयसी रही हो; **भाङि**—तोड़ कर; **देय......फल**—(तुम्हारे) पैरों पर तपस्या का फल देते हैं; **तोमारि**—तुम्हारे; **चारि भिते**—चारों ओर; **फिरे**—घूमते हैं; **नूपुर.....अञ्चला**—हे व्याकुल अंचलोवाली (तुम) नूपुर गुञ्जरित कर जाती हो।

सुरसभा....उल्लसि—सुरसभा (इन्द्र की सभा) में जब आनन्द से उल्लसित हो कर नृत्य करती हो; **विलोल**—चंचल;

छन्दे छन्दे नाचि उठे सिन्धु-माझे तरङ्गेर दल,
शस्यशीर्षे शिहरिया काँपि उठे धरार अञ्चल,
तव स्तनहार हते नभस्तले खसि पड़े तारा—
अकस्मात् पुरुषेर वक्षोमाझे चित्त आत्महारा,
नाचे रक्तधारा।
दिगन्ते मेखला तव टूटे आचम्विते
अयि असम्वृते ।।

स्वर्गेर उदयाचले मूर्तिमती तुमि हे उषसी,
हे भुवनमोहिनी उर्वशी।
जगतेर अश्रुधारे धौत तव तनुर तनिमा,
त्रिलोकेर हृदिरक्ते आँका तव चरणशोणिमा—
मुक्तवेणी विवसने, विकशित विश्ववासनार
अरविन्द-माझखाने पादपद्म रेखेछ तोमार
अति लघुभार।
अखिल मानसस्वर्गे अनन्त रङ्गिणी,
हे स्वप्नसङ्गिनी ।।

ओइ शुन दिशे दिशे तोमा लागि काँदिछे क्रन्दसी,
हे निष्ठुरा वधिरा उर्वशी।

छन्दे......दल—छन्द छन्द पर समुद्र में तरङ्गें नाच उठती हैं; **शिहरिया**—सिहर कर; **काँपि.....अञ्चल**—धरा (पृथ्वी) का अञ्चल काँप उठता है; **तव.......तारा**—तुम्हारी छाती के हार से तारागण टूट कर आकाश में आ जाते हैं; **अकस्मात्......रक्तधारा**—अकस्मात् सुधवुध खोए हुए पुरुष के हृदय में रक्तधारा नाच उठती है; **दिगन्ते......आचम्विते**—अकस्मात् तुम्हारी मेखला (कटिभूषण) टूट जाती है; **अयि असम्वृते**—ओ अनावृते।

धौत—धुला हुआ; **तनिमा**—मनोरम कृशता; **त्रिलोकेर......शोणिमा**—त्रिभुवन के हृदय के रक्त से अंकित तुम्हारे चरणों की रक्तिमा (लालिमा) है; **विवसने**—विवस्त्रे; **रेखेछ**—रखा है।

ओइ......क्रन्दसी—वह सुनो चारों ओर तुम्हारे लिये स्वर्ग और मर्त्य क्रन्दन

आदियुग पुरातन ए जगते फिरिबे कि आर—
अतल अकूल हते सिक्तकेशे उठिबे आबार ?
प्रथम से तनुखानि देखा दिबे प्रथम प्रभाते,
सर्वाङ्ग काँदिबे तव निखिलेर नयन-आघाते
वारिविन्दुपाते ।
अकस्मात् महाम्बुधि अपूर्व संगीते
रबे तरङ्गिते ।।

फिरिबे ना, फिरिबे ना, अस्त गेछे से गौरवशशी,
अस्ताचलवासिनी उर्वशी ।
ताइ आजि धरातले वसन्तेर आनन्द-उच्छ्वासे
कार चिरविरहेर दीर्घश्वास मिशे व'हे आसे,
पूर्णिमानिशीथे यबे दश दिके परिपूर्ण हासि
दूरस्मृति कोथा हते बाजाय व्याकुल-करा बाँशि—
झरे अश्रुराशि ।
तबु आशा जेगे थाके प्राणेर क्रन्दने,
अयि अबन्धने ।।

८ दिसम्बर १८९५ 'चित्रा'

कर रहे हैं; **आदियुग......आर**—(वह) पुरातन आदि युग क्या फिर इस जगत् में आएगा ; **अतल.......आबार**—अतल, अकूल (समुद्र) से भीगे केश फिर निकलोगी; **प्रथम.......प्रभाते**—प्रथम प्रभात में जो दीख पड़ा था वह शरीर (क्या फिर) दीख पड़ेगा; **सर्वाङ्ग......पाते**—समस्त जगत् की दृष्टि के आघात (पड़ने) से जल-कणों के रूप में क्या तुम्हारा सर्वाङ्ग क्रन्दन करेगा; **रबे**—रहेगा ।

फिरिबे ना—नहीं लौटेगा; **अस्त गेछे**—अस्त हो गया है; **से**—वह; **ताइ ....आसे**—इसीलिये आज पृथ्वी पर वसन्त का आनन्दोच्छ्वास जैसे किसीके चिर विरह के दीर्घ श्वास से मिश्रित हो कर बहता आता है; **पूर्णिमा....बाँशि**—पूर्णिमा की रात में जब दसों दिशाएँ हँसी (आनन्द) से परिपूर्ण रहती हैं (तब) सुदूर स्मृति कहाँ से व्याकुल करने वाली बाँसुरी बजाती है; **झरे अश्रुराशि**—आँसू झड़ते हैं; **तबु......क्रन्दने**—तौभी प्राणों के क्रन्दन में आशा जगी रहती है; **अबन्धने**—बन्धनहीना ।

स्वर्ग हइते विदाय

म्लान हये एल कण्ठे मन्दारमालिका,
हे महेन्द्र, निर्वापित ज्योतिर्मय टिका
मलिन ललाटे। पुण्यबल हल क्षीण,
आजि मोर स्वर्ग हते विदायेर दिन
हे देव, हे देवीगण। वर्ष लक्षशत
यापन करेछि हर्षे देवतार मतो
देवलोके। आजि शेष विच्छेदेर क्षणे
लेशमात्र अश्रुरेखा स्वर्गेर नयने
देखे याव, एइ आशा छिल। शोकहीन
हृदिहीन सुखस्वर्गभूमि, उदासीन
चेये आछे। लक्ष लक्ष वर्ष तार
चक्षेर पलक नहे। अश्वत्थशाखार
प्रान्त हते खसि गेले जीर्णतम पाता
यतटुकु बाजे तार ततटुकु व्यथा
स्वर्गे नाहि लागे, यबे मोरा शतशत
गृहच्युत हतज्योति नक्षत्रेर मतो

स्वर्ग हइते विदाय—स्वर्ग से विदाई; **म्लान......मालिका**—गले में मन्दार की माला म्लान हो आई; **महेन्द्र**—इन्द्र; **निर्वापित......ललाटे**—ललाट का ज्योतिर्मय तिलक बुझा हुआ मलिन हो गया है; **पुण्य......क्षीण**—पुण्यबल (अब) क्षीण हो गया; **आजि.....दिन**—आज स्वर्ग से मेरी विदाई का दिन है; **वर्ष लक्षशत**—करोड़ वर्ष; **यापन......देवलोके**—देवलोक (इन्द्रपुरी) में देवता के समान आनन्द सहित विताया है; **देखे याव.......छिल**—देख पाऊँगा, यही आशा थी; **हृदिहीन**—हृदयहीन; **सुख**—प्रिय; **उदासीन चेये आछे**—अनासक्त भाव से देख रही है; **लक्ष.......नहे**—लाखों वर्ष उसकी आँखों के पलक नहीं गिरते; **अश्वत्थ......लागे**—पीपल की शाखा के किसी स्थान से जीर्णतम पत्ती के टूट कर गिरने से उसे जितनी व्यथा होती है उतनी भी व्यथा स्वर्ग को नहीं होती; **यबे......स्रोते**—जब हम शत-शत गृहच्युत ज्योति-हीन नक्षत्रों के समान एक मुहूर्त में स्वर्ग-

मुहूर्ते खसिया पड़ि देवलोक हते
धरित्रीर अन्तहीन जन्ममृत्युस्रोते।
से वेदना बाजित यद्यपि, विरहेर
छायारेखा दित देखा, तबे स्वर्गेर
चिरज्योति म्लान हत मर्तेर मतन
कोमल शिशिरवाष्पे; नन्दनकानन
मर्मरिया उठित निश्वसि, मन्दाकिनी
कूले कूले गेये येत करुण काहिनी
कलकण्ठे, सन्ध्या आसि दिवा-अवसाने
निर्जन प्रान्तरपारे दिगन्तेर पाने
चले येत उदासिनी, निस्तब्ध निशीथ
झिल्लिमन्त्रे शुनाइत वैराग्यसंगीत
नक्षत्रसभाय। माझे माझे सुरपुरे
नृत्यपरा मेनकार कनकनूपुरे
तालभङ्ग हत। हेलि उर्वशीर स्तने
स्वर्णवीणा थेके थेके येन अन्यमने
अकस्मात् झंकारित कठिन पीड़ने
निदारुण करुण मूर्छना। दित देखा
देवतार अश्रुहीन चोखे जलरेखा

लोक से पृथ्वी के अन्तहीन जन्म-मृत्यु के स्रोत में आ गिरते हैं; **से.....यद्यपि**—अगर वह व्यथा होती; **विरहेर.....देखा**—विरह की छाया-रेखा दिखाई पड़ती; **तबे**—तब; **ह'त**—होती; **मर्तेर मतन**—मृत्युलोक के समान; **मर्मरिया.....निश्वसि**—निश्वास ले कर मर्मर कर उठता; **मन्दाकिनी.....कलकण्ठे**—मन्दाकिनी कलकण्ठ से किनारे-किनारे करुण कहानी गाती हुई जाती; **सन्ध्या.......उदासिनी**—दिन के समाप्त होने पर उदास सन्ध्या आकर निर्जन सुनसान मैदान के पार क्षितिज की ओर चली जाती; **निस्तब्ध....सभाय**—निस्तब्ध रात्रि झिल्लीरव के द्वारा नक्षत्रों की सभा में वैराग्य-संगीत सुनाती; **माझे.....हत**—बीच-बीच में स्वर्ग में नृत्य करती हुई मेनका के स्वर्ण के नूपुरों का ताल टूट जाता; **हेलि......मूर्छना**—उर्वशी के स्तनों पर झुकी हुई स्वर्णवीणा अनमनी-सी रह-रह कर मानो कठिन पीड़ा पा अत्यन्त असह्य करुण मूर्छना से झंकृत हो उठती; **दित.......**

निष्कारणे। पति-पाशे वसि एकासने
सहसा चाहित शची इन्द्रेर नयने
येन खुँजि पिपासार वारि। धरा हते
माझे माझे उच्छ्वसि आसित वायुस्रोते
धरणीर सुदीर्घ निश्वास—खसि झरि
पड़ित नन्दनवने कुसुममञ्जरि॥

थाको स्वर्ग, हास्यमुखे—करो सुधापान,
देवगण! स्वर्ग तोमादेरि सुखस्थान,
मोरा परवासी। मर्तभूमि स्वर्ग नहे,
से ये मातृभूमि—ताइ तार चक्षे वहे
अश्रुजलधारा, यदि दु दिनेर परे
केह तारे छेड़े याय दु दण्डेर तरे।
यत क्षुद्र, यत क्षीण, यत अभाजन,
यत पापीतापी, मेलि व्यग्र आलिङ्गन
सवारे कोमल वक्षे बाँधिवारे चाय—

निष्कारणे—देवताओं की अश्रुहीन आँखों में अकारण जल भर आता; **पति...... वारि**—पति की बगल में एक ही आसन पर बैठी हुई इन्द्राणी सहसा इन्द्र की आँखों में जैसे पिपासा (मिटानेवाले) जल को खोजती हुई देखती; **धरा...... निश्वास**—बीच-बीच में हवा के साथ पृथ्वी का दीर्घ श्वास वह आता; **खसि ......मञ्जरि**—नन्दन कानन में फूलों की मञ्जरी टूट कर गिर पड़ती।

थाको.......देवगण—हे स्वर्ग, (तुम) मुख पर हँसी लिए हुए रहो, हे देवगण तुम (भी) अमृत पान करते रहो; **स्वर्ग......परवासी**—स्वर्ग तुम्हीं लोगों के सुख का स्थान है, हमलोग परदेशी हैं; **मर्त......मातृभूमि**—मर्त्यभूमि स्वर्ग नहीं है, वह मातृभूमि है; **ताइ......तरे**—इसीलिये (वहाँ) दो दिन भी रह कर यदि कोई उसे दो दण्ड के लिये छोड़ कर (चला) जाय तो उसकी आँखों से आँसुओं की धारा वहती है; **यत क्षुद्र......चाय**—जितने क्षुद्र, दुर्वल, अयोग्य, पापी क्यों न हों, (वह) व्यग्र आलिङ्गन में ले कर सब को अपने कोमल वक्ष में बाँधना चाहती है;

धूलिमाखा तनुस्पर्शे हृदय जुड़ाय
जननीर। स्वर्गे तव बहुक अमृत,
मर्ते थाक् सुखे-दुःखे-अनन्त-मिश्रित
प्रेमधारा अश्रुजले चिरश्याम करि
भूतलेर स्वर्गखण्डगुलि ।।

हे अप्सरी,
तोमार नयनज्योति प्रेमवेदनाय
कभु ना हउक म्लान—लइनु विदाय।
तुमि कारे कर ना प्रार्थना, कारो तरे
नाहि शोक। धरातले दीनतम घरे
यदि जन्मे प्रेयसी आमार, नदीतीरे
कोनो-एक ग्रामप्रान्ते प्रच्छन्न कुटिरे
अश्वत्थछायाय, से बालिका वक्षे तार
राखिबे सञ्चय करि सुधार भाण्डार
आमारि लागिया सयतने। शिशुकाले
नदीकूले शिवमूर्ति गड़िया सकाले
आमारे मागिया लबे वर। सन्ध्या हले
ज्वलन्त प्रदीपखानि भासाइया जले

धूलिमाखा...जननीर—धूलि से लिपटे हुए शरीर के स्पर्श से जननी की छाती जुड़ा जाती है; **स्वर्गे...अमृत**—तुम्हारे स्वर्ग में अमृत बहे; **थाक्**—रहे; **करि**—कर।

कभु......म्लान—कभी म्लान न होवे; **लइनु बिदाय**—(मैं) विदा लेता हूँ; **तुमि.......शोक**—तुम किसीकी प्रार्थना नहीं करते, किसीके लिये शोक नहीं करते; **धरातले**—पृथ्वी पर; **घरे**—घर में; **आमार**—मेरी; **कोनो-एक**—किसी एक; **अश्वत्थछायाय**—अश्वत्थ (पीपल) की छाया में; **से......सयतने**—वह बालिका अपने हृदय में अमृत का भाण्डार मेरे लिये यत्नपूर्वक सञ्चय कर रखेगी; **गड़िया**—गढ़ कर, निर्मित कर; **सकाले**—प्रातःकाल; **आमारे.....वर**—मुझे पति-रूप में वर माँग लेगी; **आमारे**—मुझे; **मागिया लबे**—माँग लेगी; **सन्ध्या....घाटे**—सन्ध्या होने पर जलते हुए प्रदीप को जल में बहा कर शंकित और काँपते

शङ्कित कम्पित वक्षे चाहि एकमना
करिबे से आपनार सौभाग्यगणना
एकाकी दाँड़ाये घाटे। एकदा सुक्षणे
आसिबे आमार घरे सन्नतनयने,
चन्दनचर्चितभाले, रक्त पटाम्वरे,
उत्सवेर वाँशरिसंगीते। तार परे,
सुदिने दुर्दिने, कल्याणकंकण करे,
सीमन्तसीमाय मङ्गलसिन्दुरविन्दु,
गृहलक्ष्मी दुःखे सुखे, पूर्णिमार इन्दु
संसारेर समुद्रशियरे। देवगण,
माझे माझे एइ स्वर्ग हइबे स्मरण
दूरस्वप्नसम, यबे कोनो अर्धराते
सहसा हेरिव जागि निर्मल शय्याते
पड़ेछे चन्द्रेर आलो—निद्रिता प्रेयसी,
लुण्ठित शिथिल वाहु, पड़ियाछे खसि
ग्रन्थि शरमेर, मृदु सोहागचुम्बने
सचकिते जागि उठि गाढ़ आलिङ्गने
लताइवे वक्षे मोर। दक्षिण अनिल
आनिवे फुलेर गन्ध, जाग्रत कोकिल
गाहिवे सुदूर शाखे।।

हुए हृदय से एकाग्रचित्त देखती हुई घाट पर अकेली खड़ी हो वह अपने सौभाग्य की गणना करेगी; **एकदा......संगीते**—एक दिन शुभक्षण में नत नयन, चन्दन-चर्चित ललाट, लाल रेशमी-वस्त्र पहने वाजे-गाजे के साथ मेरे घर आएगी; **तार परे**—उसके वाद; **सुदिने**—अच्छे दिनों में; **करे**—कर (हाथ) में; **शियरे**—सिरहाने; **माझे......सम**—वीच-वीच में यह स्वर्ग दूरापगत सपने के समान याद आएगा; **यबे...आलो**—जब किसी अर्धरात्रि को सहसा जग कर देखूँगा कि स्वच्छ शय्या पर चन्द्रमा की किरणें पड़ी हैं; **पड़ियाछे खसि**—खुल गई है; **ग्रन्थि शरमेर**—लज्जा (ढँकनेवाली) ग्रन्थि; **सोहाग....मोर**—मृदु, प्रणयपूर्ण चुम्वन से भय-भीत हो कर जाग उठेगी और गाढ़ आलिङ्गन में मेरी छाती से लता जैसी लिपट जाएगी; **दक्षिण...गन्ध**—दक्षिण पवन फूल की गन्ध लाएगी; **गाहिवे**—गाएगा।

अयि दीनहीना,
अश्रु-आँखि दुःखातुरा जननी मलिना,
अयि मर्तभूमि, आजि बहुदिन-परे
काँदिया उठेछे मोर चित्त तोर तरे।
येमनि विदायदुःखे शुष्क दुइ चोख
अश्रुते पुरिल, अमनि ए स्वर्गलोक
अलसकल्पनाप्राय कोथाय मिलालो
छायाच्छवि! तव नीलाकाश, तव आलो,
तव जनपूर्ण लोकालय, सिन्धुतीरे
सुदीर्घ वालुकातट, नीलगिरिशिरे
शुभ्र हिमरेखा, तरु-श्रेणीर माझारे
निःशव्द अरुणोदय, शून्य नदीपारे
अवनतमुखी सन्ध्या—बिन्दु अश्रुजले
यत प्रतिविम्ब येन दर्पणेर तले
पड़ेछे आसिया ।।

हे जननी पुत्रहारा,
शेष विच्छेदेर दिने ये शोकाश्रुधारा
चक्षु हते झरि पड़ि तव मातृस्तन
करेछिल अभिषिक्त आजि एतक्षण

आजि......तरे—आज वहुत दिनों के वाद तुम्हारे लिये मेरा चित्त क्रन्दन कर उठा है; **येमनि.......छायाच्छवि**—विदाई के दुख से जैसे ही दोनों सूखी आँखें आँसू से भर आईं वैसे ही यह स्वर्गलोक अलस कल्पना जैसा कहाँ छाया में विलीन हो गया; **लोकालय**—नगर, ग्राम, आदि; **तरु-श्रेणीर माझारे**—पेड़ों की पंक्ति के वीच; **विन्दु.......आसिया**—अश्रुकणों में (उन सभी वस्तुओं को) देखा है जैसे दर्पण में वे प्रतिविम्बित हो रही हों।

पुत्रहारा—पुत्र गँवाने वाली; **शेष ......गेछे**—अन्तिम विछोह के दिन जो शोक की अश्रुधारा आँखों से गिर कर तुम्हारे मातृस्तन को भिगो दिए हुई थी आज इतने दिनों में वे आँसू सूख गए हैं;

से अश्रु शुकाये गेछे। तबु जानि मने,
यखनि फिरिब पुन तव निकेतने
तखनि दुखानि बाहु धरिबे आमाय,
बाजिबे मङ्गलशंख—स्नेहेर छायाय
दु:खे-सुखे-भये-भरा प्रेमेर संसारे
तव गेहे, तव पुत्र-कन्यार माझारे,
आमारे लइवे चिर-परिचितसम।
तार परदिन हते शियरेते मम
साराक्षण जागि रवे कम्पमान प्राणे,
शङ्कित अन्तरे, उर्ध्वे देवतार पाने
मेलिया करुण दृष्टि, चिन्तित सदाइ—
'याहारे पेयेछि तारे कखन हाराइ।'

९ दिसम्वर १८९५ 'चित्रा'

तवु......मने—तौभी (अपने अन्तर में) यह जानता हूँ; **यखनि......निकेतने**—जिस भी समय तुम्हारे घर फिर लौटूंगा; **तखनि......आमाय**—उसी समय (तुम) मुझे दोनों बाँहों में ले लोगी; **बाजिवे मङ्गलशंख**—मंगलशंख वजेगा; **स्नेहेर छायाय**—स्नेह की छाया में; **दुखे......संसारे**—दु:ख, सुख तथा भय से भरे हुए प्रेम के संसार में; **तव......माझारे**—अपने घर में, अपने पुत्र कन्याओं के बीच; **आमारे लइबे**—मुझे लोगी (ग्रहण करोगी); **तार.......प्राणे**—उसके दूसरे दिन से मेरे सिरहाने काँपते हुए हृदय से सभी समय जागती रहोगी; **शंकित अन्तरे**—हृदय में शंकित वनी हुई; **उर्ध्वे......हाराइ**—ऊपर देवता की ओर करुण दृष्टि लगाए हुए सदा चिन्तित रहोगी कि 'जिसे पाया है उसे (कहीं) गँवा न दूँ'।

जीवनदेवता

ओहे अन्तरतम,
मिटेछे कि तव सकल तियाष आसि अन्तरे मम ?
दुःखसुखेर लक्ष धाराय
पात्र भरिया दियेछि तोमाय,
निठुर पीड़ने निङाड़ि वक्ष दलित द्राक्षासम।
कत ये बरन, कत ये गन्ध,
कत ये रागिणी, कत ये छन्द,
गाँथिया गाँथिया करेछि वयन वासरशयन तव—
गलाये गलाये वासनार सोना
प्रतिदिन आमि करेछि रचना
तोमार क्षणिक खेलार लागिया मुरति नित्यनव ।।

आपनि वरिया लयेछिले मोरे ना जानि किसेर आशे।
लेगेछे कि भालो हे जीवननाथ,
आमार रजनी, आमार प्रभात—
आमार नर्म, आमार कर्म तोमार विजन वासे ?

मिटेछे......मम—मेरे अन्तर में आ कर क्या तुम्हारी सभी प्यास मिट गई; **दुःख......तोमाय**—दुःख सुख की लाखों धाराओं में पात्र भर कर तुम्हें दिया है; **निठुर.....सम**—अत्यन्त पीड़ा सह कर दलित द्राक्षा के समान अपने वक्ष को निचोड़ कर; **कत ये वरन.....तव**—कितने रंगों, कितने गंधों, कितनी रागिणियों और कितने छन्दों को गूँथ गूँथ कर तुम्हारी सुहाग-शय्या बुनी (रची) है; **गलाये.....नव**—वासनाओं के सोने को गला-गला कर तुम्हारे क्षणिक खेल के लिये नित्य नव मूर्ति की रचना प्रति दिन मैंने की है।

आपनि......आशे—न-जाने किस आशा से अपने-आप ही (तुमने) मुझे वरण कर लिया था; **लेगेछे.......प्रभात**—हे जीवननाथ, मेरी रात्रि और मेरे प्रभात क्या (तुम्हें) अच्छे लगे हैं; **आमार नर्म**—मेरे विलास; **विजन वासे**—एकान्त वासस्थान;

वरषा-शरते वसन्ते शीते
ध्वनियाछे हिया यत संगीते
शुनेछ कि ताहा एकेला बसिया आपन सिंहासने ?
मानसकुसुम तुलि अञ्चले
गेँथेछ कि माला, परेछ कि गले—
आपनार मने करेछ भ्रमण मम यौवनवने ? ।

की देखिछ बंधु, मरम-माझारे राखिया नयन दुटि ?
करेछ कि क्षमा यतेक आमार स्खलन पतन त्रुटि ?
पूजाहीन दिन सेवाहीन रात
कत बारवार फिरे गेछे नाथ—
अर्घ्यकुसुम झरे पड़े गेछे विजन विपिने फुटि ।
ये सुरे बाँधिले ए वीणार तार
नामिया नामिया गेछे बारबार—
हे कवि, तोमार रचित रागिणी आमि कि गाहिते पारि !

बरषा......सिंहासने—वर्षा, शरद्, वसन्त, शीत में (मेरे) हृदय में जितने संगीत ध्वनित हुए हैं उन्हें अपने सिंहासन पर अकेले बैठे हुए क्या तुमने सुना है; **मानसकुसुम.......गले**—हृदय-कुसुम को अञ्चल में चुन कर क्या (तुमने) माला गूँथी है और (अपने) गले में पहनी है; **आपनार.......यौवनवने**—कल्पना में क्या मेरे यौवन-वन में (तुमने) भ्रमण किया है।

की......नयन दुटि—मर्म में (हृदय के बीच) दोनों आँखें रख क्या देख रहे हो, प्रिय; **करेछ......त्रुटि**—जितने मेरे स्खलन, पतन और त्रुटियाँ हैं (उन्हें) क्या क्षमा कर दिया है; **पूजाहीन......नाथ**—हे नाथ, पूजाहीन दिन, सेवाहीन रातें कितनी बार आ कर लौट गईं हैं; **अर्घ्यकुसुम.......फुटि**—निर्जन विपिन में अर्घ्य-कुसुम खिल कर झड़ गए; **ये सुरे.....बारबार**—जिस सुर में इस वीणा के तार को बाँधा है वह बारबार उतर गया है; **हे कवि.....पारि**—हे कवि, तुम्हारी रची हुई रागिणी गान क्या मैं गा सकता हूँ;

तोमार कानने सेचिबारे गिया
घुमाये पड़ेछि छायाय पड़िया,
सन्ध्यावेलाय नयन भरिया एनेछि अश्रुवारि ।।

एखन कि शेष हयेछे प्राणेश, या-किछु आछिल मोर—
यत शोभा यत गान यत प्राण, जागरण घुमघोर ?
शिथिल हयेछे बाहुबन्धन,
मदिराविहीन मम चुम्बन—
जीवनकुञ्जे अभिसारनिशा आजि कि हयेछे भोर ?
भेङ्गे दाओ तवे आजिकार सभा,
आनो नव रूप, आनो नव शोभा,
नूतन करिया लहो आरवार चिरपुरातन मोरे ।
नूतन विवाहे बाँधिवे आमाय नवीनजीवनडोरे ।।

११ फरवरी १८९६ 'चित्रा'

तोमार......पड़िया—तुम्हारे कानन में सिञ्चन करने जा कर छाया में लेट सो गया हूँ; **सन्ध्यावेलाय......अश्रुवारि**—(अव) सन्ध्या समय आँखों में अश्रुजल भर कर लाया हूँ ।

एखन.......घुमघोर—हे प्राणेश, जितना सौन्दर्य, जितने गान, जितना प्राण, जागरण, घोर निद्रा, जो कुछ मेरा था क्या अव शेष हो गया; **हयेछे**—हो गया है; **आजि......भोर**—क्या आज भोर हो गया; **भेङे......सभा**—तव आज की सभा (आयोजन) को भङ्ग कर दो; **आनो**—ले आओ; **नूतन......मोरे**—मुझ चिर-पुरातन को फिर-से नूतन कर ग्रहण करो; **नूतन......डोरे**—नूतन विवाह कर मुझे नूतन जीवन की डोरी में वाँध लेना ।

रात्रे ओ प्रभाते

कालि मधुयामिनीते ज्योत्स्नानिशीथे कुञ्जकानने सुखे
फेनिलोच्छल यौवनसुरा धरेछि तोमार मुखे।
तुमि चेये मोर आँखि-'परे
धीरे पात्र लयेछ करे,
हेसे करियाछ पान चुम्बन-भरा सरस बिम्बाधरे,
कालि मधुयामिनीते ज्योत्स्नानिशीथे मधुर आवेशभरे।
तव अवगुण्ठनखानि
आमि खुले फेलेछिनु टानि
आमि केड़े रेखेछिनु वक्षे तोमार कमलकोमल पाणि।
भावे निमीलित तव युगल नयन, मुखे नाहि छिल वाणी।
आमि शिथिल करिया पाश
खुले दियेछिनु केशराश,
तव आनमित मुखखानि
सुखे थुयेछिनु बुके आनि—
तुमि सकल सोहाग सयेछिले सखी, हासिमुकुलित मुखे,
कालि मधुयामिनीते ज्योत्स्नानिशीथे नवीन मिलनसुखे ।।

कालि—(गत) कल; **मधुयामिनीते**—वसन्त की मनोरम रात्रि में; **ज्योत्स्ना-निशीथे**—चाँदनी रात में; **सुखे**—आनन्द-विभोर हो; **धरेछि तोमार मुखे**—तुम्हारे मुँह पर रखा है; **तुमि.......करे**—मेरी आँखों में देखते हुए धीरे से तुमने हाथ में पात्र लिया है; **हेसे......पान**—हँस कर पान किया है; **तव......टानि**—तुम्हारे अवगुण्ठन को खींच कर मैंने खोल दिया था; **आमि......पाणि**—तुम्हारे कमल के समान कोमल हाथ को खींच कर मैंने (अपने) वक्षस्थल पर रखा था; **भावे......वाणी**—भाव में विभोर तुम्हारी दोनों आँखें बन्द थीं, मुँह में वाणी नहीं थी; **आमि......केशराश**—बंधन को शिथिल कर मैंने तुम्हारी केशराशि को खोल दिया था; **तव.....आनि**—तुम्हारे झुके हुए मुख को आनन्द-विभोर हो अपनी छाती पर रखा था। **तुमि......मुखे**—सखी, तुमने मेरी सभी प्रणय-चेष्टाओं को हँसी-मुकुलित (सस्मित) मुख से सहन किया था।

आजि निर्मलवाय शान्त उषाय निर्जन नदीतीरे
स्नान-अवसाने शुभ्रवसना चलियाछ धीरे धीरे।
तुमि वाम करे लये साजि
कत तुलिछ पुष्पराजि,
दूरे देवालयतले उषार रागिणी बाँशिते उठिछे बाजि।
एइ निर्मलवाय शान्त उषाय जाह्नवीतीरे आजि।
देवी, तव सिँथिमूले लेखा
नव अरुण सिँदुररेखा,
तव वाम बाहु वेड़ि शंखवलय तरुण इन्दुलेखा।
एकि मङ्गलमयी मुरति विकाशि प्रभाते दितेछ देखा!
राते प्रेयसीर रूप धरि
तुमि एसेछ प्राणेश्वरी,
प्राते कखन देवीर वेशे
तुमि समुखे उदिले हेसे—
आमि सम्भ्रमभरे रयेछि दाँड़ाये दूरे अवनतशिरे
आजि निर्मलवाय शान्त उषाय निर्जन नदीतीरे॥

१२ फरवरी १८९६ 'चित्रा'

आजि निर्मलवाय—आज निर्मल वायु में; **उषाय**—उषाकाल में (प्रभात वेला में) **स्नान-अवसाने**—स्नान समाप्त होने पर; **चलियाछ**—चली हो; **तुमि......पुष्पराजि**—बाँये हाथ में डाली ले कर (तुम) कितना फूल चुन रही हो; **उषार......आजि**—प्रभात कालीन रागिणी बाँसुरी में बज उठी है; **एइ**—इस; **देवी......रेखा**—हे देवी, तुम्हारे सीमन्त (माँग) में नयी लाल सिन्दूर रेखा अंकित है; **तव......लेखा**—तुम्हारी बाँयी बाँह में नवीन चन्द्रमा के समान शङ्ख-निर्मित कंकण वेष्टित है; **एकि....देखा**—प्रभात काल में यह कैसी मङ्गलमयी मूर्ति प्रकाशित करती हुई तुम दिखाई दे रही हो; **राते....हेसे**—प्राणेश्वरी, रात में प्रेयसी का रूप धारण कर तुम आई थी (और) प्रभात काल में कब देवी का वेश किए हुए हँसती हुई सामने उदित हुई; **आमि.......अवनतशिरे**—मैं सम्भ्रम (भय-मिश्रित श्रद्धा) से भरा हुआ नत-शिर दूर खड़ा हूँ।

दिदि

नदीतीरे माटि काटे साजाइते पाँजा
पश्चिमि मजुर। ताहादेरि छोटो मेये
घाटे करे आनागोना, कत घषा माजा
घटि बाटि थाला लये। आसे धेये धेये
दिवसे शतेकवार, पित्तलकंकण
पितलेर थालि-'परे वाजे ठन् ठन्।
वड़ो व्यस्त सारादिन। तारि छोटो भाई,
नेड़ामाथा, कादामाखा, गाये वस्त्र नाइ,
पोषा पाखिटिर मतो पिछे पिछे एसे
बसि थाके उच्च पाड़े दिदिर आदेशे
स्थिरधैर्यभरे। भरा घट लये माथे,
वामकक्षे थालि, याय वाला डानहाते
धरि शिशुकर। जननीर प्रतिनिधि,
कर्मभारे अवनत अति-छोटो दिदि॥

अप्रैल १८९६ 'चैतालि'

दिदि—दीदी, वड़ी वहन; **नदी......मजुर**—पश्चिमी मज़दूर पजावा जाने के लिये नदी के किनारे मिट्टी काट रहे हैं; **ताहादेरि......थाला लये**—न्हींमें किसीकी छोटी लड़की घाट पर आवाजाही (आना-जाना) करती है, कितने ोटा, कटोरी और थाली ले कर घिसती-मांजती है; **आसे......शतेकवार**—दिन सैकड़ों वार दौड़-दौड़ कर आती है; **पित्तल......ठन्ठन्**—पीतल के (उसके) कण पीतल की थाली पर ठन-ठन वजते हैं; **वड़ो**—अत्यन्त; **तारि......भाई**—सीका छोटा भाई; **नेड़ा माथा**—मुंडित-मस्तक; **कादामाखा**—कीचड़ ऽपटा हुआ; **गाये......नाइ**—शरीर पर कोई वस्त्र नहीं; **पोषा......भरे**—लतू पक्षी की तरह पीछे पीछे आ कर दीदी के आदेश से ऊँचे किनारे पर स्थिर, र्यपूर्वक वैठा रहता है; **भरा.....शिशुकर**—भरा हुआ घड़ा सिर पर और वाँयी ाँख में थाली ले कर, दाहिने हाथ से वच्चे के हाथ को पकड़ कर (वह) लड़की ाती है; **जननीर......दिदि**—माँ की प्रतिनिधि काम के भार से झुकी हुई वह त्यन्त छोटी दीदी है।

दुःसमय

यदिओ सन्ध्या आसिछे मन्द मन्थरे
सब संगीत गेछे इङ्गिते थामिया,
यदिओ सङ्गी नाहि अनन्त अम्बरे,
यदिओ क्लान्ति आसिछे अङ्गे नामिया,
महा-आशंका जपिछे मौन मन्तरे,
दिक्-दिगन्त अवगुण्ठने ढाका,
तबु विहङ्ग, ओरे विहङ्ग मोर,
एखनि अन्ध, बन्ध कोरो ना पाखा ।।

ए नहे मुखर वनमर्मरगुञ्जित,
ए ये अजगर-गरजे सागर फुलिछे।
ए नहे कुञ्ज कुन्दकुसुमरञ्जित,
फेनहिल्लोल कलकल्लोले दुलिछे।
कोथा रे से तीर फुलपल्लवपुञ्जित,
कोथा रे से नीड़, कोथा आश्रयशाखा।
तबु विहङ्ग, ओरे विहङ्ग मोर,
एखनि अन्ध, बन्ध कोरो ना पाखा ।।

यदि........थामिया—यद्यपि सन्ध्या मन्द मन्थर (गति से) आ रही है (फिर भी) सब संगीत (मानो) इंगित पा कर थम गए हैं; नाहि—नहीं है; क्लान्ति—अवसन्नता; आसिछे अङ्गे नामिया—अङ्गों में आ रही है; महा-आशंका......मन्तरे—महा-आशंका (भय) चुपचाप मन्त्र जप रही है; ढाका—ढँका हुआ; तबु—तौभी; एखनि......पाखा—हे अन्ध (मूढ़), अभी पंख (चलाना) बन्द न करो।

ए नहे—यह नहीं है; ए......फुलिछे—अजगर की तरह फूत्कार करता हुआ समुद्र उद्वेलित हो रहा है; दुलिछे—हिल रहा है; कोथा—कहाँ।

एखनो समुखे रयेछे सुचिर शर्वरी,
घुमाय अरुण सुदूर अस्त-अचले।
विश्वजगत् निश्वासवायु सम्वरि
स्तब्ध आसने प्रहर गणिछे विरले।
सबे देखा दिल अकूल तिमिर सन्तरि
दूर दिगन्ते क्षीण शशांक वाँका।
ओरे विहङ्ग, ओरे विहङ्ग मोर,
एखनि अन्ध, वन्ध कोरो ना पाखा ।।

ऊर्ध्व आकाशे तारागुलि मेलि अंगुलि
इङ्गित करि तोमा-पाने आछे चाहिया।
निम्ने गभीर अधीर मरण उच्छलि
शत तरङ्गे तोमा-पाने उठे धाइया।
वहुदूर तीरे कारा डाके वाँधि अञ्जलि—
'एसो एसो' सुरे करुणमिनति-माखा।
ओरे विहङ्ग, ओरे विहङ्ग मोर,
एखनि अन्ध, वन्ध कोरो ना पाखा ।।

एखनो......शर्वरी—अभी भी सामने लंवी रात्रि है; **घुमाय......अचले**—सुदूर अस्ताचल पर सूर्य सो रहा है; **विश्व......विरले**—विश्व-जगत् सांस रोके हुए निस्तब्ध आसन पर वैठा हुआ एकान्त में प्रहर गिन रहा है; **सबे......वाँका**—कूलहीन तिमिर (अन्धकार) का सन्तरी क्षीण, वक्र चन्द्रमा दूर दिगन्त में अभी ही दिखाई पड़ा है।

ऊर्ध्व......चाहिया—ऊपर आकाश में तारागण उंगली से इंगित कर तुम्हारी ओर देख रहे हैं; **निम्ने......धाइया**—नीचे गभीर अधीर मरण सैकड़ों तरंगों में उद्वेलित हो तुम्हारी ओर दौड़ रहा है; **वहुदूर......माखा**—वहुत दूर अञ्जलि वाँधे हुए करुण, मिन्नत के सुर में 'आओ, आओ' कौन (लोग) पुकार रहे हैं।

ओरे भय नाइ, नाइ स्नेहमोहबन्धन,
　　ओरे आशा नाइ, आशा शुधु मिछे छलना।
ओरे भाषा नाइ, नाइ वृथा वसे क्रन्दन,
　　ओरे गृह नाइ, नाइ फुलशेज-रचना।
आछे शुधु पाखा, आछे महानभ-अङ्गन
　　उषा-दिशाहारा निविड़-तिमिर-आँका।
ओरे विहङ्ग, ओरे विहङ्ग मोर,
　　एखनि अन्ध, बन्ध कोरो ना पाखा।।

२७ अप्रैल १८९७ 'कल्पना'

भ्रष्ट लग्न

शयनशियरे प्रदीप निवेछे सबे,
जागिया उठेछि भोरेर कोकिलरवे।
अलस चरणे वसि वातायने एसे
नूतन मालिका परेछि शिथिल केशे।
एमन समये अरुणधूसर पथे
तरुण पथिक देखा दिल राजरथे।

नाइ—नहीं है; **आशा......छलना**—आशा व्यर्थ की छलना-मात्र है; **ओरे भाषा......रचना**—अरे न भाषा है, न वृथा बैठ कर क्रन्दन है, न गृह है और न फूलों से सेज की रचना (की हुई) है; **आछे......आँका**—केवल पंख हैं और घोर अंधकार से अंकित विस्तृत फैला हुआ आकाश का आंगन है, उस अंधकार में उषा किस दिशा में है इसका पता नहीं चलता।

भ्रष्ट—नष्ट; **लग्न**—शुभ अवसर; **शयन......सबे**—शय्या के सिरहाने अभी अभी प्रदीप बुझा है; **जागिया......रवे**—भोर के कोकिल की आवाज़ से जाग उठी हूँ; **अलस......एसे**—वातायन पर अलस चरणों से आ कर बैठी हूँ; **नूतन......केशे**—शिथिल केशों में नवीन माला पहन ली है; **एमन......राजरथे**—ऐसे समय लाल धूसर पथ पर तरुण पथिक राजरथ पर दिखाई पड़ा;

सोनार मुकुटे पड़ेछे उषार आलो,
मुकुतार माला गलाय सेजेछे भालो।
शुधालो कातरे 'से कोथाय' 'से कोथाय'
व्यग्रचरणे आमारि दुयारे नामि—
शरमे मरिया वलिते नारिनु हाय,
'नवीन पथिक, से ये आमि, सेइ आमि।'

गोधूलिबेलाय तखनो ज्वाले नि दीप,
परितेछिलाम कपाले सोनार टिप।
कनकमुकुर हाते लये वातायने
बाँधितेछिलाम कवरी आपन-मने।
हेनकाले एल सन्ध्याधूसर पथे
करुणनयन तरुण पथिक रथे।
फेनाय घर्मे आकुल अश्वगुलि,
वसने भूषणे भरिया गियाछे धूलि।
शुधालो कातरे 'से कोथाय' 'से कोथाय'
क्लान्त चरणे आमारि दुयारे नामि—
शरमे मरिया वलिते नारिनु हाय,
'श्रान्त पथिक, से ये आमि, सेइ आमि।'

सोनार.......आलो—(उसके) सोने के मुकुट पर उषा का प्रकाश पड़ा है; **मुकुतार.........भालो**—मुक्ता की माला उसके गले में सुन्दर लगती है; **शुधालो......नामि**—व्यग्र चरणों से मेरे ही दरवाज़े पर आ कर कातर स्वर में उसने पूछा, 'वह कहाँ है, वह कहाँ है'; **शरमे......आमि**—हाय, शरम से मर गई (और) बोल नहीं सकी कि 'नवीन पथिक, वह मैं हूँ, वह मैं ही हूँ'।

गोधूलिबेलाय......टिप—गोधूलि-वेला (थी) तब तक दीप भी नहीं जले थे, मैं ललाट पर सोने की बिन्दी लगा रही थी; **कनक......मने**—सोने का दर्पण हाथ में ले कर वातायन (खिड़की) पर अपने में भूली कवरी (जूड़ा) बाँध रही थी; **हेनकाले......रथे**—ऐसे समय सन्ध्या-धूसर पथ पर रथ पर (बैठा) करुण-नयन तरुण पथिक आया; **फेनाय......अश्वगुलि**—घोड़े पसीने से लथपथ व्याकुल हैं; **वसने......धूलि**—(उस पथिक के) वस्त्र, भूषण धूल से भर गए हैं।

फागुनयामिनी, प्रदीप ज्वलिछे घरे,
दखिन वातास मरिछे बुकेर 'परे।
सोनार खाँचाय घुमाय मुखरा शारि,
दुयारसमुखे घुमाये पड़ेछे द्वारी।
धूपेर धोँयाय धूसर वासरगेह,
अगुरुगन्धे आकुल सकल देह।
मयूरकण्ठि परेछि काँचलखानि
दूर्वाश्यामल आँचल वक्षे टानि।
रयेछि विजन राजपथ-पाने चाहि,
वातायनतले बसेछि धुलाय नामि—
त्रियामा यामिनी एका बसे गान गाहि,
'हताश पथिक, से ये आमि, सेइ आमि।'

२० मई १८९७ 'कल्पना'

प्रदीप......घरे—घर में दीप जल रहा है; **दखिन......परे**—दक्षिण पवन (मेरी) छाती पर आ कर लुप्त हो जाता है; **सोनार......शारि**—सोने के पिंजड़े में मुखरा शारिका सो रही है; **दुयार......द्वारी**—दरवाज़े के सामने द्वारपाल सो गया है; **धूपेर......गेह**—धूप के धुआँ से वासर गृह (वह घर जिसमें सुहाग रात बिताई जाती है) धूसरित है; **अगुरु.......देह**—अगुरु के गन्ध से मेरे सकल अंग आकुल हैं; **मयूर........खानि**—मयूर-कण्ठी (चित्र-विचित्र रंगोंवाली) कंचुली (चोली) पहने हुई हूँ; **दूर्वाश्यामल......टानि**—दूर्वा के समान श्यामल रंग के अंचल को वक्ष पर खींच कर; **रयेछि......चाहि**—विजन राजपथ की ओर देख रही हूँ; **वातायनतले......नामि**—वातायन के नीचे धूलि पर उतर कर बैठी हुई हूँ; **त्रियामा......गाहि**—रात्रि में अकेली बैठी हुई गान गाती हूँ।

स्वप्न

दूरे वहुदूरे
स्वप्नलोके उज्जयिनीपुरे
खुँजिते गेछिनु कबे शिप्रानदीपारे
मोर पूर्वजनमेर प्रथमा प्रियारे।
मुखे तार लोध्ररेणु, लीलापद्म हाते,
कर्णमूले कुन्दकलि, कुरुवक माथे,
तनु देहे रक्ताम्वर नीवीवन्धे वाँधा,
चरणे नूपुरखानि वाजे आधा-आधा।
वसन्तेर दिने
फिरेछिनु वहुदूरे पथ चिने चिने।।

महाकाल-मन्दिरेर माझे
तखन गम्भीरमन्द्रे सन्ध्यारति वाजे।
जनशून्य पण्यवीथि, ऊर्ध्वे याय देखा
अन्धकार हर्म्य-'परे सन्ध्यारश्मिरेखा।।

प्रियार भवन
बंकिम संकीर्ण पथे दुर्गम निर्जन।
द्वारे आँका शङ्खचक्र, तारि दुइ धारे
दुटि शिशु नीपतरु पुत्रस्नेहे वाड़े।

खुँजिते......प्रियारे—अपने पूर्वजन्म की प्रथमा प्रिया को शिप्रा नदी के पार (में) खोजने कभी गया था; **मुखे तार**—उसके मुख में; **हाते**—हाथ में; **कुरुबक**—कुर्वक (झिंटी का फूल); **फिरेछिनु**—फिरा था; **चिने चिने**—पहचान पहचान कर।

तखन—उस समय; **द्वारे**—द्वार पर; **आँका**—अंकित; **तारि......वाड़े**—उसीके दोनों ओर दो शिशु (छोटे) कदम्ब वृक्ष पुत्र के जैसा स्नेह पा कर वढ़ रहे हैं।

तोरणेर श्वेतस्तम्भ-'परे
सिंहेर गम्भीर मूर्ति वसि दम्भभरे ।।

प्रियार कपोतगुलि फिरे एल घरे,
मयूर निद्राय मग्न स्वर्णदण्ड-'परे ।
हेनकाले हाते दीपशिखा
धीरे धीरे नामि एल मोर मालविका ।
देखा दिल द्वारप्रान्ते सोपानेर 'परे
सन्ध्यार लक्ष्मीर मतो सन्ध्यातारा करे ।
अङ्गेर कुंकुमगन्ध केशधूपवास
फेलिल सर्वाङ्गे मोर उतला निश्वास ।
प्रकाशिल अर्धच्युत वसन-अन्तरे
चन्दनेर पत्रलेखा वाम पयोधरे ।
दाँड़ाइल प्रतिमार प्राय
नगरगुञ्जनक्षान्त निस्तब्ध सन्ध्याय ।।

मोरे हेरि प्रिया
धीरे धीरे दीपखानि द्वारे नामाइया
आइल सम्मुखे—मोर हस्ते हस्त राखि
नीरवे शुधालो शुधु, सकरुण आँखि,

प्रियार......घरे—प्रिया के कपोत घर लौट आए; **हेनकाले**—ऐसे समय; **नामि एल**—उतर आई; **मोर**—मेरी; **देखा......करे**—दरवाज़े के किनारे सीढ़ियों पर सन्ध्या-तारा (दीप) हाथ में लिए हुए सन्ध्या-लक्ष्मी के समान (मेरी प्रिया) दिखाई पड़ी; **फेलिल......निश्वास**—मेरे सर्वाङ्ग पर आकुल निश्वास फेंका; **प्रकाशिल......पयोधरे**—अधखुले वस्त्रों के भीतर वाम पयोधर पर चन्दन से अंकित चित्र दिखाई पड़ा; **दाँड़ाइल......प्राय**—(आ कर) प्रतिमा-जैसी वह खड़ी हुई; **क्षान्त**—शान्त, बन्द ।

हेरि—देख कर; **नामाइया**—नीचे रख कर; **शुधालो शुधु**—केवल पूछा;

'हे बन्धु, आछ तो भालो ?' मुखे तार चाहि
कथा बलिवारे गेनु, कथा आर नाहि।
से भाषा भुलिया गेछि। नाम दोँहाकार
दुजने भाविनु कत, मने नाहि आर।
दुजने भाविनु कत चाहि दोँहा-पाने,
अझोरे झरिल अश्रु निस्पन्द नयाने ।।

दुजने भाविनु कत द्वारतरुतले !
नाहि जानि कखन् की छले
सुकोमल हातखानि लुकाइल आसि
आमार दक्षिणकरे कुलायप्रत्याशी
सन्ध्यार पाखिर मतो। मुखखानि तार
नतवृन्त पद्म-सम ए वक्षे आमार
नमिया पड़िल धीरे। व्याकुल उदास
निःशब्दे मिलिल आसि निश्वासे निश्वास ।।

रजनीर अन्धकार
उज्जयिनी करि दिल लुप्त एकाकार।

आछ तो भालो—अच्छे हो तो; **मुखे.......आर**—उसके मुख की ओर देख कर कुछ कहना चाहा लेकिन कुछ कह नहीं सका; **से......गेछि**—वह भाषा भूल गया हूँ; **नाम......आर**—दोनों ने दोनों का नाम कितनी बार याद करना चाहा लेकिन याद नहीं आया; **दुजने......पाने**—दोनों ने दोनों की ओर देख न-जाने कितना क्या सोचा; **अझोरे**—झर झर, अजस्र; **नयाने**—नयनों से।

दुजने......तले—द्वार-वृक्ष के नीचे दोनों ने न-जाने कितना-क्या सोचा; **नाहि......मतो**—नहीं जानता कब, कैसे (प्रिया के) सुकोमल हाथ नीड़ में लौटने वाले सन्ध्या कालीन पक्षी के समान मेरे दाहिने हाथ में आ छिपे; **मुख.....धीरे**—झुके हुए वृन्त पर कमल के समान उसका मुख धीरे-से मेरे वक्ष पर आ झुका; **मिलिल......निश्वासे**—निश्वास, निश्वास में आ कर मिल गए।

रजनीर.....एकाकार—रात्रि के अन्धकार ने उज्जयिनी को लुप्त कर एकाकार कर दिया;

दीप द्वारपाशे
कखन निबिया गेल दुरन्त बातासे ।
शिप्रानदीतीरे
आरति थामिया गेल शिवेर मन्दिरे ।।

२२ मई १८९७ 'कल्पना'

मदनभस्मेर पर

पञ्चशरे दग्ध करे करेछ एकि, संन्यासी,
विश्वमय दियेछ तारे छड़ाये ।
व्याकुलतर वेदना तार बातासे उठे निश्वासि,
अश्रु तार आकाशे पड़े गड़ाये ।
भरिया उठे निखिल भव रतिविलापसंगीते,
सकल दिक काँदिया उठे आपनि ।
फागुन मासे निमेष-माझे ना जानि कार इङ्गिते
शिहरि उठि मुरछि पड़े अवनी ।।

आजिके ताइ बुझिते नारि किसेर बाजे यन्त्रणा
हृदयवीणा-यन्त्रे महापुलके,

दीप......बातासे—प्रबल हवा (के झोंके) से दरवाजे का दीप कब बुझ गया; आरति.....गेल—आरती थम गई ।

मदनभस्मेर पर—कामदेव के भस्म होने के बाद; पञ्चशरे......एकि—पञ्चशर को भस्म कर यह क्या किया; विश्वमय......छड़ाये—समस्त विश्व में उसे व्याप्त कर दिया; व्याकुलतर......निश्वासि—उसकी अत्यन्त व्याकुल वेदना (जैसे) हवा में निश्वास छोड़ती है; अश्रु......गड़ाये—उसके अश्रु आकाश में प्रवाहित होते हैं; भरिया उठे—भर उठता है; सकल....आपनि—सभी दिशाएँ अपने-आप क्रन्दन कर उठती हैं; फागुन मासे...अवनी—फाल्गुन मास में क्षण-भर में न-जाने किसकी इंगित पर धरती सिहर कर मूर्च्छित हो पड़ती है ।

आजिके........महापुलके—इसीलिये आज समझ नहीं पाता कि अत्यन्त पुलकित हो कर हृदय-वीणा-यन्त्र में किसकी वेदना ध्वनित हो रही है;

तरुणी बसि भाविया मरे की देय तारे मन्त्रणा
मिलिया सबे द्युलोके आर भूलोके।
की कथा उठे मर्मरिया बकुलतरुपल्लवे,
भ्रमर उठे गुञ्जरिया की भाषा!
ऊर्ध्वमुखे सूर्यमुखी स्मरिछे कोन् वल्लभे,
निर्झरिणी बहिछे कोन् पिपासा॥

वसन कार देखिते पाइ ज्योत्स्नालोके लुण्ठित,
नयन कार नीरव नील गगने!
वदन कार देखिते पाइ किरणे अवगुण्ठित,
चरण कार कोमल तृणशयने!
परश कार पुष्पबासे परान मन उल्लासि
हृदये उठे लतार मतो जड़ाये—
पञ्चशरे भस्म करे करेछ एकि संन्यासी,
विश्वमय दियेछ तारे छड़ाये॥

२५ मई १८९७ 'कल्पना'

तरुणी......भूलोके—तरुणी बैठी सोच सोच मर रही है, आकाश और पृथ्वी में सभी मिल उसे क्या समझावें; **की कथा......पल्लवे**—बकुल वृक्ष के पल्लवों में कौन-सी बात मर्मर कर उठती है; **भ्रमर......भाषा**—भ्रमर कौन-सी भाषा गुञ्जार करता है; **ऊर्ध्वमुखे......वल्लभे**—ऊर्ध्वमुख सूर्यमुखी (का फूल) किस प्रियतम को याद कर रही है; **निर्झरिणी......पिपासा**—नदी कौन-सी पिपासा ले कर बह रही है।

वसन......लुण्ठित—किसके वस्त्र को चाँदनी के आलोक में पड़ा हुआ देखता हूँ; **नयन.....गगने**—नीरव नीले आकाश में किसकी आँखें (दीख रही हैं); **वदन ......अवगुण्ठित**—किसके चेहरे को किरणों के घूंघट में छिपा हुआ देखता हूँ; **कार**—किसका; **परश......जड़ाये**—फूलों के गन्ध में किसका स्पर्श प्राण-मन को उल्लसित कर हृदय में लता के समान लिपट जाता है।

देवतार ग्रास

ग्रामे ग्रामे सेइ वार्ता रटि गेल क्रमे—
मैत्रमहाशय यावे सागरसंगमे
तीर्थस्नान लागि। सङ्गीदल गेल जुटि
कत वालवृद्ध नरनारी, नौका दुटि
प्रस्तुत हइल घाटे ।।

पुण्यलोभातुर
मोक्षदा कहिल आसि, 'हे दादाठाकुर,
आमि तव हव साथि।' विधवा युवती,
दुखानि करुण आँखि माने ना युकति,
केवल मिनति करे—अनुरोध तार
एड़ानो कठिन वड़ो। 'स्थान कोथा आर'
मैत्र कहिलेन तारे। 'पाये धरि तव'
विधवा कहिल काँदि, 'स्थान करि लव
कोनोमते एक धारे।' भिजे गेल मन,
तबु द्विधाभरे तारे शुधालो ब्राह्मण,

सेइ......क्रमे—यह वात धीरे धीरे फैल गई; मैत्र—(ब्राह्मणों की एक उपाधि); यावे—जाएंगे; लागि—निमित्त, के लिये; गेल जुटि—जुट गया; कत—कितने; दुटि—दो; हइल—हुई।

कहिल आसि—आ कर वोली; आमि.....साथि—मैं तुम्हारा साथी होऊँगी (तुम्हारे साथ जाऊँगी); दुखानि......आँखि—दो करुण आँखें; माने......युकति—कोई युक्ति नहीं मानती; अनुरोध......वड़ो—उसके अनुरोध को अमान्य करना अत्यन्त कठिन है; स्थान......तारे—मैत्र महाशय ने उससे कहा, 'जगह अब कहाँ है'; पाये......एकधारे—विधवा ने रो कर कहा, 'आपके पैरों पड़ती हूँ, एक ओर किसी प्रकार स्थान कर लूंगी; भिजे......मन—मन भींग गया (द्रवित हो गया); तबु......तवे—तौभी द्विधा-पूर्वक ब्राह्मण ने उससे पूछा, 'नावालिग़ बच्चे का तब क्या करोगी';

'नाबालक छेलेटिर की करिबे तबे ?'
उत्तर करिल नारी, 'राखाल ? से रबे
आपन मासिर काछे। तार जन्म-परे
बहुदिन भुगेछिनु सूतिकार ज्वरे,
बाँचिब छिल ना आशा; अन्नदा तखन
आपन शिशुर साथे दिये तारे स्तन
मानुष करेछे यत्ने—सेइ हते छेले
मासिर आदरे आछे मार कोल फेले।
दुरन्त माने ना कारे, करिले शासन
मासि आसि अश्रुजले भरिया नयन
कोले तारे टेने लय। से थाकिबे सुखे
मार चेये आपनार मासिमार बुके।'

सम्मत हइल विप्र। मोक्षदा सत्वर
प्रस्तुत हइल बाँधि जिनिस-पत्तर,
प्रणमिया गुरुजने, सखीदलबले
भासाइया विदायेर शोक-अश्रुजले।

उत्तर......काछे—स्त्री ने उत्तर दिया, 'राखाल ? वह अपनी मौसी के पास रहेगा; **तार......ज्वरे**—उसके जन्म के बाद बहुत दिनों तक सूतिका-ज्वर से पीड़ित रही; **बाँचिब......आशा**—आशा नहीं थी कि बचूंगी; **अन्नदा ......यत्ने**—तब अन्नदा ने अपने बच्चे के साथ उसे स्तन दे कर (दूध पिला कर) बड़े स्नेह से उसे बड़ा किया; **सेइ......फेले**—उसी समय से (वह) माँ की गोद छोड़ कर मौसी के स्नेह का पात्र है; **दुरन्त......कारे**—(यह) ऊधमी किसी की बात नहीं मानता; **करिले......लय**—दण्ड देने पर मौसी आ कर आँखों में आँसू भर उसे गोद में खींच लेती है; **से......बुके**—माँ से अधिक अपनी मौसी की छाती से लग वह आनन्द से रहेगा।'

सम्मत......विप्र—ब्राह्मण मान गए; **प्रस्तुत......पत्तर**—सामान आदि बाँध कर शीघ्र तैयार हुई; **प्रणमिया**—प्रणाम कर; **गुरुजने**—गुरुजनों को; **सखीदलबले**—सखियों को; **भासाइया**—बहा कर; **विदायेर**—विदाई के;

घाटे आसि देखे, सेथा आगेभागे छुटि
राखाल वसिया आछे तरी-'परे उठि
निश्चिन्त नीरवे। 'तुइ हेथा केन ओरे'
मा शुधालो; से कहिल, 'याइव सागरे।'
'याइवि सागरे! आरे, ओरे दस्यु छेले,
नेमे आय।' पुनराय दृढ़ चक्षु मेले
से कहिल दुटि कथा, 'याइव सागरे।'
यत तार वाहु धरि टानाटानि करे
रहिल से तरणी आँकड़ि। अवशेषे
ब्राह्मण करुण स्नेहे कहिलेन हेसे,
'थाक्, थाक्, सङ्गे याक।' मा रागिया वले,
'चल् तोरे दिये आसि सागरेर जले।'
येमनि से कथा गेल आपनार काने
अमनि मायेर वक्ष अनुतापबाणे
विँधिया काँदिया उठे। मुदिया नयन
'नारायण नारायण' करिल स्मरण।
पुत्रे निल कोले तुलि, तार सर्वदेहे
करुण कल्याणहस्त वुलाइल स्नेहे।

घाटे.....नीरवे—घाट पर आ कर देखती है कि वहाँ पहले से ही भाग कर राखाल नाव पर चढ़ कर चुपचाप बैठा है; **तुइ......शुधालो**—माँ ने पूछा तू यहाँ क्यों रे; **से......सागरे**—वह वोला सागर (गंगा सागर) जाऊँगा; **याइवि**—जायगा; **ओरे......आय**—अरे दुष्ट, पाजी लड़के नीचे उतर आ; **पुनराय**—फिर; **मेले**—खोल कर; **दुटि कथा**—दो वातें (शव्द); **यतवार.......आँकड़ि**—जितनी वार हाथ पकड़ कर खींचती, वह नौका से जकड़ जाता; **अवशेषे**—अन्त में; **कहिलेन हेसे**—हँस कर वोले; **थाक्......याक**—ठहरो, ठहरो, जाय (हमलोगों के) साथ; **मा......वले**—माँ क्रोध कर वोली; **चल्......जले**—चल तुझे सागर के जल में दे आऊँ; **येमनि......काने**—जैसे ही वे शव्द (उसके) अपने कानों में गए; **अमनि...उठे**—वैसे ही माँ की छाती अनुताप के वाण से विंध कर क्रन्दन कर उठी; **मुदिया...स्मरण**—आँखें मूंद कर 'नारायण' स्मरण किया; **पुत्रे....तुलि**—पुत्र को गोद में खींच लिया; **तार**—उसके; **सर्वदेहे**—सम्पूर्ण शरीर पर; **वुलाइल**—फेरा;

मैत्र तारे डाकि धीरे चुपिचुपि कय,
'छि छि छि, एमन कथा बलिबार नय।'

राखाल याइबे साथे स्थिर हल कथा—
अन्नदा लोकेर मुखे शुनि से बारता
छुटे आसि बले, 'बाछा, कोथा याबि ओरे!'
राखाल कहिल हासि, 'चलिनु सागरे,
आबार फिरिब, मासि।' पागलेर प्राय
अन्नदा कहिल डाकि, 'ठाकुरमशाय,
बड़ो ये दुरन्त छेले राखाल आमार,
के ताहारे सामालिबे! जन्म हते तार
मासि छेड़े बेशिक्षण थाकेनि कोथाओ;
कोथा एरे निये याबे, फिरे दिये याओ।'
राखाल कहिल, 'मासि, याइब सागरे,
आबार फिरिब आमि।' विप्र स्नेहभरे
कहिलेन, 'यतक्षण आमि आछि भाइ,
तोमार राखाल लागि कोनो भय नाइ।

मैत्र......कय—मैत्र उसे धीरे से पुकार चुप-चाप बोले; **एमन.......नय**—ऐसी बात नहीं कही जाती।

राखाल......कथा—राखाल साथ जायगा (यह) बात स्थिर हुई; **लोकेर ......बारता**—लोगों के मुंह से यह बात सुन कर; **छुटे आसि बले**—दौड़ी हुई आ कर बोली; **बाछा......ओरे**—बेटा, अरे कहाँ जाएगा; **हासि**—हँस कर; **चलिनु......मासि**—सागर चला, फिर लौट कर आऊँगा मौसी; **पागलेर प्राय**—पागल जैसी; **कहिल डाकि**—पुकारती हुई बोली; **बड़ो.....सामालिबे**—मेरा राखाल बहुत ही चंचल लड़का है, कौन उसे सँभालेगा; **जन्म......कोथाओ**—जन्म से अपनी मौसी को छोड़ कहीं भी अधिक समय नहीं रहा; **कोथा...... याओ**—इसे कहाँ ले जाओगे, (इसे) लौटा कर देते जाओ; **कहिलेन**—बोले; **यतक्षण......आछि**—जब तक मैं हूँ; **तोमार......नाइ**—तुम्हारे राखाल को कोई भय नहीं;

एखन शीतेर दिन, शान्त नदीनद,
अनेक यात्रीर मेला, पथेर विपद
किछु नाइ, यातायाते मास-दुइ काल—
तोमारे फिराये दिब तोमार राखाल।'

शुभक्षणे दुर्गा स्मरि नौका दिल छाड़ि।
दाँड़ाये रहिल घाटे यत कुलनारी
अश्रुचोखे। हेमन्तेर प्रभातशिशिरे
छलछल करे ग्राम चूर्णीनदीतीरे।।

यात्रीदल फिरे आसे; साङ्ग हल मेला,
तरणी तीरेते बाँधा अपराह्णबेला
जोयारेर आशे। कौतूहल अवसान,
काँदितेछे राखालेर गृहगत प्राण
मासिर कोलेर लागि। जल शुधु जल
देखे देखे चित्त तार हयेछे विकल।
मसृण चिक्कण कृष्ण कुटिल निष्ठुर,
लोलुप लेलिहजिह्व सर्पसम क्रूर
खल जल छल-भरा, तुलि लक्ष फणा
फुँसिछे गर्जिछे नित्य करिछे कामना

एखन—अभी; शीतेर दिन—जाड़े के दिन; मेला—भीड़; यातायाते—आने-जाने में; दुइ—दो; तोमारे.......राखाल—तुम्हें तुम्हारे राखाल को लौटा दूँगा।

स्मरि—स्मरण कर; दिल छाड़ि—छोड़ दिया; दाँड़ाये......चोखे—आँखों में आँसू भरे जितनी कुलस्त्रियाँ थीं घाट पर खड़ी रहीं; शिशिरे—ओस कण।

यात्रीदल......आसे—यात्रीदल लौट आया; साङ्ग......मेला—मेला समाप्त हुआ; तीरेते बाँधा—तीर पर बँधी हुई; जोयारेर आशे—ज्वार की आशा में; अवसान—खतम हो गया; काँदितेछे.......प्राण—घर की ओर लगे हुए राखाल के प्राण रो उठे हैं; मासिर.....लागि—मौसी की गोद के लिये; शुधु—केवल; तार—उसका; हयेछे—हुआ है; तुलि—उठा कर; फुँसिछे—फों फों

मृत्तिकार शिशुदेर, लालायित मुख।
हे माटि, हे स्नेहमयी, अयि मौनमूक,
अयि स्थिर, अयि ध्रुव, अयि पुरातन,
सर्व-उपद्रवसहा आनन्दभवन
श्यामलकोमला, येथा ये-केहइ थाके
अदृश्य दु वाहु मेलि टानिछ ताहाके
अहरह, अयि मुग्धे, की विपुल टाने
दिगन्तविस्तृत तव शान्त वक्ष-पाने !

चंचल वालक आसि प्रति क्षणे क्षणे
अधीर उत्सुक कण्ठे शुधाय व्राह्मणे,
'ठाकुर, कखन् आजि आसिवे जोयार ?'

सहसा स्तिमित जले आवेगसञ्चार
दुइ कूल चेताइल आशार संवादे।
फिरिल तरीर मुख, मृदु आर्तनादे
काछिते पड़िल टान, कलशव्दगीते
सिन्धुर विजयरथ पशिल नदीते—

(साँप का शव्द) कर रहा है; **मृत्तिकार शिशुदेर**—मिट्टी के शिशुओंका; **लालायित**—लुव्ध; **माटि**—माटी, मिट्टी; **येथा......अहरह**—जो कोई जहाँ भी हो (अपनी) अदृश्य दोनों वाहें खोल कर उसे रातदिन खींचती हो; **की..... टाने**—किस प्रवल आकर्षण से; **दिगन्त......पाने**—दिगन्त में फैली हुई अपनी शान्त छाती की ओर।

आसि—आ कर; **शुधाय ब्राह्मणे**—ब्राह्मण से पूछता है; **ठाकुर......जोयार**—ठाकुर (देवता), आज कव ज्वार आएगा; **स्तिमित**—स्थिर, निश्चल; **दुइ कूल**—दोनों किनारों को; **चेताइल.......संवादे**—आशा के संवाद से चैतन्य किया (जगा दिया); **फिरिल मुख**—नौका का मुँह घूमा; **काछिते....... टान**—मोटी रस्सी पर खिंचाव पड़ा; **पशिल**—प्रवेश किया;

आसिल जोयार। माझि देवतारे स्मरि
त्वरित उत्तरमुखे खुले दिल तरी।
राखाल शुधाय आसि ब्राह्मणेर काछे,
'देशे पँहुछिते आर कतदिन आछे ?'

सूर्य अस्त ना जाइते, क्रोश दुइ छेड़े,
उत्तरवायुर वेग क्रमे उठे बेड़े।
रूपनारानेर मुखे पड़ि वालुचर
संकीर्ण नदीर पथे वाधिल समर
जोयारेर स्रोते आर उत्तरसमीरे
उत्ताल उद्दाम। 'तरणी भिड़ाओ तीरे'
उच्चकण्ठे बारम्बार कहे यात्रीदल।
कोथा तीर ! चारिदिके क्षिप्तोन्मत्त जल
आपनार रुद्रनृत्ये देय करतालि
लक्ष लक्ष हाते। आकाशेरे देय गालि
फेनिल आक्रोशे। एक दिके याय देखा
अतिदूर तीरप्रान्ते नील वनरेखा—
अन्य दिके लुब्ध क्षुब्ध हिंस्र वारिराशि
प्रशान्त सूर्यास्त-पाने उठिछे उच्छ्वासि

आसिल जोयार—ज्वार आया; **माझि......तरी**—देवता का स्मरण कर माँझी शीघ्र उत्तर की ओर नौका को खोल दिया; **राखाल......आछे**—राखाल ने ब्राह्मण के पास आ कर पूछा, 'देश पहुँचने को और कितने दिन हैं ?'

सूर्य.....वेड़े—सूर्य के अस्त जाते-न-जाते दो कोस आने पर हवा का वेग क्रमशः बढ़ने लगा; **रूपनारान**—रूपनारायण एक संकीर्ण नदी है। समुद्र में ज्वार आने पर यह नदी जल से भर जाती है और नौका आदि के लिये बड़ी भयंकर हो जाती है; **वालुचर**—नदी के बीच में बालू का बना हुआ स्थलभाग; **संकीर्ण......समीरे**—संकीर्ण नदी के पथ में ज्वार के स्रोत और उत्तरी हवा में युद्ध छिड़ गया; **तरणी......तीरे**—नौका किनारे लगाओ; **कोथा**—कहाँ; **देय.....हाते**—(अपने) लक्ष-लक्ष हाथों से ताली बजाता है; **आकाशेरे......आक्रोशे**—फेनिल आक्रोश से आकाश को गाली देता है; **याय देखा**—दिखाई पड़ता है; **पाने**—ओर;

उद्धत विद्रोहभरे। नाहि माने हाल,
घुरे टलमल तरी अशान्त माताल
मूढ़सम। तीव्र शीतपवनेर सने
मिशिया त्रासेर हिम नरनारीगणे
काँपाइछे थरहरि। केह हतवाक्
केह-वा क्रन्दन करे छाड़ि ऊर्ध्वडाक
डाकि आत्मजने। मैत्र शुष्क पांशुमुखे
चक्षु मुदि करे जप। जननीर बुके
राखाल लुकाये मुख काँपिछे नीरवे।
तखन विपन्न माझि डाकि कहे सवे,
'बाबारे दियेछे फाँकि तोमादेर केउ,
या मेनेछे देय नाइ, ताइ एत ढेउ—
असमये ए तुफान। शुन एइ बेला,
करह मानत रक्षा, करियो ना खेला
क्रुद्ध देवतार सने।' यार यत छिल
अर्थ वस्त्र याहा-किछु जले फेलि दिल

नाहि......हाल—पतवार नहीं मानती (पतवार से नियन्त्रण में नहीं आती); **घुरे......सम**—वेसुध मद्यप के समान टलमल करती हुई अशान्त नौका घूमती है; **तीव्र......थरहरी**—तीव्र ठंढी हवा के साथ मिल कर भय का जाड़ा पुरुष-स्त्री को थर थर कँपा रहा है; **केह हतवाक्**—कोई तो हतवाक् (मुँह से वोली नहीं निकलती) है; **केह-वा......जने**—और कोई आत्मीय स्वजनों को ऊपर की ओर पुकारता हुआ क्रन्दन करता है; **मैत्र......जप**—मैत्र का मुख सूखा हुआ पीला पड़ा है, (वे) आँखें वन्द कर जप करते हैं; **जननीर......नीरवे**—माता की छाती में मुँह छिपा कर राखाल नीरव काँप रहा है; **तखन......तुफान**—तभी विपन्न माझी सवों को पुकार कर कहता है, 'तुमलोगों में से किसीने धोखा दिया है, जो मनौती की थी उसे दिया नहीं है इसीलिये इतनी लहरें (उठ रही हैं) और यह असमय तूफ़ान आया है।'; **शुन......सने**—(अव) इस वार सुनो, मानत (मनौती) की रक्षा करो, क्रुद्ध देवता से खिलवाड़ न करो; **यार......विचार**—जिसके पास जितना कुछ धन, वस्त्र

ना करि विचार। तबु, तखनि पलके
तरीते उठिल जल दारुण झलके।
माझि कहे पुनर्वार, 'देवतार धन
के याय फिराये लये, एइ बेला शोन्।'
ब्राह्मण सहसा उठि कहिला तखनि
मोक्षदारे लक्ष्य करि, 'एइ से रमणी
देवतारे सँपि दिया आपनार छेले
चुरि करे निये याय।' 'दाओ तारे फेले'
एकवाक्ये गर्जि उठे तरासे निष्ठुर
यात्री सबे। कहे नारी, 'हे दादाठाकुर,
रक्षा करो, रक्षा करो।' दुइ दृढ़ करे
राखालेरे प्राणपणे वक्षे चापि धरे।।

भर्त्सिया गर्जिया उठि कहिला ब्राह्मण,
'आमि तोर रक्षाकर्ता! रोषे निश्चेतन
मा हये आपन पुत्र दिलि देवतारे,
शेषकाले आमि रक्षा करिब ताहारे!

था विना विचार किए जल में फेंक दिया; **तबु**–तौभी; **तखनि पलके**–उसी क्षण; **माझि......शोन्**—माँझी फिर कहता है कि, 'इस वार सुनो, देवता के धन को कौन लौटाये लिये जाता है'; **उठि**—उठ कर; **कहिला**—कहा; **तखनि**—उसी समय; **मोक्षदारे......करि**—मोक्षदा को लक्ष्य कर; **एइ......याय**—यही वह रमणी है, देवता को सौंप देने पर भी अपने पुत्र को चुरा कर लिए जा रही है; **दाओ.....फेले**—उसे फेंक दो; **तरासे निष्ठुर**—भय से निष्ठुर (बने हुए); **कहे नारी**—स्त्री ने कहा; **दुइ.......धरे**—दोनों हाथों से दृढ़तापूर्वक राखाल को प्राणपण (अपनी) छाती से दबा कर पकड़े रहती है।

भर्त्सिया—भर्त्सना करते हुए; **रोषे निश्चेतन**—क्रोध से बेसुध हो कर; **मा......ताहारे**—माँ हो कर तूने अपने पुत्र को देवता को दिया (और) अन्त में में उसकी रक्षा करूँगा;

शोध् देवतार ऋण, सत्य भङ्ग क'रे
एतगुलि प्राणी डुबावि सागरे !'

मोक्षदा कहिल, 'अति मूर्ख नारी आमि,
की वलेछि रोषवशे ओगो अन्तर्यामी,
सेइ सत्य हल ? से ये मिथ्या कतदूर
तखनि शुने कि तुमि बोझनि, ठाकुर !
शुधु कि मुखेर वाक्य शुनेछ, देवता !
शोन नि कि जननीर अन्तरेर कथा !'

वलिते वलिते यत मिलि माझि-दाँड़ि
वल करि राखालेरे निल छिँड़ि काड़ि
मार वक्ष हते। मैत्र मुदि दुइ आँखि
फिराये रहिल मुख काने हात ढाकि
दन्ते दन्त चापि वले। के ताँरे सहसा
मर्मे मर्मे आघातिल विद्युतेर कशा—
दंशिल वृश्चिकदंश। 'मासि, मासि, मासि'
विन्धिल वह्निर शला रुद्ध कर्णे आसि

शोध्......ऋण—देवता के ऋण को चुका; **सत्य......सागरे**—प्रतिज्ञा तोड़ कर इतने प्राणियों को सागर में डुबाएगी।

मोक्षदा...हल—मोक्षदा ने कहा, 'मैं अत्यन्त मूर्ख नारी हूँ; हे अन्तर्यामी, क्रोधवश जो कहा, क्या वही सत्य हुआ'; **से....ठाकुर**—वह कितना अधिक मिथ्या है उसे उस समय सुन कर क्या तुमने समझा नहीं, देवता; **शुधु......कथा**—क्या (तुमने) केवल मुख का वाक्य ही सुना है, देवता; जननी के अन्तर के शब्दों को नहीं सुना।

वलिते....हते—वोलते-न-वोलते जितने माँझी और गुन (रस्सी) खींचने वाले सभीने मिल कर माँ के हृदय से बलपूर्वक राखाल को खींच लिया; **मैत्र.....वले**—दोनों आँखें मूँद कर, कानों को हाथ से ढँक तथा जोर से दाँतों पर दाँत दवा कर मैत्र मुँह फिराए हुए रहे; **ताँरे**—उन्हें; **मर्मे**—मर्म में; **आघातिल**—आघात किया; **कशा**—चावुक; **दंशिल**—दंशन किया; **मासि**—मौसी; **विन्धिल...डाक**—निरुपाय अनाथ की अन्तिम पुकार रुद्ध कानों में आ कर वह्नि-शलाका की तरह

निरुपाय अनाथेर अन्तिमेर डाक।
चित्कारि उठिल विप्र, 'राख्! राख्! राख्!'
चकिते हेरिल चाहि मूर्छि आछे पड़े
मोक्षदा चरणे ताँर। मुहूर्तेर तरे
फुटन्त तरङ्ग-माझे मेलि आर्त चोख
'मासि' बलि फुकारिया मिलालो बालक
अनन्ततिमिरतले। शुधु क्षीण मुठि
वारेक व्याकुल वले ऊर्ध्व-पाने उठि
आकाशे आश्रय खुँजि डुबिल हताशे॥

'फिराये आनिब तोरे'—कहि ऊर्ध्वश्वासे
ब्राह्मण मुहूर्त-माझे झाँप दिल जले।
आर उठिल ना। सूर्य गेल अस्ताचले॥

२९ अक्टूबर १८९७ 'कथा ओ काहिनी'

विध गई; चकिते.....ताँर—क्षण भर के लिये देखा मोक्षदा मूच्छित हो कर उनके चरणों पर पड़ी हुई है; मुहूर्तेर......तले—मुहूर्त भर के लिये अभी उठने वाले तरङ्ग के बीच कातर आँखों को खोल ज़ोर से 'मौसी' कह बालक अनन्त अन्धकार के नीचे विलीन हो गया; शुधु.....हताशे—केवल उसकी क्षीण मुट्ठी एक बार सहसा व्याकुलता से ऊपर की ओर उठी और आकाश में आश्रय खोज हताश हो डूब गई; फिराये......जले—ऊर्ध्वश्वास से 'तुझे लौटा लाऊँगा' कह मुहूर्त भर में ब्राह्मण जल में कूद पड़ा; आर उठिल ना—और ऊपर नहीं आया; गेल—गया।

अभिसार

बोधिसत्त्वावदानकल्पलता

संन्यासी उपगुप्त
मथुरापुरीर प्राचीरेर तले एकदा छिलेन सुप्त।
नगरीर दीप निबेछे पवने,
दुयार रुद्ध पौर भवने;
निशीथेर तारा श्रावणगगने घन मेघे अवलुप्त ।।

काहार नूपुरशिञ्जित पद सहसा वाजिल वक्षे ?
संन्यासीवर चमकि जागिल,
स्वप्नजड़िमा पलके भागिल,
रूढ़ दीपेर आलोक लागिल क्षमासुन्दर चक्षे ।।

नगरीर नटी चले अभिसारे यौवनमदे मत्ता।
अङ्गे आँचल सुनीलवरन,
रुनुझुनु रबे वाजे आभरण,
संन्यासी-गाये पड़िते चरण थामिल वासवदत्ता ।।

मथुरापुरीर.......सुप्त—मथुरापुरी के प्राचीर के नीचे एक दिन सोए हुए थे; निबेछे—बुझ गया है; दुयार.......भवने—नगर के भवनों के दरवाज़े वन्द हैं; निशीथेर......अवलुप्त—अर्ध-रात्रि के तारे सावन (महीने) के आकाश में सघन मेघों से लुप्त हो गए हैं।

काहार—किसका; वाजिल—वजा; चमकि—चौंक कर; जागिल—जाग गए; पलके—क्षणभर में; भागिल—भाग गई; रूढ़......चक्षे—दीपक का तीव्र आलोक क्षमा से सुन्दर (वनी हुई) आँखों में लगा।

संन्यासी.......वासवदत्ता—संन्यासी के शरीर पर पैर पड़ते ही वासवदत्ता रुक गई।

प्रदीप धरिया हेरिल ताँहार नवीन गौरकान्ति—
सौम्य सहास तरुण बयान,
करुणाकिरणे विकच नयान,
शुभ्र ललाटे इन्दु-समान भातिछे स्निग्ध शान्ति ।।

कहिल रमणी ललित कण्ठे, नयने जड़ित लज्जा,
'क्षमा करो मोरे, कुमार किशोर,
दया कर यदि गृहे चलो मोर—
ए धरणीतल कठिन कठोर, ए नहे तोमार शय्या ।'

संन्यासी कहे करुण वचने, 'अयि लावण्यपुञ्जे,
एखनो आमार समय हय नि,
येथाय चलेछ याओ तुमि धनी—
समय येदिन आसिबे आपनि याइव तोमार कुञ्जे ।'

सहसा झंझा तड़ित्शिखाय मेलिल विपुल आस्य ।
रमणी काँपिया उठिल तरासे,
प्रलयशङ्ख बाजिल बातासे,
आकाशे वज्र घोर परिहासे हासिल अट्टहास्य ।।

धरिया—रख कर; हेरिल—देखा; ताँहार—उनकी; सहास—हास्ययुक्त; बयान—मुख; नयान—नयन; भातिछे—उद्भासित हो रही है ।

कहिल—कहा; नयने.......लज्जा—आँखों में लज्जा भरी हुई; ए नहे....... शय्या—यह तुम्हारी शय्या नहीं है ।

अयि—ओ; एखनो.......हयनि—अभी तो मेरा समय नहीं हुआ है; येथाय.......धनी—हे धनी (स्त्री), जहाँ के लिये चली हो (वहाँ) तुम जाओ; समय.....कुञ्जे—जिस दिन समय आएगा (स्वयं) अपने ही तुम्हारे कुञ्ज में जाऊँगा ।

सहसा.......आस्य—सहसा झंझा ने तड़ित्शिखा (बिजली की कौंध) में (बड़ा-सा) मुख खोला; आस्य—मुख; रमणी.......तरासे—रमणी भय से काँप उठी; बातासे—हवा में ।

वर्ष तखनो हय नाइ शेष, एसेछे चैत्रसन्ध्या ।
बातास हयेछे उतला आकुल,
पथतरुशाखे धरेछे मुकुल,
राजार कानने फुटेछे बकुल पारुल रजनीगन्धा ।

अति दूर हते आसिछे पवने बाँशिर मदिर मन्द्र ।
जनहीन पुरी, पुरवासी सबे
गेछे मधुवने फुल-उत्सवे,
शून्य नगरी निरखि नीरवे हासिछे पूर्णचन्द्र ।।

निर्जन पथे ज्योत्स्ना-आलोते संन्यासी एका यात्री ।
माथार उपरे तरुवीथिकार
कोकिल कुहरि उठे वारवार,
एतदिन परे एसेछे कि ताँर आजि अभिसाररात्रि ? ।

नगर छाड़ाये गेलेन दण्डी वाहिर-प्राचीर-प्रान्ते ।
दाँड़ालेन आसि परिखार पारे—
आम्रवनेर छायार आँधारे
के ओइ रमणी प'ड़े एक धारे ताँहार चरणोपान्ते ? ।

वर्ष.......सन्ध्या—अभी वर्ष भी शेष नहीं हुआ था, चैत्र की सन्ध्या थी; **बातास.......आकुल**—पवन आकुल चंचल हुआ है; **धरेछे मुकुल**—मञ्जरी आ गई है; **राजार......फुटेछे**—राजा के बाग में खिले हुए हैं; **पारुल**—एक सुगन्धि वाला फूल; **अति.......मन्द्र**—बहुत दूर से हवा में बाँसुरी की मदिर-ध्वनि आ रही है; **पुरवासी......उत्सवे**—नगर के वासी सभी मधुवन में फूलों के उत्सव में गए हैं; **निरखि**—देख कर; **हासिछे**—हँस रहा है ।

माथार उपरे—सिर के ऊपर; **एतदिन......रात्रि**—इतने दिन के बाद क्या आज उनकी अभिसार-रात्रि आई है ।

नगर...प्रान्ते—नगर छोड़ संन्यासी बाहर प्राचीर के पास गए; **दाँड़ालेन...पारे**—नगर को घेरने वाली खाई के पास आ कर खड़े हुए; **आम्रवनेर...पान्ते**—आम्रवन की छाया के अन्धकार में एक ओर उनके चरणों के पास कौन वह रमणी पड़ी हुई है ।

निदारुण रोगे मारीगुटिकाय भरे गेछे तार अङ्ग ।
रोगमसी-ढाला काली तनु तार
लयें प्रजागणे पुरपरिखार
वाहिरे फेलेछे करि परिहार विषाक्त तार सङ्ग ।।

संन्यासी वसि आड़ष्ट शिर तुलि निल निज अंके ।
ढालि दिल जल शुष्क अधरे,
मन्त्र पड़िया दिल शिर-'परे,
लेपि दिल देह आपनार करे शीत चन्दनपंके ।।

झरिछे मुकुल, कूजिछे कोकिल, यामिनी जोछनामत्ता ।
'के एसेछ तुमि ओगो दयामय'
शुधाइल नारी, संन्यासी कय,—
'आजि रजनीते हयेछे समय, एसेछि, वासवदत्ता !

५ अक्टूबर १८९९ 'कथा ओ काहिनी'

निदारुण......अङ्ग—अत्यन्त कठिन रोग के दानों से उसकी सारी देह भर गई है; रोग......तार—रोग की कालिमा से उसका शरीर काला हो गया है; लये......सङ्ग—लोगों ने उसके विपाक्त सङ्ग से वचने के लिये नगर की परिखा (खाई) के वाहर उसे फेंक दिया है।

संन्यासी.....अंके—बैठ कर संन्यासी ने (उसका) अवश सिर अपनी गोद में रख लिया; ढालि दिल—ढाल दिया; मन्त्र......परे—सिर पर मन्त्र पढ़ दिया; लेपि दिल.......पंके—अपने हाथों से शीतल चंदन उसकी देह में लेप दिया।

झरिछे मुकुल–मञ्जरियां झड़ रही हैं; जोछनामत्ता–ज्योत्स्ना (चाँदनी) से मत्त; के.....दयामय–तुम कौन आए हो, हे दयामय; शुधाइल–पूछा; कय–कहा; आजि........वासवदत्ता—आज रात समय हुआ है, (मैं) आया हूँ, वासवदत्ता।

कर्णकुन्तीसंवाद

कर्ण। पुण्य जाह्नवीर तीरे सन्ध्यासवितार
वन्दनाय आछि रत। कर्ण नाम यार,
अधिरथसूतपुत्र, राधागर्भजात
सेइ आमि—कहो मोरे तुमि के गो मातः।

कुन्ती। वत्स, तोर जीवनेर प्रथम प्रभाते
परिचय करायेछि तोरे विश्व-साथे,
सेइ आमि आसियाछि छाड़ि सर्व लाज
तोरे दिते आपनार परिचय आज।

कर्ण। देवी, तव नतनेत्र-किरण-सम्पाते
चित्त विगलित मोर सूर्यकरघाते
शैलतुषारेर मतो। तव कण्ठस्वर
येन पूर्वजन्म हते पशि कर्ण-'पर
जागाइछे अपूर्व वेदना। कहो मोरे,
जन्म मोर बाँधा आछे की रहस्य-डोरे
तोमा-साथे हे अपरिचिता।

कुन्ती। धैर्य धर्
ओरे वत्स, क्षणकाल। देव दिवाकर

पुण्य—पवित्र; **सन्ध्या.....रत**—सन्ध्या-सूर्य की वन्दना में रत हूँ; **यार**—जिसका; **सेइ आमि**—वही मैं हूँ; **कहो.....मातः**—मुझसे कहो हे मातः, तुम कौन हो।

तोर—तुम्हारे; **परिचय........साथे**—विश्व के साथ तुम्हारा परिचय कराया है; **सेइ......आज**—वही मैं सभी लज्जा छोड़ कर तुम्हें अपना परिचय देने आई हूँ।

तव.....वेदना—तुम्हारा कण्ठस्वर जैसे पूर्वजन्म से कानों में प्रवेश कर अपूर्व व्यथा जगा रहा है; **कहो......अपरिचिता**—हे अपरिचिता, मुझसे कहो, तुम्हारे साथ मेरा जन्म किस रहस्य की डोरी में बँधा हुआ है।

धर्—धरो;

आगे याक अस्ताचले। सन्ध्यार तिमिर
आसुक निविड़ हये— कहि तोरे वीर,
कुन्ती आमि।

कर्ण। तुमि कुन्ती! अर्जुनजननी!

कुन्ती। अर्जुनजननी वटे, ताइ मने गणि
द्वेष करियो ना, वत्स। आजो मने पड़े
अस्त्रपरीक्षार दिन हस्तिनानगरे।
तुमि धीरे प्रवेशिले तरुण कुमार
रङ्गस्थले, नक्षत्रखचित पूर्वाशार
प्रान्तदेशे नवोदित अरुणेर मतो।
यवनिका-अन्तराले नारी छिल यत
तार मध्ये वाक्यहीना के से अभागिनी
अतृप्त स्नेह-क्षुधार सहस्र नागिनी
जागाये जर्जर वक्षे; काहार नयन
तोमार सर्वाङ्ग दिल आशिसचुम्बन?
अर्जुनजननी से ये। यबे कृप आसि
तोमारे पितार नाम शुधालेन हासि,
कहिलेन, 'राजकुले जन्म नहे यार
अर्जुनेर साथे युद्धे नाहि अधिकार'—

आगे याक—पहले चले जाँय; सन्ध्यार.....हये—सन्ध्या का अन्धकार घना हो ले; कहि तोरे वीर—हे वीर, तुमसे कहती हूँ।

वटे—सचमुच में; ताइ......ना—उसे मन में रख द्वेष न करना; आजो..... पड़े—आज भी याद आता है; प्रवेशिले—प्रवेश किया; पूर्वाशार—पूर्व दिशा के; मतो—समान; छिल यत—जितनी थीं; तार मध्ये—उनके बीच; के से—कौन वह; काहार—किसके; तोमार—तुम्हारे; अर्जुनजननी से ये—वह अर्जुनजननी थी; यबे.......हासि—जब कृपाचार्य ने आ कर हँसते हुए तुम्हारे पिता का नाम पूछा; कहिलेन—बोले; नहे—नहीं है; यार—जिसका;

आरक्त आनत मुखे ना रहिल वाणी,
दाँड़ाये रहिले, सेइ लज्जा-आभाखानि
दहिल याहार वक्ष अग्निसम तेजे
के से अभागिनी ? अर्जुनजननी से ये।
पुत्र दुर्योधन धन्य, तखनि तोमारे
अङ्गराज्ये कैल अभिषेक। धन्य तारे।
मोर दुइ नेत्र हते अश्रुवारिराशि
उद्देशे तोमारि शिरे उच्छ्वसिल आसि
अभिषेक-साथे। हेनकाले करि पथ
रङ्ग-माझे पशिलेन सूत अधिरथ
आनन्दविह्वल। तखनि से राजसाजे
चारि दिके कुतूहली जनतार माझे
अभिषेकसिक्त शिर लुटाये चरणे
सूतवृद्धे प्रणमिले पितृसम्भाषणे।
क्रूर हास्ये पाण्डवेर वन्धुगण सवे
धिक्कारिल; सेइक्षणे परम गरवे
वीर वलि ये तोमारे ओगो वीरमणि,
आशिसिल, आमि सेइ अर्जुनजननी।

ना रहिल—नहीं रही; **दाँड़ाये रहिले**—खड़े रहे; **सेइ....अभागिनी**—उस लज्जा की आभा मात्र ने जिसकी छाती को अग्नि के समान जलाया वह अभागिनी कौन थी; **तखनि तोमारे**—उसी समय तुम्हें; **कैल**—किया; **धन्य तारे**—वह धन्य है; **मोर......हते**—मेरी दोनों आँखों से; **उद्देशे तोमारि शिरे**—तुम्हारे सिर को लक्ष्य कर; **आसि**—आ कर; **हेनकाले**—ऐसे समय; **करि पथ**—रास्ता वना कर; **रङ्ग-माझे**—रङ्गभूमि में; **पशिलेन**—प्रवेश किया; **तखनि.....सम्भाषणे**—उसी समय राजसज्जा के साथ चारों ओर कुतूहल से भरी हुई भीड़ के वीच अभिषेक-सिक्त सिर वृद्ध सूत (सारथी) को पिता कह कर चरणों में लोट कर प्रणाम किया; **धिक्कारिल**—धिक्कारा; **सेइक्षणे.......जननी**—उसी क्षण, हे वीर-मणि, अत्यन्त गर्व के साथ वीर कह कर जिसने तुम्हें आशीर्वाद दिया, मैं वही अर्जुनजननी हूँ।

कर्ण। प्रणमि तोमारे आर्ये। राजमाता तुमि,
केन हेथा एकाकिनी। ए ये रणभूमि,
आमि कुरुसेनापति।

कुन्ती। पुत्र, भिक्षा आछे—
विफल ना फिरि येन।

कर्ण। भिक्षा, मोर काछे!
आपन पौरुष छाड़ा, धर्म छाड़ा, आर
याहा आज्ञा कर दिब चरणे तोमार।

कुन्ती। एसेछि तोमारे निते।

कर्ण। कोथा लबे मोरे?

कुन्ती। तृषित वक्षेर माझे, लब मातृक्रोड़े।

कर्ण। पञ्चपुत्रे धन्य तुमि, तुमि भाग्यवती—
आमि कुलशीलहीन, क्षुद्र नरपति,
मोरे कोथा दिबे स्थान।

कुन्ती। सर्व-उच्चभागे,
तोमारे बसाब मोर सर्वपुत्र-आगे—
ज्येष्ठ पुत्र तुमि।

कर्ण। कोन् अधिकारमदे
प्रवेश करिब सेथा? साम्राज्यसम्पदे

प्रणमि तोमारे—तुम्हें प्रणाम करता हूँ; **केन हेथा**—क्यों यहां; **ए....भूमि**—यह तो रणभूमि है; **आछे**—है।

भिक्षा......येन—भिक्षा चाहती हूँ, जिसमें विफल न लौटूं।

मोर काछे—मेरे पास; **छाड़ा**—छोड़ कर; **आर याहा**—और जो; **दिब**—दूंगा।

एसेछि......निते—(मैं) तुम्हें लेने आयी हूँ।

कोथा....मोरे—कहाँ मुझे लोगी।

तृषित....क्रोड़े—प्यासे हृदय के भीतर, माँ की गोद में लूंगी।

मोरे......स्थान—मुझे कहाँ स्थान दोगी।

तोमारे......आगे—अपने सभी पुत्रों के आगे तुम्हें बैठाऊँगी।

कोन्—किस; **करिब**—करूँगा; **सेथा**—वहाँ; **साम्राज्य......केमने**—जो साम्राज्य से वञ्चित हो गए हैं उनके मातृस्नेह के धन के पूर्ण

वञ्चित हयेछे यारा, मातृस्नेहधने
ताहादेर पूर्ण अंश खण्डिव केमने
कहो मोरे। द्यूतपणे ना हय विक्रय,
वाहुबले नाहि हारे मातार हृदय—
से ये विधातार दान।

कुन्ती। पुत्र मोर ओरे,
विधातार अधिकार लये एइ क्रोड़े
एसेछिलि एकदिन—सेइ अधिकारे
आय फिरे सगौरवे, आय निर्विचारे,
सकल भ्रातार माझे मातृ-अंके मम
लहो आपनार स्थान।

कर्ण। शुनि स्वप्नसम
हे देवी, तोमार वाणी। हेरो, अन्धकार
व्यापियाछे दिग्विदिके, लुप्त चारि धार—
शब्दहीना भागीरथी। गेछ मोरे लये
कोन् मायाच्छन्न लोके, विस्मृत आलये,
चेतनाप्रत्युषे! पुरातन सत्य-सम
तव वाणी स्पर्शितेछे मुग्धचित्त मम।
अस्फुट शैशवकाल येन रे आमार,

अंश को कैसे खण्ड करूँगा; **द्यूतपणे......विक्रय**—जुए की वाज़ी पर विक्रय नहीं होता; **वाहु.......हृदय**—वाहुवल से माता का हृदय नहीं हारता; **से.....दान**—वह तो विधाता का दान है।

विधातार......दिन—विधाता का अधिकार ले कर एक दिन इस गोद में आया था; **सेइ.....स्थान**—उसी अधिकार से गौरव के साथ विना सोचे-विचारे लौट आओ, सभी भाइयों के बीच अपनी माँ की गोद में अपना स्थान लो।

शुनि—सुन कर; **हेरो**—देखो; **अन्धकार.....दिग्विदिके**—अन्धकार सभी ओर व्याप्त हो गया है; **गेछ.....लये**—मुझे ले गई हो; **कोन्**—किस; **प्रत्युषे**—प्रभात काल में; **स्पर्शितेछे**—स्पर्श कर रहा है; **अस्फुट.....आमार**—जैसे मेरा अस्फुट शैशव काल हो;

येन मोर जननीर गर्भेर आँधार
आमारे घेरिछे आजि। राजमातः अयि,
सत्य होक स्वप्न होक, एसो स्नेहमयी,
तोमार दक्षिणहस्त ललाटे चिबुके
राखो क्षणकाल। शुनियाछि लोकमुखे,
जननीर परित्यक्त आमि। कतबार
हेरेछि निशीथस्वप्ने, जननी आमार
एसेछेन धीरे धीरे देखिते आमाय;
काँदिया कहेछि ताँरे कातर व्यथाय,
'जननी, गुण्ठन खोलो, देखि तव मुख।'
अमनि मिलाय मूर्ति तृषार्त उत्सुक
स्वपनेरे छिन्न करि। सेइ स्वप्न आजि
एसेछे कि पाण्डवजननी-रूपे साजि
सन्ध्याकाले, रणक्षेत्रे, भागीरथीतीरे!
हेरो देवी, परपारे पाण्डवशिबिरे
ज्वलियाछे दीपालोक, एपारे अदूरे
कौरवेर मन्दुराय लक्ष अश्वखुरे
खर शब्द उठिछे वाजिया। कालि प्राते
आरम्भ हइबे महारण। आज राते

येन......आजि—जैसे मेरी जननी के गर्भ का अंधकार मुझे आज घेर रहा है; राजमातः........क्षणकाल—ओ राजमाता, सत्य हो या स्वप्न हो, ओ स्नेहमयी, आओ अपना दक्षिण हस्त क्षणभर के लिये मेरे ललाट और चिबुक पर रखो; शुनियाछि......आमि—लोगों के मुँह से सुना है कि मैं जननी द्वारा परित्यक्त हूँ; कतबार—कितनी बार; हेरेछि—देखा है; जननी ......आमाय—मेरी माँ मुझे देखने धीरे धीरे आई हैं; काँदिया.....मुख—रो कर कातर व्यथा से उनसे कहा है, 'माँ, अवगुण्ठन खोलो, तुम्हारा मुख देखूँ'; अमनि ......करि—वैसे ही तृषार्त उत्सुक स्वप्न को छिन्न-भिन्न करती हुई मूर्ति विलीन हो जाती है; सेइ.....साजि—वही स्वप्न क्या पाण्डवजननी का रूप धारण कर आया है; हेरो—देखो; ज्वलियाछे—जल उठा है; एपारे—इस पार; मन्दुराय—अश्वशाला में; उठिछे वाजिया—बज रहा है; कालि—कल; हइबे—होगा;

अर्जुनजननीकण्ठे केन शुनिलाम
आमार मातार स्नेहस्वर ! मोर नाम
ताँर मुखे केन हेन मधुर संगीते
उठिल वाजिया—चित्त मोर आचम्बिते
पञ्चपाण्डवेर पाने भाइ वले धाय !

कुन्ती । तबे चले आय वत्स, तबे चले आय ।

कर्ण । याव मातः, चले याव, किछु शुधाव ना—
ना करि संशय किछु, ना करि भावना ।
देवी, तुमि मोर माता । तोमार आह्वाने
अन्तरात्मा जागियाछे । नाहि बाजे काने
युद्धभेरि जयशङ्ख । मिथ्या मने हय
रणहिंसा, वीरख्याति, जयपराजय ।
कोथा याव, लये चलो ।

कुन्ती । ओइ परपारे
येथा ज्वलितेछे दीप स्तब्ध स्कन्धावारे
पाण्डुर वालुकातटे ।

कर्ण । होथा मातृहारा
मा पाइवे चिरदिन ! होथा ध्रुवतारा

केन......स्वर—क्यों अपनी माता का स्नेहस्वर सुना; **मोर......वाजिया**—मेरा नाम उनके मुँह में क्यों इतने मधुर संगीत में वज उठा; **चित्त....धाय**—मेरा चित्त हठात् पञ्चपाण्डवों की ओर भाई कह दौड़ पड़ा है ।

याव—जाऊँगा; **चले याव**—चला जाऊँगा; **किछु.....ना**—कुछ पूछूंगा नहीं; **तोमार......जागियाछे**—तुम्हारे आह्वान से अन्तरात्मा जग पड़ा है; **नाहि.....शंख**—कानों में युद्ध-भेरी, जय-शङ्ख नहीं बजते (नहीं सुनाई पड़ते); **मने हय**—मन में होता है, लगता है; **कोथा.......चलो**—कहाँ जाऊँ, ले चलो ।

ओइ परपारे—वहाँ दूसरे पार; **येथा**—जहाँ; **ज्वलितेछे**—जल रहा है; **पाण्डुर**—पीले रंग के, पाण्डु वर्ण के ।

होथा—वहाँ; **पाइबे**—पाएगा;

चिररात्रि रबे जागि सुन्दर उदार
तोमार नयने ! देवी, कहो आरबार
आमि पुत्र तव ।
कुन्ती । पुत्र मोर !
कर्ण । केन तबे
आमारे फेलिया दिले दूरे अगौरवे
कुलशीलमानहीन मातृनेत्रहीन
अन्ध ए अज्ञात विश्वे । केन चिरदिन
भासाइया दिले मोरे अवज्ञार स्रोते—
केन दिले निर्वासन भ्रातृकुल हते ?
राखिले विच्छिन्न करि अर्जुने आमारे,
ताइ शिशुकाल हते टानिछे दोँहारे
निगूढ़ अदृश्य पाश हिंसार आकारे
दुर्निवार आकर्षणे । मातः, निरुत्तर ?
लज्जा तव भेद करि अन्धकार स्तर
परश करिछे मोरे सर्वाङ्ग नीरवे,
मुदिया दितेछे चक्षु ।—थाक् थाक् तबे ।
कहियो ना, केन तुमि त्यजिले आमारे ।
विधिर प्रथम दान ए विश्वसंसारे

रबे—रहेगा; जागि—जागता; तोमार—तुम्हारे; देवी.....तव—देवी, फिर कहो मैं तुम्हारा पुत्र हूँ।

केन......विश्वे—तब क्यों इस अज्ञात विश्व में कुलशीलमानहीन (तथा) मातृनेत्रहीन अन्ध (जैसा) अनादरपूर्वक मुझे दूर फेंक दिया; केन......हते—क्यों हमेशा के लिये मुझे अवज्ञा के स्रोत में वहा दिया, क्यों भ्रातृकुल से निर्वासित किया; राखिले......आमारे—मुझे और अर्जुन को विच्छिन्न कर रखा; ताइ.....आकर्षणे—इसीलिये बचपन से निगूढ़ अदृश्य बन्धन ईर्ष्या के रूप में दोनों को दुर्निवार (जिसको हटाया न जा सके) आकर्षण से खींच रहा है; परश......मोरे—मुझे स्पर्श कर रहा है; मुदिया दितेछे—बन्द कर देता है; थाक्......तबे—तब रहने दो, रहने दो; कहियो.....आमारे—मत कहना कि क्यों तुमने मुझे त्याग दिया; विधिर—ब्रह्मा का; ए—इस;

मातृस्नेह, केन सेइ देवतार धन
आपन सन्तान हते करिले हरण,
से कथार दियो ना उत्तर। कहो मोरे,
आजि केन फिराइते आसियाछ क्रोड़े।

कुन्ती। हे वत्स, भर्त्सना तोर शत वज्रसम
विदीर्ण करिया दिक् ए हृदय मम
शतखण्ड करि। त्याग करेछिनु तोरे,
सेइ अभिशापे पञ्चपुत्र वक्षे क'रे
तबु मोर चित्त पुत्रहीन; तबु हाय
तोरि लागि विश्व-माझे वाहु मोर धाय,
खुँजिया बेड़ाय तोरे। वञ्चित ये छेले
तारि तरे चित्त मोर दीप्त दीप ज्वेले
आपनारे दग्ध करि करिछे आरति
विश्वदेवतार। आमि आजि भाग्यवती,
पेयेछि तोमार देखा। यबे मुखे तोर
एकटि फुटे नि वाणी, तखन कठोर
अपराध करियाछि—वत्स, सेइ मुखे
क्षमा कर् कुमाताय। सेइ क्षमा बुके

केन.....उत्तर—क्यों उस देवता के धन (मातृस्नेह) का अपनी सन्तान से हरण किया, इस वात का जवाव न देना; **आजि......क्रोड़े**—आज क्यों (मुझे) गोद में लौटाने आई हो।

तोर—तुम्हारा; **विदीर्ण......करि**—मेरे इस हृदय के सौ टुकड़े कर विदीर्ण कर दे; **त्याग......तोरे**—तुम्हारा त्याग किया था; **सेइ......पुत्रहीन**—उसी अभिशाप से पाँच पुत्रों को हृदय में लगा रखने पर भी मेरा चित्त पुत्रहीन जैसा है; **तबु.....तोरे**—तौभी तुम्हारे लिये तुम्हें खोजते हुए संसार में मेरी बाँहें दौड़ती हैं; **वञ्चित......देवतार**—जो वञ्चित पुत्र है उसके लिये मेरा चित्त अपने-को उज्ज्वल दीपक की तरह जलाते हुए विश्व-देवता की आरती करता है; **पेयेछि.......देखा**—तुम्हारे दर्शन हो गए हैं; **यबे......करियाछि**—जब तुम्हारे मुंह से वाणी ही नहीं फूटी थी उस समय मैंने भयंकर अपराध किया है; **वत्स...... कुमाताय**—पुत्र, उसी मुख से कुमाता को क्षमा करो; **सेइ......निर्मल**—वही

भर्त्सनार चेये तेजे ज्वालुक अनल—
पाप दग्ध क'रे मोरे करुक निर्मल।

कर्ण। मातः, देहो पदधूलि, देहो पदधूलि,
लहो अश्रु मोर।

कुन्ती। तोरे लव वक्षे तुलि
से सुख-आशाय पुत्र, आसि नाइ द्वारे।
फिराते एसेछि तोरे निज अधिकारे।
सूतपुत्र नह तुमि, राजार सन्तान—
दूर करि दिया वत्स, सर्व अपमान
एसो चलि येथा आछे तव पञ्चभ्राता।

कर्ण। मातः, सूतपुत्र आमि, राधा मोर माता,
तार चेये नाहि मोर अधिक गौरव।
पाण्डव पाण्डव थाक्, कौरव कौरव—
ईर्षा नाहि करि कारे।

कुन्ती। राज्य आपनार
वाहुवले करि लहो हे वत्स, उद्धार।
दुलाबेन धवल व्यजन युधिष्ठिर,
भीम धरिवेन छत्र, धनञ्जय वीर

क्षमा हृदय में भर्त्सना से भी अधिक तेज अनल जलाये और मेरे पापों को दग्ध कर मुझे निर्मल करे।

देहो—दो; **लहो......मोर**—मेरे अश्रु लो।

तोरे......द्वारे—पुत्र, तुम्हें छाती से लगा कर सुख पाऊँगी इस आशा से (तुम्हारे) द्वार नहीं आई; **फिराते......अधिकारे**—तुम्हारा जो अपना स्वत्व है (वहीं) तुम्हें लौटा ले जाने आई हूँ; **नह तुमि**—तुम नहीं हो; **दूर.....पञ्चभ्राता**—हे वत्स, सभी लांछना को दूर कर आओ चलें जहाँ तुम्हारे पाँचों भाई हैं।

तार......गौरव—उससे अधिक मेरा गौरव नहीं है; **पाण्डव.......कारे**—पाण्डव, पाण्डव रहें (और) कौरव कौरव, (मैं) किसी से ईर्ष्या नहीं करता।

राज्य.....उद्धार—हे वत्स, अपने वाहुवल से अपने राज्य का उद्धार कर लो; **दुलावेन**—डुलायेंगे; **धरिवेन**—पकड़ेंगे;

सारथि हबेन रथे, धौम्य पुरोहित
गाहिबेन वेदमन्त्र। तुमि शत्रुजित्
अखण्ड प्रतापे रबे बान्धवेर सने
निःसपत्न राज्य-माझे रत्नसिंहासने।

कर्ण। सिंहासन! ये फिरालो मातृस्नेहपाश
ताहारे दितेछ मातः, राज्येर आश्वास!
एकदिन ये सम्पदे करेछ वञ्चित
से आर फिराये देओया तव साध्यातीत।
माता मोर, भ्राता मोर, मोर राजकुल
एक मुहूर्तेइ मातः, करेछ निर्मूल
मोर जन्मक्षणे। सूतजननीरे छलि
आज यदि राजजननीरे माता वलि,
कुरुपति काछे वद्ध आछि ये वन्धने
छिन्न करे धाइ यदि राजसिंहासने—
तबे धिक् मोरे।

कुन्ती। वीर तुमि, पुत्र मोर,
धन्य तुमि। हाय धर्म, एकि सुकठोर

हबेन—होंगे; **गाहिवेन**—गायेंगे; **तुमि.....सने**—शत्रुओं को जय करने वाले तुम, भाइयों के साथ अखण्ड प्रताप वाले रहोगे; **निःसपत्न**—विना शत्रु के; **राज्य-माझे**—राज्य में।

ये........आश्वास—जिसने मातृस्नेह के वंधन को लौटाया (अमान्य किया) उसे मातः, राज्य की दिलासा दे रही हो; **एकदिन....साध्यातीत**—एक दिन जिस सम्पद से (तुमने) वञ्चित किया है उसे अव लौटा देना तुम्हारे लिये साध्यातीत है; **माता.....क्षणे**—मेरी माता, मेरे भ्राता, मेरे राजकुल को मातः, मेरे जन्मक्षण में एक ही मुहूर्त में (तुमने) निर्मूल कर दिया; **छलि**—छल कर; **राजजननीरे**—राजजननी को; **वलि**—वोलें, कहें; **कुरुपति.....मोरे**—कुरुपति (दुर्योधन) के पास जिस वन्धन में (मैं) वँधा हुआ हूँ उसे तोड़ कर यदि राजसिंहासन (की ओर) दौड़ूँ तो मुझे धिक्कार है।

हाय धर्म.....तव—हाय धर्म, यह कैसा कठोर तुम्हारा दण्ड है;

दण्ड तव! सेइदिन के जानित, हाय,
त्यजिलाम ये शिशुरे क्षुद्र असहाय
से कखन बलवीर्य लभि कोथा हते
फिरे आसे एकदिन अन्धकार पथे—
आपनार जननीर कोलेर सन्ताने
आपन निर्मम हस्ते अस्त्र आसि हाने!
एकि अभिशाप!

कर्ण। मातः, करियोना भय।
कहिलाम, पाण्डवेर हइबे विजय।
आजि एइ रजनीर तिमिरफलके
प्रत्यक्ष करिनु पाठ नक्षत्र-आलोके
घोर युद्धफल। एइ शान्त स्तब्धक्षणे
अनन्त आकाश हते पशितेछे मने
जयहीन चेष्टार संगीत, आशाहीन
कर्मेर उद्यम—हेरितेछि शान्तिमय
शून्य परिणाम। ये पक्षेर पराजय
से पक्ष त्यजिते मोरे कोरो ना आह्वान।
जयी होक, राजा होक पाण्डवसन्तान—

सेइदिन—उस दिन; **के जानित**—कौन जानता था; **त्यजिलाम......असहाय**—जिस छोटे, असहाय शिशु को (मैंने) त्याग दिया; **से......लभि**—वह कब बलवीर्य प्राप्त कर; **कोथा हते**—कहाँ से; **फिरे आसे**—लौट आ कर; **आपनार.......हाने**—अपनी जननी की गोद की सन्तान को अपने निर्मम हाथों से अस्त्र से मारे; **एकि अभिशाप**—यह कैसा अभिशाप है।

करियो......भय—भय न करना; **कहिलाम**—कहता हूँ; **पाण्डवेर..... विजय**—पाण्डवों की विजय होगी; **आजि......आलोके**—आज इस रात्रि के तिमिर-फलक पर नक्षत्रों के आलोक में मैंने प्रत्यक्ष पढ़ा; **घोर**—भयंकर; **एइ**—इस; **पशितेछे मने**—मन में प्रवेश कर रहा है; **हेरितेछि**—देख रहा हूँ; **ये पक्षेर ......आह्वान**—जिस पक्ष की पराजय (होगी) उस पक्ष को छोड़ने के लिये मुझसे न कहो; **जयी होक**—जयी हों;

आमि रब निष्फलेर हताशेर दले।
जन्मरात्रे फेले गेछ मोरे धरातले
नामहीन, गृहहीन। आजिओ तेमनि
आमारे निर्ममचित्ते तेयागो जननी,
दीप्तिहीन कीर्तिहीन पराभव-'परे।
शुधु एइ आशीर्वाद दिये याओ मोरे,
जयलोभे यशोलोभे राज्यलोभे, अयि,
वीरेर सद्गति हते भ्रष्ट नाहि हइ।।

२६ फरवरी १९०० 'काहिनी'

गान्धारीर आवेदन

दुर्योधन। प्रणमि चरणे, तात।
धृतराष्ट्र। ओरे दुराशय,
अभीष्ट हयेछे सिद्ध ?
दुर्योधन। लभियाछि जय।
धृतराष्ट्र। एखन हयेछ सुखी ?
दुर्योधन। हयेछि विजयी।
धृतराष्ट्र। अखण्ड राजत्व जिनि सुख तोर कइ,
हे दुर्मति ?

आमि......दले—मैं निष्फल निराश लोगों के दल में रहूँगा; **जन्मरात्रे...... गृहहीन**—जन्म की रात्रि में (तुमने) पृथ्वी पर (मुझे) नामहीन गृहहीन फेंक दिया है; **आजिओ.....परे**—जननी, आज भी उसी तरह निर्मम चित्त से दीप्तिहीन, कीर्तिहीन पराजय के ऊपर मुझे त्याग दो; **शुधु.....मोरे**—केवल यही आशीर्वाद मुझे देती जाओ; **जयलोभे.....हइ**—ओ (जननी), जय के लोभ से, यश के लोभ से, राज्य के लोभ से मैं वीरों के सत्पथ से भ्रष्ट न होऊँ।

हयेछे—हो गया; **लभियाछि**—प्राप्त की है; **एखन**—अब; **हयेछ**—हुए; **हयेछि**—हुआ हूँ; **जिनि**—जीत कर; **कइ**—कहाँ (है)।

दुर्योधन। सुख चाहि नाइ, महाराज—
जय! जय चेयेछिनु, जयी आमि आज।
क्षुद्र सुखे भरे नाको क्षत्रियेर क्षुधा,
कुरुपति! दीप्तज्वाला अग्निढाला सुधा
जयरस, ईर्षासिन्धुमन्थनसञ्जात,
सद्य करियाछि पान—सुखी नहि तात,
अद्य आमि जयी। पितः, सुखे छिनु यबे
एकत्रे आछिनु बद्ध पाण्डवे कौरवे
कलंक येमन थाके शशांकेर बुके,
कर्महीन गर्वहीन दीप्तिहीन सुखे।
सुखे छिनु, पाण्डवेर गाण्डीवटंकारे
शंकाकुल शत्रुदल आसित ना द्वारे;
सुखे छिनु, पाण्डवेरा जयदृप्त करे
धरित्री दोहन करि भ्रातृप्रीतिभरे
दित अंश तार—नित्यनव भोगसुखे
आछिनु निश्चिन्तचित्ते अनन्त कौतुके।
सुखे छिनु, पाण्डवेर जयध्वनि यबे
हानित कौरवकर्ण प्रतिध्वनिरवे;
पाण्डवेर यशोविम्व-प्रतिविम्ब आसि
उज्ज्वल अंगुलि दिया दित परकाशि

चाहि नाइ—नहीं चाहा था; **चेयेछिनु**—चाहा था; **क्षुद्र......क्षुधा**—क्षुद्र सुख से क्षत्रिय की क्षुधा नहीं मिटती; **करियाछि**—किया है; **सुखे छिनु**—सुखी था; **यबे**—जब; **एकत्रे......बद्ध**—एकत्र बद्ध था; **येमन थाके**—जैसे रहता है; **बुके**—हृदय में; **आसित ना**—नहीं आता; **पाण्डवेरा......तार**—पाण्डवगण जयदृप्त हाथों से पृथ्वी का दोहन कर (राज्य जीत कर) भाई के प्रेम से भर उसका अंश देते; **आछिनु**—था; **सुखे छिनु**—सुखी था; **यबे**—जब; **हानित**—आघात करती; **आसि**—आ कर; **अंगुलि दिया**—उंगली द्वारा; **दित परकाशि**—प्रकाशित कर देता;

मलिन कौरवकक्ष। सुखे छिनु पितः,
आपनार सर्वतेज करि निर्वापित
पाण्डवगौरवतले स्निग्धशान्तरूपे,
हेमन्तेर भेक यथा जड़त्वेर कूपे।
आजि पाण्डुपुत्रगणे पराभव वहि
वने याय चलि—आज आमि सुखी नहि,
आज आमि जयी।

धृतराष्ट्र। धिक् तोर भ्रातृद्रोह।
पाण्डवेर कौरवेर एक पितामह,
से कि भुले गेलि?

दुर्योधन। भुलिते पारि नि से ये—
एक पितामह तबु धने माने तेजे
एक नहि। यदि ह'त दूरवर्ती पर,
नाहि छिल क्षोभ। शर्वरीर शशधर
मध्याह्नेर तपनेरे द्वेष नाहि करे—
किन्तु प्राते एक पूर्व-उदयशिखरे
दुइ भ्रातृ-सूर्यलोक किछुते ना धरे।
आज द्वन्द्व घुचियाछे, आजि आमि जयी,
आजि आमि एका।

धृतराष्ट्र। क्षुद्र ईर्षा! विषमयी
भुजङ्गिनी!

आपनार—अपना; **निर्वापित**—बुझा कर, दूर कर; **भेख**—मेढ़क; **वहि**—वहन कर; **याय**—जाय; **से.....गेलि**—यह क्या भूल गया।

भुलिते......ये—उसे भूल नहीं सका हूँ; **तबु**—तौभी; **एक नहि**—एक नहीं हैं; **यदि.....क्षोभ**—अगर दूर का कोई अन्य होता तो दुःख नहीं होता; **तपनेरे ......करे**—सूर्य से द्वेष नहीं करता; **दुइ**—दो; **किछुते ना धरे**—किसी तरह स्थान नहीं हो पाता; **घुचियाछे**—मिट गया है; **एका**—अकेला।

दुर्योधन। क्षुद्र नहे, ईर्षा सुमहती।
ईर्षा बृहतेर धर्म। दुइ वनस्पति
मध्ये राखे व्यवधान, लक्ष लक्ष तृण
एकत्रे मिलिया थाके वक्षे वक्षे लीन।
नक्षत्र असंख्य थाके सौभ्रात्रबन्धने;
एक सूर्य, एक शशी। मलिन किरणे
दूर वन-अन्तराले पाण्डुचन्द्रलेखा
आजि अस्त गेल, आजि कुरुसूर्य एका—
आजि आमि जयी।

धृतराष्ट्र। आजि धर्म पराजित।

दुर्योधन। लोकधर्म राजधर्म एक नहे, पितः।
लोक समाजेर माझे समकक्ष जन
सहाय सुहृद्-रूपे निर्भर बन्धन।
किन्तु राजा एकेश्वर; समकक्ष तार
महाशत्रु, चिरविघ्न, स्थान दुश्चिन्तार,
सम्मुखेर अन्तराल, पश्चातेर भय,
अहर्निशि यशःशक्तिगौरवेर क्षय,
ऐश्वर्येर अंश-अपहारी। क्षुद्रजने
वलभाग क'रे लये बान्धवेर सने
रहे वली। राजदण्ड यत खण्ड हय
तत तार दुर्बलता, तत तार क्षय।

नहे—नहीं है; दुइ.....व्यवधान—दो विशाल वृक्षों के बीच व्यवधान (अन्तर) रखते हैं; लक्ष....लीन—(और) लाख-लाख तृण घुल-मिल कर एक साथ रहते हैं; नक्षत्र......शशी—भ्रातृत्व के वन्धन में असंख्य नक्षत्र रहते हैं; लेकिन सूर्य एक है, चन्द्रमा एक है।

लोकसमाजेर......वन्धन—समाज के भीतर जो समकक्ष व्यक्ति हैं वे एक-दूसरे के सहायक तथा निर्भर-योग्य सुहृद् होते हैं; क्षुद्रजने......सने—साधारण लोग वन्धु-बान्धवों के साथ शक्ति का भाग (बँटवारा) कर लेते हैं; रहे वली—शक्तिशाली रहते हैं; राजदण्ड.....क्षय—राजदण्ड (राजशक्ति) के जितने (अधिक)

एका सकलेर ऊर्ध्वे मस्तक आपन
यदि ना राखिबे राजा, यदि बहुजन
बहुदूर हते ताँर समुद्धत शिर
नित्य ना देखिते पाय अव्याहत स्थिर,
तबे बहुजन-'परे वहु दूरे ताँर
केमने शासनदृष्टि रहिबे प्रचार ?
राजधर्मे भ्रातृधर्म वन्धुधर्म नाइ,
शुधु जयधर्म आछे; महाराज, ताइ
आजि आमि चरितार्थ, आजि जयी आमि—
सम्मुखेर व्यवधान गेछे आजि नामि
पाण्डवगौरवगिरि पञ्चचूड़ामय।

धृतराष्ट्र। जिनिया कपटद्यूते तारे कोस् जय ?
लज्जाहीन अहंकारी !

दुर्योधन। यार याहा वल
ताइ तार अस्त्र पितः, युद्धेर सम्वल।
व्याघ्रसने नखे दन्ते नहिको समान,
ताइ व'ले धनुःशरे वधि तार प्राण
कोन् नर लज्जा पाय ? मूढ़ेर मतन
झाँप दिये मृत्यु-माझे आत्मसमर्पण

खण्ड होते हैं उतनी ही उसमें दुर्वलता होती है, उतना ही उसका क्षय होता है; **एका....राजा**—अकेले सबसे ऊँचा यदि राजा अपना सिर नहीं रखता; **यदि....स्थिर**—यदि बहुत लोग बहुत दूर से उनके समुद्धत शिर को बराबर अप्रतिहत और स्थिर न देख पाँय; **तबे......प्रचार**—तब बहुत लोगों पर बहुत दूर तक कैसे उनकी शासन-दृष्टि रहेगी; **राजधर्मे.....आछे**—राजधर्म में भ्रातृधर्म और बन्धु-धर्म नहीं हैं, केवल जयधर्म है; **ताइ**—इसीलिये; **सम्मुखेर......नामि**—सामने का व्यवधान आज नीचे चला गया है; **तारे**—उसे; **कोस्**—(तू) कहता है।

यार......पितः—जिसका जिसमें बल होता है वही उसका अस्त्र है पिता; **नहिको समान**—कोई बराबर समान नहीं है; **ताइ.....पाय**—तो क्या धनुष-बाण से उसका वध कर कोई मनुष्य लज्जा का अनुभव करता है; **मूढ़ेर.....नहे**—मूढ़

युद्ध नहे; जयलाभ एक लक्ष्य तार;
आजि आमि जयी पितः, ताइ अहंकार।

धृतराष्ट्र। आजि तुमि जयी, ताइ तव निन्दाध्वनि
परिपूर्ण करियाछे अम्बर अवनी
समुच्च धिक्कारे।

दुर्योधन। निन्दा! आर नाहि डरि,
निन्दारे करिव ध्वंस कण्ठरुद्ध करि।
निस्तब्ध करिया दिब मुखरा नगरी
स्पर्धित रसना तार दृढ़ वले चापि
मोर पादपीठतले। दुर्योधन पापी,
दुर्योधन क्रूरमना, दुर्योधन हीन—
निरुत्तरे शुनिया एसेछि एतदिन;
राजदण्ड स्पर्श करि कहि महाराज,
आपामर जने आमि कहाइब आज—
दुर्योधन राजा, दुर्योधन नाहि सहे
राजनिन्दा-आलोचना, दुर्योधन बहे
निज हस्ते निज नाम।

धृतराष्ट्र। ओरे वत्स, शोन्,
निन्दारे रसना हते दिले निर्वासन

के जैसा मृत्यु के बीच कूद प्राण विसर्जन करना युद्ध नहीं है; **ताइ अहंकार**—इसी लिये (मुझे) अहंकार है; **करियाछे**—किया है।

आर नाहि डरि—और नहीं डरता; **निन्दारे......करि**—कण्ठरुद्ध (आवाज़ वन्द) कर निन्दा को ध्वंस करूँगा; **करिया दिव**—कर दूँगा; **स्पर्धित......तले**—उसकी स्पर्धित जिह्वा को वल से अपने पैरों के नीचे दवा दूँगा; **निरुत्तरे..... एतदिन**—इतने दिन विना जवाव दिए सुनता आया हूँ; **राजदण्ड......आज**—महाराज, राजदण्ड स्पर्श कर कहता हूँ कि आज मैं पामरों से कहलवाऊँगा; **नाहि सहे**—सहन नहीं करता; **वहे**—वहन करता है।

शोन्—सुन; **निन्दारे......निर्वासन**—निन्दा को जिह्वा से निर्वासित करने पर;

निम्नमुखे अन्तरेर गूढ़ अन्धकारे
गभीर जटिल मूल सुदूरे प्रसारे,
नित्य विषतिक्त करि राखे चित्ततल।
रसनाय नृत्य करि चपल चञ्चल
निन्दा श्रान्त हये पड़े; दियो ना ताहारे
निःशब्दे आपन शक्ति वृद्धि करिवारे
गोपन हृदयदुर्गे। प्रीतिमन्त्रवले
शान्त करो, वन्दी करो निन्दासर्पदले
वंशीरवे हास्यमुखे।

दुर्योधन। अव्यक्त निन्दाय
कोनो क्षति नाहि करे राजमर्यादाय;
भ्रूक्षेप ना करि ताहे। प्रीति नाहि पाइ
ताहे खेद नाहि, किन्तु स्पर्धा नाहि चाइ
महाराज। प्रीतिदान स्वेच्छार अधीन,
प्रीतिभिक्षा दिये थाके दीनतम दीन—
से प्रीति विलाक् तारा पालित मार्जारे,
द्वारेर कुक्कुरे आर पाण्डवभ्रातारे—
ताहे मोर नाहि काज। आमि चाहि भय,
सेइ मोर राजप्राप्य—आमि चाहि जय

करि......तल—चित्त को कर रखता है; **रसनाय**—जिह्वा पर; **निन्दा...... पड़े**—निन्दा श्रान्त हो पड़ती है; **दियो.....दुर्गे**—गोपन हृदय-दुर्ग में उसे निःशब्द अपनी शक्ति वृद्धि न करने देना।

अव्यक्त......मर्यादाय—अव्यक्त निन्दा राजा की मर्यादा को कोई क्षति नहीं पहुँचाती; **भ्रूक्षेप......ताहे**—उस ओर (मैं) दृष्टि नहीं डालता; **प्रीति...... महाराज**—प्रीति (अगर) नहीं पाऊँ तो (मुझे) कोई खेद नहीं लेकिन (किसीका) दर्प (मैं) नहीं पसन्द करता महाराज; **प्रीति भिक्षा.......दीन**—जो दीनतम दीन है वह भी प्रीति-भिक्षा दे पाता है; **से.....काज**—वह प्रीति वे (दीनतम दीन) पालित विल्लियों, दरवाजे के कुत्तों और पाण्डवों में वितरण करें, उससे मेरा कोई मतलव नहीं ;

दर्पितेर दर्प नाशि। शुन निवेदन
पितृदेव—एतकाल तव सिंहासन
आमार निन्दुकदल नित्य छिल घिरे
कण्टकतरुर मतो निष्ठुर प्राचीरे
तोमार आमार मध्ये रचि व्यवधान;
शुनायेछे पाण्डवेर नित्यगुणगान,
आमादेर नित्यनिंदा। एइमते पितः,
पितृस्नेह हते मोरा चिरनिर्वासित।
एइमते पितः, मोरा शिशुकाल हते
हीनबल; उत्समुखे पितृस्नेहस्रोते
पाषाणेर बाधा पड़ि मोरा परिक्षीण
शीर्ण नद, नष्टप्राण, गतिशक्तिहीन,
पदे पदे प्रतिहत; पाण्डवेरा स्फीत
अखण्ड, अबाधगति। अद्य हते पितः,
यदि से निन्दुकदले नाहि कर दूर
सिंहासनपार्श्व हते, सञ्जय विदुर
भीष्मपितामहे—यदि तारा विज्ञवेशे
हितकथा धर्मकथा साधु-उपदेशे
निन्दाय धिक्कारे तर्के निमेषे निमेषे
छिन्न छिन्न करि देय राजकर्मडोर,
भाराक्रान्त करि राखे राजदण्ड मोर,

आमि.....नाशि—मैं भय चाहता हूँ, वही मेरा प्राप्य है, मैं अहंकारियों का अहंकार नाश कर जय चाहता हूँ; **शुन**—सुनो; **एतकाल.......घिरे**—इतने दिनों तक मेरे निन्दकों का दल तुम्हारे सिंहासन को बराबर घेरे हुए रहा; **कण्टक ......व्यवधान**—कंटीले वृक्षों के समान निष्ठुर प्राचीर बन तुम्हारे और मेरे बीच व्यवधान हो कर; **शुनायेछे**—सुनाया है; **आमादेर**—हमारी; **एइमते**—इस प्रकार से; **हते**—से; **मोरा**—हम सब; **अद्य हते**—आज से; **यदि.......हते**—उस निन्दक दल को सिंहासन के पास से अगर दूर नहीं करोगे; **तारा**—वे; **छिन्न.......ओर**—राज-कर्म की डोरी (शृंखला) को छिन्न-भिन्न कर दें;

पदे पदे द्विधा आने राजशक्ति-माझे,
मुकुट मलिन करे अपमाने लाजे,
तबे क्षमा दाओ पितृदेव—नाहि काज
सिंहासनकंटकशयने—महाराज,
विनिमय करे लइ पाण्डवेर सने
राज्य दिये वनवास, याइ निर्वासने।

धृतराष्ट्र। हाय वत्स अभिमानी, पितृस्नेह मोर
किछु यदि ह्रास हत शुनि सुकठोर
सुहृदेर निन्दावाक्य—हइत कल्याण।
अधर्मे दियेछि योग, हारायेछि ज्ञान,
एत स्नेह। करितेछि सर्वनाश तोर,
एत स्नेह। ज्वालातेछि कालानल घोर
पुरातन कुरुवंश-महारण्यतले—
तबु पुत्र, दोष दिस स्नेह नाइ ब'ले?
मणिलोभे कालसर्प करिलि कामना,
दिनु तोरे निजहस्ते धरि तार फणा
अन्ध आमि।—अन्ध अन्तरे बाहिरे
चिरदिन, तोरे लये प्रलयतिमिरे
चलियाछि; बन्धुगण हाहाकाररवे
करिछे निषेध; निशाचर गृध्रसबे

करि राखे—कर रखें; **आने**—ले आवें; **तबे......दाओ**—तब माफ़ करो; **नाहि काज**—जरूरत नहीं; **विनिमय......निर्वासने**—राज्य दे कर पाण्डवों के साथ वनवास का विनिमय कर लें और निर्वासन में चले जाँय।

हाय.....कल्याण—हाय अभिमानी पुत्र, सुहृदों के कठोर निन्दावाक्य को सुन यदि मेरे पितृस्नेह में कुछ कमी होती तो (उससे) कल्याण होता; **अधर्म.... स्नेह**—अधर्म में योग दिया है, ज्ञान खो दिया है, इतना (मेरा) स्नेह है; **करितेछि**—कर रहा हूँ; **ज्वालातेछि**—जला रहा हूँ; **तबु......ब'ले**—तोभी पुत्र, स्नेह नहीं है (ऐसा) कह दोष दे रहा है; **मणिलोभे.......आमि**—मणि के लोभ से काल सर्प की तूने कामना की, मैं अन्ध, अपने हाथों उसके फन को पकड़ तुझे दिया; **तोरे....चलियाछि**—तुझे ले कर प्रलय के अन्धकार में चला हूँ; **करिछे**—कर रहे हैं;

करितेछे अशुभ चीत्कार; पदे पदे
संकीर्ण हतेछे पथ; आसन्न विपदे
कण्टकित कलेवर; तबु दृढ़ करे
भयंकर स्नेहे वक्षे बाँधि लये तोरे
वायुबले अन्धवेगे विनाशेर ग्रासे
छुटिया चलेछि मूढ़ मत्त अट्टहासे
उल्कार आलोके। शुधु तुमि आर आमि,
आर सङ्गी वज्रहस्त दीप्त अन्तर्यामी—
नाइ सम्मुखेर दृष्टि, नाइ निवारण
पश्चातेर, शुधु निम्ने घोर आकर्षण
निदारुण निपातेर। सहसा एकदा
चकिते चेतना हबे, विधातार गदा
मुहूर्ते पड़िबे शिरे, आसिबे समय—
ततक्षण पितृस्नेहे कोरो ना संशय,
आलिङ्गन कोरो ना शिथिल; ततक्षण
द्रुत हस्ते लुटि लओ सर्व स्वार्थधन;
हओ जयी, हओ सुखी, हओ तुमि राजा
एकेश्वर।—ओरे, तोरा जयवाद्य बाजा।
जयध्वजा तोल् शून्ये। आजि जयोत्सवे
न्याय धर्म बन्धु भ्राता केह नाहि रबे;
ना रबे विदुर भीष्म, ना रबे सञ्जय,
नाहि रबे लोकनिन्दा-लोकलज्जा-भय,

हतेछे—हो रहा है; छुटिया चलेछि—बेतहाशा चला हूँ; शुधु......आमि—केवल तुम और मैं; आर—और; नाइ.......पश्चातेर—न सामने दृष्टि है, न पीछे से (कोई) मना करता है; शुधु—केवल; निम्ने—नीचे की ओर; निपातेर—विनाश का; एकदा—एक समय; चकिते—क्षण भर में; हबे—होगा, पड़िबे—पड़ेगा, गिरेगा; आसिबे समय—समय आएगा; ततक्षण......संशय—तब तक के लिये पितृ-स्नेह में संशय न करो; तोल् शून्ये—शून्य (आकाश) में उठाओ; केह नाहि रबे—कोई नहीं रहेगा; ना रबे—नहीं रहेंगे;

कुरुवंशराजलक्ष्मी नाहि रबे आर—
शुधु रबे अन्ध पिता, अन्ध पुत्र तार
आर कालान्तक यम—शुधु पितृस्नेह
आर विधातार शाप, आर नहे केह।

[चरेर प्रवेश

चर। महाराज, अग्निहोत्र देव-उपासना
त्याग करि विप्रगण, छाड़ि सन्ध्यार्चना,
दाँड़ायेछे चतुष्पथे पाण्डवेर तरे
प्रतीक्षिया। पौरगण केह नाहि घरे;
पण्यशाला रुद्ध सब; सन्ध्या हल तबु
भैरवमन्दिर-माझे नाहि वाजे प्रभु,
शङ्खघण्टा संध्याभेरी, दीप नाहि ज्वले।
शोकातुर नरनारी सबे दले दले
चलियाछे नगरेर सिंहद्वार-पाने
दीनवेशे सजलनयने।

दुर्योधन। नाहि जाने
जागियाछे दुर्योधन। मूढ़ भाग्यहीन,
घनाये एसेछे आजि तोदेर दुर्दिन।
राजाय प्रजाय आजि हवे परिचय
घनिष्ठ कठिन। देखि कतदिन रय

आर—और; शुधु—केवल।

दाँड़ायेछे—खड़े हैं; **तरे**—लिये, निमित्त; **प्रतीक्षिया**—प्रतीक्षा करते हुए; **सन्ध्या......तबु**—संध्या हुई तौभी; **नाहि वाजे**—नहीं बजता है; **नाहि ज्वले**—नहीं जलता है; **चलियाछे**—चले हैं; **पाने**—ओर।

नाहि......दुर्योधन—(वे) नहीं जानते (कि) दुर्योधन जगा है; **घनाये...... दुर्दिन**—आज तुमलोगों का दुर्दिन नज़दीक आ गया है; **राजाय.......कठिन**—राजा और प्रजा का आज घनिष्ठ, कठिन परिचय होगा; **देखि.......स्पर्धा**—देखें

प्रजार परम स्पर्धा—निर्विष सर्पेर
व्यर्थ फणा-आस्फालन, निरस्त्र दर्पेर
हुहुंकार।

[प्रतिहारीर प्रवेश

प्रतिहारी। महाराज, महिषी गान्धारी
दर्शनप्रार्थिनी पदे।

धृतराष्ट्र। रहिनु ताँहारि
प्रतिक्षाय।

दुर्योधन। पितः, आमि चलिलाम तबे। [प्रस्थान

धृतराष्ट्र। करो पलायन। हाय, केमने वा सवे
साध्वी जननीर दृष्टि समुद्यत बाज,
ओरे पुण्यभीत! मोरे तोर नाहि लाज।

[गान्धारीर प्रवेश

गान्धारी। निवेदन आछे श्रीचरणे। अनुनय
रक्षा करो नाथ।

धृतराष्ट्र। कभु कि अपूर्ण रय
प्रियार प्रार्थना!

गान्धारी। त्याग करो एइवार—

धृतराष्ट्र। कारे हे महिषी!

गान्धारी। पापेर संघर्षे यार
पड़िछे भीषण शाण धर्मेर कृपाणे
सेइ मूढ़े।

कितने दिन प्रजा का (यह) अहंकार रहता है; **निर्विष.....हुहुंकार**–विना विप के साँप का फण आस्फालन करना और अस्त्रहीन अहंकारी का हुंकार व्यर्थ है।

रहिनु...प्रतीक्षाय–उनकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ; **आमि...तबे**–तव मैं चला; **केमने**–कैसे; **सबे**–सहेगा; **वाज**–वज्र; **मोरे.....लाज**–मुझसे तुझे लज्जा नहीं।

निवेदन....नाथ–श्रीचरणों में मेरा निवेदन है, मेरे अनुनय की रक्षा करो नाथ; **कभु...प्रार्थना**—प्रिया की प्रार्थना क्या कभी अपूर्ण रह सकती है; **पापेर....मूढ़े**—जिसके पाप के संघर्ष से धर्म की तलवार में तेज़ धार पड़ रही है उसी मूढ़ को;

धृतराष्ट्र। के से जन ? आछे कोन्‌खाने ?
शुधु कहो नाम तार।
गान्धारी। पुत्र दुर्योधन।
धृतराष्ट्र। ताहारे करिब त्याग ?
गान्धारी। एइ निवेदन
तव पदे।
धृतराष्ट्र। दारुण प्रार्थना, हे गान्धारी
राजमाता।
गान्धारी। ए प्रार्थना शुधु कि आमारि,
हे कौरव ? कुरुकुल-पितृपितामह
स्वर्ग हते ए प्रार्थना करे अहरह
नरनाथ। त्याग करो, त्याग करो तारे—
कौरवकल्याणलक्ष्मी यार अत्याचारे
अश्रुमुखी प्रतीक्षिछे विदायेर क्षण
रात्रिदिन।
धृतराष्ट्र। धर्म तारे करिबे शासन
धर्मेरे ये लङ्घन करेछे—आमि पिता—
गान्धारी। माता आमि नहि ? गर्भभारजर्जरिता
जाग्रत हृत्पिण्डतले वहि नाइ तारे ?
स्नेहविगलित चित्त शुभ्र दुग्धभारे

के से जन—कौन वह व्यक्ति है; **आछे कोन्‌खाने**—कहाँ है (वह); **शुधु..... तार**—केवल उसका नाम कहो; **ताहारे......त्याग**—उसे त्याग करूँगा; **एइ..... पदे**—आपके चरणों में यही निवेदन है।

ए.....आमारि—यह प्रार्थना क्या केवल मेरी ही है; **स्वर्ग......अहरह**—स्वर्ग से यह प्रार्थना रातदिन कर रहे हैं; **त्याग......रात्रिदिन**—त्याग करो, उसका त्याग करो जिसके अत्याचार से अश्रुमुखी कुरुवंश की कल्याण-लक्ष्मी रातदिन विदाई के क्षण की प्रतीक्षा कर रही है; **धर्म.....पिता**—जिसने धर्म का उल्लंघन किया है उसे धर्म दंड देगा, मैं पिता हूँ।

माता आमि नहि—क्या मैं माँ नहीं हूँ; **वहि...तारे**—क्या उसे वहन नहीं किया है;

उच्छ्वसिया उठे नाइ दुइ स्तन वाहि
तार सेइ अकलंक शिशुमुख चाहि ?
शाखावन्धे फल यथा, सेइमत करि
वहु वर्ष छिल ना से आमारे आँकड़ि
दुइ क्षुद्र बाहुवृन्त दिये—लये टानि
मोर हासि हते हासि, वाणी हते वाणी,
प्राण हते प्राण ? तबु कहि महाराज,
सेइ पुत्र दुर्योधने त्याग करो आज।

धृतराष्ट्र। की राखिब तारे त्याग करि ?

गान्धारी। धर्म तव।

धृतराष्ट्र। की दिबे तोमारे धर्म ?

गान्धारी। दुःख नवनव।
पुत्रसुख राज्यसुख अधर्मेर पणे
जिनि लये चिरदिन बहिब केमने
दुइ काँटा वक्षे आलिङ्गिया।

धृतराष्ट्र। हाय प्रिये,
धर्मवशे एकवार दिनु फिराइये
द्यूतबद्ध पाण्डवेर हृत राज्यधन।
परक्षणे पितृस्नेह करिल गुञ्जन

उच्छ्वसिया......नाइ—उच्छ्वसित नहीं हो उठे हैं; **दुइ......वाहि**—दोनों स्तनों से हो कर; **तार.....चाहि**—उसके उस निष्कलंक शिशुमुख को देख कर; **सेइमतो......दिये**—उसी प्रकार से दो छोटे हाथों से बहुत वर्षों तक मुझे जकड़े हुए नहीं रहा; **लये......हासि**—मेरी हँसी से हँसी लेता; **तबु कहि**—तौभी कहती हूँ; **सेइ**—उसी।

की......करि—उसे त्याग कर क्या रखूँगा; **की.......धर्म**—तुम्हें धर्म क्या देगा; **अधर्मेर पणे जिनि**—अधर्म के द्वारा जीते हुए; **लये**—ले कर; **चिर-दिन......आलिङ्गिया**—दो काँटों को हृदय से आलिङ्गित किए हुए चिरदिन कैसे वहन करूँगी।

धर्मवशे—धर्मवश; **दिनु फिराइये**—लौटा दिया;

शतबार कर्णे मोर, 'की करिलि ओरे !
एककाले धर्माधर्म दुइ तरी-'परे
पा दिये बाँचे ना केह। बारेक यखन
नेमेछे पापेर स्रोते कुरुपुत्रगण
तखन धर्मेर साथे सन्धि करा मिछे—
पापेर दुयारे पाप सहाय मागिछे।
की करिलि, हतभाग्य, वृद्ध, बुद्धिहत,
दुर्बल द्विधाय पड़ि ! अपमानक्षत
राज्य फिरे दिले तबु मिलाबे ना आर
पाण्डवेर मने—शुधु नव काष्ठभार
हुताशने दान। अपमानितेर करे
क्षमतार अस्त्र देओया मरिवार तरे।
सक्षमे दियो ना छाड़ि दिये स्वल्प पीड़ा—
करह दलन। कोरो ना विफल क्रीड़ा
पापेर सहित; यदि डेके आनो तारे
वरण करिया तबे लहो एकेवारे।'
एइमतो पापबुद्धि पितृस्नेहरूपे
बिँधिते लागिल मोर कर्णे चुपे चुपे

करिलि........ओरे—सैकड़ों वार कान में गुन्जन किया, 'अरे, तूने क्या किया'; **एककाले.....केह**—एक ही समय में धर्म-अधर्म की दो नौकाओं पर पांव रखने पर कोई नहीं बचता; **बारेक....मिछे**—एक बार जब कुरुपुत्रगण पाप के स्रोत में उतर गए हैं तब धर्म के साथ सन्धि करना व्यर्थ है; **पापेर....मागिछे**—पाप के दरवाज़े पर पाप सहायता मांग रहा है; **द्विधाय पड़ि**—द्विधा में पड़ कर; **राज्य.....मने**—राज्य लौटा देने पर भी पाण्डवों का मन और नहीं मिलेगा; **शुधु.......दान**—(यह) केवल अग्नि में नई लकड़ी के बोझ को डालने (जैसा होगा); **अपमानितेर ......तरे**—अपमानित के हाथ में क्षमता का अस्त्र देना मरने के लिये (होगा); **सक्षमे......दलन**—क्षमताशाली को थोड़ी-सी पीड़ा दे कर न छोड़ देना, (उसका) दलन करो; **कोरो.....सहित**—पाप के साथ व्यर्थ की क्रीड़ा न करो; **यदि...... एकेवारे**—अगर उसे बुला लाते हो तो संपूर्ण रूप से उसे वरण कर लो; **एइमतो**—इसी प्रकार; **बिँधिते लागिल**—बिँधने लगी; **मोर कर्णे**—मेरे कानोंमें;

कत कथा तीक्ष्ण सूचीसम। पुनराय
फिरानु पाण्डवगणे; द्यूतछलनाय
विर्सजिनु दीर्घ वनवासे। हाय धर्म,
हाय रे प्रवृत्तिवेग! के बुझिबे मर्म,
संसारेर!

गान्धारी। धर्म नहे सम्पदेर हेतु,
महाराज, नहे से सुखेर क्षुद्र सेतु;
धर्मेइ धर्मेर शेष। मूढ़ नारी आमि,
धर्मकथा तोमारे की बुझाइब स्वामी,
जान तो सकलि। पाण्डवेरा यावे वने,
फिराइले फिरिबे ना, वद्ध तारा पणे—
एखन ए महाराज्य एकाकी तोमार,
महीपति। पुत्रे तव त्यज एइवार—
निष्पापेरे दुःख दिये निजे पूर्ण सुख
लइयो ना। न्यायधर्मे कोरो ना विमुख
पौरवप्रासाद हते। दुःख सुदुःसह
आज हते, धर्मराज, लहो तुलि लहो,
देहो तुलि मोर शिरे।

धृतराष्ट्र। हाय महाराणी,
सत्य तव उपदेश, तीव्र तव वाणी!

कत कथा—कितनी वातें; पुनराय—फिर; फिरानु—लौटाया; के बुझिबे—कौन समझेगा।

नहे—नहीं है; नहे......सेतु—वह सुख (पाने) का क्षुद्र सेतु नहीं हैं; धर्मेर......शेष—धर्म की परिणति धर्म में ही है; जान तो सकलि—सब जानते हो; एखन—इस समय; ए—यह; तोमार—तुम्हारा; पुत्रे तव—अपने पुत्र को; निष्पापेरे......ना—निष्पाप को दुःख दे कर अपने पूर्ण सुख नहीं लेना; न्यायधर्मे......हते—न्याय-धर्म को पौरवों के प्रासाद से विमुख न करो; दुःख......शिरे—हे धर्मराज, आज से दुःसह दुःख उठा लो (और उसे) मेरे शिर डाल दो।

गान्धारी। अधर्मेर मधुमाखा विषफल तुलि
आनन्दे नाचिछे पुत्र; स्नेहमोहे भुलि
से फल दियो ना तारे भोग करिबारे—
केड़े लओ, फेले दाओ, काँदाओ ताहारे।
छललब्ध पापस्फीत राज्यधनजने
फेले राखि सेओ चले याक निर्वासने—
वञ्चित पाण्डवदेर समदुःखभार
करुक वहन।

धृतराष्ट्र। धर्मविधि विधातार—
जाग्रत आछेन तिनि, धर्मदण्ड ताँर
रयेछे उद्यत नित्य; अयि मनस्विनी,
ताँर राज्ये ताँर कार्य करिबेन तिनि।
आमि पिता—

गान्धारी। तुमि राजा, राज-अधिराज,
विधातार वामहस्त; धर्मरक्षा काज
तोमा-'परे समर्पित। शुधाइ तोमारे,
यदि कोनो प्रजा तव, सती अबलारे
परगृह हते टानि करे अपमान
विना दोषे, की ताहार करिबे विधान?

धृतराष्ट्र। निर्वासन।

अधर्मेर.....पुत्र—अधर्म के मधु से सने हुए विषफल को उठा कर पुत्र आनन्द में नाच रहा है; **स्नेहमोहे.......करिबारे**—स्नेह के मोह में भूल उस फल को उसे भोग न करने दो; **केड़े लओ......ताहारे**—(उसे) काढ़ लो, फेंक दो और उसे रुलाओ; **फेले.......निर्वासने**—फेंक कर वह भी निर्वासन में चला जाय; **वञ्चित ....वहन**—वञ्चित पाण्डवों के दुःख के भार को समान भाव से वह वहन करे।

जाग्रत आछेन तिनि—वे जाग्रत हैं; **ताँर.......तिनि**—अपने राज्य में वे अपना काम करेंगे; **तोमा-'परे**—तुम्हारे ऊपर; **शुधाइ तोमारे**—तुमसे पूछती हूँ; **कोनो**—कोई; **टानि**—खींच; **की.....विधान**—उसका क्या विधान करोगे।

गान्धारी। तबे आज राजपदतले
समस्त नारीर हये नयनेर जले
विचार प्रार्थना करि। पुत्र दुर्योधन
अपराधी प्रभु। तुमि आछ हे राजन्,
प्रमाण आपनि। पुरुष पुरुषे द्वन्द्व
स्वार्थ लये वाधे अहरह; भालोमन्द
नाहि वुझि तार; दण्डनीति, भेदनीति,
कूटनीति कत शत—पुरुषेर रीति
पुरुषेइ जाने! वलेर विरोध वल,
छलेर विरोध कत जेगे उठे छल
कौशले कौशल हाने; मोरा थाकि दूरे
आपनार गृहकर्मे शान्त अन्तःपुरे।
ये सेथा टानिया आने विद्वेष-अनल
वाहिरेर द्वन्द्व हते—पुरुषेरे छाड़ि
अन्तःपुरे प्रवेशिया निरुपाय नारी
गृहधर्मचारिणीर पुण्यदेह-'परे
कलुषपरुष स्पर्शे असम्माने करे
हस्तक्षेप—पति-साथे वाधाये विरोध
ये नर पत्नीरे हानि लय तार शोध—

समस्त......करि—सभी नारियों की ओर से आँखों में आँसू भर कर विचार (न्याय) करने की प्रार्थना करती हूँ; तुमि......आपनि—हे राजन्, तुम अपने ही प्रमाण हो; लये—ले कर; वाधे—आरम्भ हो जाता है; भालोमन्द......तार—उसका अच्छा-बुरा नहीं जानती; कत शत—कितने सैकड़ों; पुरुषेर......जाने—पुरुषों की रीति पुरुष ही जानते हैं; वलेर—वल का; कत जेगे.....छल—कितने छल जग उठते हैं; हाने—प्रहार करता है; मोरा......दूरे—हमलोग दूर रहती हैं; ये......हते—जो वहाँ (अन्तःपुर में) वाहर के द्वन्द्व से विद्वेष की अग्नि खींच कर लाता है; पुरुषेरे छाड़ि—पुरुषों को छोड़ कर; हस्तक्षेप—हाथ लगाना; पति......कापुरुष—पति के साथ विरोध प्रारम्भ करे और पत्नी पर आघात कर

से शुधु पाषण्ड नहे, से ये कापुरुष।
महाराज, की तार विधान! अकलुष
पुरुवंशे पाप यदि जन्मलाभ करे
सेओ सहे। किन्तु प्रभु, मातृगर्वभरे
भेवेछिनु गर्भे मोर वीरपुत्रगण
जन्मियाछे। हाय नाथ, सेदिन यखन
अनाथिनी पाञ्चालीर आर्तकण्ठरव
प्रासादपाषाणभित्ति करि दिल द्रव
लज्जा घृणा करुणार तापे, छुटि गिया
हेरिनु गवाक्षे, तार वस्त्र आकर्षिया
खलखल हासितेछे सभा-माझखाने
गान्धारीर पुत्र-पिशाचेरा—धर्म जाने,
से दिन चूर्णिया गेल जन्मेर मतन
जननीर शेष गर्व। कुरुराजगण,
पौरुष कोथाय गेछे छाड़िया भारत!
तोमरा हे महारथी, जड़मूर्तिवत्
वसिया रहिले सेथा चाहि मुखे मुखे;
केह वा हासिले, केह करिले कौतुके

उसका वदला ले वह मनुष्य केवल पाखंडी ही नहीं है वह कायर है; **अकलुष.... सहे**—निष्कलंक पुरुवंश में यदि पापी जन्म ग्रहण करे तो वह भी सहन हो सकता है; **किन्तु.....जन्मियाछे**—किन्तु प्रभु, माता का गर्व ले कर सोचा था कि मेरे गर्भ से वीर पुत्रों ने जन्म लिया है; **सेदिन**—उस दिन; **यखन**—जव; **भित्ति**—दीवार; **करि दिल द्रव**—पिघला दिया; **छुटि.......गवाक्षे**—दौड़ कर गवाक्ष से देखा; **तार**—उसका; **आकर्षिया**—खींच कर; **हासितेछे**—हँस रहे हैं; **धर्म......गर्व**—धर्म जानता है, उस दिन जन्म भर के लिये जननी का शेष गर्व चूर्ण विचूर्ण हो गया; **कोथाय गेछे**—कहाँ गया है; **छाड़िया**—छोड़ कर; **तोमरा**—तुमलोग; **वसिया.......मुखे**—एक दूसरे का मुँह देखते हुए वहाँ वैठे रहे; **केह...... कौतुके**—कोई तो हँसा और किसी ने परिहास किया;

कानाकानि—कोष-माझे निश्चल कृपाण
वज्रनिःशेषित लुप्तविद्युत्-समान
निद्रागत।—महाराज, शुन महाराज,
ए मिनति। दूर करो जननीर लाज;
वीरधर्म करह उद्धार; पदाहत
सतीत्वेर घुचाओ क्रन्दन; अवनत
न्यायधर्मे करह सम्मान—त्याग करो
दुर्योधने।

धृतराष्ट्र। परिताप-दहने जर्जर
हृदये करिछ शुधु निष्फल आघात,
हे महिषी।

गान्धारी। शतगुण वेदना कि नाथ,
लागिछे ना मोरे? प्रभु, दण्डितेर साथे
दण्डदाता काँदे यवे समान आघाते
सर्वश्रेष्ठ से विचार। यार तरे प्राण
कोनो व्यथा नाहि पाय, तारे दण्डदान
प्रवलेर अत्याचार। ये दण्डवेदना
पुत्रेरे पार ना दिते से कारे दियो ना;
ये तोमार पुत्र नहे तारो पिता आछे
महा अपराधी हवे तुमि तार काछे,

कानाकानि—कानों-कानों में; **कोष.....निद्रागत**—वज्रनिःशेषित लुप्त विद्युत् के समान सोई हुई तलवार म्यान के भीतर निश्चल पड़ी रही; **शुन**—सुनो; **ए मिनति**—यह मिन्नत; **करह**—करो; **घुचाओ**—दूर करो; **अवनत**—झुके हुए।

परिताप......आघात—दुःख की ज्वाला से जर्जर बने हृदय में केवल निष्फल आघात कर रही हो; **शतगुण......मोरे**—हे नाथ, क्या सौ-गुनी व्यथा मुझे नहीं हो रही है; **दण्डितेर......विचार**—दण्डित के साथ दण्डदाता भी जब समान आघात से क्रन्दन करे तो वह सर्वश्रेष्ठ न्याय है; **यार.......अत्याचार**—जिसके लिये प्राणों में व्यथा न हो उसे दण्ड देना शक्तिशाली का अत्याचार है; **ये दण्डवेदना.....ना**—जिस दण्ड का दुःख पुत्र को न दे सको उसे किसीको भी न देना; **ये तोमार.....विचारक**—जो तुम्हारा पुत्र नहीं है उसको भी पिता है, उसके पास

विचारक। शुनियाछि, विश्वविधातार
सबाइ सन्तान मोरा, पुत्रेर विचार
नियत करेन तिनि आपनार हाते
नारायण; व्यथा देन, व्यथा पान साथे,
नतुबा विचारे ताँर नाइ अधिकार—
मूढ़ नारी लभियाछि अन्तरे आमार
एइ शास्त्र। पापी पुत्रे क्षमा करो यदि
निर्विचारे, महाराज, तबे निरवधि
यत दण्ड दिले तुमि यत दोषीजने
फिरिया लागिबे आसि दण्डदाता भूपे—
न्यायेर विचार तव निर्ममतारूपे
पाप हये तोमारे दागिबे। त्याग करो
पापी दुर्योधने।

धृतराष्ट्र। प्रिये, संहर संहर
तव वाणी। छिँड़िते पारि ने मोहडोर,
धर्मकथा शुधु आसि हाने सुकठोर
व्यर्थ व्यथा। पापी पुत्र त्याज्य विधातार,
ताइ तारे त्यजिते ना पारि—आमि तार

हे विचारक, तुम महा अपराधी होओगे; **शुनियाछि**—सुना है; **सवाइ सन्तान मोरा**—हम सभी सन्तान हैं; **नियत......नारायण**—भगवान् अपने हाथों ही नियत करते हैं; **व्यथा......साथे**—व्यथा देते हैं और साथ ही व्यथा पाते हैं; **नतुबा.....अधिकार**—नहीं तो न्याय करने का उनका अधिकार नहीं है; **मूढ़...... शास्त्र**—मूढ़ स्त्री मैंने अपने अन्तर में यही शास्त्र उपलब्ध किया है; **पुत्रे**—पुत्र को; **तबे......जने**—तब अभीतक जितने दोषी जनों को तुमने जितने दण्ड दिए हैं; **फिरिया......आसि**—(वे) लौट कर (तुम्हें) लगेंगे; **न्यायेर......दागिबे**—तुम्हारा न्याय-विचार निर्दयता के रूप में पाप हो कर तुम्हें ही दग्ध करेगा।

संहर—संवरण करो, संयमित करो; **छिँड़िते......डोर**—मोह की डोरी (बन्धन) को तोड़ नहीं सका हूँ; **धर्मकथा.....व्यथा**—धर्म की बात आ कर केवल अत्यन्त कठोर (लेकिन) व्यर्थ की व्यथा दे जाती है; **पापी......एकमात्र**—पापी पुत्र विधाता के लिये त्याज्य है, मैं उसका (दुर्योधन का) एक मात्र हूँ इसलिये त्याग

एकमात्र। उन्मत्ततरङ्ग—माझखाने
ये पुत्र सँपेछे अङ्ग, तारे कोन् प्राणे
छाड़ि याव? उद्धारेर आशा त्याग करि
तबु तारे प्राणपणे वक्षे चापि धरि—
तारि साथे एक पापे झाँप दिया पड़ि,
एक विनाशेर तले तलाइया मरि
अकातरे, अंश लइ तार दुर्गतिर,
अर्ध फल भोग करि तार दुर्मतिर—
सेइ तो सान्त्वना मोर। एखन तो आर
विचारेर काल नाइ, नाइ प्रतिकार,
नाइ पथ—वटेछे या छिलो घटिबार,
फलिबे या फलिबार आछे। [प्रस्थान

गान्धारी। हे आमार
अशान्त हृदय, स्थिर हओ। नतशिरे
प्रतीक्षा करिया थाको विधिर विधिरे
धैर्य धरि। येदिन सुदीर्घ रात्रि-परे
सद्य जेगे उठे काल संशोधन करे

नहीं पाता; **उन्मत्त.....याव**—उन्मत्त तरङ्गों के बीच जिस पुत्र ने अपने शरीर को मुझे सौंपा है उसे किस हृदय से छोड़ूँगा; **उद्धारेर.......धरि**—उसके उद्धार की आशा का त्याग करता हूँ तौभी उसे प्राणपण छाती से लगा रखूँ; **तारि..... पड़ि**—उसीके साथ एक ही पाप में कूद पड़ूँ; **एक.....अकातरे**—अकातर भाव से एक ही विनाश के तल में डूब कर मरूँ; **अंश....दुर्गतिर**—उसकी दुर्गति का अंश लूं (भाग बटाऊँ); **तार दुर्मतिर**—उसकी दुर्मति का; **सेइ......मोर**—यही तो मेरी सान्त्वना है; **एखन.......पथ**—अब तो और विचार का समय नहीं है, न (कोई इसका) प्रतिकार है, और न (कोई) पथ है; **घटेछे.......आछे**—जो होने वाला था वही हुआ है, जो फलने वाला है वही फलेगा।

आमार—मेरा; **हओ**—होओ; **नत......धरि**—धैर्य धारण कर नतशिर विधि के विधान की प्रतीक्षा करते रहो; **ये दिन**—जिस दिन; **परे**—बाद;

आपनारे, सेदिन दारुण दुःखदिन
दुःसह उत्तापे यथा स्थिर गतिहीन
घुमाइया पड़े वायु—जागे झंझाझड़े
अकस्मात्, आपनार जड़त्वेर 'परे
करे आक्रमण, अन्ध वृश्चिकेर मतो
भीमपुच्छे आत्मशिरे हाने अविरत
दीप्त वज्रशूल—सेइमतो काल यवे
जागे, तारे सभये अकाल कहे सवे।
लुटाओ लुटाओ शिर, प्रणम रमणी,
सेइ महाकाले; तार रथचक्रध्वनि
दूर रुद्रलोक हते वज्रघर्घरित
ओइ शुना याय। तोर आर्त जर्जरित
हृदय पातिया राख् तार पथतले।
छिन्न सिक्त हृत्पिण्डेर रक्त शतदले
अञ्जलि रचिया थाक् जागिया नीरवे
चाहिया निमेषहीन। तार परे यवे
गगने उड़िवे धूलि, काँपिवे धरणी,
सहसा उठिवे शून्ये क्रन्दनेर ध्वनि—
हाय हाय हा रमणी, हाय रे अनाथा,
हाय हाय वीरवधू, हाय वीरमाता,

आपनारे—अपने को; **सेदिन**—वह दिन; **घुमाइया पड़े**—सो जाती है; **झड़**—आँधी; **वृश्चिकेर मतो**—बिच्छू के समान; **भीम पुच्छे**—भयंकर पूँछ से; **आत्मशिरे**—अपने सिरपर; **हाने**—आघात करता है; **सेइमतो......सवे**—उसी प्रकार से काल जव जागता है उसे भय से सभी दुःसमय कहते हैं; **लुटाओ**—लोटाओ; **प्रणम......महाकाले**—रमणी, उस महाकाल को प्रणाम करो; **तार**—उसके; **हते**—से; **ओइ....याय**—वह सुनाई पड़ता है; **तोर......पयतले**—अपने दुःखी, जर्जर हृदय को उसके रास्ते में विछा कर रख; **थाक् जागिया**—जगी हुई रह; **चाहिया**—देखती हुई; **तार.......धूलि**—उसके वाद जब आकाश में धूल उड़ेगी;

हाय हाय हाहाकार—तखन सुधीरे
धुलाय पड़िस लुटि अवनतशिरे
मुदिया नयन। तार परे नमो नम
सुनिश्चित परिणाम, निर्वाक् निर्मम
दारुण करुण शान्ति; नमो नमो नम
कल्याण कठोर कान्त, क्षमा स्निग्धतम।
नमो नमो विद्वेषेर भीषणा निर्वृति—
श्मशानेर-भस्म-माखा परमा निष्कृति।

[दुर्योधनमहिषी भानुमतीर प्रवेश

[दासीगणेर प्रति

भानुमती। इन्दुमुखी! परभृते! लहो तुलि शिरे
माल्यवस्त्र अलंकार।

गान्धारी। वत्से, धीरे! धीरे!
पौरवभवने कोन् महोत्सव आजि!
कोथा याओ नव वस्त्र-अलंकारे साजि,
वधू मोर?

भानुमती। शत्रुपराभव-शुभक्षण
समागत।

गान्धारी। शत्रु यार आत्मीयस्वजन
आत्मा तार नित्य शत्रु, धर्म शत्रु तार,
अजेय ताहार शत्रु। नव अलंकार
कोथा हते, हे कल्याणी!

भानुमती। जिनि वसुमती
भुजबले, पाञ्चालीरे तार पञ्चपति

तखन......लुटि—तब धीरे से धूलि में लोट पड़ना; मुदिया—मूँद कर।

लहो...शिरे—सिर पर उठा लो; कोन्—कौन; आजि—आज; कोथा...साजि—नये वस्त्र-अलंकार से सज्जित हो कर कहाँ जाती हो; यार—जिसका; तार—उसका; ताहार—उसका; कोथा हते—कहाँ से; जिनि......भुजबले—भुजाओं के बल से पृथ्वी को जीत कर; पाञ्चालीरे.......अलंकार—पाञ्चाली को उसके

दियेछिल यत रत्न मणि अलंकार,
यज्ञदिने याहा परि भाग्य-अहंकार
ठिकरित माणिक्येर शत सूचीमुखे
द्रौपदीर अङ्ग हते, विद्ध हत वुके
कुरुकुलकामिनीर, से रत्नभूषणे
आमारे साजाये तारे येते हल वने।

गान्धारी। हा रे मूढ़, शिक्षा तवु हल ना तोमार—
सेइ रत्न निये तवु एत अहंकार!
एकि भयंकरी कान्ति, प्रलयेर साज!
युगान्तेर उल्का-सम दहिछे ना आज
ए मणिमञ्जीर तोरे? रत्नललाटिका
ए ये तोर सौभाग्येर वज्रानलशिखा।
तोरे हेरि अङ्गे मोर त्रासेर स्पन्दन
सञ्चारिछे, चित्ते मोर उठिछे क्रन्दन—
आनिछे शंकित कर्णे तोर अलंकार
उन्मादिनी शंकरीर ताण्डवझङ्कार।

भानुमती। मातः, मोरा क्षत्रनारी, दुर्भाग्येर भय
नाहि करि। कभु जय, कभु पराजय—

पाँच पतियों ने जितने रत्न मणि अलंकार दिए थे; **याहा परि**—जिसे पहन कर; **ठिकरित**—विकीर्ण होता; **हत**—होता; **वुके**—हृदय में; **से......वने**—उन रत्न अलंकारों से मुझे सजा कर उसे (द्रौपदी को) वन जाना पड़ा।

शिक्षा...तोमार—तौभी तुम्हें शिक्षा नहीं मिली; **सेइ...अहंकार**—तौभी उन्हीं रत्नों को ले कर इतना अहंकार है; **एकि**—यह कैसी; **प्रलयेर साज**—प्रलय की सज्जा; **युगान्त**—प्रलय काल; **दहिछे......तोरे**—यह मणि मञ्जीर (नूपुर) क्या तुम्हें आज दहन नहीं कर रहा है; **ललाटिका**—ललाट का भूषण; **तोरे......सञ्चारिछे**—तुम्हें देख कर मेरे शरीर में त्रास का सञ्चार हो रहा है; **आनिछे**—ला रहा है।

मोरा—हमलोग; **नाहि करि**—नहीं करती हैं; **कभु**—कभी;

मध्याह्न गगने कभु, कभु अस्तधामे,
क्षत्रियमहिमासूर्य उठे आर नामे।
क्षत्रवीराङ्गना मातः, सेइ कथा स्मरि
शंकार वक्षेते थाकि संकटे ना डरि
क्षणकाल। दुर्दिन दुर्योग यदि आसे
विमुख भाग्येरे तवे हानि उपहासे
केमने मरिते हय जानि ताहा देवी—
केमने बाँचिते हय श्रीचरण सेवि
से शिक्षाओ लभियाछि।

गान्धारी। वत्से, अमङ्गल
एकेला तोमार नहे। लये दलवल
से यबे मिटाय क्षुधा, उठे हाहाकार,
कत वीररक्तस्रोते कत विधवार
अश्रुधारा पड़े आसि—रत्न-अलंकार
वधूहस्त हते खसि पड़े शत शत
चूतलताकुञ्जवने मञ्जरीर मतो
झंझावाते। वत्से, भाङियो ना बद्ध सेतु।
क्रीड़ाच्छले तुलियो ना विप्लवेर केतु

उठे.....नामे–उठता है और नीचे जाता है; सेइ.....क्षणकाल–इसी बात का स्मरण कर (हम) शंका के हृदय में रहती हैं और क्षण भर के लिये भी संकट से नहीं डरतीं; आसे—आए; विमुख भाग्येरे—प्रतिकूल भाग्य को; तबे.....उपहासे—तव उपहास कर (उस पर) आघात करती हैं; केमने......ताहा—कैसे मरना होता है वह (हमलोग) जानती हैं; केमने.......लभियाछि—श्रीचरणों की सेवा कर कैसे बचना होता है यह शिक्षा भी प्राप्त की है।

एकेला......नहे—अकेला तुम्हारा नहीं है; लये......हाहाकार—दलवल ले कर जब वह (अपनी) क्षुधा मिटाता है (तब) हाहाकार उठता है; कत—कितना; कत.....आसि—कितने वीरों की रक्तधारा में कितनी विधवाओं की अश्रुधारा आ पड़ती है; हते—से; खसि पड़े—गिर-गिर पड़ता है; मतो—समान; भाङियो .....सेतु—बँधे हुए सेतु को न तोड़ना; क्रीड़ाच्छले.....माझे—क्रीड़ा के बहाने

गृह-माझे। आनन्देर दिन नहे आजि।
स्वजनदुर्भाग्य लये सर्व अङ्गे साजि
गर्व करियो ना मातः। हये सुसंयत
आज हते शुद्ध चित्ते उपवासव्रत
करो आचरण; वेणी करि उन्मोचन
शान्त मने करो वत्से, देवता-अर्चन।
ए पापसौभाग्यदिने गर्व-अहंकारे
प्रतिक्षणे लज्जा दियो नाको विधातारे।
खुले फेलो अलंकार, नव रक्ताम्बर;
थामाओ उत्सववाद्य, राज-आड़म्बर;
अग्निगृहे याओ पुत्री, डाको पुरोहिते—
कालेर प्रतीक्षा करो शुद्धसत्त्व-चिते।

[भानुमतीर प्रस्थान

[द्रौपदीसह पञ्चपाण्डवेर प्रवेश

युधिष्ठिर। आशीर्वाद मागिवारे एसेछि जननी,
विदायेर काले।

गान्धारी। सौभाग्येर दिनमणि
दुःखरात्रि-अवसाने द्विगुण उज्ज्वल
उदिबे, हे वत्सगण। वायु हते बल,
सूर्य हते तेज, पृथ्वी हते धैर्यक्षमा

घर में विप्लव का झंडा न उठाना; **आनन्देर......आजि**—आज आनन्द का दिन नहीं है; **लये**—ले कर; **सर्व......करियोना**—सभी अंगों को सजा कर गर्व न करना; **मातः**—(बहू या बेटी को 'माँ' कह कर संबोधन करते हैं।); **हये**—हो कर; **आज हते**—आज से; **प्रतिक्षणे.....विधातारे**—प्रतिक्षण विधाता को लज्जा न देना; **खुले फेलो**—खोल दो; **थामाओ**—रोको; **याओ**—जाओ; **डाको**—पुकारो।

आशीर्वाद......काले—विदाई के समय, माँ, आशीर्वाद माँगने आया हूँ।

सौभाग्येर दिनमणि—सौभाग्य का सूर्य; **उदिबे**—उदय होगा; **हते**—से;

करो लाभ, दुःखव्रत पुत्र मोर। रमा
दैन्य-माझे गुप्त थाकि दीन छद्मरूपे
फिरुन पश्चाते तव; सदा चुपे चुपे
दुःख हते तोमा-तरे करुन सञ्चय
अक्षय सम्पद। नित्य हउक निर्भय
निर्वासनवास। विना पापे दुःखभोग
अन्तरे ज्वलन्त तेज करुक संयोग—
वह्निशिखादग्ध दीप्त सुवर्णेर प्राय।
सेइ महादुःख हबे महत् सहाय
तोमादेर। सेइ दुःखे रहिबेन ऋणी
धर्मराज विधि; यबे शुधिबेन तिनि
निजहस्ते आत्मऋण तखन जगते
देव नर के दाँड़ाबे तोमादेर पथे!
मोर पुत्र करियाछे यत अपराध
खण्डन करुक सब मोर आशीर्वाद,
पुत्राधिक पुत्रगण। अन्याय पीड़न
गभीर कल्याणसिन्धु करुक मन्थन।

[द्रौपदीके आलिंगनपूर्वक

भूलुण्ठिता स्वर्णलता, हे वत्से आमार,
हे आमार राहुग्रस्त शशी, एकवार

करो लाभ—प्राप्त करो; **रमा......तव**—दैन्य (दुःख) के वीच लक्ष्मी गुप्त रह दीन छद्मवेश में तुम्हारे पीछे पीछे घूमें; **तोमा-तरे**—तुम्हारे निमित्त; **दुःख ......समय**—तुम्हारे लिये दुःख से अक्षय सम्पत्ति का (वे) सञ्चय करें; **हउक**—होवे; **करुक**—करे; **सुवर्णेर प्राय**—सुवर्ण जैसा; **सेइ.......तोमादेर**—वही महादुःख तुमलोगों का वहुत वड़ा सहायक होगा; **सेइ......विधि**—उस दुःख से विधानकर्ता धर्मराज ऋणी रहेंगे; **यबे.......पथे**—जव वे अपने हाथों उस ऋण को चुकायेंगे तव संसार में देवता-मनुष्य कौन तुमलोगों के पथ में रहेगा (वाधा सृष्टि करेगा); **करियाछे**—किया है; **यत**—जितना; **करुक**—करे; **अन्याय.......मन्थन**—अन्याय का उत्पीड़न गभीर कल्याण-सिन्धु का मंथन करे।

आमार—मेरी;

तोलो शिर, वाक्य मोर करो अवधान।
ये तोमारे अवमाने तारि अपमान
जगते रहिबे नित्य—कलंक अक्षय।
तव अपमानराशि विश्वजगन्मय
भाग करे लइयाछे सर्व कुलाङ्गना—
कापुरुषतार हस्ते सतीर लांछना।
याओ वत्से, पति-साथे अमलिनमुख,
अरण्येरे करो स्वर्ग, दुःखे करो सुख।
वधू मोर, सुदुःसह पतिदुःखव्यथा
वक्षे धरि सतीत्वेर लभ सार्थकता।
राजगृहे आयोजन दिवसयामिनी
सहस्र सुखेर; वने तुमि एकाकिनी
सर्वसुख, सर्वसङ्ग, सर्वैश्वर्यमय,
सकल सान्त्वना एका, सकल आश्रय,
क्लान्तिर आराम, शान्ति, व्याधिर शुश्रूषा,
दुर्दिनेर शुभलक्ष्मी, तामसीर भूषा
ऊषा मूर्तिमती। तुमि हवे एकाकिनी
सर्वप्रीति, सर्वसेवा, जननी, गेहिनी—
सतीत्वेर श्वेतपद्म सम्पूर्ण सौरभे
शतदले प्रस्फुटिया जागिबे गौरवे॥

[मार्च, १९००] 'काहिनी'

तोलो—उठाओ; **वाक्य....अवधान**—मेरी बात ध्यानपूर्वक सुनो; **ये....नित्य**—जिसने तुम्हारी अवमानना की है उसीका अपमान जगत् में सदैव बना रहेगा; **तव.....कुलाङ्गना**—तुम्हारी अपमान-राशि को संसार भर की सभी कुलाङ्गनाओं ने हिस्सा बँटाकर ले लिया है; **कापुरुषतार.......लांछना**—कायरता के हाथों सती की लांछना (अपमान); **याओ**—जाओ; **अरण्येरे**—अरण्य को; **वधू....सार्थकता**—मेरी बहू, पति के कठिन दुःख की व्यथा को हृदय में धारण कर सतीत्व की सार्थकता को प्राप्त करो; **राजगृहे**—राजमहल में; **आयोजन.....सुखेर**—रातदिन सहस्र सुखों का आयोजन रहता है; **तामसीर भूषा**—अन्धकार-रात्रि का भूषण; **तुमि......एकाकिनी**—तुम अकेली होओगी; **प्रस्फुटिया**—प्रस्फुटित हो कर।

वैशाख

हे भैरव, हे रुद्र वैशाख,
धूलाय धूसर रुक्ष उड्डीन पिङ्गल जटाजाल,
तप:क्लिष्ट तप्त तनु, मुखे तुलि विषाण भयाल
कारे दाओ डाक—
हे भैरव, हे रुद्र वैशाख ?

छायामूर्ति यत अनुचर
दग्धताम्र दिगन्तेर कोन् छिद्र हते छुटे आसे !
की भीष्म अदृश्य नृत्ये माति उठे मध्याह्न-आकाशे
नि:शब्द प्रखर
छायामूर्ति तव अनुचर ।।

मत्तश्रमे श्वसिछे हुताश ।
रहि रहि दहि दहि उग्र वेगे उठिछे घुरिया,
आवर्तिया तृणपर्ण, घूर्णछन्दे शून्ये आलोड़िया
चूर्ण रेणुराश—
मत्तश्रमे श्वसिछे हुताश ।।

उड्डीन—उड़ते हुए; **तुलि**—उठा कर; **विषाण**—सिंगा, शृंग-निर्मित वाजा; **भयाल**—भयंकर; **कारे.....डाक**—किसे पुकारते हो।

छायामूर्ति—अशरीरी मूर्ति; **यत**—जितने; **दग्धताम्र......आसे**—जल कर लाल बनी हुई दिशाओं के किस छिद्र से दौड़ कर आते हैं; **की......आकाशे**—कितने भयंकर अदृश्य नृत्य से मध्याह्न-आकाश में मत्त हो उठते हैं।

मत्तश्रमे.....हुताश—मत्त हो कर नाचने के श्रम से (क्लान्त हो कर) श्वास-प्रश्वास में (जैसे) अग्नि छोड़ रहे हैं। **रहि.....घुरिया**—रह-रह कर उतप्त हो कर तीव्र वेग से नाच उठते हैं ; **आवर्तिया......राश**—घास-पात को आवर्तित कर, धूलि कणों की राशि को आकाश में घूर्णित कर।

दीप्तचक्षु हे शीर्ण संन्यासी,
पद्मासने बस आसि रक्तनेत्र तुलिया ललाटे,
शुष्कजल नदीतीरे शस्यशून्य तृषादीर्ण माठे,
उदासी प्रवासी—
दीप्तचक्षु हे शीर्ण संन्यासी ।।

ज्वलितेछे सम्मुखे तोमार
लोलुप चिताग्निशिखा लेहि लेहि विराट अम्वर—
निखिलेर परित्यक्त मृतस्तूप विगत वत्सर
करि भस्मसार
चिता ज्वले सम्मुखे तोमार ।।

हे वैरागी, करो शान्ति पाठ ।
उदार उदास कण्ठ याक छुटे दक्षिणे ओ वामे—
याक नदी पार हये, याक चलि ग्राम हते ग्रामे,
पूर्ण करि माठ ।
हे वैरागी, करो शान्ति पाठ ।।

सकरुण तव मन्त्र-साथे
मर्मभेदी यत दुःख विस्तारिया याक विश्व-'परे—
क्लान्त कपोतेर कण्ठे, क्षीण जाह्नवीर श्रान्त स्वरे,

पद्मासने.....ललाटे—लाल नेत्रों को ललाट की ओर चढ़ा कर पद्मासन लगा कर वैठो; **तृषादीर्ण**—तृषा से फटे हुए; **माठे**—मैदान में ।

ज्वलितेछे.......अम्वर—विराट आकाश को चाटती हुई लोलुप चिताग्नि-शिखा तुम्हारे सामने जल रही है; **करि**—कर ।

उदार....माठ—(तुम्हारा) उदार उदास कण्ठ (वाणी) दाँये-वाँये दौड़ कर जाय, नदी पार हो मैदान को पूर्ण करते हुए ग्राम-ग्राम चला जाय ।

सकरुण:.....छायाते—तुम्हारे करुण मन्त्र के साथ जितने मर्मभेदी दुःख हैं (समस्त) विश्व के ऊपर विस्तार पाएँ, क्लान्त कपोत के कण्ठ में, क्षीण जाह्नवी के श्रान्त स्वर में तथा अश्वत्थ (पीपल) की छाया में ।

अश्वत्थछायाते
सकरुण तव मन्त्र-साथे ।।

दुःख सुख आशा ओ नैराश
तोमार फुत्कारक्षुब्ध धुलासम उड़ुक गगने,
भरे दिक निकुञ्जेर स्खलित फुलेर गन्ध-सने
आकुल आकाश——
दुःख सुख आशा ओ नैराश ।।

तोमार गेरुया वस्त्राञ्चल
दाओ पाति नभस्तले——विशाल वैराग्ये आवरिया
जरा मृत्यु क्षुधा तृष्णा, लक्षकोटि नरनारीहिया
चिन्ताय विकल ।
दाओ पाति गेरुया अञ्चल ।।

छाड़ो डाक, हे रुद्र वैशाख ।
भाङिया मध्याह्नतन्द्रा जागि उठि बाहिरिब द्वारे,
चेये रव प्राणीशून्य दग्धतृण दिगन्तेर पारे
निस्तब्ध निर्वाक् ।
हे भैरव, हे रुद्र वैशाख ।।

[मई १९००] 'कल्पना'

तोमार...गगने–तुम्हारे फुत्कार से आलोड़ित धूल के समान आकाश में उड़ें; **भरे...आकाश**–निकुञ्ज के स्खलित फूलों के गन्ध के साथ आकुल आकाश को भर दें।

तोमार—तुम्हारा; **गेरुया**—गैरिक, गेरुआ; **दाओ.....तले**—आकाश में बिछा दो; **तोमार....विकल**—जरा, मृत्यु, क्षुधा, तृष्णा (तथा) लाखों-करोड़ों नर-नारी के चिन्ता से विकल हृदय को विशाल वैराग्य से आच्छादित करते हुए अपने गेरुआ वस्त्राञ्चल को आकाश में फैला दो।

छाड़ो डाक—उद्घोष करो, पुकारो; **भाङिया.....द्वारे**—मध्याह्न कालीन तन्द्रा को तोड़ कर जाग उठूँगा और द्वार पर बाहर होऊँगा; **चेये......निर्वाक्**—प्राणी-शून्य, झुलसी हुई घास वाले दिगन्त के पार निस्तब्ध निर्वाक् देखता रहूँगा।

नववर्षा

हृदय आमार नाचेरे आजिके, मयूरेर मतो नाचे रे,
हृदय नाचे रे।
शत वरनेर भाव-उच्छ्वास
कलापेर मतो करेछे विकाश,
आकुल परान आकाशे चाहिया उल्लासे कारे याचे रे।
हृदय आमार नाचे रे आजिके, मयूरेर मतो नाचे रे।।

गुरुगुरु मेघ गुमरि गुमरि गरजे गगने गगने
गरजे गगने।
धेये च'ले आसे वादलेर धारा,
नवीन धान्य दुले दुले सारा,
कुलाये काँपिछे कातर कपोत, दादुरि डाकिछे सघने।
गुरुगुरु मेघ गुमरि गुमरि गरजे गगने गगने ।।

नयने आमार सजल मेघेर नील अञ्जन लेगेछे,
नयने लगेछे।

हृदय.....नाचेरे—आज मेरा हृदय नाच रहा है, मोर के समान नाच रहा है; **शत......विकाश**—सैकड़ों वर्ण (रंग) के भाव-उच्छ्वास मोर की पूंछ के समान विस्तार पाए हुए हैं; **आकुल......याचे रे**—आकुल प्राण आकाश की ओर देखते हुए उल्लास में (न-जाने) किसकी याचना कर रहे हैं।

गुरुगुरु—मृदु गंभीर मेघध्वनि; **गुमरि गुमरि**—उमड़ घुमड़ कर; **धेये .....धारा**—वादलों की धारा दौड़ी हुई चली आ रही है; **दुले दुले सारा**—सव-के-सव झूम-झूम उठते हैं। **कुलाये**—नीड़ में, खोते में; **काँपिछे**—काँप रहा है; **दादुरि......सघने**—दादुरी ज़ोर से टर्र-टर्र कर रही है।

नयने.....लेगेछे—मेरे नयनों में सजल मेघों का नील अञ्जन लगा है;

नव तृणदले घन वनछाये
हृदय आमार दियेछि विछाये,
पुलकित नीपनिकुञ्जे आजि विकशित प्राण जेगेछे।
नयने सजल स्निग्ध मेघेर नील अञ्जन लेगेछे।।

ओगो प्रासादेर शिखरे आजिके के दियेछे केश एलाये,
कवरी एलाये ?
ओगो नवघन-नीलवासखानि
बुकेर उपरे के लयेछे टानि,
तड़ित्‌शिखार चकित आलोके ओगो के फिरिछे खेलाये ?
ओगो प्रासादेर शिखरे आजिके के दियेछे केश एलाये ?।

ओगो नदीकूले तीरतृणतले के ब'से अमल वसने,
श्यामल वसने ?
सुदूर गगने काहारे से चाय,
घाट छेड़े घट कोथा भेसे याय,
नवमालतीर कचि दलगुलि आनमने काटे दशने।
ओगो नदीकूले तीरतृणतले के ब'से श्यामल वसने ?।

नव.....विछाये—घने वन की छाया में, तृण दल में अपने हृदय को विछा दिया है; **जेगेछे**—जगे हैं।

आजिके......एलाये—आज किसने केश फैला दिए हैं; **ओगो.....टानि**—अरे, नव घनों (बादलों) के नील वस्त्र को (अपनी) छाती पर किसने खींच लिया है; **तड़ित्‌शिखार....खेलाये**—विद्युत् के चंचल आलोक में कौन खेलती हुई डोल रही है।

के......वसने—कौन स्वच्छ वस्त्र (पहने), श्यामल वस्त्र (पहने) बैठी है; **सुदूर......चाय**—सुदूर आकाश में किसे वह देखती है; **घाट.....याय**—घाट छोड़ कर घड़ा कहाँ बहता चला जाता है; **नव.....दशने**—नव मालती के कोमल दल को अनमनी-सी दाँतों से काट रही है।

ओगो निर्जने बकुलशाखाय दोलाय के आजि दुलिछे,
दोदुल दुलिछे ?
झरके झरके झरिछे वकुल,
आँचल आकाशे हतेछे आकुल,
उड़िया अलक ढाकिछे पलक, कवरी खसिया खुलिछे।
ओगो निर्जने वकुल शाखाय दोलाय के आजि दुलिछे ?।

विकचकेतकी तटभूमि-'परे के बेँधेछे तार तरणी,
तरुण तरणी ?
राशि राशि तुलि शैवालदल
भरिया लयेछे लोल अञ्चल,
वादलरागिणी सजलनयने गाहिछे परानहरणी।
विकचकेतकी तटभूमि-'परे बेंधेछे तरुण तरणी ।।

हृदय आमार नाचे रे आजिके, मयूरेर मतो नाचे रे,
हृदय नाचे रे।
झरे घनधारा नवपल्लवे,
काँपिछे कानन झिल्लिर रवे,

दोलाय....दुलिछे–हिंडोले पर कौन आज झूल रहा है; **दोदुल**–दोलायमान; **झरके.....वकुल**—झर झर कर वकुल (फूल) झर रहे हैं; **आँचल.....आकुल**—आकाश में (उसका) अंचल आकुल (चंचल) हो रहा है; **उड़िया.....पलक**–अलक उड़ कर पलकों को ढँक रहे हैं; **कवरी....खुलिछे**—कवरी गिर कर खुल रही है।

विकच.....तरणी—विकसित केतकी की तटभूमि से किसने अपनी नौका बाँध रखी है; **राशि.....अञ्चल**—ढेर का ढेर सेवार उठा कर (अपने) चञ्चल अञ्चल में भर लिया है; **वादलरागिणी.....हरणी**—सजल नेत्रों से प्राण हरण करने वाली वादल रागिणी गा रही है।

झरे.....पल्लवे—नव पल्लवों पर (वर्षा की) घनी धारा झर रही है; **काँपिछे......रवे**—झींगुरों की झनकार से कानन काँप रहा है।

तीर छापि नदी कलकल्लोले एल पल्लीर काछे रे।
हृदय आमार नाचे रे आजिके, मयूरेर मतो नाचे रे,
हृदय नाचे रे।।

२ जून १९०० 'क्षणिका'

विरह

तुमि यखन चले गेले
तखन दुइ-पहर––
सूर्य तखन माझ-गगने
रौद्र खरतर।
घरेर कर्म साङ्ग करे
छिलेम तखन एकला घरे
आपन-मने बसे छिलेम
वातायनेर 'पर।
तुमि यखन चले गेले
तखन दुइ-पहर।।

चैत्र मासेर नाना खेतेर
नाना गन्ध निये
आसितेछिलो तप्त हाओया
मुक्त दुयार दिये।

तुमि......गेले—तुम जिस समय गए; तखन—उस समय; दुइ-पहर—दोपहर; माझ-गगने—मध्य गगन में; रौद्र—धूप; खरतर—अत्यन्त तीक्ष्ण; घरेर कर्म—घर के काम-काज; साङ्ग करे—समाप्त कर; छिलेम.....घरे—उस समय अकेली घर में थी; आपन-मने—अनमनी; बसे छिलेम—बैठी थी; वातायनेर 'पर—खिड़की पर।

निये—ले कर; आसितेछिलो—आ रही थी; हाओया—हवा; मुक्त......दिये—मुक्त द्वार से हो कर;

दुटि घुघु साराटा दिन
डाकितेछिल शान्तिविहीन,
एकटि भ्रमर फिरतेछिल
केवल गुन्‌गुनिये
चैत्र मासेर नाना खेतेर
नाना वार्ता निये ॥

तखन पथे लोक छिल ना,
क्लान्तकातर ग्राम।
झाउशाखाते उठतेछिल
शब्द अविश्राम।
आमि शुधु एकला प्राणे
अति सुदूर बाँशिर ताने
गेंथेछिलेम आकाशभ'रे
एकटि काहार नाम।
तखन पथे लोक छिल ना,
क्लान्तकातर ग्राम ॥

घरे घरे दुयार देओया,
आमि छिलेम जेगे—

दुटि—दो; **घुघु**—कबूतर की जाति का एक पक्षीविशेष; **साराटा**—सारा, सम्पूर्ण; **डाकितेछिल**—बोल रहे थे; **एकटि**—एक; **फिरतेछिल**—घूम रहा था; **गुन्‌गुनिये**—गुन-गुन करता हुआ; **चैत्र.....निये**—चैत्र मास के नाना खेतों की नाना वार्ता ले कर।

तखन......ना—उस समय पथ पर कोई नहीं था; **झाउ......अविश्राम**—झाउ के पेड़ की शाखा से अविरत शब्द उठ रहा था; **आमि......प्राणे**—मैं ही केवल अकेली थी; **बाँशिर**—बाँसुरी की; **अति.....नाम**—अति सुदूर बाँसुरी की तान से (न-जाने) एक किसका नाम सम्पूर्ण आकाश में (मैंने) गूँथा था।

घरे.....देओया—घर-घर में द्वार दिए हुए थे (दरवाज़े बन्द थे); **आमि......जेगे**—मैं जगी हुई थी;

आवाँधा चुल उड़तेछिल
उदास हाओया लेगे ।
तटतरुर छायार तले
ढेउ छिल ना नदीर जले,
तप्त आकाश एलिये छिल
शुभ्र अलस मेघे ।
घरे घरे दुयार देओया,
आमि छिलेम जेगे ।।

तुमि यखन चले गेले
तखन दुइ-पहर,
शुष्क पथ दग्ध माठे
रौद्र खरतर ।
निविड़ छाया वटेर शाखे
कपोत-दुटि केवल डाके,
एकला आमि वातायने—
शून्य शयन-घर ।
तुमि यखन गेले तखन
बेला दुइ-पहर ।

३ जून १९०० 'क्षणिका'

आवाँधा......लेगे—उदास हवा के लगने से (मेरे) नहीं बँधे हुए केश उड़ रहे थे; तट.....जले—तट के वृक्षों की छाया के नीचे नदी के जल में लहरें नहीं थीं; तप्त......मेघे—जलता हुआ आकाश शुभ्र अलस बादलों में शिथिल (पड़ा) था।

शुष्क.....खरतर—शुष्क पथ में, जलते हुए मैदान में अत्यन्त कड़ी धूप थी; निविड़......डाके—वटवृक्ष की शाखा पर घनी छाया में दो कपोत बोलते जा रहे थे, बोलते जा रहे थे; एकला....वातायने—मैं अकेली खिड़की पर थी; शयन-घर—शयन-गृह ।

कृष्णकलि

कृष्णकलि आमि तारेइ बलि,
　　　　कालो तारे बले गाँयेर लोक।
मेघला दिने दखेछिलेम माठे
　　　　कालो मेयेर कालो हरिण-चोख।
घोमटा माथाय छिल ना तार मोटे,
मुक्तवेणी पिठेर 'परे लोटे।
　　　　कालो ? ता से यतइ कालो होक,
　　　　देखेछि तार कालो हरिण-चोख॥

घन मेघे आँधार हल देखे
　　　　डाकतेछिल श्यामल दुटि गाइ,
श्यामा मेये व्यस्त व्याकुल पदे
　　　　कुटिर हते त्रस्त एलो ताइ।
आकाश-पाने हानि युगल भुरु
शुनले वारेक मेघेर गुरुगुरु।
　　　　कालो ? ता से यतइ कालो होक,
　　　　देखेछि तार कालो हरिण-चोख॥

कृष्णकलि......बलि—मैं उसे ही कृष्णकली कहता हूँ; **कालो.....लोक**—गाँव के लोग उसे काली कहते हैं; **मेघला.....चोख**— मेघला (मेघ से ढका हुआ) दिन को मैदान में काली लड़की की हिरणी-जैसी काली आँखें (मैंने) देखी थीं; **घोमटा.....मोटे**—उसके सिर पर घूंघट एकदम नहीं था; **मुक्तवेणी.....लोटे**—(उसकी) मुक्त वेणी पीठ पर लोट रही थी ; **कालो.....होक**—काली है? चाहे वह जितनी भी काली क्यों न हो; **देखेछि......चोख**—मैंने हिरणी-जैसी काली आँखें देखी हैं।

घन......गाइ—घने मेघों के (कारण) अन्धकार हुआ देख दो काली गायें पुकार (रँभा) रही थीं; **श्यामा...ताइ**—काली लड़की इसीलिये त्रस्त हो कर व्याकुल चरणों से कुटी के बाहर आई; **आकाश.....गुरु**—आकाश की ओर अपनी दोनों भौहों को मोड़ एक बार उसने मेघ की गुरु गुरु आवाज़ सुनी।

पूबे वातास एल हठात् धेये,
धानेर खेते खेलिये गेल ढेउ।
आलेर धारे दाँड़िये छिलेम एका,
माठेर माझे आर छिल ना केउ।
आमार पाने देखले किना चेये,
आमिइ जानि आर जाने सेइ मेये।
कालो? ता से यतइ कालो होक,
देखेछि तार कालो हरिण-चोख॥

एमनि क'रे कालो काजल मेघ
ज्येष्ठ मासे आसे ईशान कोणे।
एमनि क'रे कालो कोमल छाया
आषाढ़ मासे नामे तमाल-वने।
एमनि क'रे श्रावण-रजनीते
हठात् खुशि घनिये आसे चिते।
कालो? ता से यतइ कालो होक,
देखेछि तार कालो हरिण-चोख॥

कृष्णकलि आमि तारेइ बलि,
आर या बले बलुक अन्य लोक।

पूबे.....ढेउ—पुरवैया हवा हठात् दौड़ कर आई और धान के खेत में (एक) लहर खेल गई; **आलेर.....केउ**—मेंड़ के किनारे (मैं) अकेला खड़ा था, मैदान में और कोई नहीं था; **आमार....मेये**—मेरी ओर आँखें गड़ा कर उसने देखा कि नहीं, (यह) मैं ही जानता हूँ और वह लड़की जानती है।

एमनि....कोणे—जेठ के महीने में ईशान कोण में काजल के समान काले मेघ इसी तरह आते हैं; **एमनि.....वने**—इसी तरह से काली कोमल छाया तमाल के वन में आषाढ़ महीने में उतरती है; **एमनि.....चिते**—इसी प्रकार सावन महीने की रात्रि में हठात् चित्त में आनन्द घना हो उठता है।

आर......लोक—अन्य लोग और जो चाहें कहें;

देखेछिलेम मयनापाड़ार माठे
काले मेयेर कालो हरिण-चोख।
माथार 'परे देयनि तुले वास,
लज्जा पाबार पायनि अवकाश
कालो ? ता से यतइ कालो होक,
देखेछि तार कालो हरिण-चोख।।

१८ जून १९०० 'क्षणिका'

आविर्भाव

बहुदिन हल कोन् फाल्गुने छिनु आमि तव भरसाय,
एले तुमि घन वरषाय।
आजि उत्ताल तुमुल छन्दे,
आजि नवघन-विपुल-मन्द्रे
आमार पराने ये गान वाजावे से गान तोमार करो साय—
आजि जलभरा वरषाय।।

दूरे एकदिन देखेछिनु तव कनकाञ्चल-आवरण,
नवचम्पक-आभरण।

देखेछिलेम—देखा था; मयनापाड़ार माठे—मयनापाड़ा (स्थान का नाम) के मैदान में; माथार......वास—सिर पर कपड़ा खींच कर उसने नहीं दिया था (कपड़ा खींच कर उसने सिर नहीं ढँका था।); लज्जा.....अवकाश—लज्जा अनुभव करने का उसे समय नहीं मिला।

बहुदिन.....भरसाय—बहुत दिन किसी फाल्गुन मास में मैं तुम्हारी आशा में था; एले.....वरषाय—तुम घनी वर्षा (वरसात) में आए; आजि......मन्द्रे—आज उत्ताल तुमुल छन्द में, नव घन मेघ के गंभीर घोष में; आमार......साय—मेरे प्राणों में जो गान बजाओगे उस गान को तुम पूरा करो; आजि....वरषाय—आज (इस) जल से भरी वरसात में।

दूरे.....आवरण—एक दिन दूर तुम्हारे सुनहले अञ्चल के आवरण को देखा था; नवचम्पक-आभरण—नवचम्पा का भूषण;

काछे एले यबे हेरि अभिनव
घोर घननील गुण्ठन तव,
चलचपलार चकित चमके करिछे चरण विचरण—
कोथा चम्पक-आभरण ।।

सेदिन देखेछि, खने खने तुमि छुँये छुँये येते वनतल,
नुये नुये येत फुलदल ।
शुनेछिनु येन मृदु रिनिरिनि
क्षीण कटि घेरि बाजे किङ्किणी,
पेयेछिनु येन छायापथे येते तव निश्वासपरिमल—
छुँये येते यबे वनतल ।।

आजि आसियाछ भुवन भरिया, गगने छड़ाये एलो चुल,
चरणे जड़ाये वनफूल ।
ढेकेछे आमारे तोमार छायाय
सघन सजल विशाल मायाय,
आकुल करेछ श्याम समारोहे हृदयसागर-उपकूल—
चरणे जड़ाये वनफूल ।।

काछे.....तव—जब निकट आए (तव) तुम्हारे अत्यन्त घन नील, अभिनव अवगुण्ठन को देखा; **कोथा.....आभरण**—कहाँ (तुम्हारा) चम्पक का भूषण (था)।

सेदिन.....दल—उस दिन देखा है कि क्षण-क्षण में तुम वनाञ्चल को छू-छू जाते (और) फूल झुक-झुक जाते; **शुनेछिनु......किंकिणी**—सुना था जैसे क्षीण कटि को घेर कर किंकिणी रिनिरिनि के मृदु स्वर में वज रही है; **पेयेछिनु...... परिमल**—छायापथ में जाते हुए जैसे तुम्हारे निश्वास परिमल को पाया था; **छुंये......वनतल**—जब तुम वनस्थली का स्पर्श कर जाते।

आजि....वनफूल—समस्त पृथ्वी को परिव्याप्त कर, आकाश में अस्तव्यस्त केशों को फैलाए हुए तथा चरणों को वनफूल से वेष्टित किए हुए आज (तुम) आए हो; **ढेकेछे......मायाय**—तुम्हारी छाया ने अपनी सघन, सजल, विशाल माया से मुझे ढँक रखा है; **आकुल......उपकूल**—हृदय-सागर के उपकूल को श्यामल छटा से (तुमने) आकुल किया है।

फाल्गुने आमि फुलवने बसे गेँथेछिनु यत फुलहार
से नहे तोमार उपहार ।
येथा चलियाछ सेथा पिछे पिछे
स्तवगान तव आपनि ध्वनिछे,
वाजाते शेखे नि से गानेर सुर ए छोटो वीणार क्षीण तार—
ए नहे तोमार उपहार ।।

के जानित सेइ क्षणिका मुरति दूरे करि दिवे वरषन,
मिलावे चपल दरशन ।
के जानित मोरे एत दिवे लाज,
तोमार योग्य करि नाइ साज,
वासरघरेर दुयारे कराले पूजार अर्घ्य विरचन—
एकि रूपे दिले दरशन ।।

क्षमा करो तवे क्षमा करो मोर आयोजनहीन परमाद,
क्षमा करो यत अपराध ।
एइ क्षणिकेर पातार कुटिरे
प्रदीप-आलोके एसो धीरे धीरे,

फाल्गुने.....उपहार—फाल्गुन में फूलों के वन में बैठ जितनी मालाएँ गूँथीं थीं वे तुम्हारे उपहार योग्य नहीं हैं; **येथा.....ध्वनिछे**—जहाँ भी चले हो वहाँ पीछे-पीछे तुम्हारा स्तवगान अपने आप ही ध्वनित हो रहा है; **वाजाते......तार**—इस छोटी वीणा के तार ने उस गान के सुर को बजाना नहीं सीखा है ।

के जानित...दरशन—कौन जानता था कि वह क्षण काल दीख पड़ने वाली मूर्ति वृष्टि को दूर कर देगी और चपल (चंचल) दर्शन करा देगी; **के...साज**—कौन जानता था (कि तुम) मुझे इतना लज्जित करोगे, तुम्हारे योग्य मैंने साज-शृंगार नहीं किया है; **वासरघरेर...दरशन**—वासरगृह (विवाह की रात्रि में वर-कन्या का मिलन-मंदिर) के दरवाज़े पर पूजा के अर्घ्य की रचना कराई, यह किस रूप में तुमने दर्शन दिया ।

क्षमा.....परमाद—तब क्षमा करो, मेरे आयोजन-हीन प्रमाद को क्षमा करो; **क्षमा.....अपराध**—(मेरे) जितने अपराध हैं, क्षमा करो; **एइ.....धीरे**—इस क्षण-स्थायी पत्ते की कुटिया में दीपक के आलोक में धीरे आओ;

एइ वेतसेर बाँशिते पड़ुक तव नयनेर परसाद—
क्षमा करो यत अपराध ।।

आस नाइ तुमि नवफाल्गुने छिनु यबे तव भरसाय,
एसो एसो भरा बरषाय ।
एसो गो गगने आँचल लुटाये,
एसो गो सकल स्वपन छुटाये,
ए परान भरि ये गान बाजाबे से गान तोमार करो साय—
आजि जलभरा बरषाय ।।

२४ जून १९०० 'क्षणिका'

उद्बोधन

शुधु अकारण पुलके
क्षणिकेर गान गा रे आजि प्राण, क्षणिक दिनेर आलोके ।
यारा आसे याय, हासे आर चाय,
पश्चाते यारा फिरे ना ताकाय,
नेचे छुटे धाय, कथा ना शुधाय, फुटे आर टुटे पलके—
ताहादेरि गान गा रे आजि प्राण, क्षणिक दिनेर आलोके ।।

एइ...परसाद—इस बेंत की बाँसुरी पर तुम्हारे नयनों का प्रसाद पड़े (अनुग्रह हो)।

आस......बरषाय—नव फाल्गुन में तुम नहीं आए जब मैं तुम्हारी आस लगाए था, (अब) भरी बरसात में आओ; **एसो.....लुटाये**—आकाश में अपना आँचल बिछाये हुए आओ; **एसो......छुटाये**—अपने सभी स्वप्नों को धावित किए हुए आओ; **ए परान.....साय**—इन प्राणों को भर कर जो गान बजाओगे अपने उस गान को पूरा कर लो ।

शुधु......पुलके—केवल अकारण पुलक (आनन्द) में; **क्षणिकेर.....आलोके**—प्राण, क्षणिक का गान आज क्षणिक दिन के आलोक में गा; **यारा.....आलोके**—जो आते-जाते हैं, हँसते और देखते हैं, जो पीछे फिर कर नहीं देखते, जो नाचते हुए दौड़ते हैं, कुछ पूछते नहीं, जो क्षण भर में खिल कर झड़ पड़ते हैं, प्राण आज क्षणिक दिन के आलोक में उन्हींके गान गा ।

प्रति निमेषेर काहिनी
आजि बसे बसे गाँथिस् ने आर, बाँधिस् ने स्मृतिवाहिनी।
या आसे आसुक, या हवार होक,
याहा चले याय मुछे याक शोक,
गेये धेये याक द्युलोक भूलोक प्रति पलकेर रागिणी।
निमेषे निमेष हये याक शेष बहि निमेषेर काहिनी।।

फुराय या दे रे फुराते।
छिन्न मालार भ्रष्ट कुसुम फिरे यास् नेको कुड़ाते।
बुझि नाइ याहा चाहि ना बुझिते,
जुटिल ना याहा चाइ ना खुँजिते,
पुरिल ना याहा के रबे युझिते तारि गह्वर पुराते।
यखन या पास मिटाये ने आशा, फुराइले दिस फुराते।।

ओरे, थाक् थाक् काँदनि।
दुइ हात दिये छिँड़े फेले दे रे निज-हाते-बाँधा बाँधनि।

प्रति......काहिनी—प्रत्येक क्षण की कहानी; **आजि......स्मृतिवाहिनी**—आज और बैठे बैठे न गूंथ, और न ताँता लगी हुई स्मृतियों को बाँध; **या....होक**—जो आना है आवे, जो होना है हो; **याहा....शोक**—जो चला जाय (उसका) शोक मिट जाय; **गेये.....रागिणी**—प्रति क्षण की रागिणी को गाते हुए द्युलोक (आकाश) और भूलोक दौड़े हुए चले जाँय; **निमेषे.....काहिनी**—एक क्षण की कहानी का वहन करता हुआ क्षण, एक ही क्षण में शेष हो जाय।

फुराय......फुराते—जो खतम हो रहा है उसे खतम होने दे; **छिन्न......कुड़ाते**—टूटी हुई माला के बिखरे फूलों को लौट कर चुनने न जा; **बुझि......बुझिते**—जो समझा नहीं उसे समझना नहीं चाहता; **जुटिल.....खुँजिते**—जो नहीं मिला उसे खोजना नहीं चाहता; **पुरिल.....पुराते**–जो पूर्ण नहीं हुआ उसके गड्ढे को भरने के लिये कौन जूझता रहेगा; **यखन.....फुराते**—जब जो पाओ (उससे अगर) आशा न मिटे (और) वह समाप्त हो रहा हो तो (उसे) समाप्त होने दे।

ओरे......काँदनि—अरे, रोना-धोना रहने दे, रहने दे; **दुइ.....बाँधनि**—अपने हाथों में बँधे हुए बन्धन को दोनों हाथों से तोड़ फेंक; **ये.....बुके**—जो सहज

ये सहज तोर रयेछे समुखे
आदरे ताहारे डेके ने रे बुके,
आजिकार मतो याक याक चुके यत असाध्य-साधनि।
क्षणिक सुखेर उत्सव आजि—ओरे, थाक् थाक् काँदनि।।

शुधु अकारण पुलके
नदी जले-पड़ा आलोर मतन छुटे या झलके झलके।
धरणीर 'परे शिथिल-बाँधन
झलमल प्राण करिस यापन,
छुँये थेके दुले शिशिर येमन शिरीषफुलेर अलके।
मर्मरताने भरे ओठ् गाने शुधु अकारण पुलके।।

[जुलाई १९००] 'क्षणिका'

(वस्तु) तुम्हारे सम्मुख है उसे आदर और प्रेम के साथ अपने हृदय के पास बुला ले; आजिकार.....साधनि—जितने असाध्य साधन हैं वे आज भर के लिये शेष हो जाँय; क्षणिक......आजि—आज क्षणिक सुख का उत्सव है।

नदी......झलके—नदी के जल में पड़ने वाले प्रकाश के समान चकमक करते हुए दौड़; धरणीर.......यापन—पृथ्वी पर शिथिल-बन्धन हो झलमल प्राण (जीवन) व्यतीत कर; छुंये......अलके—शिरीप फूल के अलकों में जैसे ओसकण स्पर्श करने से हिलता है; मर्मरताने........पुलके—गान में केवल अकारण पुलक से मर्मर तान से भर उठ।

प्रतिज्ञा

आमि हव ना तापस, हव ना, हव ना,
येमनि वलुन यिनि।
आमि हव ना तापस निश्चय यदि
ना मेले तपस्विनी।
आमि करेछि कठिन पण
यदि ना मिले वकुलवन,
यदि मनेर मतन मन
ना पाइ जिनि
तवे हव ना तापस, हव ना, यदि ना
पाइ से तपस्विनी।

आमि त्यजिव ना घर, हव ना वाहिर
उदासीन संन्यासी,
यदि घरेर वाहिरे ना हासे केहइ
भुवन-भुलानो हासि।
यदि ना उड़े नीलाञ्चल
मधुर वातासे विचञ्चल,
यदि ना वाजे काँकन मल
रिनिक-झिनि—

आमि......यिनि—मैं तापस नहीं होऊँगा, नहीं होऊँगा, जो जैसा (चाहें) कहें; **यदि ना मेले तपस्विनी**—अगर तपस्विनी न मिले; **आमि......पण**—मैंने कठिन प्रतिज्ञा की है; **यदि....जिनि**—यदि मन जैसा मन नहीं जीत पाऊँ; **यदि ना ......तपस्विनी**—यदि उस तपस्विनी को न पाऊँ।

त्यजिव—छोड़ूँगा; **हव ना वाहिर**—वाहर नहीं होऊँगा; **यदि.....हासि**—यदि घर के वाहर कोई पृथ्वी को लुभाने वाली हँसी न हँसे; **वातासे**—हवा में; **विचञ्चल**—अत्यन्त चञ्चल; **यदि.......झिनि**—कंकण और नूपुर यदि रुनझुन न वजें।

आमि हब ना तापस, हब ना, यदि ना
पाइ गो तपस्विनी।

आमि हब ना तापस, तोमार शपथ,
यदि से तपेर बले
कोनो नूतन भुवन ना पारि गड़िते
नूतन हृदय-तले
यदि जागाये वीणार तार
कारो टुटिया मरम-द्वार,
कोनो नूतन आँखिर ठार
ना लइ चिनि
आमि हब ना तापस, हब ना, हब ना
ना पेले तपस्विनी।

[जुलाई १९००] 'क्षणिका'

यथास्थान

कोन् हाटे तुइ विकोते चास ओरे आमार गान,
कोन्खाने तोर स्थान ?
पण्डितेरा थाकेन येथाय विद्येरत्न-पाड़ाय,
नस्य उड़े आकाश जुड़े काहार साध्य दाँड़ाय,

तोमार शपथ—तुम्हारी सौगन्ध; **यदि.....तले**—अगर उस तपस्या के वल से (किसी) नूतन हृदय में कोई नूतन भुवन की सृष्टि न कर सका; **यदि.....द्वार**—अगर वीणा के तार झंकृत कर, किसी के मर्म-द्वार को तोड़ कर; **कोनो......चिनि**—किसी नूतन आँखों के इशारे को न पहचान लूं; **ना पेले**—विना पाए।

कोन्......गान—किस हाट (वाज़ार) में तू विकना चाहता है, अरे मेरे गान; **कोन्......स्थान**—किस जगह तेरा स्थान है (तू किस जगह स्थान पाना चाहता है); **पण्डितेरा......पाड़ाय**—विद्यारत्नों के मुहल्ले में जहाँ पण्डित लोग रहते हैं; **नस्य......दाँड़ाय**—(जहाँ) नस्य (सुंघनी) उड़ कर आकाश भर देता

चलछे सेथाय सूक्ष्म तर्क सदाइ दिवारात्र
पात्राधार कि तैल किम्वा तैलाधार कि पात्र,
पुँथिपत्र मेलाइ आछे मोहध्वान्तनाशन,
तारि मध्ये एकटि प्रान्ते पेते चास कि आसन ?
गान ता शुनि गुन्जरिया कहे—
नहे, नहे, नहे ।।

कोन् हाटे तुइ बिकोते चास ओरे आमार गान,
कोन् दिके तोर टान ?
पाषाण-गाँथा-प्रासाद-'परे आछेन भाग्यवन्त,
मेहागिनिर मन्च जुड़ि पन्चहाजार ग्रन्थ,
सोनार जले दाग पड़े ना, खोले ना केउ पाता,
अस्वादितमधु येमन यूथी अनाघ्राता ।
भृत्य नित्य धुला झाड़े यत्न पुरामात्रा,
ओरे आमार छन्दोमयी, सेथाय करवि यात्रा ?
गान ता शुनि कर्णमूले मर्मरिया कहे—
नहे, नहे, नहे ।।

है (और वहाँ) किसकी हिम्मत जो खड़ा रह जाय; **चलछे......पात्र**—वहाँ रात-दिन सर्वदा सूक्ष्म तर्क चलता है कि पात्र का आधार तैल है अथवा तैल का आधार पात्र है; **पुँथिपत्र.....आसन**—मोहान्धकार का नाश करने वाले पोथी-पत्र अनेक हैं क्या उन्हींके बीच एक किनारे आसन पाना चाहता है; **गान.....नहे**—गान उसे सुन गुनगुन करता हुआ कहता है नहीं, नहीं।

कोन्.....टान—किस ओर तेरा खिचाव है; **पाषाण.....ग्रन्थ**—पत्थर से जोड़े हुए प्रासाद के ऊपर भाग्यवान का निवास है और उनके महोगनी के मन्च पर भरे हुए पाँच हजार ग्रन्थ हैं; **सोनार.....अनाघ्राता**—सोने के पानी पर दाग़ नहीं पड़ता, (उनके) पन्ने कोई नहीं उलटता, (वे) अस्वादित मधु और विना सूंघी हुई जूही के समान हैं; **भृत्य.....मात्रा**—रोज़ नौकर धूल झाड़ता है और पूरी मात्रा में उनका यत्न (देखभाल) होता है; **सेथा.....यात्रा**—हे मेरी छन्दोमयी, क्या वहाँ तू यात्रा करेगी; **गान.....नहे**—गान इसे सुन कान के पास मर्मर शब्दों में कहता है नहीं नहीं।

कोन् हाटे तुइ विकोते चास ओरे आमार गान,
कोथाय पाबि मान ?
नवीन छात्र झुँके आछे एक्‌जामिनेर पड़ाय,
मनटा किन्तु कोथा थेके कोन् दिके ये गड़ाय,
अपाठ्य सब पाठ्य केताब सामने आछे खोला,
कर्तृजनेर भये काव्य कुलुङ्गिते तोला,
सेइखानेते छेँड़ाछड़ा एलोमेलोर मेला,
तारि मध्ये ओरे चपल, करबि कि तुइ खेला ?
गान ता शुने मौनमुखे रहे द्विधार भरे—
याब-याब करे ।।

कोन् हाटे तुइ विकोते चास ओरे आमार गान,
कोथाय पाबि त्राण ?
भाण्डारेते लक्ष्मी वधू येथाय आछे काजे,
घरे धाय से छुटि पाय से यखन माझे माझे,
वालिश-तले बइटि चापा, टानिया लय तारे,
पातागुलिन छेँड़ाखोँड़ा शिशुर अत्याचारे—

कोथाय......मान—कहाँ सम्मान पाएगा; **झुँके आछे**—झुका हुआ है; **एक्जामिनेर पड़ाय**—परीक्षा की पढ़ाई में; **मनटा.......गड़ाय**—किन्तु मन तो कहाँ से कहाँ लोट रहा है; **अपाठ्य......खोला**—जो पढ़ने योग्य नहीं है वे सभी (वेक़ार) पाठ्यपुस्तकें सामने खुली हुई हैं; **कर्तृजनेर.....तोला**—अभिभावकों के भय से काव्य-ग्रन्थ घर की दीवाल के क्षुद्र कोटर में उठा कर रखे हुए हैं; **चपल**—चंचल; **करवि......खेला**—तू क्रीड़ा करेगा; **रहे......भरे**—दुविधा में पड़ा रहता है; **याव-याव करे**—जाऊँ-जाऊँ करता हुआ।

भाण्डारेते......काजे—भांडार में जहाँ गृहलक्ष्मी काम में लगी हुई है; **घरे..... माझे**—जो वीच-वीच में जव छुट्टी पाती है तो (अपने) घर में भाग कर जाती है; **वालिश-तले......अत्याचारे**—तकिया के नीचे दवी पुस्तक को खींच लेती है, शिशु के अत्याचार से जिसके पन्ने उखड़-पुखड़ गए हैं;

काजल-आँका सिंदुर-माखा चुलेर-गन्धे-भरा
शय्याप्रान्ते छिन्नवेशे चास कि येते त्वरा ?
बुकेर 'परे निश्वसिया स्तव्ध रहे गान—
लोभे कम्पमान ।।

कोन् हाटे तुइ विकोते चास ओरे आमार गान,
कोथाय पावि प्राण ?
येथाय सुखे तरुणयुगल पागल हये वेड़ाय,
आड़ाल वुझे आँधार खुंजे सवार आँखि एड़ाय,
पाखि तादेर शोनाय गीति, नदी शोनाय गाथा,
कतरकम छन्द शोनाय पुष्प लता पाता,
सेइखानेते सरल हासि सजल चोखेर काछे
विश्ववाँशिर ध्वनिर माझे येते कि साध आछे ?
हठात् उठे उच्छ्वसिया कहे आमार गान—
'सेइखाने मोर स्थान' ।।

[जुलाई १९००] 'क्षणिका'

काजल.....त्वरा—काजल से अंकित, सिंदुर लगा हुआ, केशों की गंध से भरा शय्या की एक भाग में फटी हुई हालत में क्या जल्दी से जल्दी जाना चाहता है; **बुकेर.....कम्पमान**—लोभ से कम्पमान, हृदय पर निश्वास छोड़ गान स्तब्ध रह जाता है ।

येथाय........वेड़ाय—जहाँ आनन्द में तरुण युगल पागल हो घूमते हैं; **आड़ाल......एड़ाय**—सब की आँखों को वचा कर आड़ समझ कर अंधकार खोजते हैं; **पाखि.......गाथा**—पक्षी उन्हें गान सुनाते हैं और नदी गाथा सुनाती है; **कतरकम.....पाता**—पुष्प, लताएँ और पत्ते कितने प्रकार के छन्द सुनाते हैं; **सेइ.....आछे**—उसी स्थान पर, सरल हँसी और सजल आँखों के पास, विश्व-वाँसुरी की ध्वनि के वीच जाने की साध क्या (तुम्हें) है; **हठात्......स्थान**—हठात् उच्छ्वसित हो मेरा गान कहता है वहीं मेरा स्थान है ।

सेकाल

आमि यदि जन्म नितेम कालिदासेर काले
दैवे हतेम दशम रत्न नवरत्नेर माले,
एकटि श्लोके स्तुति गेये राजार काछे निताम चेये
उज्जयिनीर विजन प्रान्ते कानन-घेरा बाड़ि।
रेवार तटे चाँपार तले सभा बसत सन्ध्या हले,
क्रीड़ाशैले आपन-मने दिताम कण्ठ छाड़ि।
जीवन-तरी बहे येत मन्द्राक्रान्ता ताले,
आमि यदि जन्म नितेम कालिदासेर काले।।

चिन्ता दितेम जलाञ्जलि, थाकतो नाको त्वरा,
मृदुपदे येतेम येन नाइको मृत्यु जरा।
छ'टा ऋतु पूर्ण क'रे घटत मिलन स्तरे स्तरे,
छ'टा सर्गे वार्ता ताहार रइत काव्ये गाँथा।
विरहदुख दीर्घ हत तप्त अश्रुनदीर मतो
मन्दगति चलत रचि दीर्घ करुण गाथा।

सेकाल—प्राचीन काल; **आमि.....काले**—मैं अगर कालिदास के काल में जन्म लेता; **दैवे.....माले**—भाग्यवश नवरत्नों की माला में दसवाँ रत्न होता; **एकटि.......बाड़ि**—स्तुति में एक श्लोक गा कर राजा से उज्जयिनी के एकान्त भाग में उपवन से घिरा हुआ एक गृह माँग लेता; **रेवार......छाड़ि**—रेवा (नदी) के तट पर चम्पा के नीचे संध्या होने पर सभा बैठती तथा क्रीड़ाशैल पर अपनी मौज में उच्च स्वर से गा उठता; **जीवनतरी.....ताले**—जीवन-नौका मन्दाक्रान्ता के ताल पर बहती जाती।

चिन्ता......जलाञ्जलि—चिन्ता को विसर्जन दे देता; **थाकतो......त्वरा**—(कोई) जल्दबाज़ी नहीं रहती; **मृदुपदे.....जरा**—मन्थर गति से जाता, जैसे मृत्यु और बुढ़ापा न हो; **छटा.....गाँथा**—छः ऋतुओं को पूर्ण कर स्तर-स्तर में मिलन होता और उसका वृत्तान्त काव्य में छः सर्गों में गूँथा रहता; **विरह.....गाथा**—विरह-दुख दीर्घ होता और गर्म आँसुओं की नदी के समान दीर्घ करुण गाथा रच कर मन्दगति से चलता;

आषाढ़ मासे मेघेर मतन मन्थरताय भरा
जीवनटाते थाकत नाको एकटु मात्र त्वरा ।।

अशोक-कुञ्ज उठत फुटे प्रियार पदाघाते,
बकुल ह्'त फुल्ल प्रियार मुखेर मदिराते ।
प्रियसखीर नामगुलि सब छन्द भरि करित रव
रेवार कूले कलहंस-कलध्वनिर मतो ।
कोनो नामटि मन्दालिका, कोनो नामटि चित्रलेखा,
मञ्जुलिका मञ्जरिणी झंकारित कत ।
आसत तारा कुञ्जवने चैत्र-ज्योत्स्नाराते,
अशोक-शाखा उठत फुटे प्रियार पदाघाते ।।

कुरवकेर परत चूड़ा कालो केशेर माझे,
लीलाकमल रइत हाते की जानि कोन् काजे ।
अलक साजत कुन्दफुले, शिरीष परत कर्णमूले,
मेखलाते दुलिये दित नवनीपेर माला ।
धारायन्त्रे स्नानेर शेषे धूपेर धोँया दित केशे,
लोध्रफुलेर शुभ्र रेणु माखत मुखे वाला ।

आषाढ़.....त्वरा—मन्थरता से भरे हुए आषाढ़ मास के मेघ के समान जीवन में थोड़ी भी त्वरा (जल्दवाज़ी) नहीं रहती ।

अशोक....पदाघातें—अशोककुञ्ज प्रिया के पदाघात से प्रस्फुटित हो उठता; **बकुल....मदिराते**—प्रिया के मुख की मदिरा से वकुल में फूल निकल आते; **प्रिय... मतो**—रेवातट के कलहंस की मधुर ध्वनि के समान प्रिय सखियों के नाम छन्द-भरी आवाज़ में गूंज उठते; **कोनो नामटि**—कोई नाम; **झंकारित कत**—कितने नाम झंकृत होते; **आसत....राते**—चैत्र मास की चाँदनी रात में वे सभी कुञ्ज-वन में आतीं ।

कुरवकेर.....काजे—काले केशों में कुरवक की चूड़ा पहनतीं (और) न-जाने किस काम के लिये लीलाकमल हाथ में रहता; **अलक......माला**—कुन्द फूलों से अलक सजाती, कर्णमूल में शिरीष पहनती (और) नवकदम्ब की माला को मेखला में झुला देती; **धारा.....केशें**—धारायन्त्र में स्नान करने के बाद केशों में धूप का धुआँ देती; **लोध्र........वाला**—लोध्र फूलों की सफेद धूलि

कालागुरुर गुरु गन्ध लेगे थाकत साजे,
कुरुबकेर परत माला कालो केशेर माझे ।।

कुङकुमेरइ पत्रलेखाय वक्ष रइत ढाका,
आँचलखानिर प्रान्तटिते हंसमिथुन आँका ।
विरहेते आषाढ़ मासे, चेये रइत बँधुर आशे,
एकटि करे पूजार पुष्पे दिन गणित बसे ।
वक्षे तुलि वीणाखानि गान गाहिते भुलत वाणी,
रुक्ष अलक अश्रुचोखे पड़त खसे खसे ।
मिलन राते बाजत पाये नूपुरदुटि बाँका,
कुङकुमेरइ पत्रलेखाय वक्ष रइत ढाका ।।

प्रिय नामटि शिखिये दित साधेर शारिकारे,
नाचिये दित मयूरटिरे कङ्कणझंकारे ।
कपोतटिरे लये बुके सोहाग करत मुखे मुखे,
सारसीरे खाइये दित पद्मकोरक बहि ।

को (वह) वाला (मेरी प्रिया) मुख में मलती; **कालागुरुर......साजे**—कालागुरु (काला चंदन) का भारी गंध (मेरी प्रिया की) साज सज्जा में लगा रहता; **परत**—पहनती ।

कुंकुमेरि.....ढाका—कुंकुम की चित्र-रचना से वक्ष ढका रहता; **आँचल ......आँका**—अंचल के छोर पर हंस मिथुन (जोड़ा) अंकित रहते; **विरहेते..... आशे**—आषाढ़ के महीने में विरह में बंधु (प्रियतम) की आशा में टकटकी लगाये रहती; **एकटि.....बसे**—एक-एक पूजा के फूल से बैठी दिन गिनती रहती; **वक्षे .....वाणी**—छाती पर वीणा ले गीत गाने जा (गीत के) शब्द भूल जाती; **रुक्ष .....खसे**—रूखे अलक आँसू से भरे नेत्रों पर गिर-गिर पड़ते; **मिलन......बाँका**— मिलन रात्रि में पैरों के दो पेचदार नूपुर बजते रहते ।

प्रिय.....शारिकारे—शौक से पाली शारिका को प्रिय का नाम सिखा देती; **नाचिये......झंकारे**—कङ्कण के झंङ्कार से मयूर को नचा देती; **कपोतटिरे...... मुखे**—कपोत को हृदय से लगा कर मुंह से स्नेहपूर्वक पुचकारती रहती; **सारसी ......बहि**—कमलकोरक ला कर सारसी को खिला देती;

अलक नेड़े दुलिये वेणी कथा कइत शौरसेनी,
वलत सखीर गला ध'रे 'हला पिय सहि'
जल सेचित आलवाले तरुण सहकारे,
प्रिय नामटि शिखिये दित साधेर शारिकारे ।।

नवरत्नेर सभार माझे रइताम एकटि टेरे,
दूर हइते गड़ करिताम दिङ्नागाचार्य्येरे।
आशा करि नामटा हत ओरि मध्ये भद्रमत,
विश्वसेन कि देवदत्त किम्वा वसुभूति।
स्रग्धरा कि मालिनीते विम्वाधरेर स्तुतिगीते
दिताम रचि दुटि-चारटि छोटोखाटो पुँथि।
घरे येताम ताड़ाताड़ि श्लोक-रचना सेरे,
नवरत्नेर सभार माझे रइताम एकटि टेरे ।।

आमि यदि जन्म नितेम कालिदासेर काले
वन्दी हतेम ना जानि कोन् मालविकार जाले।
कोन् वसन्त-महोत्सवे वेणुवीणार कलरवे
मञ्जरित कुञ्जवनेर गोपन अन्तराले

अलक.....शौरसेनी—अलकों को हिला वेणी को दोलायित कर शौरसेनी (प्राकृत) भाषा वोलती; **वलत......सहि**—सखी के गले से लग वोलती, 'हला, प्रियसखि'; **जल.....सहकारे**—तरुण आम्रवृक्ष के थाले को जल से सींचती।

नवरत्नेर.....टेरे—नवरत्नों की सभा के एक कोने में रहता; **दूर......दिङ्नागाचार्य्येरे**—दूर से दिङ्नागाचार्य को नमस्कार करता; **आशा......वसुभूति**—आशा करता हूँ उसीके बीच भद्र जैसा (कोई) नाम होता, विश्वसेन या देवदत्त अथवा वसुभूति; **स्रग्धरा......पुँथि**—स्रग्धरा (छन्द) अथवा मालिनी (छन्द) में विम्बाधर के स्तुतिगान में दो-चार छोटी-मोटी पोथियों की रचना कर देता; **घरे.....सेरे**—श्लोक-रचना शेष कर शीघ्रता से घर जाता।

वन्दी.....जाले—न-जाने किस मालविका के जाल में वन्दी होता;

कोन् फागुनेर शुक्लनिशाय यौवनेरइ नवीन नेशाय
चकिते कार देखा पेतेम राजार चित्रशाले।
छल क'रे तार वाधत आँचल सहकारेर डाले,
आमि यदि जन्म नितेम कालिदासेर काले।।

हाय रे कबे केटे गेछे कालिदासेर काल!
पण्डितेरा विवाद करे लये तारिख साल।
हारिये गेछे से-सब अव्द, इतिवृत्त आछे स्तब्ध—
गेछे यदि आपद गेछे, मिथ्या कोलाहल।
हाय रे, गेल सङ्गे तारि सेदिनेर सेइ पौरनारी
निपुणिका चतुरिका मालविकार दल।
कोन् स्वर्गे निये गेल वरमाल्येर थाल!
हाय रे कबे केटे गेछे कालिदासेर काल।।

यादेर सङ्गे हय नि मिलन से सब वराङ्गना
विच्छेदेरइ दुःखे आमाय करछे अन्यमना।
तबु मने प्रवोध आछे, तेमनि बकुल फोटे गाछे
यदिओ से पाय ना नारीर मुखमदेर छिटा।

कोन्—किसी; **यौवनेरइ.....नेशाय**—यौवन के ही नवीन नशे में; **चकिते...... चित्रशाले**—क्षण भर के लिये चकित हो राजा की चित्रशाला में किसके दर्शन होते; **छल....डाले**—आम की डाल में उसका अंचल वहाने से फँस जाता।

हाय......काल—हाय रे, कालिदास का काल कव का वीत गया; **पण्डितेरा ......साल**—पण्डित लोग तारीख साल ले कर विवाद करते हैं; **हारिये...... कोलाहल**—वे सव साल खो गए हैं, इतिहास चुप है, अगर (खो ही) गए हैं (तो) आफ़त गयी, (यह) मिथ्या कोलाहल है; **हाय.....दल**—हाय रे, उसी के साथ उन दिनों की पौर नारियाँ, निपुणिका, चतुरिका (तथा) मालविका का दल चला गया; **कोन्...थाल**—(पता नहीं) किस स्वर्ग में वे वरमाला का थाल ले गयीं।

यादेर.....अन्यमना—जिन के साथ मिलन नहीं हुआ वे सभी श्रेष्ठ रमणियाँ विरह के दुःख से मुझे अन्यमनस्क कर रही हैं; **तबु.....छिटा**—तौभी मन को सन्तोष है कि उसी तरह वकुल फूल प्रस्फुटित होते हैं यद्यपि वे नारी के

फागुन मासे अशोक-छाये अलस प्राणे शिथिल गाये
दखिन हते बातासटुकु तेमनि लागे मिठा।
अनेक दिकेइ याय ये पाओया अनेकटा सान्त्वना
यदिओ रे नाइको कोथाओ से-सब वराङ्गना।।

एखन याँरा वर्तमाने आछेन मर्तलोके
भालोइ लागत ताँदेर छबि कालिदासेर चोखे।
परेन बटे जुतामोजा, चलेन बटे सोजा सोजा,
बलेन वटे कथावार्ता अन्यदेशीर चाले,
तबु देखो सेइ कटाक्ष आँखिर-कोणे दिच्छे साक्ष्य
येमनटि ठिक देखा येत कालिदासेर काले।
मरव ना भाइ, निपुणिका चतुरिकार शोके—
ताँरा सबाइ अन्य नामे आछेन मर्त्यलोके।।

आपातत एइ आनन्दे गर्वे वेड़ाइ नेचे—
कालिदास तो नामेइ आछेन, आमि आछि वेँचे।

मुख की मदिरा का छींटा नहीं पाते; **फागुन....मिठा**—फागुन के महीने में अशोक पेड़ की छाया में अलस प्राणों और शिथिल अंग में दक्षिण से (आई हुई) हवा उसी तरह मीठी लगती है; **अनेक....सान्त्वना**—अनेक दिशाओं में अनेक प्रकार की सान्त्वनाएँ पाई जाती हैं; **यदिओ....वराङ्गना**—यद्यपि वे सभी श्रेष्ठ रमणियाँ कहींभी नहीं हैं।

एखन.......चोखे—अभी जो (रमणियाँ) मृत्युलोक में वर्तमान हैं उनका सौन्दर्य कालिदास की आँखों को अच्छा ही लगता; **परेन......चाले**—(वे) जूता-मोज़ा पहनती हैं अवश्य और तन कर चलती हैं अवश्य तथा अन्य देश के (विदेशी) ढंग की बातें भी बोलती हैं; **तबु.....काले**—तौभी उनकी आँखों के कोने में वही कटाक्ष दीख पड़ता है और वह इस बात की साक्षी दे रहा है कि कालिदास के काल में जैसा वह दीख पड़ता था ठीक वैसा ही आज भी दिखाई देता है; **मरव......शोके**—मरूँगा नहीं भाई, निपुणिका चतुरिका के शोक में; **ताँरा......मर्त्यलोके**—वे सभी दूसरे दूसरे नामों से मृत्युलोक में (वर्तमान) हैं।

आपातत......बेँचे—इस समय तो इसी आनन्द और गर्व में नाचता फिरता हूँ कि कालिदास तो नाम से ही (जीवित) हैं (लेकिन) मैं बँचा हुआ (जीवित) हूँ।

ताँहार कालेर स्वादगन्ध आमि तो पाइ मृदुमन्द,
आमार कालेर कणामात्र पान नि महाकवि।
दुलिये वेणी चलेन यिनि एइ आधुनिक विनोदिनी
महाकविर कल्पनाते छिल ना ताँर छवि।
प्रिये, तोमार तरुण आँखिर प्रसाद येचे येचे
कालिदासके हारिये दिये गर्वे बेड़ाइ नेचे ।।

[जुलाई १९००] 'क्षणिका'

न्यायदण्ड

तोमार न्यायेर दण्ड प्रत्येकेर करे
अर्पण करेछ निजे, प्रत्येकेर 'परे
दियेछ शासनभार हे राजाधिराज।
से गुरु सम्मान तव, से दुरुह काज
नमिया तोमारे येन शिरोधार्य करि
सविनये; तव कार्ये येन नाहि डरि
कभु कारे ।।

ताँहार......महाकवि—उन (कालिदास) के काल का स्वाद-गन्ध तो हलका-हलका मैं पाता हूँ लेकिन मेरे काल का कणमात्र भी महाकवि ने नहीं पाया; **दुलिये......छवि**—वेणी डुलाती हुई जो चलती हैं उन आनन्दप्रदान करने वाली आधुनिका की तस्वीर महाकवि की कल्पना में नहीं थी; **प्रिये......नेचे**—हे प्रिये, तुम्हारी तरुण आँखों के प्रसाद की याचना करता-करता मैं कालिदास को हरा कर गर्व से नाचता फिरता हूँ।

तोमार......निजे—प्रत्येक के हाथ में अपने न्याय का दण्ड (तुमने) स्वयं अर्पित किया है; **प्रत्येकेर.....राजाधिराज**—हे राजाधिराज, प्रत्येक के ऊपर (तुमने) शासन भार दिया है; **से गुरु.....सविनये**—तुम्हारे उस वड़े सम्मान को, तुम्हारे उस कठिन कार्य को तुम्हें नमस्कार कर जिसमें मैं विनय-पूर्वक शिरोधार्य करूँ; **तव.....कारे**—तुम्हारे कार्य में जिसमें मैं कभी किसीसे नहीं डरूँ।

क्षमा येथा क्षीण दुर्बलता,
हे रुद्र, निष्ठुर येन हते पारि तथा
तोमार आदेशे। येन रसनाय मम
सत्यवाक्य झलि उठे खरखड्ग सम
तोमार इङ्गिते। येन राखि तव मान
तोमार विचारासने लये निज स्थान ।।

अन्याय ये करे आर अन्याय ये सहे
तव घृणा येन तारे तृणसम दहे ।।

[जून-जुलाई १९०१] 'नैवेद्य'

प्रार्थना

चित्त येथा भयशून्य, उच्च येथा शिर,
ज्ञान येथा मुक्त, येथा गृहेर प्राचीर
आपन प्राङ्गणतले दिवसशर्वरी
वसुधारे राखे नाइ खण्ड क्षुद्र करि,
येथा वाक्य हृदयेर उत्समुख हते
उच्छ्वसिया उठे, येथा निर्वारित स्रोते

क्षमा.....आदेशे—हे रुद्र, जहाँ पर क्षमा असहाय (की) दुर्बलता हो वहाँ जिसमें तुम्हारे आदेश से मैं निष्ठुर हो सकूँ; **येन....इङ्गित**—जिसमें तुम्हारे इङ्गित पर मेरी जिह्वा में सत्यवाक्य तेज़ तलवार के समान झलमल कर उठे; **येन......स्थान**—तुम्हारे न्यायासन पर अपना स्थान ग्रहण कर जिसमें (मैं) तुम्हारा मान रखूँ; **अन्याय......दहे**—अन्याय जो करता है और अन्याय जो सहता है तुम्हारी घृणा जिसमें उन्हें तृण के समान दहन करे।

येथा—जहाँ; **येथा......करि**—जहाँ घर की चहारदीवारी ने रातदिन अपने प्राङ्गण में पृथ्वी को क्षुद्र खण्ड करके नहीं रखा है; **येथा......उठे**—जहाँ वाक्य हृदय के उत्स से उच्छ्वसित हो निकलता है; **निर्वारित**—बाधाहीन;

देशे देशे दिशे दिशे कर्मधारा धाय
अजस्र सहस्रविध चरितार्थताय,
येथा तुच्छ आचारेर मरुवालुराशि
विचारेर स्रोतःपथ फेले नाइ ग्रासि—
पौरुषेरे करे नि शतधा, नित्य येथा
तुमि सर्व कर्मचिन्ता आनन्देर नेता,
निज हस्ते निर्दय आघात करि पितः,
भारतेरे सेइ स्वर्गे करो जागरित ।।

[जून-जुलाई १९०१] 'नैवेद्य'

मुक्ति

वैराग्यसाधने मुक्ति, से आमार नय ।।

असंख्य वन्धन-माझे महानन्दमय
लभिव मुक्तिर स्वाद। एइ वसुधार
मृत्तिकार पात्रखानि भरि बारम्बार
तोमार अमृत ढालि दिबे अविरत
नानावर्णगन्धमय। प्रदीपेर मतो
समस्त संसार मोर लक्ष वर्तिकाय

धाय—दौड़ती है; **येथा तुच्छ......ग्रासि**—जहाँ तुच्छ आचार की मरुबालुका-राशि ने विचार के स्रोत के पथ को ग्रास नहीं किया है; **पौरुषेरे......शतधा**—पौरुष को शतधा (सौ प्रकार का) नहीं किया है; **करि**—कर; **भारतेरे......जागरित**—भारत को उसी स्वर्ग में जाग्रत करो।

से आमार नय—वह (मुक्ति) मेरी नहीं है; **माझे**—मध्य में; **लभिव**—प्राप्त करूँगा; **मुक्तिर**—मुक्ति का; **प्रदीपेर मतो**—दीपक के समान; **प्रदीपेर ......माझे**—प्रदीप के समान समस्त संसार मेरी लक्ष वत्तियों को तुम्हारी ही

ज्वालाये तुलिबे आलो तोमारि शिखाय
तोमार मन्दिर-माझे ।।

इन्द्रियेर द्वार
रुद्ध करि योगासन, से नहे आमार।
ये-किछु आनन्द आछे दृश्ये गन्धे गाने
तोमार आनन्द रबे तार माझखाने ।।

मोह मोर मुक्ति रूपे उठिबे ज्वलिया,
प्रेम मोर भक्ति रूपे रहिबे फलिया ।।

[जून-जुलाई १९०१] 'नैवेद्य'

त्राण

ए दुर्भाग्य देश हते हे मङ्गलमय,
दूर करे दाओ तुमि सर्व तुच्छ भय—
लोकभय, राजभय, मृत्युभय आर।
दीनप्राण दुर्बलेर ए पाषाणभार,
एइ चिरपेषणयन्त्रणा, धूलितले
एइ नित्य अवनति, दण्डे पले पले
एइ आत्म-अवमान, अन्तरे वाहिरे
एइ दासत्वेर रज्जु, त्रस्त नतशिरे

शिखा में जला कर तुम्हारे ही मन्दिर में प्रकाश करेगा; **से नहे आमार**—वह मेरा (साधन-मार्ग) नहीं है; **ये किछु.....खाने**—दृश्य, गन्ध, गान में जो-कुछ भी आनन्द है उसीके भीतर तुम्हारा आनन्द रहेगा; **मोह......ज्वलिया**—मोह, मेरी मुक्ति के रूप में जल उठेगा; **प्रेम.....फलिया**—प्रेम, मेरी भक्ति के रूप में फला हुआ रहेगा।

ए—इस; **हते**—से; **दाओ**—दो; **तुमि**—तुम; **आर**—और; **चिरपेषण-यन्त्रणा**—बराबर पीसते रहने की यन्त्रणा; **एइ**—यह;

सहस्रेर पदप्रान्ततले बारम्बार
मनुष्यमर्यादागर्व चिरपरिहार—
ए बृहत् लज्जाराशि चरण-आघाते
चूर्ण करि दूर करो। मङ्गलप्रभाते
मस्तक तुलिते दाओ अनन्त आकाशे
उदार आलोक-माझे, उन्मुक्त बातासे ।।

जून-जुलाई १९०१ 'नैवेद्य'

प्रतिनिधि

भालो तुमि बेसेछिले एइ श्याम धरा,
तोमार हासिटि छिल बड़ो सुखे भरा।
मिलि निखिलेर स्रोते जेनेछिले खुशि हते,
हृदयटि छिल ताइ हृदिप्राणहरा।
तोमार आपन छिल एइ श्याम धरा ।।

आजि ए उदास माठे आकाश बाहिया
तोमार नयन येन फिरिछे चाहिया।
तोमार से हासिटुक, से चेये-देखार सुख

सहस्रेर......तले—हजारों के पैरों तले; **मस्तक.....दाओ**—सिर ऊँचा करने दो।

भालो......धरा—इस श्यामवर्ण पृथ्वी को तुमने प्यार किया था; **तोमार ......भरा**—तुम्हारी हँसी अत्यन्त तृप्ति से भरी हुई थी; **मिलि......हते**—समस्त जगत् के स्रोत (जीवन) के साथ मिल कर (तुमने) खुशी होना जाना था; **हृदय ......हरा**—(तुम्हारा) हृदय इसीलिये हृदय और प्राण को हरने वाला था; **तोमार......धरा**—यह श्यामवर्ण धरा तुम्हारी अपनी थी।

आजि.....चाहिया—आज इस उदास मैदान में आकाश को अतिक्रम कर जैसे तुम्हारी आँखें देखती हुई घूम रही हैं; **से हासिटुक**—वह हँसी; **से......सुख**—वह टक-टकी लगा कर देखने का आनन्द;

सबारे परशि चले बिदाय गाहिया
ए तालवन ग्राम प्रान्तर बाहिया।

तोमार से भालो-लागा मोर चोखे आँकि
आमार नयने तव दृष्टि गेछ राखि।
आजि आमि एका-एका देखि दुजनेर देखा,
तुमि करितेछ भोग मोर मने थाकि—
आमार ताराय तव मुग्धदृष्टि आँकि।।

एइ-ये शीतेर आलो शिहरिछे वने,
शिरीषेर पातागुलि झरिछे पवने,
तोमार आमार मन खेलितेछे साराक्षण
एइ छाया-आलोकेर आकुल कम्पने
एइ शीतमध्याह्नेर मर्मरित वने।।

आमार जीवने तुमि बाँचो ओगो बाँचो,
तोमार कामना मोर चित्त दिये याचो।

सबारे......गाहिया—सभी का स्पर्श कर विदाई (का गीत) गा कर चलता है; **ए**—इस; **बाहिया**—अतिक्रम कर।

तोमार......राखि—तुम्हारा वह अच्छा लगना मेरी आँखों में अंकित कर मेरे नयनों में अपनी दृष्टि रख गई हो; **आजि....देखा**—आज मैं अकेले-अकेले दोनों का (अपना और तुम्हारा) देखना देख रहा हूँ (दोनों के—अपने और तुम्हारे—लिये मैं ही देख रहा हूँ); **तुमि....थाकि**—मेरे मन में रह कर तुम भोग कर रही हो; **आमार......आँकि**—मेरी आँखों की पुतलियों में अपनी मुग्ध दृष्टि अंकित कर।

एइ....वने—यह जो शीतकाल का आलोक वन में सिहर रहा है; **शिरीषेर......पवने**—शिरीष की पत्तियां हवा से झर रही हैं; **तोमार......क्षण**—तुम्हारा और मेरा मन सब समय खेल रहे हैं; **एइ**—इस।

आमार......बाँचो—मेरे जीवन में तुम जीओ; **तोमार.....याचो**—मेरे चित्त के द्वारा तुम अपनी कामना की याचना करो (मेरा चित्त ही तुम्हारी कामना का माध्यम हो);

येन आमि बुझि मने, अतिशय संगोपने
तुमि आजि मोर माझे आमि हये आछ।
आमारि जीवने तुमि बाँचो ओगो बाँचो ।।

१८ दिसम्बर १९०२ 'स्मरण'

जन्मकथा

खोका माके शुधाय डेके, 'एलेम आमि कोथा थेके,
कोन्खाने तुइ कुड़िये पेलि आमारे ?'
मा शुने कय हेसे केँदे खोकारे तार बुके बेँधे—
'इच्छा हये छिलि मनेर माझारे ।।

'छिलि आमार पुतुल-खेलाय, प्रभाते शिव-पूजार बेलाय
तोरे आमि भेङे छि आर गड़ेछि।
तुइ आमार ठाकुरेर सने छिलि पूजार सिंहासने,
ताँरि पूजाय तोमार पूजा करेछि ।।

'आमार चिरकालेर आशाय, आमार सकल भालोबासाय,
आमार मायेर दिदिमायेर पराने,

येन.....संगोपने—जिसमें मैं मन में समझूँ कि अत्यन्त गोपन भाव से; **तुमि......आछ**—तुम आज मेरे भीतर में हो कर विराज रही हो ।

खोका......आमारे—बच्चा माँ को पुकार कर पूछता है, 'मैं कहाँ से आया, किस जगह मैं पड़ा हुआ था जहाँ से तू मुझे उठा लाई'; **मा......माझारे**—माँ सुन कर हँसती-रोती बच्चे को अपनी छाती से चिपटा कर कहती है, 'इच्छा हो (बन कर) तू मेरे मन के भीतर था' ।

छिलि......गड़ेछि—तू मेरी गुड़ियों के खेल में था, प्रातःकाल शिव की पूजा के समय तुझे मैंने तोड़ा है और (फिर) बनाया है; **तुइ.....सिंहासने**—तू मेरे देवता के साथ पूजा के सिंहासन पर था; **ताँरि.....करेछि**—उनकी पूजा में ही तेरी पूजा की है ।

आमार....पराने—मेरी चिर काल की आशा में, मेरे समस्त प्रेम में, मेरी माँ और माँकी माँ के प्राणों में;

पुरानो एइ मोदेर घरे गृहदेवीर कोलेर 'परे
कतकाल ये लुकिये छिलि के जाने ।।

'यौवनेते यखन हिया उठेछिल प्रस्फुटिया
तुइ छिलि सौरभेर मतो मिलाये,
आमार तरुण अङ्गे अङ्गे जड़िये छिलि सङ्गे सङ्गे
तोर लावण्य कोमलता बिलाये

'सब देवतार आदरेर धन, नित्यकालेर तुइ पुरातन,
तुइ प्रभातेर आलोर समवयसि ।
तुइ जगतेर स्वप्न हते एसेछिस आनन्दस्रोते
नूतन हये आमार वुके बिलसि ।।

'निर्निमेषे तोमाय हेरे तोर रहस्य वुझि ने रे—
सबार छिलि आमार हलि केमने !
ओइ देहे एइ देह चुमि मायेर खोका हये तुमि
मधुर हेसे देखा दिले भुवने ।।

पुरानो.....जाने—हमलोगों के इस पुराने घर में, गृहदेवी की गोद में, कितने काल से तू जो छिपा हुआ था कौन जानता है ।

यौवनेते......मिलाये—यौवन काल में जव हृदय प्रस्फुटित हो उठा था तू सौरभ के समान घुला-मिला था; **आमार......विलाये**—मेरे तरुण अङ्ग प्रत्यङ्ग में अपने लावण्य और कोमलता को विखराये तू साथ-साथ जड़ित था।

सब......धन—सव देवताओं के तू प्रिय धन हो; **तुइ**—तू; **तुइ......समवयसि**—तू प्रभात के आलोक का समवयसी है; **तुइ......स्रोते**—तू जगत् के स्वप्न से आनन्द-स्रोत में आया है; **नूतन......बिलसि**—नूतन हो कर मेरे हृदय में क्रीड़ा करते हुए ।

निर्निमेषे......केमने—निर्निमेष दृष्टि से तुझे देखती हूँ (लेकिन) तेरा रहस्य नहीं समझ पाती कि तू सव का था मेरा किस प्रकार से हुआ; **ओइ...... भुवने**—उस शरीर से इस शरीर को चूम कर माँ का वेटा हो तुम मधुर हँसी हँस इस भुवन में दिखाई पड़े ।

'हाराइ हाराइ भये गो ताइ बुके चेपे राखते ये चाइ,
केँदे मरि एकटु सरे दाँड़ाले—
जानि ने कोन् मायाय फेँदे विश्वेर धन राखब बेँधे
आमार ए क्षीण वाहुदुटिर आड़ाले।'

[सितंवर १९०३] 'शिशु'

वीरपुरुष

मने करो, येन विदेश घुरे
माके निये याच्छि अनेक दूरे।
तुमि याच्छ पाल्किते मा, च'ड़े
दर्जा दुटो एकटुकु फाँक क'रे,
आमि याच्छि राङा घोड़ार 'परे
टग्‌बगिये तोमार पाशे पाशे।
रास्ता थेके घोड़ार खुरे खुरे
राङा धुलोय मेघ उड़िये आसे॥

हाराइ....चाइ—खो न दूँ, खो न दूँ इस भय से हृदय से चिपटा कर रखना चाहती हूँ; **फेँदे......दाँड़ाले**—जरा भी हटने पर (आँखों से ओझल होने पर) रो रो मरती हूँ; **जानिने......वेँधे**—नहीं जानती किस माया के फाँद में विश्व-धन को वाँध रखूँगी; **आमार......आड़ाले**—अपनी इन दो क्षीण वाहुओं के अन्तराल में।

मने करो......दूरे—कल्पना कर लो जैसे (देश) विदेश घूमते घूमते माँ को ले कर वहुत दूर जा रहा हूँ; **तुमि.....क'रे**—तुम माँ पालकी पर चढ़ कर जा रही हो, (पालकी के) दोनों दरवाजों को थोड़ा-सा खोल कर; **आमि.....पाशे**—मैं लाल घोड़े पर टग-वग (घोड़े के टाप की आवाज) करता हुआ तुम्हारे वगल-वगल जा रहा हूँ; **रास्ता.....आसे**—घोड़े के खुर से रास्ते में लाल धूल का वादल उड़ता आता है।

सन्धे हल, सूर्य नामे पाटे,
एलेम येन जोड़ादिघिर माठे।
धू धू करे येदिक पाने चाइ,
कोनोखाने जनमानव नाइ,
तुमि येन आपन-मने ताइ
भय पेयेछ, भावछ 'एलेम कोथा'।
आमि बलछि, 'भय कोरो ना मा गो,
ओइ देखा याय मरा नदीर सोँता।'

चोरकाँटाते माठ रयेछे ढेके,
माझखानेते पथ गियेछे बेँके।
गोरु बाछुर नेइको कोनोखाने,
सन्धे हतेइ गेछे गाँयेर पाने,
आमरा कोथाय याच्छि के ता जाने—
अन्धकारे देखा याय ना भालो।
तुमि येन बलले आमाय डेके—
'दिघिर धारे ओइ-ये किसेर आलो?'

सन्धे हल—सन्ध्या हुई; **सूर्य......पाटे**—सूर्य अस्ताचल की ओर नीचे जाता है; **एलेम......माठे**—जैसे जोड़ा दीघी के मैदान में आया। **धू......चाइ**—जिस ओर देखता हूँ धू धू करता है; **कोनो.......नाइ**—कहीं भी प्राणी-जन नहीं; **तुमि......कोथा**—तुम जैसे अनमनी थी इसीलिये तुमने भय पाया, सोच रही हो, 'कहाँ आई'; **आमि....सोँता**—मैं कहता हूँ, 'भय न करो माँ, मरी नदी का क्षीण स्रोत वह दिखाई पड़ता है'।

चोरकाँटा—एक प्रकार की घास जिसके काँटे कपड़ों में बिँध जाते हैं, उन्हें सहज ही निकाला नहीं जा सकता; **चोरकाँटाते......बेँके**—चोरकाँटा से मैदान ढँका हुआ है (और उसके) बीच से रास्ता टेढ़ा हो गया है (घूम गया है); **गोरु ....पाने**—गाय-बछड़े कहीं भी नहीं हैं, सन्ध्या होते ही (वे) गाँव की ओर चले गए हैं; **आमरा......भालो**—हमलोग कहाँ ज़ा रहे हैं यह कौन जाने, अन्धकार में अच्छी तरह दिखाई नहीं पड़ता; **तुमि......आलो**—तुम जैसे मुझे पुकार कर बोली, 'तालाब के किनारे वह कैसी रोशनी है'।

एमन समय 'हाँरे रे रे रे रे'
ओइ-ये कारा आसतेछे डाक छेड़े !
तुमि भये पाल्किते एक कोणे
ठाकुर-देवता स्मरण करछ मने—
बेयारागुलो पाशेर काँटावने
पाल्कि छेड़े काँपछे थरोथरो।
आमि येन तोमाय बलछि डेके,
'आमि आछि, भय केन मा, कर !'

हाते लाठि, माथाय झाँकड़ा चुल,
काने तादेर गोँजा जवार फुल।
आमि बलि, 'दाँड़ा खबरदार,
एक पा काछे आसिस यदि आर
एइ चेये देख् आमार तलोयार,
टुकरो करे देब तोदेर सेरे।'
शुने तारा लम्फ दिये उठे
चेँचिये उठल 'हाँरे रे रे रे रे'॥

एमन......छेड़े—ऐसे समय 'हाँरे रे रे रे रे' चिल्लाते वे सब कौन आ रहे हैं; **तुमि......मने**—तुम भय के मारे पालकी के एक कोने में ठाकुर-देवता का मन ही मन स्मरण कर रही हो; **बेयारा.....थरो**—पालकी ढोने वाले बगल के काँटे के वन में पालकी छोड़ कर थर-थर काँप रहे हैं; **आमि......कर**—मैं जैसे तुम्हें पुकार कर कहता हूँ, 'मैं हूँ, माँ, तुम क्यों भय कर रही हो'।

हाते.....फुल—उनलोगों के हाथ में लाठी, सिर पर लम्बे लम्बे झबराए केश और कानों में (वे) जवा के फूल खोंसे हुए हैं; (इस अंचल में डकैतों के स्वरूप की यही कल्पना है, यहाँ के डकैत माँ काली को पूजते थे, जवा का फूल इसीका संकेत है); **आमि......सेरे**—मैं कहता हूँ, 'रुको, खबरदार, एक कदम और यदि पास आए (तो) मेरी इस तलवार को ध्यान से देखो तुम सबों को टुकड़े टुकड़े कर समाप्त कर दूँगा; **शुने......उठे**—सुन कर वे उछल पड़े; **चेंचिये........रे**—और चीत्कार कर उठे, 'हाँरे रे रे रे रे'।

तुमि बलले, 'यास ने खोका ओरे।'
आमि बलि, 'देखो-ना चुप करे।'
छुटिये घोड़ा गेलेम तादेर माझे,
ढाल तलोयार झन्झनिये वाजे,
की भयानक लड़ाइ हल मा ये,
शुने तोमार गाये देबे काँटा।
कत लोक ये पालिये गेल भये,
कत लोकेर माथा पड़ल काटा॥

एत लोकेर सङ्गे लड़ाइ क'रे,
भावछ, खोका गेलइ वुझि मरे।
आमि तखन रक्त मेखे घेमे
वलछि एसे, 'लड़ाइ गेछे थेमे।'
तुमि शुने पाल्कि थेके नेमे
चुमो खेये निच्छ आमाय कोले।
बलछ, 'भाग्ये खोका सङ्गे छिल,
की दुर्दशाइ हत ता ना हले।'

तुमि....ओरे—तुम बोलीं, 'खोका (छोटे बच्चे को कहते हैं) जाना नहीं रे'; **आमि......करे**—मैं कहता हूँ, 'चुपचाप देखो ना'; **छुटिये....माझे**—घोड़ा दौड़ा कर उन सबों के बीच गया; **ढाल तलोयार**—ढाल-तलवार; **की.....हल**—कैसी भयानक लड़ाई हुई; **शुने......काँटा**—सुन कर तुम्हारे रोंगटे खड़े हो जाएंगे; **कत........काटा**—भय से कितने लोग भाग गए, कितनों का सिर कट कर गिरा।

एत......मरे—(तुम) सोच रही हो, इतने लोगों के साथ लड़ाई कर खोका शायद मर ही गया; **आमि....थेमे**—तब मैं लहूलुहान पसीने से तर आ कर कहता हूँ, 'लड़ाई बन्द हो गई'; **तुमि.....कोले**—(यह) सुन तुम पालकी से उतर मेरा चुम्बन कर मुझे गोद में ले लिया; **बलछ....हले**—कहती हो, 'भाग्यवश खोका साथ था, नहीं तो कैसी दुर्दशा होती'।

रोज कत की घटे याहा ताहा—
एमन केन सत्यि हय ना आहा ?
ठिक येन एक गल्प हत तबे,
शुनत यारा अवाक हत सबे,
दादा वलत, 'केमन करे हबे,
खोकार गाये एत कि जोर आछे !'
पाड़ार लोके सबाइ बलत शुने—
'भाग्ये खोका छिल मायेर काछे।'

[सितंबर १९०३] 'शिशु'

लुकोचुरि

आमि यदि दुष्टुमि करे
चाँपार गाछे चाँपा हये फुटि,
भोरेर वेला मा गो, डालेर 'परे
कचि पाताय करि लुटोपुटि—
तबे तुमि आमार काछे हारो,
तखन कि मा, चिनते आमाय पारो ?
तुमि डाक 'खोका, कोथाय ओरे',
आमि शुधु हासि चुपटि करे ।।

रोज.....आहा—रोज़ कितना क्या जो-तो घटता है (तव) सचमुच ऐसा क्यों नहीं होता; ठिक.......सवे—तव ठीक जैसे एक गल्प होता और जो लोग सुनते सभी अवाक् हो जाते; दादा—वड़ा भाई; दादा.....आछे—दादा (वड़ा भाई) कहता, 'कैसे होगा, खोका के शरीर में क्या इतना वल है'; पाड़ार......काछे—मुहल्ले के सभी लोग सुन कर कहते, 'भाग्य से खोका माँ के पास था' ।

आमि......फुटि—मैं यदि शरारत कर चम्पा के गाछ पर चम्पा हो कर प्रस्फुटित होऊँ; भोरेर....हार—भोर के समय, माँ, कोमल पत्तियों पर लोट-पोट करें तव तो तुम मुझ से हार मानोगी; तखन.....पार—तव क्या माँ, मुझे पहचान सकोगी; तुमि......करे—तुम पुकारोगी, 'खोका, कहाँ है रे', मैं केवल चुपचाप हँसता रहूँगा ।

यखन तुमि थाकवे ये काज निये
सवइ आमि देखव नयन मेले।
स्नानटि करे चाँपार तला दिये
आसवे तुमि पिठेते चुल फेले—
एखान दिये पुजोर घरे यावे,
दूरेर थेके फुलेर गन्ध पावे।
तखन तुमि वुझते पारवे ना से,
तोमार खोकार गायेर गन्ध आसे॥

दुपुरवेला महाभारत हाते
वसवे तुमि सवार खाओया ह्ले,
गाछेर छाया घरेर जानालाते
पड़वे एसे तोमार पिठे कोले।
आमि आमार छोट छायाखानि
दोलाव तोर वइयेर 'परे आनि।
तखन तुमि वुझते पारवे ना से,
तोमार चोखे खोकार छाया भासे॥

यखन......मेले—जिस समय तुम जो काज ले कर रहोगी (वह) सव में आँखें खोल कर देखूंगा; **स्नानटि.....फेले**—स्नान कर चम्पा के नीचे से पीठ पर केश फेंके तुम आओगी; **एखान.....यावे**—यहाँ से हो कर पूजा-गृह में जाओगी; **दूरेर.....पावे**—दूर से फूल का गन्ध पाओगी; **तखन.....आसे**—उस समय तुम यह नहीं समझ पाओगी कि तुम्हारे खोका के शरीर से ही गन्ध आ रहा है।

दुपुर बेला—दोपहर के समय; **हाते**—हाथ में; **वसवे.....ह्ले**—सव का खाना (समाप्त) हो जाने पर तुम वैठोगी; **गाछेर......कोले**—गाछ की छाया घर की खिड़की से तुम्हारी पीठ और गोद में आ कर पड़ेगी; **आमि.....आनि**—मैं अपनी छोटी छाया को तुम्हारी पुस्तक के ऊपर ला कर डुलाउँगा; **तोमार.....भासे**—तुम्हारी आँखों में खोका की छाया तैर रही है।

सन्ध्यावेलाय प्रदीपखानि ज्वेले
यखन तुमि यावे गोयाल-घरे
तखन आमि फुलेर खेला खेले
टुप् करे मा, पड़व भुँये झरे।
आवार आमि तोमार खोका हब,
'गल्प बलो' तोमाय गिये कब।
तुमि बलबे, 'दुष्टु, छिलि कोथा?'
आमि बलब, 'बलब ना से कथा।'

[सितंबर १९०३] 'शिशु'

जगत्-पारावारेर तीरे

जगत्-पारावारेर तीरे
छेलेरा करे मेला।
अन्तहीन गगनतल
माथार 'परे अचञ्चल,
फेनिल ओइ सुनील जल
नाचिछे सारा बेला।
उठिछे तटे की कोलाहल—
छेलेरा करे मेला।

सन्ध्या....घरे—सन्ध्या के समय प्रदीप जला कर जब तुम गोहाल (गाय के रहने का स्थान) में जाओगी; **तखन......झरे**—माँ तब मैं फूलों का खेला खेल कर टुप कर भूमि पर झड़ पड़ूँगा; **आवार......हव**—फिर मैं तुम्हारा खोका होऊँगा; **गल्प.....कव**—तुमसे जा कर कहूँगा, 'गल्प बोलो'; **तुमि....कोथा**—तुम कहोगी, 'नटखट कहाँ था'; **आमि....कथा**—मैं कहूँगा, 'यह बात नहीं बतलाऊँगा'।

जगत्-पारावारेर तीरे—संसार-समुद्र के किनारे; **छेलेरा......मेला**—बच्चे भीड़ लगाते हैं; **माथार 'परे**—सिर के ऊपर; **ओइ**—वह; **नाचिछे.....बेला**—सब समय नाच रहा है; **उठिछे**—उठ रहा है; **की**—कैसा, कितना।

बालुका दिये बाँधिछे घर,
झिनुक निये खेला
विपुल नील सलिल 'परि
भासाय तारा खेलार तरी
आपन हाते हेलाय गड़ि'
पाताय गाँथा भेला;
जगत्-पारावारेर तीरे
छेलेरा करे खेला।

जाने ना तारा साँतार देओया,
जाने ना जाल-फेला।
डुबारि डुबे मुकुता चेये;
वणिक धाय तरणी बेये;
छेलेरा नुड़ि कुड़ाये पेये
साजाय वसि ढेला
रतन-धन खोँजेना तारा,
जाने ना जाल-फेला।

बालुका......घर—बालु से घर बना रहे हैं; **झिनुक.....खेला**—सीपी ले कर खेल रहे हैं; **'परि**—ऊपर; **भासाय**—बहा रहे हैं; **तारा**—वे; **खेलार तरी**—खेल की नौका; **आपन हाते**—अपने हाथ से; **हेलाय**—अवहेला के साथ; **गड़ि**—गढ़ कर, निर्मित कर; **पाताय......भेला**—पत्तियों को गाँथ (गूँथ) कर बनाया हुआ भेला; **भेला**—केले के थंभ आदि से बनाया हुए जल पर तैरनेवाला पदार्थ, टिकटी।

जाने ना....देओया—वे तैरना नहीं जानते; **जाने.....फेला**—जाल फेंकना नहीं जानते; **डुबारि.....चेये**—मोती को खोजता हुआ गोताखोर गोता लगाता है; **वणिक......बेये**—नौका बहाता हुआ व्यापारी दौड़ता है; **छेलेरा.....ढेला**—बच्चे छोटे पत्थरों को चुन कर बैठे हुए ढेर लगा रहे हैं; **रतन.....फेला**—वे रत्न धन नहीं खोजते, जाल फेंकना नहीं जानते।

फेनिये उठे' सागर हासे,
हासे सागर-वेला।
भीषण ढेउ शिशुर काने
रचिछे गाथा तरल ताने,
दोलना धरि येमन गाने
जननी देय ठेला।
सागर खेले शिशुर साथे,
हासे सागर-वेला।

जगत्-पारावारेर तीरे
छेलेरा करे खेला।
झंझा फिरे गगनतले,
तरणी डुबे सुदूर जले,
मरण-दूत उड़िया चले;
छेलेरा करे खेला
जगत्-पारावारेर तीरे
शिशुर महामेला।

[सितंबर १९०३] 'शिशु'

फेनिये......हासे—फेनिल हो सागर हँसता है; **हासे......वेला**—सागर की तटभूमि हँसती है; **ढेउ**—लहर; **शिशुर काने**—शिशु के कानों में; **रचिछे**—रच रही हैं; **ताने**—तान में; **दोलना.......ठेला**—झुलना पकड़ कर जैसे जननी गाती हुई धक्का देती है; **सागर......साथे**—सागर बच्चे के साथ खेलता है।

फिरे—घूमती है; **मरण......चले**—मरण का दूत उड़ कर चलता है।

अपयश

वाछा रे, तोर चक्षे केन जल।
के तोरे ये की वलेछे
आमाय खुले वल्।
लिखते गिये ह्राते-मुखे
मेखेछ सव कालि ?
नोंरा व'ले ताइ दियेछे गालि ?
छि छि उचित ए कि।
पूर्णशशी माखे मसी—
नोंरा वलुक देखि।

वाछा रे, तोर सवाइ धरे दोष।
आमि देखि सकल ताते
एदेर असन्तोष।
खेलते गिये कापड़खाना
छिँड़े खुँड़े एले,
ताइ कि वले लक्ष्मीछाड़ा छेले।

वाछा—वत्स (पुत्र-कन्या अथवा उम्र में छोटों के लिये स्नेह-संबोधन); तोर......जल—तुम्हारी आँखों में जल क्यों है; के......वलेछे—तुझे किसने क्या कहा है; आमाय........वल—मुझसे स्पष्ट कहो; लिखते.....कालि—लिखते जा कर हाथ-मुख में स्याही पोत ली है; नोंरा......गालि—इसीलिये गन्दा कह कर गाली दी है; छि......कि—छिः छिः यह क्या उचित है; पूर्णशशी....देखि—(अगर) पूर्ण चन्द्रमा स्याही पोत ले (तो) देखें (कौन) गन्दा कहता है।

वाछा......दोष—वेटा, सभी तुम्हारा दोष पकड़ते हैं; आमि......असन्तोष मैं देखती हूँ सब कुछ से ये असन्तुष्ट हैं; खेलते.....एले—खेलने जा कर कपड़ा फाड़-फुड़ कर आए; ताइ......छेले—इसीलिये क्या अभागा लड़का कहते हैं;

छि छि केमन धारा।
छेँड़ा मेघे प्रभात हासे
से कि लक्ष्मीछाड़ा।

कान दियो ना तोमाय के की बले
तोमार नामे अपवाद ये
क्रमेइ बेड़े चले।
मिष्टि तुमि भालोबास
ताइ कि घरे परे
लोभी बले तोमार निन्दे करे।
छि छि हबे की।
तोमाय यारा भालोबासे
तारा तबे की।

[सितंबर १९०३] 'शिशु'

छि......धारा—छिः छिः कैसा ढंग है; **छेँड़ा......लक्ष्मीछाड़ा**—फटे मेघ में प्रभात हँसता है वह क्या अभागा है।

कान दियो.....बले—तुम्हें कौन क्या कहता है (उस ओर) कान न देना; **तोमार....चले**—तुम्हारे नाम में कुत्सा क्रमशः बढ़ती ही जाती है; **मिष्टि......करे** तुम मिष्टि (मिठाई) पसन्द करते हो इसीलिये घर में और बाहर लोभी कह कर (सभी) तुम्हारी निन्दा करते हैं; **छि.....की**—छिः छिः (तब) क्या होगा; **तोमाय......की**—तुम्हें (जो मिष्टि के समान मीठे हो) जो प्यार करते हैं वे तब क्या हैं।

समन्यथी

यदि खोका ना ह्ये
आमि हतेम कुकुर-छाना—
तबे पाछे तोमार पाते
आमि मुख दिते याइ भाते
तुमि करते आमाय माना ?
सत्यि करे वल्
आमाय करिस ने मा छल,
वलते आमाय 'दुर दुर दुर।
कोथा थेके एल एइ कुकुर ?
या, मा, तबे या, मा,
आमाय कोलेर थेके नामा।
आमि खाव ना तोर हाते
आमि खाव ना तोर पाते।

यदि खोका ना ह्ये
आमि हतेम तोमार टिये,
तबे पाछे याइ मा उड़े,
आमाय राखते शिकल दिये ?

यदि.....छाना—मैं खोका (वच्चा) न हो कर यदि कुत्ते का वच्चा होता; **तवे......माना**—वाद में तव तुम्हारी थाली के भात में मुँह लगाने जाता, क्या तुम मुझे मना करती; **सत्यि......वल्**—सच-सच कहो; **आमाय......छल**—मुझसे छल न करो माँ; **वलते......दुर**—मुझे 'दुर दुर' वोलती; **कोथा......कुकुर**—कहाँ से यह कुत्ता आया; **या......या**—जाओ माँ, तव जाओ; **आमाय......नामा**—मुझे गोद से उतारो; **आमि......पाते**—मैं तुम्हारे हाथ से नहीं खाऊँगा, मैं तुम्हारी थाली में नहीं खाऊँगा।

टिये—सुग्गा; **तवे......दिये**—पीछे उड़ न जाऊँ (इस भय से) माँ मुझे क्या जञ्जीर में वाँध रखती;

सत्यि करे वल्
आमाय करिस ने मा छल,
वलते आमाय 'हतभागा पाखि
शिकल केटे दिते चाय रे फाँकि' ?
तवे नामिये दे मा
आमाय भालोवासिस ने मा
आमि रव ना तोर कोले,
आमि वनेइ याव चले।

[सितंवर १९०३] 'शिशु'

समालोचक

वावा नाकि वइ लेखे सब निजे !
किछुइ बोझा याय ना लेखेन की ये।
से दिन पड़े शोनाच्छिलेन तोरे,
बुझेछिलि ? वल् मा सत्यि करे।
एमन लेखाय तबे
वल् देखि की हबे।
तोर मुखे मा, येमन कथा शुनि,
तेमन केन लेखेन नाको उनि।

वलते......फाँकि—मुझे कहती, 'अभागा पक्षी जञ्जीर काट धोखे से उड़ जाना चाहता है'; तवे....मा—तव मुझे उतार दे माँ; आमाय.......मा—(तुम) मुझे प्यार मत करो माँ; आमि......चले—मैं तुम्हारी गोद में नहीं रहूँगा, मैं वन में ही चला जाऊँगा।

वावा.....निजे—पिताजी स्वयं सव किताव लिखते हैं; किछुइ........ये—कुछ भी समझ में नहीं आता कि क्या लिखते हैं; सेदिन....तोरे—तुझे उस दिन पढ़ कर सुना रहे थे; वुझेछिलि—(तूने) समझा था; वल्......करे—सच सच वोलो माँ; एमन......हवे—तव इस लिखने से क्या होगा, वोलो तो; तोर.....उनि—मां, तुम्हारे मुँह से जैसी वातें सुनता हूँ वैसी वे क्यों नहीं लिखते;

ठाकुरमा कि बाबाके कक्खनो
राजार कथा शोनाय निको कोनो।
से-सब कथागुलि
गेछेन बुझि भुलि ?

स्नान करते वेला हल देखे
तुमि केवल याओ मा, डेके डेके,—
खाबार निये तुमि वसेइ थाको,
से-कथा ताँर मनेइ थाके नाको।
करेन सारा वेला
लेखा-लेखा खेला।
वाबार घरे आमि खेलते गेले
तुमि आमाय वल, दुष्टु छेले।
वक आमाय गोल करले परे—
'देखछिस ने लिखछे वावा घरे।'
वल् तो, सत्यि वल्,
लिखे की हय फल।

सितंवर १९०३ 'शिशु'

ठाकुर मा.....कोनो—दादी ने पिताजी को क्या कभी राजा की कोई कथा नहीं सुनाई थी; **से-सब.......भुलि**—लगता है वह सब कथा (वे) भूल गए हैं।

स्नान....डेके—स्नान करने में देरी हो रही है देख कर माँ तुम केवल पुकार पुकार जाती हो; **खावार.......नाको**—खाना ले तुम वैठी ही रहती हो यह वात उनके मन में ही नहीं रहती; **करेन.....खेला**—सव समय लिखने-लिखने का खेल करते रहते हैं; **वावार......छेले**—पिताजी के कमरे में खेलने जाने पर तुम मुझे शरारती कहती हो; **बक......घरे**—शोरगुल करने पर मुझे डाँटती हो, 'देखता नहीं (तेरे) पिताजी कमरे में लिख रहे हैं'; **वल्.....होय**—वोलो तो, सच-सच वोलो लिखने का क्या फल होता है।

कथा कओ

कथा कओ, कथा कओ ।
अनादि अतीत, अनन्त राते केन वसे चेये रओ ?
कथा कओ, कथा कओ ।
युगयुगान्त ढाले तार कथा तोमार सागरतले,
कत जीवनेर कत धारा एसे मिशाय तोमार जले !
सेथा एसे तार स्रोत नाहि आर,
कलकल भाष नीरव ताहार—
तरङ्गहीन भीषण मौन, तुमि तारे कोथा लओ ?
हे अतीत, तुमि हृदये आमार कथा कओ, कथा कओ ।।

कथा कओ, कथा कओ ।
स्तव्ध अतीत, हे गोपनचारी अचेतन तुमि नओ—
कथा केन नाहि कओ ?
तव सञ्चार शुनेछि आमार मर्मेर माझखाने,
कत दिवसेर कत सञ्चय रेखे याओ मोर प्राणे ।।
हे अतीत, तुमि भुवने भुवने
काज करे याओ गोपने गोपने,

कथा—बात, उक्ति, गल्प; **कओ**—कहो; **केन......रओ**—क्यों बैठे देखते रहते हो; **ढाले**—ढालता है; **तार कथा**—अपनी बात; **तोमार**—तुम्हारे; **कत.....जले**—कितने जीवन की कितनी धाराएं आ कर तुम्हारे जल में मिल जाती हैं; **सेथा......आर**—वहाँ आ कर उसका स्रोत (प्रवाह) और नहीं रहता; **भाष**—उक्ति, वचन; **ताहार**—उसका; **तुमि......लओ**—तुम उसे कहाँ लेते (ग्रहण करते) हो; **तुमि हृदये आमार**—तुम मेरे हृदय में ।

नओ—नहीं हो; **केन......कओ**—क्यों नहीं कहते; **शुनेछि......माझखाने**—अपने हृदय के बीच सुना है; **कत......प्राणे**—कितने दिनों के कितने सञ्चय को मेरे प्राणों में रख जाओ; **तुमि......गोपने**—तुम लोक-लोक में गोपन भाव से काज किए जाते हो;

मुखर दिनेर चपलता-माझे स्थिर हये तुमि रओ।
हे अतीत, तुमि गोपने हृदये कथा कओ, कथा कओ ।।

कथा कओ, कथा कओ।
कोनो कथा कभु हाराओ नि तुमि, सब तुमि तुले लओ—
कथा कओ, कथा कओ।
तुमि जीवनेर पाताय पाताय अदृश्य लिपि दिया
पितामहदेर काहिनी लिखिछ मज्जाय मिशाइया।
याहादेर कथा भुलेछे सबाइ
तुमि ताहादेर किछु भोल नाइ,
विस्मृत यत नीरव काहिनी स्तम्भित हये वओ।
भाषा दाओ तारे, हे मुनि अतीत, कथा कओ, कथा कओ ।।

१९०३ 'कथा ओ काहिनी'

मरीचिका

पागल हइया वने वने फिरि आपन गन्धे मम
कस्तुरीमृगसम।
फाल्गुनराते दक्षिणवाये कोथा दिशा खुँजे पाइ ना—
याहा चाइ ताहा भुल करे चाइ, याहा पाइ ताहा चाइ ना ।।

मुखर दिनेर....रओ—मुखर दिन की चपलता के बीच तुम स्थिर हो कर रहते हो।

कोनो......तुमि—कोई बात कभी तुम ने खो नहीं जाने दी; **तुले लओ**—संग्रह कर लेते हो; **जीवनेर पाताय पाताय**—जीवन के पन्ने-पन्ने पर; **लिपि दिया**—लिपि द्वारा; **काहिनी**—कहानी; **लिखिछ**—लिख रहे हो; **मिशाइया**—मिला कर (घुला-मिला कर); **याहादेर......नाइ**—जिनकी बात सभी भूल गए हैं तुम उनका कुछ भी भूले नहीं हो; **यत**—जितनी।

पागल....मम—अपने ही गन्ध से पागल हो वन-वन घूमता फिरता हूँ; **फाल्गुन......ना**—फाल्गुन की रात, दक्षिण पवन, (आगे बढ़ने की) दिशा कहाँ है खोज नहीं पाता; **याहा......चाइ**—जो चाहता हूँ उसे भूल से चाहता हूँ; **याहा......ना**—जो पाता हूँ उसे चाहता नहीं।

वक्ष हइते वाहिर हइया आपन वासना मम
फिरे मरीचिकासम।
वाहु मेलि तारे वक्षे लइते वक्षे फिरिया पाइ ना।
याहा चाइ ताहा भुल करे चाइ, याहा पाइ ताहा चाइ ना॥

निजेर गानेरे बाँधिया धरिते चाहे येन बाँशि मम
उतला पागल-सम।
यारे बाँधि धरे तार माझे आर रागिणी खुँजिया पाइ ना।
याहा चाइ ताहा भुल करे चाइ, याहा पाइ ताहा चाइ ना॥

१९०३ 'उत्सर्ग'

शुभक्षण

ओगो मा, राजार दुलाल यावे आजि मोर घरेर समुखपथे—
आजि ए प्रभाते गृहकाज लये रहिव वलो की मते!
वले दे आमाय की करिव साज,
की छाँदे कवरी वेँधे लव आज,
परिव अङ्गे केमन भङ्गे कोन् वरनेर वास॥

वक्ष......सम—मेरी अपनी वासना हृदय से वाहर निकल मरीचिका के समान घूमती है; **वाहु.....ना**—वाहें खोल कर उसे हृदय में लेने पर फिर हृदय में उसे नहीं पाता।

निजेर......सम—जैसे मेरी वाँसुरी भावावेग से आकुल पागल के समान अपने गानों को वाँध रखना चाहती है; **यारे......ना**—जिसे वाँध रखता हूँ उसमें (अव) और रागिनी खोजने पर नहीं पाता।

ओ गो मा—ओ माँ; **राजार........पथे**—राजा का दुलारा (राजपुत्र) आज मेरे घर के सामने के पथ से जाएगा; **आजि.....मते**—आज इस प्रभात को गृहकाज ले कर किस प्रकार रहूँगी; **वले......साज**—मुझे वतला दे कौन-सा साज करूँगी; **की छाँदे.....आज**—आज किस ढंग से कवरी को वाँध लूँ; **परिव.....वास**—शरीर पर किस रंग का कपड़ा कौन-सी भंगी में पहनूँ।

मा गो, की हल तोमार, अवाक्‌नयने मुख-पाने केन चास ?
आमि दाँड़ाव येथाय वातायनकोणे
से चावे ना सेथा जानि ताहा मने,
फेलिते निमेष देखा हवे शेष, यावे से सुदूरपुरे—
शुधु सङ्गेर वाँशि कोन् माठ हते वाजिवे व्याकुल सुरे।
तबु राजार दुलाल यावे आजि मोर घरेर समुखपथे,
शुधु से निमेष लागि ना करिया वेश रहिव वलो की मते ।।

२

ओगो मा, राजार दुलाल गेल चलि मोर घरेर समुखपथे,
प्रभातेर आलो झलिल ताहार स्वर्णशिखर रथे।
घोमटा खसाये वातायन थेके
निमेषेर लागि नियेछि मा, देखे—
छिँड़ि मणिहार फेलेछि ताहार पथेर धुलार 'परे ।।

मा गो, की हल तोमार, अवाक्‌नयने चाहिस किसेर तरे ?
मोर हार-छेँड़ा मणि नेय नि कुड़ाये,
रथेर चाकाय गेछे से गुँड़ाये—

की हल तोमार—तुम्हें क्या हुआ; **अवाक्....चास**—अवाक् नयनों से (मेरे) मुख की ओर क्यों देखती हो; **आमि....मने**—वातायन के जिस कोने में खड़ी होऊँगी मैं मन ही मन जानती हूँ कि उस ओर वह नहीं देखेगा; **फेलिते....पुरे**—पलक गिरते ही उसे देखना शेष हो जाएगा, वह वहुत दूर चला जाएगा; **शुधु....सुरे**—केवल (उसके) साथ की वाँसुरी किसी मैदान से व्याकुल सुर में वजेगी; **तबु**—तोभी; **शुधु....मते**—केवल उसी क्षण के लिये विना वेश-भूषा किए कैसे रहूँगी, वोलो तो।

गेल चलि—चला गया; **प्रभातेर......रथे**—प्रभात का आलोक उसके रथ के स्वर्ण शिखर पर झलमल कर उठा; **घोमटा......देखे**—घूँघट खिसका कर वातायन से क्षण भर के लिये (उसे) देख लिया है, माँ; **छिँड़ि......परे**—मणिहार तोड़ कर उसके पथ की धूलि पर फेंक दिया है।

चाहिस किसेर तरे—किसलिये देखती है; **मोर....कुड़ाये**—मेरे हार की टूटी हुई मणियों को (उसने) वटोर नहीं लिया; **रथेर......गुँड़ाये**—रथ के चक्के से वह चूर्ण-विचूर्ण हो गया है;

चाकार चिह्न घरेर समुखे पड़े आछे शुधु आँका ।
आमि की दिलेम कारे जाने ना से केउ, धुलाय रहिल ढाका ।
तबु राजार दुलाल गेल चलि मोर घरेर समुखपथे,
मोर वक्षेर मणि ना फेलिया दिया रहिब बलो की मते ।।

२९ जुलाई १९०५ 'खेया'

अनावश्यक

काशेर वने शून्य नदीर तीरे आमि एसे शुधाइ तारे डेके,
'एकला पथे के तुमि याओ धीरे आँचल-आड़े प्रदीपखानि ढेके ?
आमार घरे हयनि आलो ज्वाला,
देउटि तव हेथाय राखो, बाला ।'
गोधूलिते दुटि नयन कालो क्षणेक-तरे आमार मुखे तुले
से कहिल, 'भासिये देव आलो,
दिनेर शेषे ताइ एसेछि कूले ।'
चेये देखि दाँड़िये काशेर वने,
प्रदीप भेसे गेल अकारणे ।।

चाकार....आँका—केवल चक्के का चिह्न (मेरे) घर के सामने अंकित पड़ा हुआ है; आमि.....ढाका—मैंने किसे क्या दिया यह कोई नहीं जानता, (वह) धूल में ढँका रह गया; मोर.....मते—अपने हृदय के हार को विना फेंके किस प्रकार रहूँगी ।

काशेर...डेके—काश के वन में शून्य नदी के तीर पर आ कर उसे पुकार मैं पूछता हूँ; एकला......ढेके—अकेली रास्ते में कौन तुम आँचल की आड़ में प्रदीप ढँके हुए धीरे जा रही हो; आमार......ज्वाला—मेरे घर में वत्ती नहीं जलाई गई है; देउटि.......राखो—अपना दीपक यहाँ रखो; गोधूलिते......कहिल—गोधूलि में दो काले नयनों को क्षण भर के लिये मेरे मुख की ओर उठा कर उसने कहा; भासिये......कूले—प्रदीप वहा दूंगी इसीलिये दिन की समाप्ति पर किनारे पर आई हूँ; चेये.....अकारणे—काश के वन में खड़ा हो कर टक-टकी लगा कर देखता हूँ अकारण प्रदीप वह गया ।

भरा साँझे आँधार हये एले आमि एसे शुधाइ डेके तारे,
'तोमार घरे सकल आलो ज्वेले ए दीपखानि सँपिते याओ कारे ?
आमार घरे हय नि आलो ज्वाला,
देउटि तव हेथाय राखो, बाला ।'
आमार मुखे दुटि नयन कालो क्षणेक-तरे रइल चेये भुले;
से कहिल, 'आमार ए ये आलो
आकाशप्रदीप शून्ये दिब तुले ।'
चेये देखि शून्य गगनकोणे
प्रदीपखानि ज्वले अकारणे ।।

अमावस्या आँधार दुइपहरे शुधाइ आमि ताहार काछे गिये,
'ओगो तुमि चलेछ कार तरे प्रदीपखानि बुकेर काछे निये ?
आमार घरे हय नि आलो ज्वाला,
देउटि तव हेथाय राखो, बाला ।'
अन्धकारे दुटि नयन कालो क्षणेक मोरे देखले चेये तवे;
से कहिल, 'एनेछि एइ आलो,
दीपालिते साजिये दिते हवे ।'
चेये देखि, लक्ष दीपेर सने
दीपखानि तार ज्वले अकारणे ।

१० अगस्त, १९०५ 'खेया'

भरा......तारे—परिपूर्ण सन्ध्या में अन्धकार हो आने पर उसे पुकार कर में पूछता हूँ ; **तोमार.....कारे**—अपने घर सभी प्रदीप जला कर इस दीप को किसे सौंपने जा रही हो; **आमार....भुले**—मेरे मुख को दो काले नयन क्षण भर के लिये भूले (-से) देखते रहे; **से कहिल.....तुले**—उसने कहा, 'मैं अपने इस प्रकाश को आकाश-प्रदीप में शून्य में ऊँचा कर दूँगी' ।

आँधार—अन्धकार ; **दुइपहरे**—दो प्रहर ; **शुधाइ......गिये**—उसके पास जा कर मैं पूछता हूँ; **तुमि....निये**—हृदय के पास प्रदीप ले कर किसके लिये तुम चली हो; **क्षणेक**—क्षण भर; **एनेछि.....हवे**—यह प्रदीप लाई हूँ, दीपावली में सजा देना होगा; **चेये.....अकारणे**—देख रहा हूँ, लाखों दीपों के साथ उसका प्रदीप अकारण जल रहा है ।

कृपण

आमि भिक्षा करे फिरतेछिलेम ग्रामेर पथे पथे,
तुमि तखन चलेछिले तोमार स्वर्णरथे।
अपूर्व एक स्वप्नसम लागतेछिल चक्षे मम—
की विचित्र शोभा तोमार, की विचित्र साज !
आमि मने भावतेछिलेम, ए कोन् महाराज ।।

आजि शुभक्षणे रात पोहालो, भेबेछिलेम तबे,
आज आमारे द्वारे द्वारे फिरते नाहि हबे।
वाहिर हते नाहि हते काहार देखा पेलेम पथे,
चलिते रथ धनधान्य छड़ाबे दुइ धारे—
मुठा मुठा कुड़िये नेब, नेव भारे भारे ।।

देखि सहसा रथ थेमे गेल आमार काछे एसे,
आमार मुख-'पाने चेये नामले तुमि हेसे।
देखे मुखेर प्रसन्नता जुड़िये गेल सकल व्यथा,

आमि....पथे—मैं गाँव के पथ-पथ पर भीख माँगती फिरती थी; **तुमि......रथे**—तुम उस समय अपने सोने के रथ पर चले थे; **लागतेछिल.......मम**—मेरी आँखों में लग रहा था; **की.......तोमार**—कैसी विचित्र तुम्हारी शोभा थी; **की.....साज**—कैसी विचित्र साज-सज्जा थी; **आमि......महाराज**—मैं मन में सोच रही थी, यह कौन महाराज (है) ।

आजि......तबे—तब मैंने सोचा था कि आज शुभ क्षण में ही रात समाप्त हुई है; **आज......हबे**—आज मुझे दरवाज़े-दरवाज़े घूमना नहीं होगा; **वाहिर......पथे**—बाहर होते-न-होते रास्ते में किसके दर्शन हुए; **चलिते.....धारे**—चलते रथ से धन-धान्य लुटाओगे; **मुठा......नेव**—मुट्ठी भर भर कर बटोर लूँगी; **नेव.......भारे**—राशि-राशि लूँगी।

देखि.....एसे—देखती हूँ, सहसा रथ मेरे पास आ कर रुक गया; **आमार ......हेसे**—मेरे मुख की ओर देखते तुम हँस कर उतरे; **देखे......व्यथा**—(तुम्हारे) मुख की प्रसन्नता देख कर मेरी सभी व्यथाएँ शान्त हो गईं;

हेनकाले किसेर लागि तुमि अकस्मात्
'आमाय किछु दाओ गो' ब'ले वाड़िये दिले हात ।।

मरि, ए की कथा राजाधिराज, 'आमाय दाओ गो किछु'—
शुने क्षणकालेर तरे रइनु माथा-निचु ।
तोमार किवा अभाव आछे भिखारि भिक्षुकेर काछे!
ए केवल कौतुकेर वशे आमाय प्रवञ्चना ।
झुलि हते दिलेम तुले एकटि छोटो कणा ।।

यबे, पात्रखानि घरे एने उजाड़ करि— एकि,
भिक्षा-माझे एकटि छोटो सोनार कणा देखि !
दिलेम या राज-भिखारिरे स्वर्ण हये एल फिरे—
तखन काँदि चोखेर जले दुटि नयन भ'रे,
तोमाय केन दिइ नि आमार सकल शून्य करे ?।

२२ मार्च १९०६ 'खेया'

हेनकाले....हात—ऐसे समय किस (चीज़ के) लिये अकस्मात् 'मुझे कुछ दो' कह कर तुमने हाथ फैला दिए; **मरि**—हाय रे (स्त्रियों के कहने का एक ढंग); **ए.... राजाधिराज**—यह कैसी वात, राजाधिराज; **शुने....निचु**—सुन कर क्षण भर के लिये सिर नीचा किए हुए रही; **तोमार.....आछे**—तुम्हें क्या अभाव है; **भिखारि ......काछे**—भिखारी के पास भिक्षुक; **ए......प्रवञ्चना**—यह केवल कौतुक-वश मुझे छल रहे हो; **झुलि...कणा**—झोली से एक छोटा-सा कण (दाना) उठा कर दे दिया ।

यबे—जव; **पात्र......करि**—पात्र घर ला खाली करती हूँ; **एकि**—यह क्या; **भिक्षा.....देखि**—भिक्षा के भीतर सोने का एक छोटा कण देखती हूँ; **दिलेम......फिरे**—राजभिखारी को जो दिया (वह) सोना हो कर लौट आया; **तखन......भरे**—उस समय दोनों आँखों में आँसू भर कर रोती हूँ; **तोमाय...... करे**—तुम्हें अपना सब शून्य कर क्यों नहीं दे दिया ।

विदाय

विदाय देहो, क्षम आमाय भाइ।
काजेर पथे आमि तो आर नाइ।
एगिये सबे याओ-ना दले दले,
जयमाल्य लओ-ना तुलि गले,
आमि एखन वनच्छायातले
अलक्षिते पिछिये येते चाइ।
तोमरा मोरे डाक दियो ना भाइ।

अनेक दूरे एलेम साथे साथे,
चलेछिलेम सवाइ हाते हाते।
एइखानेते दुटि पथेर मोड़े
हिया आमार उठल केमन करे
जानि ने कोन् फुलेर गन्ध-घोरे
सृष्टिछाड़ा व्याकुल वेदनाते।
आर तो चला हय ना साथे साथे।

विदाय देहो—विदाई दो; **क्षम......भाइ**—भाई, मुझे क्षमा करो; **काजेर ......नाइ**—काम-काज के रास्ते पर तो मैं (अव) और नहीं हूँ; **एगिये......दले**—(तुम) सभी दल के दल आगे वढ़ जाओ ना; **जय.....गले**—(आगे वढ़) जयमाला गले में ले लो ना; **आमि......चाइ**—मैं अव वनच्छाया में विना किसीके देखे पिछड़ जाना चाहता हूँ; **तोमरा......भाइ**—भाई, तुमलोग मुझे पुकारना नहीं।

एलेम—आया; **चले......हाते**—सभी हाथ में हाथ (मिला कर) चले थे; **एइ......मोड़े**—यहाँ दो रास्तों की इस मोड़ पर; **हिया......करे**—मेरा हृदय कैसा क्या हो उठा; **जानि.....घोरे**—न-जाने किस फूल के गन्ध के आवेश से; **सृष्टिछाड़ा......वेदनाते**—अद्भुत व्याकुल वेदना से; **आर......साथे**—(अव) तो और साथ साथ चलना नहीं हो पाएगा।

तोमरा आजि छुटेछ यार पाछे
से-सब मिछे हयेछे मोर काछे—
    रत्न खोँजा, राज्य भाङा गड़ा,
    मतेर लागि देश-विदेशे लड़ा,
    आलवाले जल सेचन करा
        उच्चशाखा स्वर्णचाँपार गाछे।
        पारि ने आर चलते सवार पाछे।

आकाश छेये मन-भोलानो हासि
आमार प्राणे बाजालो आज बाँशि।
    लागल आलस पथे चलार माझे,
    हठात् बाधा पड़ल सकल काजे,
    एकटि कथा परान जुड़े बाजे
        'भालोवासि, हायरे भालोवासि'—
        सवार बड़ो हृदय-हरा हासि।

तोमरा तबे विदाय देहो मोरे,
अकाज आमि नियेछि साध करे।

तोमरा......काछे—आज तुमलोग जिसके पीछे दौड़ पड़े हो वह-सब मेरे निकट मिथ्या हो गए हैं; **रत्न खोँजा**—रत्नों की खोज; **राज्य.....गड़ा**—राज्य का विनाश और निर्माण; **मतेर......लड़ा**—मत (मतवाद) के लिये देश विदेश में लड़ना; **स्वर्ण-चाँपार गाछे**—सुनहली चम्पा के गाछ में; **पारि....पाछे**—सभी के पीछे और नहीं चल पाता।

आकाश......हासि—आकाश को छा-कर मन भुलाने वाली हँसी ने आज मेरे प्राणों में वंशी वजाई है ; **लागल....माझे**—रास्ते में चलने के वीच आलस्य लगा; **हठात्......काजे**—हठात् सभी कामों में वाधा पड़ी; **एकटि......भालोवासि**—एक वात प्राणों को तृप्त कर ध्वनित होती रहती है, 'मैं प्यार करता हूँ, हाय रे मैं प्यार करता हूँ'; **सवार....हासि**—हृदय को हरने वाली हँसी सवसे वढ़ कर (है)।

तोमरा......मोरे—तव तुमलोग मुझे विदाई दो; **अकाज.......करे**—स्वेच्छा से मैंने व्यर्थ के काम को अपना लिया है;

मेघेर पथेर पथिक आमि आजि
हाओयार मुखे चले येतेइ राजि,
अकूल-भासा तरीर आमि माझि
वेड़ाइ घुरे अकारणेर घोरे।
तोमरा सबे विदाय देहो मोरे।

२८ मार्च १९०६ 'खेया'

बन्दी

'बन्दी, तोरे के बेँधेछे
एत कठिन क'रे।'

प्रभु आमाय बेँधेछे
वज्रकठिन डोरे।
मने छिल सवार चेये
आमिइ हव वड़ो,
राजार कड़ि करेछिलेम
निजेर घरे जड़ो।
घुम लागिते शुयेछिलेम
प्रभुर शय्या पेते,—

मेघेर.....आजि—मेघ के पथ का मैं आज पथिक हूँ; **हाओयार......राजि**—हवा के रुख चले जाने को ही राज़ी हूँ; **अकूल.....माझि**—विना कूल-किनारे (को ध्यान में रख) बहने वाली नौका का मैं माँझी हूँ; **वेड़ाइ.......घोरे**—अकारण के आवेश (नशे) में ही घूमता फिरता हूँ।

तोरे....क'रे—तुम्हें इतने कठिन ढंग से किसने बाँधा है; **प्रभु......डोरे**—प्रभु, मुझे तो वज्र से भी कठिन डोरी से बाँधा है; **मने.....वड़ो**—मन में था मैं ही सबसे अधिक बड़ा होऊँगा; **राजार......जड़ो**—राजा की कौड़ी अपने घर में जमा किया था; **घुम......पेते**—नींद आने पर प्रभु की शय्या बिछा कर सोया

जेगे देखि बाँधा आछि
आपन भाण्डारेते ।

'वन्दी, ओगो, के गड़ेछे
वज्रवाँधनखानि ।'

आपनि आमि गड़ेछिलेम
वहु यतन मानि ।
भेवेछिलेम आमार प्रताप
करवे जगत् ग्रास,
आमि रब एकला स्वाधीन,
सवाइ हवे दास ।
ताइ गड़ेछि रजनीदिन
लोहार शिकलखाना—
कत आगुन कत आघात
नाइको तार ठिकाना ।
गड़ा यखन शेष हयेछे
कठिन सुकठोर
देखि आमाय वन्दी करे
आमारि एइ डोर ।

२२ अप्रील १९०६ 'खेया'

था; **जेगे.....भाण्डारेते**—जग कर देखा अपने भाण्डार में ही वँधा हुआ हूँ; **वन्दी......खानि**—ओ वन्दी, वज्र-वन्धन किसने गढ़ा (निर्मित किया) है।

आपनि......मानि—वहुत यत्न से मैंने अपने ही गढ़ा था; **भेवेछिलेम......ग्रास**—सोचा था मेरा प्रताप जगत् को ग्रास कर लेगा; **आमि......दास**—मैं अकेले स्वाधीन रहूँगा (और) सभी दास होंगे; **ताइ गड़ेछि**—इसीलिये गढ़ा है; **लोहार शिकलखाना**—लोहे की जञ्जीर; **कत......ठिकाना**—कितनी आग, कितने प्रहार इसके निर्माण के लिये करने पड़े, उसका ठिकाना नहीं; **गड़ा......डोर**—अत्यन्त कठिन और कठोर (जञ्जीर का) गढ़ना जव शेष हुआ (तो) देखता हूँ मेरी यह डोरी (जञ्जीर) ही मुझे वन्दी किए हुए है।

भारततीर्थ

हे मोर चित्त, पुण्य तीर्थे जागो रे धीरे
एइ भारतेर महामानवेर सागरतीरे।
हेथाय दाँड़ाये दु बाहु बाड़ाये नमि नरदेवतारे,
उदार छन्दे परमानन्दे वन्दन करि ताँरे।
ध्यानगम्भीर एइ-ये भूधर, नदी-जपमाला-धृत प्रान्तर,
हेथाय नित्य हेरो पवित्र धरित्रीरे
एइ भारतेर महामानवेर सागरतीरे ।।

केह नाहि जाने, कार आह्वाने कत मानुषेर धारा
दुर्वार स्रोते एल कोथा हते, समुद्रे हल हारा।
हेथाय आर्य, हेथा अनार्य, हेथाय द्राविड़ चीन—
शक-हुन-दल पाठान मोगल एक देहे हल लीन।
पश्चिम आजि खुलियाछे द्वार, सेथा हते सबे आने उपहार
दिबे आर निबे, मिलावे मिलिबे, याबे ना फिरे—
एइ भारतेर महामानवेर सागरतीरे ।।

मोर—मेरे; **एइ**—इस; **हेथाय......देवतारे**—यहाँ खड़ा हो कर दोनों बाँहें बढ़ा कर नर-देवता को नमस्कार करता हूँ; **ताँरे**—उनकी; **एइ-ये**—यह जो; **नदी......प्रान्तर**—नदी-रूपी जपमाला को धारण किए हुए विस्तृत मैदान। **हेरो**—देखो। **एइ.....तीरे**—इस भारत के महामानव (रूपी) सागर के तीर पर।

केह......जाने—कोई नहीं जानता; **कार......हारा**—किसके आह्वान पर कितने मनुष्यों की धारा दुर्निवार स्रोत में कहाँ से आई, (और इस भारत के महा-मानव रूपी) समुद्र में विलीन हो गई; **हेथाय, हेथा**—यहाँ; **एक देहे......लीन**—एक देह में लीन हो गए; **पश्चिम......उपहार**—पश्चिम (पश्चिमी देशों) ने आज द्वार खोला है, वहाँ से सब लोग उपहार लाते हैं; **दिबे......फिरे**—(पश्चिम भी) देगा और लेगा, मिलाएगा और मिलेगा, लौट कर नहीं जाएगा।

रणधारा वाहि जयगान गाहि उन्मादकलरवे
भेदि मरुपथ गिरिपर्वत यारा एसेछिल सबे
तारा मोर माझे सबाइ विराजे, केह नहे नहे दूर—
आमार शोणिते रयेछे ध्वनिते तार विचित्र सुर ।
हे रुद्रवीणा, बाजो, बाजो, बाजो, घृणा करि दूरे आछे यारा आजो
वन्ध नाशिबे—ताराओ आसिबे दाँड़ावे घिरे
एइ भारतेर महामानवेर सागरतीरे ।।

हेथा एकदिन विरामविहीन महा-ओंकारध्वनि
हृदयतन्त्रे एकेर मन्त्रे उठेछिल रनरनि ।
तपस्यावले एकेर अनले बहुरे आहुति दिया
विभेद भुलिल, जागाये तुलिल एकटि विराट हिया ।
सेइ साधनार से आराधनार यज्ञशालार खोला आजि द्वार-
हेथाय सबारे हवे मिलिबारे आनतशिरे
एइ भारतेर महामानवेर सागरतीरे ।।

सेइ होमानले हेरो आजि ज्वले दुखेर रक्तशिखा—
हवे ता सहिते, मर्मे दहिते आछे से भाग्ये लिखा ।

वाहि—वहन कर; **गाहि**—गा कर; **भेदि**—भेद कर; **यारा.....दूर**—जो आए थे (वे) सभी इस समय मेरे (देश के) भीतर विराज रहे हैं, कोई दूर नहीं है, दूर नहीं है; **आमार.......सुर**—मेरे रक्त में उनका विचित्र स्वर ध्वनित हो रहा है; **घृणा....आजो**—आज भी जो घृणा करके दूर हैं; **वन्ध नाशिबे**—वन्धन नष्ट होगा (दूर होगा); **ताराओ....घिरे**—वे भी आएँगे और घेर कर खड़े होंगे ।

हृदयतन्त्रे......रनरनि—हृदय के तार में ऐक्य के मन्त्र से झंकृत हो उठी थी; **तपस्यावले......हिया**—तपस्या के बल से 'एक' की अग्नि में 'वहु' (अनेकत्व) की आहुति दे कर विभेद को भुला एक विराट हृदय को जाग्रत कर दिया; **सेइ ......द्वार**—उस साधना, उस आराधना की यज्ञशाला का द्वार आज खुला हुआ है; **हेथाय......शिरे**—यहाँ सब को नत मस्तक हो मिलना होगा ।

सेइ......शिखा—आज देखो उसी होमाग्नि में दुख की रक्तशिखा जल रही है; **हवे....लिखा**—उसे सहना होगा, हृदय जलता रहेगा यही भाग्य में लिखा है;

ए दुखवहन करो मोर मन, शोनो रे एकेर डाक—
यत लाज भय करो करो जय, अपमान दूरे याक।
दुःसह व्यथा हये अवसान जन्म लभिबे की विशाल प्राण—
पोहाय रजनी, जागिछे जननी विपुल नीड़े
एइ भारतेर महामानवेर सागरतीरे ।।

एसो हे आर्य, एसो अनार्य, हिन्दु मुसलमान—
एसो एसो आज तुमि इङराज, एसो एसो खृस्टान।
एसो ब्राह्मण, शुचि करि मन धरो हात सबाकार—
एसो हे पतित, करो अपनीत सब अपमानभार।
मार अभिषेके एसो एसो त्वरा, मङ्गलघट हय नि ये भरा
सबार-परशे-पवित्र-करा तीर्थनीरे—
आजि भारतेर महामानवेर सागरतीरे ।।

२ जुलाई १९१० 'गीतांजलि'

ए.......डाक—इस दुःख को हे मेरे मन, वहन करो (और) 'एक' (ऐक्य) की पुकार सुनो; **यत.......याक**—जितनी लज्जा, जितना भय है उनको जय करो, अपमान दूर हो जाय; **दुःसह.....प्राण**—दुःसह व्यथा के दूर होने पर कैसा विशाल प्राण जन्मलाभ करेगा; **पोहाय**—व्यतीत हो; **जागिछे**—जाग रही है; **विपुल नीड़े**—विशाल घोंसले (यहाँ देश) में।

एसो—आओ; **इङराज**—अंगरेज; **खृस्टान**—क्रिश्चियन; **शुचि..... सबाकार**—मन पवित्र कर सबके हाथ पकड़ो; **करो......भार**—अपमान के सब भार को उतार दो; **मार.....तीर्थनीरे**—माँ के अभिषेक के लिये शीघ्र आओ, सब के स्पर्श से पवित्र किए हुए तीर्थजल से मङ्गलघट तो अभी भरा नहीं गया है।

अपमानित

हे मोर दुर्भागा देश, यादेर करेछ अपमान
अपमाने हते हबे ताहादेर सबार समान ।
मानुषेर अधिकारे वञ्चित करेछ यारे,
सम्मुखे दाँड़ाये रेखे तबु कोले दाओ नाइ स्थान,
अपमाने हते हबे ताहादेर सबार समान ।।

मानुषेर परशेरे प्रतिदिन ठेकाइया दूरे
घृणा करियाछ तुमि मानुषेर प्राणेर ठाकुरे ।
विधातार रुद्ररोषे दुर्भिक्षेर द्वारे वसे
भाग करे खेते हबे सकलेर साथे अन्नपान
अपमाने हते हबे ताहादेर सबार समान ।।

तोमार आसन हते येथाय तादेर दिले ठेले,
सेथाय शक्तिरे तव निर्वासन दिले अवहेले ।
चरणे दलित हये धुलाय ये याय रये,
सेइ निम्ने नेमे एसो, नहिले नाहि रे परित्राण ।
अपमाने हते हबे आजि तोरे सबार समान ।

मोर—मेरे; **यादेर**—जिनका; **करेछ**—किया है; **अपमान......समान**—(स्वयं) अपमानित हो कर उन सभी के समान होना होगा; **मानुषेर......यारे**—मनुष्य के अधिकार से जिन्हें (तुमने) वञ्चित किया है; **सम्मुखे......स्थान**—सामने खड़ा रखा, फिर भी (क्रोड़) गोद में स्थान नहीं दिया ।

मानुषेर.....ठाकुरे—मनुष्य के स्पर्श से सर्वदा दूर रख तुमने मनुष्य के प्राणों के देवता से घृणा की है; **विधातार....वसे**–विधाता के भयंकर रोष से दुर्भिक्ष के द्वार पर वैठ; **भाग....अन्नपान**–सव के साथ अन्नजल में हिस्सा वँटा कर खाना होगा ।

तोमार.....ठेले—अपने आसन से उन्हें जहाँ ठेल दिया है; **सेथाय.....अवहेले**—अवहेला के साथ अपनी शक्ति को (ही तुमने) वहाँ निर्वासित किया; **चरण.....रये**—पैरों से दलित हो (रौंदा जा कर) वे धूल में पड़े हुए हैं; **सेइ.....परित्राण**—उसी नीचे स्थान पर उतर आओ, नहीं तो परित्राण नहीं है ।

यारे तुमि निचे फेल से तोमारे बाँधिबे ये निचे,
पश्चाते रेखेछ यारे से तोमारे पश्चाते टानिछे।
अज्ञानेर अन्धकारे आड़ाले ढाकिछ यारे
तोमार मङ्गल ढाकि गड़िछे से घोर व्यवधान।
अपमाने हते हवे ताहादेर सबार समान।

शतेक शताब्दी धरे नामे शिरे असम्मानभार,
मानुषेर नारायणे तबुओ कर ना नमस्कार।
तबु नत करि आँखि देखिबारे पाओ ना कि
नेमेछे धुलार तले हीन-पतितेर भगवान।
अपमाने हते हवे सेथा तोरे सबार समान।

देखिते पाओ ना तुमि, मृत्युदूत दाँड़ायेछे द्वारे—
अभिशाप आँकि दिल तोमार जातिर अहंकारे।
सवारे ना यदि डाक', एखनो सरिया थाक',
आपनारे बेँधे राख चौदिके जड़ाये अभिमान—
मृत्यु-माझे हबे तबे चिताभस्मे सवार समान॥

४ जुलाई १९१० 'गीतांजलि'

यारे....निचे—जिसे तुम नीचे फेंकते हो वह तुम्हें नीचे बाँध रखेगा; **पश्चाते टानिछे**—जिसे तुमने पीछे रखा है वह तुम्हें पीछे खींच रहा है; **अज्ञानेर...... व्यवधान**—अज्ञान के अन्धकार के पर्दे से जिसे ढँक रहे हो (वह) तुम्हारे मङ्गल को ढँक कर (एक) वहुत बड़े व्यवधान की सृष्टि कर रहा है।

शतेक....नमस्कार—सैंकड़ों शताब्दियों से असम्मान का भार शिर पर (लिए हुए है) तौभी नर (रूप-) नारायण को नमस्कार नहीं करते; **तबु......भगवान**—तौभी आँखें नीचे की ओर करके क्या देख नहीं पाते कि हीन-पतितों का भगवान घूल के नीचे उतर आया है; **सेथा**—वहाँ; **तोरे**—तुम्हें।

देखिते....द्वारे—तुम देख नहीं पाते (कि) मृत्युदूत द्वार पर खड़ा है; **अभिशाप.... अहंकारे**—तुम्हारे जाति के अहंकार पर अभिशाप अंकित कर दिया है; **सवारे.... डाक**—सव को अगर न पुकारोगे; **एखनो.....थाक**—अव भी हट कर रहोगे; **आपनारे.....अभिमान**—अपने चारों ओर अभिमान लिपटाए, अपने को बाँध रखोगे; **मृत्यु....समान**—मृत्यु के बीच तव चिता के भस्म में सभी के समान होओगे।

धुलामन्दिर

भजन पूजन साधन आराधना समस्त थाक् पड़े ।
रुद्धद्वारे देवालयेर कोणे केन आछिस ओरे !
अन्धकारे लुकिये आपन-मने
काहारे तुइ पूजिस संगोपने,
नयन मेले देख् देखि तुइ चेये—देवता नाइ घरे ।।

तिनि गेछेन येथाय माटि भेङे करछे चाषा चाष—,
पाथर भेङे काटछे येथाय पथ, खाटछे बारो मास ।
रौद्रे जले आछेन सबार साथे,
धुला ताँहार लेगेछे दुइ हाते—
ताँरि मतन शुचि बसन छाड़ि आय रे धुलार 'परे ।।

मुक्ति? ओरे, मुक्ति कोथाय पावि, मुक्ति कोथाय आछे !
आपनि प्रभु सृष्टिबाँधन प'रे बाँधा सबार काछे ।
राखो रे ध्यान, थाक् रे फुलेर डालि,

समस्त......पड़े—सब कुछ पड़ा रहे; **कोणे**—कोने में; **केन......ओरे**—अरे क्यों है; **अन्धकारे......संगोपने**—अन्धकार में छिप कर अपने आप में भुले हुए सब के अगोचर तू किसे पूजता है; **नयन....घरे**—आँखें खोल कर ध्यान से देखो, घर में देवता नहीं हैं।

तिनि....चाष—वे (वहाँ) गए हैं जहाँ मिट्टी फोड़ कर किसान खेती कर रहा है ; **पाथर.......मास**—जहाँ पत्थर काट कर (मजदूर) पथ बना रहा है (और) बारहों महीने परिश्रम कर रहा है; **रौद्रे......साथे**—धूप वर्षा में सब के साथ हैं; **धुला......हाते**—उनके दोनों हाथों में धूलि लगी है; **ताँरि......'परे**—उन्हीं के जैसा स्वच्छ वस्त्र छोड़ कर धूलि के ऊपर आ।

ओरे......आछे—अरे, मुक्ति कहाँ पाएगा, मुक्ति है कहाँ ? **आपनि......काछे**—प्रभु स्वयं सृष्टि के बन्धन में सब के निकट बँधे हुए हैं; **राखो.......डालि**—अरे रखो (अपने) ध्यान, फूल की डाली रहने दो;

छिँड़ुक वस्त्र लागुक धुलाबालि—
कर्मयोगे ताँर साथे एक हये घर्म पड़ुक झरे ।।

११ जुलाई १९१० 'गीतांजलि'

यावार दिन

यावार दिने एइ कथाटि बले येन याइ—
या देखेछि, या पेयेछि तुलना तार नाइ ।
एइ ज्योति-समुद्र-माझे ये शतदल पद्म राजे
तारि मधु पान करेछि, धन्य आमि ताइ ।
यावार दिने एइ कथाटि जानिये येन याइ ।।

विश्वरूपेर खेलाघरे कतइ गेलेम खेले
अपरूपके देखे गेलेम दुटि नयन मेले ।
परश याँरे याय ना करा सकल देहे दिलेन धरा,
एइखाने शेष करेन यदि शेष करे दिन् ताइ—
यावार वेला एइ कथाटि जानिये येन याइ ।।

५ अगस्त १९१० 'गीतांजलि'

छिड़ुक......वालि—कपड़े फटें, धूल-बालू लगे; **कर्म......झरे**—कर्मयोग में उनके साथ एक हो कर पसीना झड़ पड़े (गिरे) ।

यावार दिन—जाने का दिन (प्रस्थान करने का दिन); **यावार......याइ**—जाने के दिन जिसमें यह बात कह कर जाऊँ; **या......नाइ**—जो देखा है, जो पाया है, उसकी तुलना नहीं है; **एइ.....ताइ**—इस ज्योति-समुद्र के बीच जो शतदल पद्म शोभा पा रहा है उसी का मधु पान किया है, इसीलिये मैं धन्य हूँ ।

विश्व......खेले—विश्व रूपी खेलाघर में (न-जाने) कितना (खेल) खेल गया; **अपरूप........मेले**—दोनों आँखों को खोल कर अपरूप को देख गया; **परश......धरा**—जिन्हें स्पर्श नहीं किया जा सकता (उन्होंने) सम्पूर्ण शरीर से पकड़ाई दी है (अपनेको पकड़ा दिया है); **एइ.......ताइ**—यहीं (वे) अगर शेष कर दें तो शेष ही कर दें; **यावार......याइ**—जाने के समय जिसमें यह बात जनाता जाऊँ ।

शङ्ख

तोमार शङ्ख धुलाय प'ड़े, केमन करे सइब !
बातास आलो गेल मरे, एकि रे दुर्दैव !
लड़बि के आय ध्वजा बेये,   गान आछे यार ओठ्-ना गेये,
चलबि यारा चल् रे धेये, आय-ना रे निःशङ्क ।।
धुलाय पड़े रइल चेये ओइ-ये अभय शङ्ख ।।

चलेछिलेम पूजार घरे साजिये फुलेर अर्घ्य ।
खुँजि सारा दिनेर परे कोथाय शान्तिस्वर्ग ।
एबार आमार हृदयक्षत   भेवेछिलेम हवे गत,
धुये मलिन चिह्न यत हव निष्कलङ्क ।
पथे देखि, धुलाय नत तोमार महाशङ्ख ।।

आरतिदीप एइ कि ज्वाला, एइ कि आमार सन्ध्या ?
गाँथव रक्तजवार माला ? हाय रजनीगन्धा !

तोमार....सइब—तुम्हारा शङ्ख धूल में पड़ा हुआ है, (यह) कैसे सहूँगा; **बातास....दुर्दैव**—हवा, प्रकाश शेष हो गए, यह कैसा दुर्दैव है; **लड़वि....वेये**—कौन लड़ेगा, ध्वजा वहन करता हुआ आ; **गान.....गेये**—जिसे गान (गाना) है, गा उठ ना; **चलवि.....धेये**—जो चलेगा, दौड़ कर चला आ; **आय......निःशंक**—निःशंक (हो कर) आ ना; **धुलाय.....शङ्ख**—धूल में वह अभय-शङ्ख देखता हुआ पड़ा है।

चलेछिलेम......अर्घ्य—फूल का अर्घ्य सजा कर पूजागृह में चला था; **खुँजि.......स्वर्ग**—सम्पूर्ण दिन के शेष होने पर खोजता हूँ शान्ति-स्वर्ग कहाँ है; **एबार......गत**—सोचा था इस वार मेरा हृदय-क्षत मिट जाएगा; **धुये........निष्कलंक**—जितने मलिन चिन्ह हैं (उन्हें) धो कर निष्कलंक होउँगा ; **पथे देखि**—रास्ते में देखता हूँ; **धुलाय......शङ्ख**—तुम्हारा महाशङ्ख धूल में नत है।

आरति.....सन्ध्या—क्या यही आरती जलाना है, क्या यही मेरी सन्ध्या है; **गाँथब.....माला**—रक्त जवा (लाल जपा कुसुम) की माला गाथूँगा;

भेवेछिलेम योझायुझि मिटिये पाव विराम खुँजि,
चुकिये दिये ऋणेर पुँजि लब तोमार अङ्क ।
हेनकाले डाकल वुझि नीरव तव शङ्ख ।।

यौवनेरइ परशमणि कराओ तबे स्पर्श ।
दीपक ताने उठुक ध्वनि दीप्त प्राणेर हर्ष ।
निशार वक्ष विदार क'रे उद्बोधने गगन भ'रे
अन्ध दिके दिगन्तरे जागाओ ना आतङ्क ।
दुइ हाते आज तुलव धरे तोमार जयशङ्ख ।।

जानि जानि, तन्द्रा मम रइबे ना आर चक्षे ।
जानि, श्रावण-धारा-सम बाण बाजिबे वक्षे ।
केउ-वा छुटे आसबे पाशे, काँदबे वा केउ दीर्घश्वासे,
दुःस्वपने काँपवे त्रासे सुप्तिर पर्यङ्क ।
वाजवे ये आज महोल्लासे तोमार महाशङ्ख ।।

भेवेछिलेम......खुंजि—सोचा था संघर्ष मिटा कर विराम खोज पाऊँगा; **चुकिये......अंक**—ऋण का धन चुका कर तुम्हारी गोद (में स्थान) लूँगा; **हेनकाले......शङ्ख**—ऐसे समय लगता है तुम्हारे नीरव शङ्ख ने (मुझे) पुकारा।

यौवनेरइ......स्पर्श—तव यौवन के ही पारस पत्थर का स्पर्श कराओ; **दीपक**—दीपक राग में दीप्त प्राणों का हर्ष ध्वनित हो उठे; **निशार......क'रे**—निशा के वक्ष को विदीर्ण कर; **उद्बोधने......आतंक**—उद्बोधन से आकाश को भर कर अन्धकार-पूर्ण दिक्‌दिगन्तर में आतंक जगाओ ना ; **दुइ......जयशङ्ख**—आज तुम्हारे जयशङ्ख को दोनों हाथों से उठा लूँगा।

जानि......चक्षे—जानता हूँ, जानता हूँ मेरी आँखों में (अब) और तन्द्रा नहीं रहेगी; **जानि.......वक्षे**—जानता हूँ श्रावणधारा के समान (मेरे) वक्ष में बाण विधेंगे; **केउ.......श्वासे**—कोई दौड़ कर बगल में आएगा अथवा कोई दीर्घश्वास छोड़ता हुआ रोएगा; **दुःस्वपने.......पर्यङ्क**—सुप्ति का पर्यंक भय से दुःस्वप्न में काँपेगा; **वाजवे.......शङ्ख**—आज तुम्हारा महाशङ्ख महा-उल्लास से बजेगा।

तोमार काछे आराम चेये पेलेम शुधु लज्जा ।
एवार सकल अङ्ग छेये पराओ रणसज्जा ।
व्याघात आसुक नव नव—आघात खेये अचल रब,
वक्षे आमार दुःखे तव बाजबे जयडङ्क ।
देब सकल शक्ति, लब अभय तव शङ्ख ।।

२६ मई १९१४ 'वलाका'

छवि

तुमि कि केवल छवि, शुधु पटे लिखा?
ओई-ये सुदूर नीहारिका
यारा करे आछे भिड़
आकाशेर नीड़,
ओइ यारा दिनरात्रि
आलो-हाते चलियाछे आँधारेर यात्री
ग्रह तारा रवि
तुमि कि तादेर मतो सत्य नओ ?
हाय छवि, तुमि शुधु छवि ?।

तोमार......लज्जा—तुम्हारे पास आराम की चाहना कर केवल लज्जा पाई; **एवार......सज्जा**—अब सभी अंगों को आच्छादित करते हुए रण-सज्जा से सज्जित करो; **व्याघात:.....रव**—नयी नयी बाधाएँ आवें—आघात खा कर भी अचल रहूँगा; देव—दूँगा; लव—लूँगा।

छवि—तस्वीर; **शुधु**—मात्र, केवल; **तुमि......लिखा**—तुम क्या पट पर अंकित केवल तस्वीर हो; **ओइ ये**—वह जो; **नीहारिका**—धूमिल वाष्प की तरह आकाश में फैली हुई रहती है जिसमें असंख्य तारिकाएँ होती हैं। **यारा.... भिड़**—जो भीड़ किए हुए हैं; **ओइ यारा**—वे जो; **आलो......यात्री**—अंधकार के यात्री हाथ में आलोक लिए हुए चले हैं; **तुमि.......नओ**—तुम क्या उनके समान सत्य नहीं हो।

चिरचञ्चलेर माझे तुमि केन शान्त हये रओ?
पथिकेर सङ्ग लओ
ओगो पथहीन—
केन रात्रिदिन
सकलेर माझे थेके सबा हते आछ एत दूरे
स्थिरतार चिर-अन्तःपुरे?
एइ धूलि
धूसर अञ्चल तुलि
वायुभरे धाय दिके दिके,
वैशाखे से विधवार आभरण खुलि
तपस्विनी धरणीरे साजाय गैरिके,
अङ्गे तार पत्रलिखा देय लिखे
वसन्तेर मिलन-उषाय—
एइ धूलि एओ सत्य हाय।
एइ तृण
विश्वेर चरणतले लीन—
एरा ये अस्थिर, ताइ एरा सत्य सबि।
तुमि स्थिर, तुमि छवि,
तुमि शुधु छवि॥

चिर......रओ—चिर-चंचल के वीच तुम क्यों शान्त (वनी) रहती हो; **लओ**—लो; **सकलेर.....दूरे**—सब के वीच रह सब से इतनी दूर हो; **एइ**—यह; **तुलि**—उठा कर; **धाय.....दिके**—सभी दिशाओं में दौड़ती है; **वैशाखे.....गैरिके**—वैशाख में वह तपस्विनी धरणी के विधवा जैसे आभरण को खोल कर, गैरिक (गेरुआ जैसे लाल) वस्त्र में सजाती है; **अङ्गे.......उषाय**—वसन्त की मिलन-उषा में उसके अङ्गों पर चित्र-रचना कर देती है; **एइ......हाय**—यही धूल, हाय यह भी सत्य है; **एरा......सबि**—ये जो अस्थिर हैं, इसीलिये ये सभी सत्य हैं।

एकदिन एइ पथे चलेछिले आमादेर पाशे।
वक्ष तव दुलित निश्वासे—
अङ्गे अङ्गे प्राण तव
कत गाने कत नाचे
रचियाछे
आपनार छन्द नव नव
विश्वताले रेखे ताल—
से ये आज हल कतकाल !
ए जीवने
आमार भुवने
कत सत्य छिले !
मोर चक्षे ए निखिले
दिके दिके तुमिइ लिखिले
रूपेर तूलिका धरि रसेर मुरति।
से प्रभाते तुमिइ तो छिले
ए विश्वेर वाणी मूर्तिमती ।।

एकसाथे पथे येते येते
रजनीर आड़ालेते
तुमि गेले थामि।

एइ पथे.....पाशे—इसी रास्ते हमलोगों के बगल में (तुम) चली थी; **कत**—कितने; **रचियाछे**–रचना की है; **आपनार....ताल**–अपने नये नये छन्द, विश्व की ताल से ताल मिला कर; **से......काल**—इसको आज कितने दिन हो गए (वीते); **ए जीवने....छिले**–इस जीवन में मेरे इस भुवन में कितनी (तुम) सत्य थी; **मोर चक्षे**—मेरी आँखों में; **ए निखिले**—इस विश्व में; **दिके.....लिखिले**—दिक् दिक् में तुमने ही अंकित किया; **रूपेर......मुरति**—रूप की तूलिका ले कर रस की मूर्ति को; **से.....मूर्तिमती**—उस प्रभात में तुम्हीं तो इस विश्व की मूर्तिमती वाणी थे।

एकसाथे.......थामि—रास्ते में एक साथ जाते-जाते रात्रि के पर्दे में तुम रुक गई;

तार परे आमि
कत दु:खे सुखे
रात्रिदिन चलेछि सम्मुखे।
चलेछे जोयार-भाँटा आलोके आँधारे
आकाशपाथारे;
पथेर दु धारे
चलेछे फुलेर दल नीरव चरणे
वरने वरने;
सहस्रधाराय छोटे दुरन्त जीवननिर्झरिणी
मरणेर वाजाये किङ्किणी।
अजानार सुरे
चलियाछि दूर हते दूरे,
मेतेछि पथेर प्रेमे।
तुमि पथ हते नेमे
येखाने दाँड़ाले
सेखानेइ आछ थेमे।
एइ तृण, एइ धूलि, ओइ तारा, ओइ शशीरवि,
सवार आड़ाले
तुमि छवि, तुमि शुधु छवि।।

तार.......सम्मुखे—उसके वाद में कितने सुख-दुःख (का भोग करता हुआ) रातदिन सामने चलता रहा हूँ; **चलेछे.......पाथारे**—आकाश के समुद्र में आलोक और अंधकार का ज्वार-भाटा चला है; **पथेर........वरने**—रास्ते के दोनों ओर नीरव चरणों से रंग-विरंग के फूलों का दल चला है; **सहस्र.....किङ्किणी**—दुर्दमनीय जीवन की निर्झरिणी मरण की किंकिणी वजाती हुई सहस्र धाराओं में दौड़ती है; **अजानार.....दूरे**—अनजान सुर में दूर से दूर चला हूँ; **मेतेछि......प्रेमे**—पथ के प्रेम से मत्त हुआ हूँ; **तुमि.....थेमे**—तुम रास्ते से उतर जहाँ खड़ी हुई वहीं पर खड़ी हो; **एइ**—यह; **ओइ**—वह; **सवार आड़ाले**—सव की ओट में, सव के अन्तराल में।

की प्रलाप कहे कवि ?
तुमि छवि ?
नहे, नहे, नओ शुधु छवि ।
के बले, रयेछ स्थिर रेखार बन्धने
निस्तब्ध क्रन्दने ?
मरि मरि, से आनन्द थेमे येत यदि
एइ नदी
हारात तरङ्गवेग,
एइ मेघ
मुछिया फेलित तार सोनार लिखन ।
तोमार चिकन
चिकुरेर छायाखानि विश्व हते यदि मिलाइत
तबे
एकदिन कबे
चञ्चल पवने लीलायित
मर्मरमुखर छाया माधवीवनेर
हत स्वपनेर ।
तोमाय कि गियेछिनु भुले ?
तुमि ये नियेछ बासा जीवनेर मूले,
ताइ भूल ।

की......कवि—कवि क्या प्रलाप कर रहा है; नहे......छवि—नहीं, नहीं, केवल तस्वीर नहीं हो; के......क्रन्दन—कौन कहता है निस्तब्ध क्रन्दन करती हुई (तुम) रेखा के बन्धन में स्थिर हो; मरि मरि—(सुन्दर वस्तु को देख कर विस्मय अथवा प्रशंसा-सूचक अव्यय); से......वेग—अगर वह आनन्द रुक जाता तो यह नदी तरङ्ग के वेग को खो देती; एइ......लिखन—यह मेघ अपने सुनहले अंकन को मिटा देता; तोमार.....मिलाइत—तुम्हारे सुन्दर चिकुर की छाया यदि विश्व से मिट जाती; तबे—तब; कबे—कब; हत स्वपनेर—स्वप्न (की वस्तु) हो जाती; तोमाय.......भुले—तुम्हें क्या भूल गया था; तुमि.......भुल—तुमने जीवन के मूल में स्थान जो ग्रहण किया है, इसलिये (मुझसे) यह भूल हुई (उसी कारण मुझसे यह विस्मृति हो पाती है);

अन्यमने चलि पथे—भुलि ने कि फुल,
भुलि ने कि तारा ?
तबुओ ताहारा
प्राणेर निश्वासवायु करे सुमधुर,
भुलेर शून्यता-माझे भरि देय सुर।
भुले थाका नय से तो भोला;
विस्मृतिर मर्मे बसि रक्ते मोर दियेछ ये दोला।
नयनसम्मुखे तुमि नाइ,
नयनेर माझखाने नियेछ ये ठाँइ।
आजि ताइ
श्यामले श्यामल तुमि, नीलीमाय नील।
आमार निखिल
तोमाते पेयेछे तार अन्तरेर मिल।
नाहि जानि, केह नाहि जाने—
तव सुर वाजे मोर गाने;
कविर अन्तरे तुमि कवि—
नओ छवि, नओ छवि, नओ शुधु छवि ॥

अन्यमने.......तारा—अन्यमनस्क रास्ते में चलता हुआ क्या फूल को नहीं भूल गया हूँ, क्या तारा को नहीं भूल गया हूँ; **तबुओ.......सुर**—तौभी वे प्राणों की निश्वास-वायु को मधुर बना देते हैं, भूल जाने की शून्यता के वीच वे सुर भर देते हैं; **भुले......भोला**—वह भुला रहना नहीं है, वह तो भूल जाना है; **विस्मृतिर....,...दोला**—विस्मृति के मर्म में वैठ मेरे रक्त को (तुमने) स्पन्दित किया है; **नयनसम्मुखे......ठाँइ**—आँखों के सामने तुम नहीं हो, (वरन्) तुमने आँखों के वीच स्थान ग्रहण किया है; **आजि......नील**—इसीलिये आज तुम श्यामल में की श्यामलता और नीलिमा की नील हो गई हो; **आमार.......मिल**—मेरे जगत् ने तुम्हीं में अपने अन्तर की समता पाई है; **नाहि......गाने**—(में) नहीं जानता, कोई नहीं जानता (कि) तुम्हारा (हीं) सुर मेरे गान में वजता है; **कविर.....कवि**—कवि के अन्तर में तुम कवि (हो)।

तोमारे पेयेछि कोन् प्राते,
तार परे हारायेछि राते।
तार परे अन्धकारे अगोचरे तोमारेइ लभि।
नओ छवि, नओ तुमि छवि ।।

२० अक्टूबर १९१४ 'वलाका'

शा-जाहान

ए कथा जानिते तुमि भारत-ईश्वर शा-जाहान,
कालस्रोते भेसे याय जीवन यौवन धनमान।
शुधु तव अन्तरवेदना
चिरन्तन हये थाक्, सम्राटेर छिल ए साधना।
राजशक्ति वज्रसुकठिन
सन्ध्यारक्तरागसम तन्द्रातले हय होक लीन,
केवल एकटि दीर्घश्वास
नित्य-उच्छ्वसित हये सकरुण करुक आकाश,
एइ तव मने छिल आश।
हीरामुक्तामाणिक्येर घटा
येन शून्य दिगन्तेर इन्द्रजाल इन्द्रधनुच्छटा

तोमारे......राते—तुम्हें किस प्रभात में पाया है और उसके वाद रात में खो दिया है; **तार......लभि**—उसके वाद अन्वकार में अगोचर तुम्हें ही पाता हूँ।

शा-जाहान—शाहजहाँ; **ए कथा.....शा-जाहान**—भारत-सम्राट् शाहजहाँ, यह वात क्या तुम जानते थे; **कालस्रोते....याय**—कालस्रोत में वह जाता है; **शुधु ......साधना**—केवल तुम्हारी अन्तर्वेदना चिरन्तन हो कर रहे, सम्राट् की (क्या) यही साधना थी; **तन्द्रा........लीन**—तन्द्रा में लीन हो जाय तो हो जाय; **एकटि**—एक; **हये**—हो कर; **सकरुण......आकाश**—आकाश को करुण वनावे; **एइ......आश**—यही तुम्हारे मन में आशा थी; **येन**—जैसे ;

याय यदि लुप्त हये याक,
शुधु थाक्
एकविन्दु नयनेर जल
कालेर कपोलतले शुभ्र समुज्ज्वल
ए ताजमहल ।।

हाय ओरे मानवहृदय,
बार बार
कारो पाने फिरे चाहिबार
नाइ ये समय,
नाइ नाइ ।
जीवनेर खरस्रोते भासिछ सदाइ
भुवनेर घाटे घाटे—
एक हाटे लओ वोझा, शून्य करे दाओ अन्य हाटे ।
दक्षिणेर मन्त्रगुञ्जरणे
तव कुञ्जवने
वसन्तेर माधवी मञ्जरि
येइ क्षणे देय भरि
मालञ्चेर चञ्चल अञ्चल
विदायगोधूलि आसे धुलाय छड़ाय छिन्न दल,

याय.......याक—यदि लुप्त हो जाय तो हो जाय; शुधु थाक—केवल रहे ।

कारो.......समय—किसी की ओर फिर कर देखने का समय तो नहीं है; नाइ नाइ—नहीं है, नहीं है। भासिछ सदाइ—सर्वदा ही वह रहे हो; लओ—लेते हो; करे दाओ—कर देते हो; दक्षिणेर मन्त्रगुञ्जरणे—दक्षिण पवन के मन्त्र का गुञ्जरण; येइ.......भरि—जिस क्षण भर देता है; मालञ्चेर—फुलवाड़ी के; विदाय.......दल—विदाई की गोधूलि आ कर (उस माधवी के फूल के) छिन्न दल को धूल में विखेर देती है;

समय ये नाइ,
आवार शिशिररात्रे ताइ
निकुञ्जे फुटाये नव कुन्दराजि
साजाइते हेमन्तेर अश्रुभरा आनन्देर साजि।
हाय रे हृदय,
तोमार सञ्चय
दिनान्ते निशान्ते शुधु पथप्रान्ते फेले येते हय।
नाइ नाइ, नाइ ये समय।।

हे सम्राट, ताइ तव शङ्कित हृदय
चेयेछिल करिवारे समयेर हृदयहरण
सौन्दर्ये भुलाये।
कण्ठे तार की माला दुलाये
करिले वरण
रूपहीन मरणेरे मृत्युहीन अपरूप साजे!
रहे ना ये
विलापेर अवकाश
वारो मास,
ताइ तव अशान्त क्रन्दने
चिरमौनजाल दिये बेँधे दिले कठिन वन्धने।

आवार......साजि—इसीलिये हेमन्त के अश्रुपूर्ण आनन्द की डलिया को सजाने के लिये शिशिर की रात्रि में फिर निकुञ्ज में नव कुन्द की पंक्तियां प्रस्फुटित होती हैं; **तोमार......हय**—अपने सञ्चय को दिन तथा रात्रि के शेष होने पर पथ में केवल फेंक जाना पड़ता है; **नाइ......समय**—समय जो नहीं है, नहीं है।

ताइ......भुलाये—इसीलिये तुम्हारे शंकित हृदय ने सौन्दर्य में भुला कर समय के हृदय को हरण करना चाहा था; **कण्ठे......वरण**—उसके कण्ठ में कैसी माला झुला कर; **करिले वरण**—वरण किया; **मरणेरे**—मृत्यु को; **साजे**—साज-सज्जा में; **रहे......मास**—विलाप (करने) का अवकाश वारहों मास नहीं रहता; **ताइ......बन्धने**—इसीलिये अपने अशान्त क्रन्दन को चिर मौन के जाल से कठिन बन्धन में वाँध दिया;

ज्योत्स्नाराते निभृत मन्दिरे
प्रेयसीरे
ये नामे डाकिते धीरे धीरे
सेइ काने-काने डाका रेखे गेले एइखाने
अनन्तेर काने।
प्रेमेर करुण कोमलता,
फुटिल ता
सौन्दर्येर पुष्पपुञ्जे प्रशान्त पाषाणे॥

हे सम्राट कवि,
एइ तव हृदयेर छवि,
एइ तव नव मेघदूत,
अपूर्व अद्भुत
छन्दे गाने
उठियाछे अलक्ष्येर पाने—
येथा तव विरहिणी प्रिया
रयेछे मिशिया
प्रभातेर अरुण-आभासे,
क्लान्तसन्ध्या दिगन्तेर करुण निश्वासे,
पूर्णिमाय देहहीन चामेलीर लावण्यविलासे,

प्रेयसीरे—प्रेयसी को; ये......काने—जिस नाम से धीरे-धीरे पुकारते अपने उसी कानों-कानों में पुकारने को, यहाँ पर अनन्त के कानों में रख गए; फुटिल ता—वही प्रस्फुटित हुआ।

एइ......छवि—यही क्या तुम्हारे हृदय की तस्वीर है; एइ—यही; उठियाछे......पाने—अलक्ष्य की ओर (गूँज) उठा है; येथा—जहाँ; रयेछे...... आभासे—प्रभात की लालिमा में घुली-मिली हुई है; पूर्णिमाय......विलासे—पूर्णिमा में देहहीन चमेली के लावण्य-विलास में;

भाषार अतीत तीरे
काङाल नयन येथा द्वार हते आसे फिरे फिरे।
तोमार सौन्दर्यदूत युग युग धरि
एड़ाइया कालेर प्रहरी
चलियाछे वाक्यहारा एइ वार्ता निया—
'भुलि नाइ, भुलि नाइ, भुलि नाइ प्रिया।'

चले गेछ तुमि आज,
महाराज—
राज्य तव स्वप्नसम गेछे छुटे,
सिंहासन गेछे टुटे,
तव सैन्यदल
यादेर चरणभरे धरणी करित टलमल
ताहादेर स्मृति आज वायुभरे
उड़े याय दिल्लिर पथेर धूलि-'परे।
वन्दीरा गाहे ना गान,
यमुनाकल्लोल-साथे नहवत मिलाय ना तान।

भाषार.......तीरे—भाषातीत (जहाँ भाषा की पहुँच न हो) तीर पर; **काङाल......फिरे**—जहाँ कंगाल नयन द्वार से लौट-लौट आते हैं; **तोमार...... प्रिया**—तुम्हारा सौन्दर्य-दूत (अर्थात् ताजमहल) काल-प्रहरी को अमान्य करता हुआ युग-युगान्तर के लिये वाक्यहीन यह संदेश ले कर चला है कि 'प्रिये, (तुझे) भूला नहीं, भूला नहीं, भूला नहीं'।

चले.....महाराज—महाराज, आज तुम चले गए हो; **राज्य....टुटे**—तुम्हारा राज्य सपने के समान भाग गया है, सिंहासन नष्ट हो गया है; **यादेर......टलमल**—जिनके पैरों के भार से पृथ्वी टलमल करती; **ताहादेर......परे**—उनकी स्मृति आज दिल्ली के रास्ते की धूलि के ऊपर हवा से उड़-उड़ जाती है; **वन्दी........ गान**—वन्दी गान नहीं गाते; **नहवत**—नौवत;

तव पुरसुन्दरीर नूपुरनिक्क्वण
भग्न प्रासादेर कोणे
म'रे गिये झिल्लिस्वने
काँदाय रे निशार गगन।
तबुओ तोमार दूत अमलिन,
श्रान्तिक्लान्तिहीन,
तुच्छ करि राज्य-भाङागड़ा,
तुच्छ करि जीवनमृत्युर ओठापड़ा
युगे युगान्तरे
कहितेछे एकस्वरे
चिरविरहीर वाणी निया—
'भुलि नाइ, भुलि नाइ, भुलि नाइ प्रिया!'

मिथ्या कथा! के वले ये भोल नाइ?
के वले रे खोल नाइ
स्मृतिर पिञ्जरद्वार?
अतीतेर चिर-अस्त-अन्धकार
आजिओ हृदय तव रेखेछे वाँधिया?
विस्मृतिर मुक्तिपथ दिया
आजिओ से हय नि बाहिर?
समाधिमन्दिर एक ठाँइ रहे चिरस्थिर,

निक्क्वण—झंकार; कोणे—कोने में; म'रे......गगन—मर कर झिल्ली-रव में रात्रि के आकाश को रुलाती है; तवुओ—तौ भी; तोमार दूत—तुम्हारा दूत (अर्थात् ताजमहल); तुच्छ......गड़ा—राज्य के वनने-विगड़ने को तुच्छ कर; ओठापड़ा—उठना-पड़ना; कहितेछे—कह रहा है; निया—ले कर।

के......नाइ—कौन कहता है कि भूले नहीं; के......द्वार—कौन कहता है कि स्मृति के पिञ्जरद्वार को (तुमने) खोला नहीं; आजिओ—आज भी; रेखेछे वांधिया—वांध रखा है; दिया—से; से......वाहिर—वह वाहर नहीं हुआ; ठांइ—स्थान;

धरार धुलाय थाकि
स्मरणेर आवरणे मरणेरे यत्ने राखे ढाकि।
जीवनेरे के राखिते पारे ?
आकाशेर प्रति तारा डाकिछे ताहारे।
तार निमन्त्रण लोके लोके
नव नव पूर्वाचले आलोके आलोके।
स्मरणेर ग्रन्थि टुटे
से ये याय छुटे
विश्वपथे बन्धनविहीन।
महाराज, कोनो महाराज्य कोनोदिन
पारे नाइ तोमारे धरिते।
समुद्रस्तनित पृथ्वी, हे विराट, तोमारे भरिते
नाहि पारे—
ताइ ए धरारे
जीवन-उत्सव-शेषे दुइ पाये ठेले
मृत्पात्रेर मतो याओ फेले।
तोमार कीर्तिर चेये तुमि ये महत्,
ताइ तव जीवनेर रथ

धरार.....ढाकि—पृथ्वी की धूल में रह स्मृति के आवरण में मरण को यत्नपूर्वक ढक रखता है। **जीवनेरे......पारे**—जीवन को (बाँध कर) कौन रख सकता है; **आकाशेर.....ताहारे**—आकाश का प्रत्येक तारा उसे बुला रहा है; **तार**—उसका; **से.......विहीन**—वह दौड़ बन्धनहीन संसार के पथ पर चला जाता है; **कोनो.......धरिते**—कोई (भी) महाराज्य किसी (भी दिन) तुम्हें पकड़ नहीं सका; **स्तनित**—ध्वनित; **तोमारे.....पारे**—तुम्हें पूर्ण नहीं कर सकती; **ताइ......फेले**—इसीलिये इस पृथ्वी को दोनों पैरों से ठेल कर जीवन-उत्सव के अन्त में मिट्टी के पात्र के समान फेंक देते हो; **तोमार.....महत्**—अपनी कीर्ति की अपेक्षा तुम महत् हो; **ताइ.....वारम्बार**—इसीलिये तुम्हारा जीवन-रथ

पश्चाते फेलिया याय कीर्तिरे तोमार
वारम्वार।
ताइ
चिह्न तव पड़े आछे, तुमि हेथा नाइ।
ये प्रेम सम्मुख-पाने
चलिते चालाते नाहि जाने,
ये प्रेम पथेर मध्ये पेतेछिल निज सिंहासन,
तार विलासेर सम्भाषण
पथेर धुलार मतो जड़ाये धरेछे तव पाये—
दियेछ ता धूलिरे फिराये।
सेइ तव पश्चातेर पदधूलि-'परे
तव चित्त हते वायुभरे
कखन् सहसा
उड़े पड़ेछिल वीज जीवनेर माल्य हते खसा।
तुमि चले गेछ दूरे,
सेइ वीज अमर अंकुरे
उठेछे अम्वर-पाने,
कहिछे गम्भीर गाने—

सर्वदा तुम्हारी कीर्ति को पीछे फेंक चला जाता है; **ताइ......नाइ**—इसीलिये तुम्हारा चिह्न पड़ा हुआ है, (लेकिन) तुम यहाँ नहीं हो; **ये......जाने**—जो प्रेम सामने चलना-चलाना नहीं जानता; **ये......सिंहासन**—जिस प्रेम ने रास्ते के बीच अपना सिंहासन डाल रखा था; **तार.......सम्भाषण**—उसका विलासपूर्ण सम्भाषण; **पथेर....फिराये**—रास्ते की धूल के समान तुम्हारे पैरों से लिपटा हुआ है; **दियेछ.....फिराये**—(तुमने) उसे धूल में ही लौटा दिया है; **सेइ....'परे**—उसी तुम्हारे पीछे की पदधूलि के ऊपर; **कखन्......खसा**—कव अकस्मात् जीवन के माल्य से टूटा हुआ वीज उड़ कर गिरा था; **तुमि.....दूरे**—तुम दूर चले गए हो; **सेइ**—वही; **उठेछे अम्वर-पाने**—आकाश की ओर उठा हुआ है; **कहिछे....नाइ**—गम्भीर गान के स्वर में कह रहा है, 'जितनी दूर देखता हूँ वह

'यत दूर चाइ
नाइ नाइ से पथिक नाइ।
प्रिया तारे राखिल ना, राज्य तारे छेड़े दिल पथ,
रुधिल ना समुद्र पर्वत।
आजि तार रथ
चलियाछे रात्रिर आह्वाने
नक्षत्रेर गाने
प्रभातेर सिंहद्वार-पाने।
ताइ
स्मृतिभारे आमि पड़े आछि,
भारमुक्त से एखाने नाइ।'

३१ अक्टूबर १९१४ 'वलाका'

चञ्चला

हे विराट नदी,
अदृश्य निःशब्द तव जल
अविच्छिन्न अविरल
चले निरवधि।
स्पन्दने शिहरे शून्य तव रुद्र कायाहीन वेगे,
वस्तुहीन प्रवाहेर प्रचण्ड आघात लेगे
पुञ्ज पुञ्ज वस्तुफेना उठे जेगे,

पथिक नहीं है, नहीं है; तारे......ना—उसे नहीं रखा; राज्य.....पथ—राज्य ने उसके लिये पथ कर दिया; रुधिल.....पर्वत—समुद्र, पर्वत ने बाधा नहीं दी; आजि ......पाने—आज उसका रथ रात्रि के आह्वान पर नक्षत्रों के गीत से मुखरित प्रभात के सिंहद्वार की ओर चला है; ताइ......आछि—इसीलिये स्मृति के भार से (दबा) हुआ मैं पड़ा हुआ हूँ; भारमुक्त....नाइ—भारमुक्त वह यहाँ नहीं है।

निरवधि—निरन्तर; **शिहरे**—सिहर जाता है; **लेगे**—लगने से; **उठे जेगे**—जग उठता है;

आलोकेर तीव्रच्छटा विच्छुरिया उठे वर्णस्रोते
धावमान अन्धकार हते,
घूर्णाचक्रे घुरे घुरे मरे
स्तरे स्तरे
सूर्य चन्द्र तारा यत
बुद्बुदेर मतो ।।

हे भैरवी, ओगो वैरागिणी,
चलेछ ये निरुद्देश, से चला तोमार रागिणी—
शब्दहीन सुर ।
अन्तहीन दूर
तोमारे कि निरन्तर देय साड़ा ?
सर्वनाशा प्रेमे तार नित्य ताइ तुमि घरछाड़ा ।
उन्मत्त से अभिसारे
तव वक्षोहारे
घन घन लागे दोला, छड़ाय अमनि
नक्षत्रेर मणि ।
आँधारिया ओड़े शून्ये झोड़ो एलो चुल;
दुले उठे विद्युतेर दुल;

विच्छुरिया उठे.......स्रोते—रंगों के स्रोत में विकीर्ण हो उठती है; **हते**—से; **घूर्णाचक्रे.......मरे**—आवर्त में चक्कर काटता मरता है; **यत**—जितने; **बुद्बुदेर मतो**—बुलबुले के समान ।

चलेछ ये निरुद्देश—निरुद्देश्य चली हो; **सेइ...रागिणी**—वह चलना तुम्हारी रागिणी (है); **अन्तहीन.......साड़ा**—अन्तहीन दूरी तुम्हें क्या निरन्तर आह्वान करती रहती है; **सर्वनाशा....छाड़ा**—इसीलिये सब कुछ को मिटा देने वाले उसके प्रेम में तुम नित्य बे-घर (बनी रहती) हो; **उन्मत्त....मणि**—उन्मत्त उस अभिसार में तुम्हारा वक्षहार बार बार दोलायमान हो उठता है और वैसे ही नक्षत्रों की मणियाँ बिखर उठती हैं; **आँधारिया......चुल**—आँधी से भरे हुए तुम्हारे आलुलायित केश अंधकार फैलाते हुए आकाश में उड़ते हैं; **दुले......दुल**—विद्युत्

अञ्चल आकुल
गड़ाय कम्पित तृणे,
चञ्चल पल्लवपुञ्जे विपिने विपिने;
बारम्वार झ'रे झ'रे पड़े फुल—
जुँइ चाँपा वकुल पारुल
पथे पथे
तोमार ऋतुर थालि हते ।।

शुधु धाओ, शुधु धाओ, शुधु वेगे धाओ
उद्दाम उधाओ—
फिरे नाहि चाओ,
या-किछु तोमार सब दुइ हाते फेले फेले याओ।
कुड़ाये लओ ना किछु, कर ना सञ्चय;
नाइ शोक, नाइ भय—
पथेर आनन्दवेगे अवाधे पाथेय कर क्षय ।।

ये मुहूर्ते पूर्ण तुमि से मुहूर्ते किछु तव नाइ,
तुमि ताइ
पवित्र सदाइ।

का झूला झूल उठता है; **अञ्चल......विपिने**—चंचल अञ्चल, काँपती हुई घास में, वन-वन के चञ्चल पल्लव समूहों में लोट-लोट पड़ता है; **बारम्वार...... ह'ते**—रास्ते-रास्ते में तुम्हारी ऋतुओं की थाली से बारम्वार जूही, चम्पा, वकुल और पारुल फूल झर-झर पड़ते हैं।

शुधु धाओ—केवल दौड़ती हो; **उद्दाम उधाओ**—उद्दाम वेग से धावमान होती हो; **फिरे.......चाओ**—फिर कर नहीं देखती; **या-किछु.....याओ**—जो-कुछ तुम्हारा है वह सब दोनों हाथों से फेंकती जाती हो; **कुड़ाये......सञ्चय**—कुछ भी वटोरती नहीं, कुछ भी सञ्चय नहीं करती; **नाइ.....भय**—न (तुम्हें) शोक है, न भय है; **पथेर......क्षय**—पथ के आनन्द से अवाध गति से (अपना) पाथेय नष्ट करती हो।

ये मुहूर्ते.....सदाइ—जिस मुहूर्त में तुम पूर्ण (होती हो) उस मुहूर्त में तुम्हारा

तोमार चरणस्पर्शे विश्वधूलि
मलिनता याय भुलि
पलके पलके—
मृत्यु ओठे प्राण हये झलके झलके।
यदि तुमि मुहूर्तेर तरे
क्लान्तिभरे
दाँड़ाओ थमकि
तखनि चमकि
उच्छ्रिया उठिवे विश्व पुञ्ज पुञ्ज वस्तुर पर्वते;
पंगु मूक कवन्ध वधिर आँधा
स्थूलतनु भयंकरी बाधा
सवारे ठेकाये दिये दाँड़ाइवे पथे;
अणुतम परमाणु आपनार भारे
सञ्चयेर अचल विकारे
विद्ध हवे आकाशेर मर्ममूले
कलुषेर वेदनार शूले।।

ओगो नटी, चञ्चल अप्सरी,
अलक्ष्यसुन्दरी,
तव नृत्यमन्दाकिनी नित्य झरि झरि
तुलितेछे शुचि करि

कुछ नहीं रहता इसीलिये तुम सदा ही पवित्र हो; **तोमार......झलके**—तुम्हारे चरण स्पर्श से जगत् की धूल मलिनता को भूल जाती है और पल-पल मृत्यु प्राण हो हो उठती है; **यदि......थमकि**—अगर तुम मुहूर्त भर के लिये क्लान्ति से भर ठिठक कर खड़ी हो जाओ; **तखनि......पर्वते**—उसी समय राशि-राशि वस्तुओं के पर्वत से (यह) विश्व स्फीत हो उठेगा (वस्तुओं का ढेर लग जाएगा); **आँधा**—अन्धा; **सवारे.....पथे**—सब को रोक कर रास्ते में खड़ी हो जाएगी; **अणुतम**—क्षुद्रतम; **आपनार भारे**—अपने भार से; **विद्ध हवे**—विद्ध होगा।

तुलितेछे......जीवन—विश्व-जीवन को मृत्यु-स्नान से पवित्र कर देती है;

मृत्युस्नाने विश्वेर जीवन।
निःशेष निर्मल नीले विकाशिछे निखिल गगन ।।

ओरे कवि, तोरे आज करेछे उतला
झंकारमुखरा एइ भुवनमेखला
अलक्षित चरणेर अकारण अवारण चला।
नाड़ीते नाड़ीते तोर चञ्चलेर शुनि पदध्वनि,
वक्ष तोर उठे रणरणि।
नाहि जाने केउ—
रक्ते तोर नाचे आजि समुद्रेर ढेउ,
काँपे आजि अरण्येर व्याकुलता;
मने आजि पड़े सेइ कथा—
युगे युगे एसेछि चलिया
स्खलिया स्खलिया
चुपे चुपे
रूप हते रूपे
प्राण हते प्राणे;
निशीथे प्रभाते
या-किछु पेयेछि हाते
एसेछि करिया क्षय दान हते दाने
गान हते गाने ।।

विकाशिछे—प्रकाशित कर रही है।

तोरे.....उतला—तुम्हें आज भावावेग से चञ्चल किया है; **अलक्षित...... चला**—नहीं दीख पड़ने वाले चरणों का अकारण अवाध चलना; **नाड़ीते नाड़ीते**—प्रत्येक नाड़ी में; **शुनि**—सुनता हूँ; **तोर**—तुम्हारा; **उठे रणरणि**—झंकृत हो उठता है; **नाहि....ढेउ**—कोई नहीं जानता कि तुम्हारे रक्त में आज समुद्र की लहरें नाच रहीं हैं; **मने....चलिया**—आज वही वात मन में आती है कि युग-युग चलता आया हूँ; **स्खलिया**—स्खलित हो कर; **हते**—से; **या......गाने**—जो कुछ हाथ में पाया है उसको (पाए हुए) दान से दान दे कर, (पाए हुए) गान से गान दे कर क्षय किया है।

ओरे देख्, सेइ स्रोत हयेछे मुखर,
तरणी काँपिछे थरथर।
तीरेर सञ्चय तोर पड़े थाक् तीरे—
ताकास ने फिरे।
सम्मुखेर वाणी
निक तोरे टानि
महास्रोते
पश्चातेर कोलाहल हते
अतल आँधारे— अकूल आलोते ।।

१८ दिसम्बर १९१४ 'बलाका'

दान

हे प्रिय, आजि ए प्राते
निज हाते
की तोमारे दिब दान ?
प्रभातेर गान ?
प्रभात ये क्लान्त हय तप्त रविकरे
आपनार वृन्तटिर 'परे।
अवसन्न गान
हय अवसान ।।

देख–देखो; सेइ....मुखर–वही स्रोत मुखर हुआ है; काँपिछे–काँप रही है; तीरेर.....फिरे–तीर (पर किया हुआ) सञ्चय तीर पर ही रह जाय, पीछे न देख; सम्मुखेर.....महास्रोते–सम्मुख की वाणी तुम्हें महास्रोत में खींच ले; पश्चातेर...... आलोते–पीछे के कोलाहल से अतल अंधकार में किनाराहीन प्रकाश में (खींच ले)।

हे प्रिय......दान—हे प्रिय, आज इस प्रातःकाल में अपने हाथ से तुम्हें क्या दान दूँ; प्रभातेर गान—प्रभात का गान; प्रभात......परे—अपने वृन्त पर सूर्य की तप्त किरणों से प्रभात तो क्लान्त हो जाता है; अवसन्न......अवसान—अतिशय श्रान्त गान का अवसान हो जाता है।

हे बन्धु, की चाओ तुमि दिवसेर शेषे
मोर द्वारे एसे ?
की तोमारे दिब आनि ?
सन्ध्यादीपखानि ?
ए दीपेर आलो, ए ये निराला कोणेर—
स्तब्ध भवनेर।
तोमार चलार पथे एरे निते चाओ जनताय ?
ए ये हाय
पथेर बातासे निबे याय ॥

की मोर शकति आछे तोमारे ये दिब उपहार
होक फुल, होक-ना गलार हार,
तार भार
केनइ वा सबे
एकदिन यवे
निश्चित शुकाबे तारा, म्लान छिन्न हबे ?
निज हते तव हाते याहा दिब तुलि
तारे तव शिथिल अङ्गुलि

की......एसे—दिन के शेष होने पर मेरे दरवाज़े पर आ कर क्या चाहते हो; **की......आनि**—तुम्हें क्या ला कर दूँ; **सन्ध्यादीपखानि**—सन्ध्यादीप; **ए.......भवनेर**—इस दीपक का आलोक, यह तो निर्जन कोने का है, स्तब्ध भवन का है; **तोमार......जनताय**—अपने चलने वाले पथ पर (अर्थात् जिस पथ पर तुम चले जा रहे हो) भीड़ में इसे लेना चाहते हो; **ए ये......याय**—हाय, यह रास्ते की हवा (के झोंके) से बुझ जाता है।

की......उपहार—मेरी क्या शक्ति है जो तुम्हें उपहार दूँगा; **होक.......हबे**—फूल हो या गले का हार ही क्यों न हो, उसका भार कैसे सहन करोगे; **एकदिन.....हबे**—एक दिन जब वे निश्चित (रूप से) सूख जाएंगे, म्लान हो जाएँगे या छिन्न हो जाएंगे; **निज.....भुलि**—अपने से तुम्हारे हाथ में जो कुछ भी उठा कर दूँगा उसे तुम्हारी शिथिल उंगली भूल जाएगी;

यावे भुलि—
धूलिते खसिया शेषे हये याबे धूलि ।।

तार चेये यबे
क्षणकाल अवकाश हबे,
वसन्ते आमार पुष्पवने
चलिते चलितें अन्यमने
अजाना गोपन गन्धे पुलके चमकि
दाँड़ावे थमकि—
पथहारा सेइ उपहार
हबे से तोमार।
येते येते वीथिकाय मोर
चोखेते लागिबे घोर,
देखिबे सहसा—
सन्ध्यार कबरी हते खसा
एकटि रङिन आलो काँपि थरथरे
छोँयाय परशमणि स्वपनेर 'परे,
सेइ आलो अजाना से उपहार
सेइ तो तोमार।।

धूलितें.......धूलि—धूल में गिर कर अन्त में धूल हो जाएगा।

तार......**हबे**—उससे (अच्छा होगा) जब क्षण भर के लिये (तुम्हें) अवकाश होगा; **वसन्ते**......**थमकि**—वसन्त ऋतु में मेरे पुष्पवन में अनमना चलते-चलते अनजान गोपन गन्ध के आनन्द से विस्मित हो रुक कर खड़े हो जाओगे; **पथ-हारा**......**तोमार**—वही पथ भूला हुआ उपहार तुम्हारा (तुम्हारे लिये) होगा; **येते**......**घोर**—मेरी वीथिका (गली) से जाते-जाते (तुम्हारी) आँखों में नशा छा जाएगा; **देखिबे सहसा**—सहसा देखोगे; **सन्ध्यार**......**परे**—सन्ध्या की कबरी से गिरा हुआ एक रंगीन आलोक थर-थर काँपता हुआ स्वप्न के ऊपर पारस पत्थर छुला रहा है (स्वप्न को पारस पत्थर का स्पर्श करा रहा है); **सेइ**......**उपहार**—वही अज्ञात आलोक (तुम्हारा) वह उपहार है; **सेइ**...... **तोमार**—वही तो तुम्हारा (तुम्हारे लिये) है।

आमार या श्रेष्ठधन से तो शुधु चमके झलके,
देखा देय, मिलाय पलके।
बले ना आपन नाम, पथेरे शिहरि दिया सुरे
चले याय चकित नूपुरे।
सेथा पथ नाहि जानि—
सेथा नाहि याय हात, नाहि याय वाणी।
वन्धु, तुमि सेथा हते आपनि या पावे
आपनार भावे,
ना चाहिते, ना जानिते, सेइ उपहार
सेइ तो तोमार।
आमि याहा दिते पारि सामान्य से दान—
होक फुल, होक ताहा गान ।।

२५ दिसम्वर १९१४ 'वलाका'

आमार......पलके—मेरा जो श्रेष्ठ धन है वह तो केवल चमक-दमक कर दिखलाई देता है (और) क्षण भर में विलीन हो जाता है; **वले.....नाम**—अपना नाम नहीं वतलाता; **पथेरे.....नूपुरे**—पथ को सुर से सिहरा कर कम्पित नूपुरों (के साथ) चला जाता है; **सेथा......जानि**—वहाँ का पथ नहीं जानता; **सेथा...... वाणी**—वहाँ हाथ नहीं जाते, वाणी नहीं जाती; **वन्धु......भावे**—वन्धु, वहाँ से अपने-आप अपना समझ जो पाओगे; **ना......तोमार**—विना देखे, विना जाने वही उपहार तो तुम्हारा (उपहार) है; **आमि......दान**—मैं जो दे सकता हूँ वह सामान्य (तुच्छ) दान है; **होक......गान**—फूल हो (अयवा) वह गान हो।

विचार

हे मोर सुन्दर,
येते येते
पथेर प्रमोदे मेते
यखन तोमार गाय
कारा सबे धुला दिये याय
आमार अन्तर
करे हाय हाय।
केंदे वलि, हे मोर सुन्दर,
आज तुमि हओ दण्डधर,
करह विचार।
तार परे देखि,
ए की,
खोला तव विचारघरेर द्वार,
नित्य चले तोमार विचार।
नीरवे प्रभात-आलो पड़े
तादेर कलुषरक्त नयनेर 'परे;
शुभ्र वनमल्लिकार वास
स्पर्श करे लालसार उद्दीप्त निश्वास;

हे मोर सुन्दर—हे मेरे सुन्दर; **येते.....मेते**—पथ के आनन्द से मत्त हो जाते जाते; **यखन.....हाय**—जब तुम्हारे शरीर पर कौन सब धूल दे (फेंक) जाते हैं (तब) मेरा अन्तर हाय हाय करता है; **केंदे......विचार**—रो कर कहता हूँ, हे मेरे सुन्दर, आज तुम दण्डधर (शासक) हो कर विचार (न्याय) करो; **तार......की**—इसके बाद देखता हूँ, यह क्या; **खोला......विचार**—तुम्हारे विचार-घर (न्यायालय) का दरवाज़ा खुला हुआ है और सब समय तुम्हारा विचार चल रहा है; **नीरवे......परे**—उनलोगों के कलुष से लाल बने नेत्रों पर प्रभात का आलोक नीरव भाव से पड़ता है; **शुभ्र......निश्वास**—शुभ्र वनमल्लिका का गन्ध, लालसा के उद्दीप्त निश्वास को स्पर्श करता है;

सन्ध्यातापसीर हाते ज्वाला
सप्तर्षिर पूजादीपमाला
तादेर मत्ततापाने साराराात्रि चाय—
हे सुन्दर, तव गाय
धुला दिये यारा चले याय।
हे सुन्दर,
तोमार विचारघर
पुष्पवने,
पुण्यसमीरणे,
तृणपुञ्जे पतङ्गगुञ्जने,
वसन्तेर विहङ्गकूजने,
तरङ्गचुम्बित तीरे मर्मरित पल्लववीजने।

प्रेमिक आमार,
तारा ये निर्दय घोर, तादेर ये आवेग दुर्वार।
लुकाये फेरे ये तारा करिते हरण
तव आभरण,
साजावारे
आपनार नग्न वासनारे।

सन्ध्या.......चाय—सन्ध्या तापसी (तपस्विनी) के हाथों जलाई हुई सप्तर्षियों की पूजा-दीपमाला उनकी (धूल फेंकने वालों की) मत्तता की ओर समस्त रात्रि देखती रहती है; **हे सुन्दर.......याय**—हे सुन्दर, तुम्हारे शरीर पर धूल दे कर (फेंक कर) जो चले जाते हैं; **तोमार**—तुम्हारा; **पुण्य**—पवित्र; **पतङ्गगुञ्जने**—षट्पद के गुञ्जन में; **वीजन**—व्यजन।

आमार—मेरे; **तारा......दुर्वार**—वे अत्यन्त निर्दय हैं, उनका आवेग दुर्दमनीय है; **लुकाये........आभरण**—वे तुम्हारे आभरण को हरण करने के लिये छिपे हुए घूमते हैं; **साजावारे.......वासनारे**—अपनी नग्न वासना को सजाने के लिये;

तादेर आघात यबे प्रेमेर सर्वाङ्गे बाजे,
सहिते से पारि ना ये;
अश्रु-आँखि
तोमारे काँदिया डाकि—
खड्ग धरो, प्रेमिक आमार,
करो गो विचार।
तार परे देखि
ए की,
कोथा तव विचार-आगार।
जननीर स्नेह-अश्रु झरे
तादेर उग्रता—'परे;
प्रणयीर असीम विश्वास
तादेर विद्रोहशेल क्षतवक्षे करि लय ग्रास।
प्रेमिक आमार,
तोमार से विचार-आगार
विनिन्द्र स्नेहेर स्तब्ध निःशब्द वेदनामाझे,
सतीर पवित्र लाजे,
सखार हृदयरक्तपाते,
पथ-चाओया प्रणयेर विच्छेदेर राते,
अश्रुप्लुत करुणार परिपूर्ण क्षमार प्रभाते।

तादेर......बाजे—उनका आघात जब प्रेम के सर्वाङ्ग में लगता है (तो) उसे मैं सह नहीं पाती; अश्रु.......विचार—आँखों में आँसू भर रोती हुई तुम्हें पुकारती हूँ, 'मेरे प्रियतम, खड्ग धारण करो (और इसका) विचार करो'; कोथा—कहाँ; जननीर......परे—उनकी उग्रता पर जननी के स्नेहाश्रु झड़ते हैं; तादेर.......ग्रास—उनके विद्रोहशेल को क्षतवक्ष में ग्रास कर लेता है।

से—वह; वेदनामाझे—वेदना के मध्य, वेदना में; सतीर......लाजे—सती की पवित्र लज्जा में; सखार—मित्र के; पथ.....राते—प्रणय के विरह की रात में पथ निहारने में।

हे रुद्र आमार,
लुब्ध तारा, मुग्ध तारा, हये पार
तव सिंहद्वार,
संगोपने
विना निमन्त्रणे
सिंध केटे चुरि करे तोमार भाण्डार।
चोरा धन दुर्वह से भार
पले पले
ताहादेर मर्मदले,
साध्य नाहि रहे नामावार।
तोमारे काँदिया तवे कहि वारम्वार—
ओदेर मार्जना करो, हे रुद्र आमार।
चेये देखि मार्जना ये नामे एसे
प्रचण्ड झंझार वेशे;
सेइ झड़े
धुलाय ताहारा पड़े;
चुरिर प्रकाण्ड वोझा खण्ड खण्ड हये
से-वातासे कोथा याय वये।

लुब्ध तारा—वे लुब्ध (हैं); **हये.....द्वार**—तुम्हारे सिंहद्वार को पार कर; **संगोपने**—गोपन भाव से; **सिंध......भाण्डार**—सेंध मार कर तुम्हारे भाण्डार की चोरी करते हैं; **चोरा......नामावार**—चोरी के धन का वह कठिन भार (बोझ) क्षण-क्षण उनके मर्म का दलन करता है (रौंदता रहता है) (और) उसे नीचे उतारने का भी उपाय नहीं रहता।

तोमारे......आमार—रोती हुई मैं तव वारम्वार तुमसे कहती हूँ, 'हे मेरे रुद्र, उन्हें क्षमा करो'; **चेये....वेशे**—ध्यान से देखती हूँ कि तुम्हारी क्षमा प्रचण्ड आँधी के वेश में उतरती है; **सेइ......पड़े**—उसी आँधी में वे धूल में पड़ जाते हैं; **चुरिर......वये**—चोरी का वह वहुत वड़ा वोझा खण्ड-खण्ड हो कर उस हवा में (न-जाने) कहाँ वह जाता है;

हे रुद्र आमार,
मार्जना तोमार
गर्जमान वज्राग्निशिखाय,
सूर्यास्तेर प्रलयलिखाय,
रक्तेर वर्षणे,
अकस्मात् संघातेर घर्षणे घर्षणे।

२७ दिसम्बर १९१४ 'बलाका'

माधवी

कत लक्ष वरषेर तपस्यार फले
धरणीर तले
फुटियाछे आजि ए माधवी।
ए आनन्दछवि
युगे युगे ढाका छिल अलक्ष्येर वक्षेर आँचले।

सेइ मतो आमार स्वपने
कोनो दूर युगान्तरे वसन्तकानने
कोनो एक कोणे

गर्जमान—गरजती हुई; सूर्यास्तेर......वर्षणे—सूर्यास्त के प्रलय अंकन में (तथा) रक्त की वर्षा में; अकस्मात्......घर्षणे—अकस्मात् पारस्परिक आघात के घर्षण में (समाज के परस्पर संघर्ष में)।

कत......माधवी—(न-जाने) कितने लाख वर्षों की तपस्या के फल से पृथ्वी पर आज यह माधवी खिली है; ए......आँचले—यह आनन्द देने वाली छवि (तस्वीर) युग-युग से अलक्ष्य (अदृश्य) के वक्ष के अंचल से ढकी हुई थी।

सेइ......विकाशि—उसी प्रकार से मेरे स्वप्न में किसी दूर युगान्तर के वसन्त कानन के किसी एक कोने में किसी एक समय की (किसी) मुख की एक

एकबेलाकार मुखे एकटुकु हासि
उठिबे विकाशि—
एइ आशा गभीर गोपने
आछे मोर मने।

१० जनवरी १९१५ 'वलाका'

प्रेमेर परश

हे भुवन
आमि यतक्षण
तोमारे ना वेसेछिनु भालो
ततक्षण तव आलो
खुँजे खुँजे पाय नाइ तार सव धन।
ततक्षण
निखिल गगन
हाते निये दीप तार शून्ये शून्ये छिल पथ चेये।

मोर प्रेम एल गान गेये;
की ये हल कानाकानि
दिल से तोमार गले आपन गलार मालाखानि।

हँसी खिल उठेगी; **एइ....मने**—यह आशा अत्यन्त गोपन (भाव से) मेरे मन में है।

हे भुवन.......क्षण—हे भुवन, मैं जब तक (जिस समय तक); **तोमारे...... भालो**—तुम्हें प्यार नहीं किया था; **ततक्षण......धन**—तब तक (उस समय तक) तुम्हारा प्रकाश अपना सब धन खोज नहीं पाया था; **ततक्षण......चेये**—तब तक (उस समय तक) सम्पूर्ण आकाश अपने दीप को हाथ में लिए हुए शून्य रास्ता देख रहा था।

मोर......गेये—मेरा प्रेम गान गा कर आया; **की.....कानि**—क्या जो कानाफूसी हुई; **दिल......खानि**—उसने अपने गले की माला तुम्हारे गले में डाल दी;

मुग्धचक्षे हेसे
तोमारे से
गोपने दियेछे किछु या तोमार गोपन हृदये
तारार मालार माझे चिरदिन रबे गाँथा हये।

१२ जनवरी १९१५ 'वलाका'

दुइ नारी

कोन् क्षणे
सृजनेर समुद्रमन्थने
उठेछिल दुइ नारी
अतलेर शय्यातल छाड़ि।
एकजना उर्वशी, सुन्दरी,
विश्वेर कामना-राज्ये रानी,
स्वर्गेर अप्सरी।
अन्यजना लक्ष्मी से कल्याणी,
विश्वेर जननी ताँरे जानि,
स्वर्गेर ईश्वरी।

एकजन तपोभङ्ग करि
उच्चहास्य-अग्नि रसे फाल्गुनेर सुरापात्र भरि
निये याय प्राणमन हरि,

मुग्धचक्षे......हेसे—मुग्ध नयनों से हँस कर; तोमारे—तुम्हें; से.....किछु—उसने गोपन कुछ दिया है; या......हृदये—जो तुम्हारे गोपन हृदय में; तारार.......हये—ताराओं की माला के बीच चिर दिन गुँथा हुआ रहेगा।

कोन् क्षणे—किस क्षण में; दुइ—दो; उठेछिल—निकली थीं; छाड़ि—छोड़ कर; से—वह; ताँरे जानि—उन्हें जानता हूँ।

एकजन......हरि—एक तपस्या भंग कर उच्च हास्य के अग्नि-रस से फाल्गुन के सुरापात्र को भर प्राण-मन हर ले जाती है;

दु-हाते छड़ाय तारे वसन्तेर पुष्पित प्रलापे,
राग‌रक्त किंशुके गोलापे,
निद्राहीन यौवनेर गाने।

आरजन फिराइया आने
अश्रुर शिशिर-स्नाने
स्निग्ध वासनाय;
हेमन्तेर हेमकान्त सफल शान्तिर पूर्णताय;
फिराइया आने
निखिलेर आशीर्वाद पाने
अचञ्चल लावण्येर स्मितहास्य सुधाय मधुर।
फिराइया आने धीरे
जीवन मृत्युर
पवित्र संगमतीर्थतीरे
अनन्तेर पूजार मन्दिरे।

३ फरवरी १९१५ 'बलाका'

दु......प्रलापे—उसे दोनों हाथों से वसन्त के पुष्पित (पुष्पों के रूप में) प्रलाप में विखरा देती है; राग.....गाने—रक्ताभ किंशुक और गुलाब में तथा निद्रा-विहीन यौवन के गान में।

आरजन......वासनाय—और दूसरी अश्रुकणों से सींच कर स्निग्ध वासना को लौटा लाती है; हेमन्तेर.......पूर्णताय—हेमन्त की सोने की कान्ति वाली फल युक्त शान्ति की पूर्णता में; फिराइया......मधुर—विश्व-जगत् के आशीर्वाद की और अचञ्चल लावण्य के मधुर स्मितहास्य की सुधा में लौटा लाती है।

वलाका

स्न्ध्यारागे-झिलिमिलि झिलमेर स्रोतखानि वाँका
आँधारे मलिन हल, येन खापे ढाका
वाँका तलोयार;
दिनेर भाँटार शेषे रात्रिर जोयार
एल तार भेसे-आसा ताराफुल निये कालो जले;
अन्धकार गिरितटतले
देओदार-तरु सारे सारे;
मने हल, सृष्टि येन स्वप्ने चाय कथा कहिवारे,
वलिते ना पारे स्पष्ट करि—
अव्यक्त ध्वनिर पुञ्ज अन्धकारे उठिछे गुमरि ।।

सहसा शुनिनु सेइ क्षणे
सन्ध्यार गगने
शव्देर विद्युत्छटा शून्येर प्रान्तरे
मुहूर्ते छुटिया गेल दूर हते दूरे दूरान्तरे ।
हे हंसवलाका,
झंझामदरसे-मत्त तोमादेर पाखा

वलाका—वक, वगला; सन्ध्या......तलोयार—सन्ध्या के रंग में झलमल करती हुई झेलम की टेढ़ी धारा अंधकार में मलिन हो गई जैसे म्यान से ढँकी हुई तलवार हो; दिन.....जले—दिन के भाटे का अन्त होने पर रात्रि का ज्वार काले जल में वह कर आए हुए अपने तारा (रूपी) फूल ले कर आया; देओदार—देवदार; सारे सारे—पंक्ति की पंक्ति; मने हल........गुमरि—लगा जैसे सृष्टि स्वप्न में वात कहना चाहती है, (लेकिन) स्पष्ट वोल नहीं पाती (उसीकी) अव्यक्त ध्वनि का समूह गुमड़ कर अन्धकार में उठ रहा है ।

सहसा......क्षणे—सहसा उसी क्षण सुना; मुहूर्ते......दूरान्तरे—मुहूर्त भर में दौड़ कर दूर से दूर चला गया; झंझा......पाखा—झंझा के मद के रस से मत्त तुमलोगों के पंख;

राशि राशि आनन्देर अट्टहासे
विस्मयेर जागरण तरङ्गिया चलिल आकाशे।
ओइ पक्षध्वनि
शब्दमयी अप्सररमणी,
गेल चलि स्तब्धतार तपोभङ्ग करि।
उठिल शिहरि
गिरिश्रेणी तिमिरमगन,
शिहरिल देओदार-वन॥

मने ह्ल, ए पाखार वाणी
दिल आनि
शुधु पलकेर तरे
पुलकित निश्चलेर अन्तरे अन्तरे
वेगेर आवेग।
पर्वत चाहिल ह्ते वैशाखेर निरुद्देश मेघ;
तरुश्रेणी चाहे पाखा मेलि
माटिर बन्धन फेलि
ओइ शब्दरेखा ध'रे चकिते ह्इते दिशाहारा,
आकाशेर खुँजिते किनारा।

तरङ्गिया—तरङ्गित कर; **चलिल**—चला; **ओइ**—वह; **पक्षध्वनि**—पंखों की आवाज़; **अप्सररमणी**—अप्सरा; **गेल......करि**—स्तब्धता की तपस्या भंग कर चली गई; **तिमिरमगन**—तिमिर-मग्न, अंधकार में निमज्जित; **शिहरिल**—सिहरा।

मने......आवेग—लगा (जैसे) इन पंखों की वाणी ने केवल पल भर के लिये पुलकित निश्चलता के अन्तर में द्रुत गति का आवेग ला दिया है; **पर्वत......मेघ** पर्वत ने वैशाख का निरुद्देश्य मेघ होना चाहा; **तरुश्रेणी......किनारा**—तरुश्रेणी (वृक्षों की पंक्ति) चाहती हैं कि पंखों को खोल कर, मिट्टी के बंधन को फेंक कर (तोड़ कर) उसी शब्द का अनुसरण कर आकाश के किनारे को खोजते निमेष मात्र में दिग्भ्रान्त हो जाय;

ए सन्ध्यार स्वप्न टुटे वेदनार ढेउ उठे जागि
सुदूरेर लागि,
हे पाखा विवागि।
बाजिल व्याकुल वाणी निखिलेर प्राणे—
'हेथा नय, हेथा नय, आर कोन्खाने!'

हे हंसबलाका,
आज रात्रे मोर काछे खुले दिले स्तब्धतार ढाका।
शुनितेछि आमि एइ निःशब्देर तले
शून्ये जले स्थले
अमनि पाखार शब्द उद्दाम चञ्चल।
तृणदल
माटिर आकाश-'परे झापटिछे डाना;
माटिर आँधार-निचे, के जाने ठिकाना,
मेलितेछे अंकुरेर पाखा
लक्ष लक्ष बीजेर बलाका।
देखितेछि आमि आजि—
एइ गिरिराजि,

ए......विवागि—हे बंधनहीन पंख (वाले पक्षी), इस सन्ध्या का स्वप्न भंग होता है और सुदूर के लिये (उसके हृदय में) वेदना की लहर जाग उठती है; **बाजिल.......कोन्खाने**—निखिल (विश्व) के प्राणों में व्याकुल वाणी बज उठी—यहाँ नहीं, यहाँ नहीं, और किस जगह।

आज......ढाका—आज रात्रि में मेरे निकट (तुमने) स्तब्धता के ढक्कन को खोल दिया; **शुनितेछि......चञ्चल**—इस नीरवता के नीचे शून्य में, जलमें, स्थल में वैसे ही उद्दाम, चञ्चल पंख के शब्द सुन रहा हूँ; **तृणदल......डाना**—तृणदल मिट्टी के आकाश के ऊपर झपट्टा मारता है; **माटिर.......बलाका**—मिट्टी के अंधकार के नीचे (का) पता कौन जाने, लाख-लाख बीज (रूपी) बलाका (अपने) अंकुर के पंख खोल रहे हैं। **देखितेछि.......अजानाय**—मैं आज देख रहा हूँ यह गिरिराजि, यह वन उन्मुक्त डैनों से द्वीप से द्वीपान्तर को, अज्ञात

एइ वन चलियाछे उन्मुक्त डानाय
द्वीप हते द्वीपान्तरे, अजाना हइते अजानाय।
नक्षत्रेर पाखार स्पन्दने
चमकिछे अन्धकार आलोर क्रन्दने॥

शुनिलाम मानवेर कत वाणी दले दले
अलक्षित पथे उड़े चले
अस्पष्ट अतीत हते अस्फुट सुदूर युगान्तरे।
शुनिलाम आपन अन्तरे
असंख्य पाखिर साथे
दिने राते
एइ बासाछाड़ा पाखि धाय आलो-अन्धकारे
कोन् पार हते कोन् पारे।
ध्वनिया उठिछे शून्य निखिलेर पाखार ए गाने—
'हेथा नय, अन्य कोथा, अन्य कोथा, अन्य कोन्खाने!'

अक्टूबर—नवंबर १९१५ 'वलाका'

(स्थान) से अज्ञात (स्थान) को चला है; नक्षत्रेर.......क्रन्दने—नक्षत्र के पंखों के स्पन्दन से अन्धकार आलोक के क्रन्दन में चमक रहा है।

शुनिलाम—सुना; कत—कितनी; हते—से; आपन अन्तरे—अपने अन्तर में; पाखिर साथे—पक्षियों के साथ; एइ.......पारे—वासस्थान का परित्याग करने वाला यह पक्षी प्रकाश और अन्धकार में किस पार से किस पार को दौड़ता है; ध्वनिया.........कोन्खाने—निखिल (विश्व) के पंखों के इस गान से शून्य ध्वनित हो उठा है कि 'यहाँ नहीं, अन्य कहीं, अन्य कहीं, अन्य किसी जगह'।

मुक्ति

डाक्तारे या बले बलुक-नाको,
राखो राखो खुले राखो
शिओरेर ओइ जानलादुटो, गाये लागुक हाओया।
ओषुध ? आमार फुरिये गेछे ओषुध खाओया।
तितो कड़ा कत ओषुध खेलेम ए जीवने,
दिने दिने क्षणे क्षणे।
बेंचे थाका सेइ येन एक रोग;
कतरकम कविराजि, कतइ मुष्टियोग,
एकटुमात्र असावधानेइ विषम कर्मभोग।
एइटे भालो, ओइटे मन्द, ये या बले सबार कथा मेने,
नामिये चक्षु, माथाय घोमटा टेने
बाइश बछर काटिये दिलेम एइ तोमादेर घरे।
ताइ तो घरे परे,
सबाइ आमाय बलले, लक्ष्मी सती,
भालो मानुष अति !।

डाक्तारे.......नाको—डाक्टर जो बोले, बोले-ना (जो कहना चाहे कहे); **राखो......राखो**—रखो, रखो, खुला रखो; **शिओरेर......दुटो**—सिरहाने की उन दोनों खिड़कियों को; **गाये......हाओया**—शरीर में हवा लगे; **ओषुध**—औषध; **आमार.......खाओया**—मेरा औषध खाना शेष हो गया; **तितो कड़ा**—तीता, कड़ा; **कत.....क्षणे**—इस जीवन में दिन-दिन, क्षण-क्षण कितनी दवाइयाँ खाईं; **बेंचे.......रोग**—बँचा रहना यही जैसे एक रोग है; **कत.......योग**—कितने प्रकार की कविराजी (वैद्य की दवाइयाँ) कितने टोटके (मैंने व्यवहार किए); **एकटुमात्र**—थोड़ी-सी; **असावधानेइ**—असावधानी से ही; **एइटे...... घरे**—यह अच्छा, वह खराब—जो जैसा कहता सब की बात मान आँखें नीचे कर सिर पर घूँघट खींच कर तुमलोगों के इस घर में बाईस वर्ष बिता दिए; **ताइ..... अति**—इसीलिये तो अपने-पराये सभी ने मुझे लक्ष्मी सती, (और) अत्यन्त भला कहा।

ए संसारे एसेछिलेम न बछरेर मेये,
तार परे एइ परिवारेर दीर्घ गलि वेये
दशेर-इच्छा-बोझाइ-करा एइ जीवनटा टेने टेने शेषे
पौँछिनु आज पथेर प्रान्ते एसे।
सुखेर दुखेर कथा
एकटुखानि भावव एमन समय छिल कोथा।
एइ जीवनटा भालो किम्वा मन्द किम्वा या-होक-एकटा-किछु
से कथाटा वुझव कखन, देखब कखन भेवे आगुपिछु ?
एकटाना एक क्लान्त सुरे
काजेर चाका चलछे घुरे घुरे।
बाइश बछर रयेछि सेइ एक चाकातेइ बाँधा
पाकेर घोरे आँधा।
जानि नाइ तो आमि ये की, जानि नाइ ए वृहत् वसुन्धरा
की अर्थे ये भरा।
शुनि नाइ तो मानुषेर की वाणी
महाकालेर वीणाय वाजे। आमि केवल जानि,

ए संसारे—इस संसार में (गृहस्थी में); **एसेछिलेम**—आई थी; **न बछरेर मेये**—नौ वर्ष की लड़की; **तार......एसे**—उसके वाद इस परिवार की गली को पार करती दस की इच्छा के वोझे को लाद इस जीवन को खींचती अन्त में पथ की सीमा पर आज आ पहुँची हूँ; **सुखेर......कोथा**—कुछ सुख-दुःख की वात सोचूँ इतना समय कहाँ था; **एइ.......किछु**—यह जीवन अच्छा है अथवा खराव है अथवा जो-भी-हो-एक-कुछ; **से......पिछु**—उस वात को कव समझूंगी, कव उसका आगा-पीछा सोच-समझ पाऊँगी; **एकटाना**—एक ही ढंग से; **एक......सुरे**—एक क्लान्त सुर में; **काजेर........घुरे**—काम-काज का पहिया घूमता हुआ चल रहा है; **वाइश......आँधा**—घूर्णन के नशे से अन्धी वनी हुई उसी एक पहिये से वाईस वर्ष वँधी हुई रही हूँ; **जानि......की**—नहीं जानती कि मैं कौन हूँ; **जानि.......भरा**—नहीं जानती इस वड़ी पृथ्वी में कौन-सा अर्थ भरा हुआ है; **शुनि.......वाजे**—सुना नहीं, महाकाल की वीणा में मनुष्य की कौन-सी वाणी वजती है; **आमि......जानि**—मैं केवल जानती हूँ;

रँाधार परे खाओया, आवार खाओयार परे राँधा—
वाइश वछर एक चाकातेइ बाँधा।
मने हच्छे, सेइ चाकाटा ओइ ये थामल येन;
थामुक तवे। आवार ओषुध केन ?।

वसन्तकाल वाइश वछर एसेछिल वनेर आङिनाय।
गन्धे-विभोल दक्षिणबाय
दियेछिल जलस्थलेर मर्मदोलाय दोल;
हेंकेछिल, 'खोल् रे, दुयार खोल्।'
से ये कखन् आसत येत जानते पेतेम ना ये।
हयतो मनेर माझे
संगोपने दित नाड़ा; हयतो घरेर काजे
आचम्बिते भुल घटात; हयतो वाजत बुके
जन्मान्तरेर व्यथा; कारण-भोला दुःखे सुखे
हयतो परान रइत चेये येन रे कार पायेर शब्द शुने
विह्वल फाल्गुने।

राँधार.......राँधा—रन्धन के वाद खाना (भोजन) और खाने के वाद रन्धन; **मने हच्छे......येन**—मन में हो रहा है वह पहिया जैसे अव थमा; **थामुक तवे**—तव थम जाय; **आवार.....केन**—फिर तव दवा क्यों।

एसेछिल—आया था; **वनेर आङ्गिनाय**—वन-प्राङ्गण में, वन के आंगन में; **विभोल**—विभोर; **दक्षिणवाय**—दक्षिण वायु; **दियेछिल.......दोल**—जल स्थल के मर्म को दोलायमान करने वाले झूले को झुलाया था; **हेंकेछिल**—जोर से पुकार कर कहा था; **खोल्**—खोल; **दुयार**—दरवाजा; **से.....ये**—वह कव आती-जाती जान नहीं पाती; **हयतो......नाड़ा**—हो सकता है गोपन भाव से मन के भीतर को आन्दोलित कर देती; **हयतो......घटात**—हो सकता है कि घर के काम में अचानक त्रुटि करा देती; **हयतो.......व्यथा**—हो सकता है जन्मान्तर की व्यथा आघात कर जाती; **भोला**—भुला हुआ; **हयत.......फाल्गुने**—हो सकता है कि विह्वल फाल्गुन में जैसे किसी के पैरों के शब्द को सुन कर प्राण देखते रहते;

तुमि आसते आपिस थेके, येते सन्ध्यावेलाय
पाड़ाय कोथा सतरञ्ज-खेलाय।
थाक् से कथा।
आजके केन मने आसे प्राणेर यत क्षणिक व्याकुलता।।

प्रथम आमार जीवने एइ वाइश वछर परे
वसन्तकाल एसेछे मोर घरे।
जानला दिये चेये आकाश-पाने
आनन्दे आज क्षणे क्षणे जेगे उठछे प्राणे—
आमि नारी, आमि महीयसी,
आमार सुरे सुर वेंधेछे ज्योत्स्नावीणाय निद्राविहीन शशी।
आमि नइले मिथ्या ह'त सन्ध्यातारा-ओठा,
मिथ्या ह'त कानने फुल-फोटा।।

वाइश वछर ध'रे
मने छिल, वन्दी आमि अनन्तकाल तोमादेर एइ घरे।

तुमि......खेलाय—तुम आफिस से आते और सन्ध्या समय शतरंज खेलने मुहल्ले में कहीं जाते; **थाक् से कथा**—रहने दो वह वात; **आजके......व्याकुलता**—प्राण की जितनी क्षणिक व्याकुलताएँ थीं आज क्यों मन में आ रहीं है।

प्रथम......परे—इन वाईस वर्षों के वाद पहली वार मेरे जीवन में; **एसेछे...... घरे**—मेरे कमरे में आया है; **जानला.......महीयसी**—खिड़की से आकाश की ओर देखते हुए आनन्द आज क्षण-क्षण प्राणों में जग उठता है (कि) मैं नारी हूँ, मैं महीयसी हूँ; **आमार.....शशी**—निद्राविहीन चन्द्रमा ने (अपनी) ज्योत्स्ना (चाँदनी रूपी) वीणा का सुर मेरे सुर में वाँधा है; **आमि.....ओठा**—मेरे नहीं होने से सन्ध्या-तारा का उदय होना मिथ्या (व्यर्थ) होता; **मिथ्या.......फोटा**—कानन में फूलों का प्रस्फुटित होना व्यर्थ होता।

वाइश......ध'रे—वाईस वर्षों से; **मने छिल**—मन में था; **वन्दी.....घरे**—तुमलोगों के इस घर में मैं अनन्त काल के लिये वन्दी हूँ;

दुःख तबु छिल ना तार तरे—
असाड़ मने दिन केटेछे, आरो काटत आरो बाँचले परे।
येथाय यत ज्ञाति
लक्ष्मी ब'ले करे आमार ख्याति;
एइ जीवने सेइ येन मोर परम सार्थकता—
घरेर कोणे पाँचेर मुखेर कथा।
आजके कखन् मोर
काटल बाँधन-डोर।
जनम मरण एक हयेछे ओइ-ये अकूल विराट मोहानाय,
ओइ अतले कोथाय मिले याय
भाँड़ार-घरेर देओयाल यत
एकटु फेनार मतो॥

एतदिने प्रथम येन वाजे
वियेर वाँशि विश्व-आकाश-माझे।
तुच्छ वाइश वछर आमार घरेर कोणेर धुलाय पड़े थाक्।
मरण-वासर-घरे आमाय ये दियेछे डाक

दुःख......तरे—तौभी उसके लिये (कोई) दुःख नहीं था; असाड़......परे—अनुभूतिहीन मन से दिन बीते हैं, और बँचने (और अधिक दिनों ज़िन्दा रहने) पर और भी (दिन) कटते; येथाय.....ख्याति—जहाँ जितने अपने वंश वाले हैं लक्ष्मी कह कर मेरी प्रशंसा करते हैं; एइ......कथा—घर के कोने में पाँच आदमियों के मुंह की बात ही मानो इस जीवन की परम सार्थकता थी; आजके.....डोर—आज कब मेरे बंधन की डोरी कटी; जनम.......मोहानाय—उस अकूल विराट् मुहाने पर जन्म और मरण एक हुए हैं; ओइ.....मतो—उस अतल (सागर) में भांडार-गृह की जितनी दीवारें हैं थोड़े-से फेन के समान कहाँ मिल जाती हैं।

एतदिने—इतने दिनों बाद; प्रथम......माझे—जैसे प्रथम प्रथम व्याह की बाँसुरी (बाजे) संसार रूपी आकाश में बज रही है; तुच्छ......थाक्—घर के कोने में मेरे तुच्छ बाईस वर्ष धूल में पड़े हुए रहें; मरण-वासर-घरे—मरण रूपी वासर-गृह (सुहाग रात बिताने वाला घर) में; आमाय.....डाक—मुझे जिसने पुकारा है;

द्वारे आमार प्रार्थी से ये, नय से केवल प्रभु—
हेला आमाय करबे ना से कभु।
चाय से आमार काछे
आमार माझे गभीर गोपन ये सुधारस आछे।
ग्रहतारार सभार माझारे से
ओइ-ये आमार मुखे चेये दाँड़िये होथाय रइल निर्निमेषे।
मधुर भुवन, मधुर आमि नारी,
मधुर मरण, ओगो आमार अनन्त भिखारि।
दाओ, खुले दाओ द्वार—
व्यर्थ बाइश वछर हते पार करे दाओ कालेर पारावार॥

[अक्टूबर १९१८] 'पलातका'

द्वारे......कभु—द्वार पर मेरे लिये वह प्रार्थी है, वह केवल प्रभु (मालिक) नहीं है, वह कभी मेरी अवहेलना नहीं करेगा; **चाय....काछे**—मेरे निकट (मुझसे) वह चाहता है; **आमार.....आछे**—मेरे भीतर गभीर गोपन (भाव से) जो अमृत रस है; **ग्रह......से**—ग्रहतारा की सभा के बीच में वह है; **ओइ...... निर्निमेषे**—वह जो मेरे मुँह की ओर निर्निमेष दृष्टि से देखता हुआ वहाँ खड़ा है; **आमि**—मैं; **ओगो.......भिखारि**—ओ मेरे अनन्त (काल तक बने रहने वाले) भिखारी; **दाओ**—दो; **खुले......द्वार**—द्वार खोल दो; **व्यर्थ.....पारावार**—व्यर्थ के इन बाईस वर्षों से (दूर कर) काल-पारावार को पार करा दो।

हारिये-याओया

छोट आमार मेये
सङ्गिनीदेर डाक शुनते पेये
सिंड़ि दिये नीचेर तलाय याच्छिल से नेमे
अन्धकारे भये भये, थेमे थेमे।
हाते छिल प्रदीपखानि,
आँचल दिये आड़ाल क'रे चलछिल सावधानी ।।

आमि छिलाम छाते
ताराय-भरा चैत्रमासेर राते।
हठात् मेयेर कान्ना शुने,उठे
. देखते गेलेम छुटे।
सिंड़िर मध्ये येते येते
प्रदीपटा तार निबे गेछे बातासेते।
शुधाइ तारे, 'की हयेछे वामी ?'
से केंदे कय नीचे थेके, 'हारिये गेछि आमि !'

हारिये-याओया—खो जाना; छोट......मेये—छोटी मेरी लड़की; सङ्गिनी-देर......पेये—सङ्गिनियों की पुकार सुन कर; सिंड़ि......नेमे—सीढ़ी से नीचले तले में उतरने जा रही थी; अन्धकारे......थेमे—अन्धकार में भय से रुक-रुक कर; हाते......खानि—हाथ में प्रदीप था; आँचल......सावधानी—आँचल से ओट कर सावधानी से चल रही थी।

आमि......छाते—मैं छत पर था; ताराय.....राते—तारों से भरी चैत-महीने की रात्रि में; हठात्......छुटे—हठात् लड़की का क्रन्दन (रोना) सुन जल्दी से देखने गया; सिंड़िर.....बातासेते—सीढ़ी के बीच जाते-जाते हवा से उसका प्रदीप बुझ गया है; शुधाइ.......वामी—उससे पूछता हूँ, 'क्या हुआ, वामी'; से.......आमि—वह रो कर नीचे से कहती है, 'मैं खो गई हूँ'।

ताराय-भरा चैत्रमासेर राते
फिरे गिये छाते
मने हल आकाश-पाने चेये,
आमार वामीर मतोइ येन अमनि के एक मेये
नीलाम्बरेर आँचलखानि घिरे
दीपशिखाटि बाँचिये एका चलछे धीरे धीरे।
निवत यदि आलो, यदि हठात् येत थामि,
आकाश भरे उठत केंदे, 'हारिये गेछि आमि!'

[अक्टूबर १९१८] 'पलातका'

मने पड़ा

माके आमार पड़े ना मने।
शुधु कखन खेलते गिये हठात् अकारणे
एकटा की सुर गुन्‌गुनिये काने आमार वाजे,
मायेर कथा मिलाय येन आमार खेलार माझे।
मा वुझि गान गाइत आमार दोलना ठेले ठेले—
मा गियेछे, येते येते गानटि गेछे फेले॥

फिरे......छाते—छत पर लौटने पर; **मने......चेये**—आकाश की ओर देखने पर मन में हुआ; **आमार......धीरे**—मेरी वामी के समान ही जैसे उसी प्रकार एक कोई लड़की नीलाम्बर आँचल से घेर कर दीपशिखा को बँचाती हुई अकेले धीरे धीरे चल रही है; **निवत......आलो**—यदि आलोक (दीप) वुझ जाता; **यदि......थामि**—यदि हठात् रुक जाती; **आकाश......आमि**—आकाश भर कर रो उठती, 'मैं खो गयी हूँ'।

मने पड़ा—याद आना; **माके......मने**—माँ का मुझे स्मरण नहीं आता; **शुधु......वाजे**—केवल कभी खेलते जाने पर हठात् अकारण एक कौन-सा सुर गुन गुन कर मेरे कानों में ध्वनित होता है; **मायेर......माझे**—जैसे मेरे खेल में माँ के शव्द मिल जाते हैं; **मा......ठेले**—लगता है जैसे माँ मेरे झूले को ठेल-ठेल कर गान गाती; **मा......फेले**—माँ चली गई है, जाते जाते (जैसे) गान फेंक (रख) गई है।

माके आमार पड़े ना मने।
शुधु यखन आश्विनेते भोरे शिउलिवने
शिशिर-भेजा हाओया वेये फुलेर गन्ध आसे
तखन केन मायेर कथा आमार मने भासे।
कबे वुझि आनत मा सेइ फुलेर साजि बये—
पुजार गन्ध आसे ये ताइ मायेर गन्ध हये॥

माके आमार पड़े ना मने।
शुधु यखन वसि गिये शोबार घरे कोणे,
जानला थेके ताकाइ दूरे नील आकाशेर दिके—
मने हय, मा आमार पाने चाइछे अनिमिखे।
कोलेर 'परे ध'रे कवे देखत आमाय चेये—
सेइ चाउनि रेखे गेछे सारा आकाश छेये॥

२५ सितम्बर १९२१ 'शिशु भोलानाथ'

शुधु......भासे—केवल जब आश्विन के महीने में भोर के समय हरसिंगार के वन में ओस कण से भीगी हुई हवा फूलों के गन्ध को ले कर आती है तब क्यों माँ की बात मेरे मन में उड़ती-फिरती है; कवे......हये—माँ कभी उन फूलों की डाली ले आती, इसीलिये पूजा का गन्ध माँ का गन्ध बन कर आता है।

शुधु.....कोणे—केवल जब सोने के कमरे के कोने में जा कर बैठता हूँ; जानला ......दिके—खिड़की से दूर नील आकाश की ओर देखता हूँ; मने......अनिमिखे —मन में होता है (जैसे) माँ मेरी ओर अनिमेष दृष्टि से देख रही है; कोलेर ....छेये—गोद में रख कभी मुझे देखती उस 'देखने' (की क्रिया) को समस्त आकाश में जैसे फैला कर रख गई है।

तपोभङ्ग

यौवनवेदनारसे-उच्छल आमार दिनगुलि
हे कालेर अधीश्वर, अन्यमने गियेछ कि भुलि,
हे भोला संन्यासी ?
चञ्चल चैत्रेर राते किंशुकमञ्जरि-साथे
शून्येर अकूले तारा अयत्ने गेल कि सव भासि ?
आश्विनेर वृष्टिहारा शीर्णशुभ्र मेघेर भेलाय
गेल विस्मृतिर घाटे स्वेच्छाचारी हाओयार खेलाय
निर्मम हेलाय ?।

एकदा से दिनगुलि तोमार पिङ्गल जटाजाले
श्वेत रक्त नील पीत नाना पुष्पे विचित्र साजाले,
गेछ कि पासरि ?
दस्यु तारा हेसे हेसे हे भिक्षुक, निल शेषे
तोमार डम्बरु शिङा, हाते दिल मञ्जीरा-बाँशरि;
गन्धभारे आमन्थर वसन्तेर उन्मादनरसे
भरि तव कमण्डलु निमज्जिल निविड़ आलसे
माधुर्यरभसे ।।

उच्छल—उफनाए हुए; आमार दिनगुलि—मेरे दिन; अन्यमने...... भुलि—अन्य मनस्क हो क्या भूल गए हो; भोला—आत्म-विस्मृत; शून्येर...... भासि—क्या वे सभी अवहेलना के कारण शून्य की असीमता में वह गए; भेला—भेलक—नदी आदि पार करने का केले के थंभ, लकड़ी आदि का वना वेड़ा; गेल—गया; हाओयार—हवा का; हेलाय—अवहेलना से।

एकदा—एक समय; तोमार—तुम्हारे; जटाजाले—जटा-जाल में; साजाले—सजाते थे; गेछ......पासरि—क्या भूल गए; तारा—वे; हेसे हेसे—हँस हँस कर; निल—लिया; शेषे—अन्त में; डम्बरु—डमरू; शिङा—सिंगा; हाते दिल......बाँशरि—हाथ में मञ्जीर की बाँसुरी दी; भरि—भर कर; निमज्जिल—निमज्जित किया; रभसे—मिलन, सम्भोग।

सेदिन तपस्या तव अकस्मात् शून्ये गेल भेसे
शुष्कपत्रे घूर्णवेगे गीतरिक्त हिममरुदेशे,
उत्तरेर मुखे।
तव ध्यानमन्त्रटिरे आनिल वाहिर-तीरे
पुष्पगन्धे लक्ष्यहारा दक्षिणेर वायुर कौतुके।
से मन्त्रे उठिल माति सेंउति काञ्चन करबिका,
से मन्त्रे नवीन पत्रे ज्वालि दिल अरण्यवीथिका
श्याम वह्निशिखा॥

वसन्तेर वन्यास्रोते संन्यासेर हल अवसान;
जटिल जटार वन्धे जाह्नवीर अश्रुकलतान
शुनिले तन्मय।
सेदिन ऐश्यर्य तव उन्मेषिल नव नव,
अन्तरे उद्वेल हल आपनाते आपन विस्मय।
आपनि सन्धान पेले आपनार सौन्दर्य उदार,
आनन्दे धरिले हाते ज्योतिर्मय पात्रटि सुधार
विश्वेर क्षुधार॥

सेदिन उन्मत्त तुमि ये नृत्ये फिरिले वने वने
से नृत्येर छन्दे-लये संगीत रचिनु क्षणे क्षणे
तव सङ्ग धरे।

सेदिन—उस दिन; शुन्ये......भसे—शून्य में वह गया; आनिल—लाया; तव......कौतुके—तुम्हारा ध्यान, मन्त्र पुष्पगन्ध से लक्ष्य को खो देने वाली दक्षिण वायु को वाहर के तट पर कौतुक के साथ लाया; से मन्त्रे......करविका—उस मन्त्र से सेवन्ती (सफेद गुलाव), कचनार और कनेर मत्त हो उठे; पत्रे—पत्तों में; ज्वालि दिल—प्रज्वलित कर दिया।

वन्या—वाढ़; हल—हुआ; वन्धे—वन्धन में; शुनिले—सुना; आपनाते आपन —अपने आप; आपनि—अपने ही; पेले—पाया; धरिले हाते—हाथ में पकड़ा।

ये......वने—जिस नृत्य में वन वन फिरे; रचिनु—रचा;

ललाटेर चन्द्रालोके नन्दनेर स्वप्नचोखे
नित्यनूतनेर लीला देखेछिनु चित्त मोर भरे।
देखेछिनु सुन्दरेर अन्तर्लीन हासिर रङ्गिमा,
रेखेछिनु लज्जितेर पुलकेर कुण्ठित भङ्गिमा—
रूपतरङ्गिमा ॥

सेदिनेर पानपात्र, आज तार घुचाले पूर्णता ?
मुछिले—चुम्बनरागे-चिह्नित वंकिम रेखालता
रक्तिम अंकने ?
अगीत संगीतधार अश्रुर सञ्चयभार,
अयत्ने लुण्ठित से कि भग्नभाण्डे तोमार अङ्गने ?
तोमार ताण्डवनृत्ये चूर्ण चूर्ण हयेछे से धूलि ?
निःस्व कालवैशाखीर निश्वासे कि उठिछे आकुलि
लुप्त दिनगुलि ?

नहे, नहे, आछे तारा; नियेछ तादेर संहरिया
निगूढ़ ध्यानेर रात्रे, निःशब्देर माझे सम्वरिया
राख संगोपने।

देखेछिनु—देखा था; **चित्त......भरे**—जी भर के; **हासिर रङ्गिमा**—हँसी की रंगीनी।

सेदिनेर पानपात्र—उस दिन के पीने के पात्र को; **तार**—उसकी; **घुचाले**—शेष की, विनष्ट की; **मुछिले**—पोंछा; **अंकने**—चित्रण से; **अयत्ने....अङ्गने**—क्या तुम्हारे आंगन में वह टूटे हुए वर्तन में अवहेला के साथ पड़ा हुआ है; **तोमार**—तुम्हारा; **हयेछे**—हुई है; **से**—वह; **कालवैशाखी**—चैत-वैशाख के महीने में अपराह्न में जो आँधी-पानी आती है उसे काल-वैशाखी कहते हैं; **कि..... दिनगुलि**—क्या वे सभी दिन जो लुप्त हो गए हैं आकुल हो उठते हैं।

नहे......तारा—नहीं नहीं, वे (दिन) हैं; **नियेछ......रात्रे**—निगूढ़ ध्यान की रात्रि में उन्हें प्रत्याकर्षित कर संयत कर लिया है; **निःशब्देर......संगोपने**—संयमित कर नीरवता के भीतर (उन्हें) संपूर्ण रूप से गोपन कर रखते हो;

तोमार जटाय-हारा गङ्गा आज शान्तधारा,
तोमार ललाटे चन्द्र गुप्त आजि सुप्तिर वन्धने।
आवार की लीलाच्छले अकिञ्चन सेजेछ वाहिरे।
अन्धकारे निःस्वनिछे यत दूरे दिगन्ते चाहि रे—
'नाहि रे, नाहि रे॥'

कालेर राखाल तुमि, सन्ध्याय तोमार शिङा वाजे;
दिनधेनु फिरे आसे स्तब्ध तव गोष्ठगृह-माझे
उत्कण्ठित वेगे।
निर्जन प्रान्तरतले आलेयार आलो ज्वले,
विद्युत्वह्निर सर्प हाने फणा युगान्तेर मेघे।
चञ्चल मुहूर्त यत अन्धकारे दुःसह नैराशे
निविड़निवद्ध हये तपस्यार निरुद्ध निश्वासे
शान्त हये आसे॥
जानि जानि, ए तपस्या दीर्घरात्रि करिछे सन्धान
चञ्चलेर नृत्यस्रोते आपन उन्मत्त अवसान
दुरन्त उल्लासे।

तोमार......हारा—तुम्हारी जटा में खोई हुई; **आजि**—आज; **सुप्तिर वन्धने**—सुप्ति के वन्धन में; **गुप्त**—छिपा हुआ; **आवार......वाहिरे**—अव फिर किस लीला का भान किए हुए वाहर से भिखारी का वेश वनाया है; **अन्धकारे......नाहि रे**—अन्धकार में जितनी दूर दिगन्त में देखता हूँ, 'नहीं रे, नहीं रे' की ध्वनि आ रही है।

कालेर....वाजे—काल (समय) के तुम चरवाहे हो, सन्ध्या समय तुम्हारी सिंगा वजती है; **दिनधेनु......वेगे**—दिन रूपी गाय उत्कण्ठा के साथ वेगपूर्वक तुम्हारे निस्तब्ध गोहाल में लौट आती है; **प्रान्तरतले**—प्रान्तर में; **आलेया**—अगिया वैताल—दलदल के किनारे दीख पड़ने वाला ज्वलन्त गैस-विशेष जिस से पथिकों को भ्रम उत्पन्न हो जाता है; **आलेयार आलो**—मिथ्या माया; **ज्वले**—जलती है; **हाने फणा**—फन मारता है; **यत**—जितने; **नैराशे**—नैराश्य में; **हये**—हो कर; **शान्त......आसे**—शान्त होता आता है।

जानि—जानता हूँ; **ए......उल्लासे**—यह तपस्या रूपी दीर्घरात्रि दुर्दमनीय उल्लास के साथ चञ्चल के नृत्य के स्रोत में अपना उन्मत्त अवसान ढूँढ़ रही है;

वन्दी यौवनेर दिन आवार शृङ्खलहीन
बारे बारे बाहिरिबे व्यग्रवेगे उच्च कलोच्छ्वासे ।
विद्रोही नवीन वीर स्थविरेर-शासन-नाशन
वारे वारे देखा दिबे; आमि रचि तारि सिंहासन—
तारि सम्भाषण ।।

तपोभङ्गदूत आमि महेन्द्रेर, हे रुद्र संन्यासी,
स्वर्गेर चक्रान्त आमि । आमि कवि युगे युगे आसि
तव तपोवने ।
दुर्जयेर जयमाला पूर्ण करे मोर डाला,
उद्दामेर उतरोल वाजे मोर छन्देर क्रन्दने ।
व्यथार प्रलापे मोर गोलापे गोलापे जागे वाणी,
किशलये किशलये कौतूहलकोलाहल आनि
मोर गान हानि ।।

हे शुष्कवल्कलधारी वैरागी, छलना जानि सव—
सुन्दरेर हाते चाओ आनन्दे एकान्त पराभव
छद्मरणवेशे ।
वारे वारे पञ्चशरे अग्नितेजे दग्ध क'रे
द्विगुण उज्ज्वल करि वारे वारे बाँचाइबे शेषे ।

वन्दी......दिन—वन्दी यौवन का दिन; **आवार**—फिर से; **वारे वारे वाहिरिवे**—वार वार वाहर होगा; **देखा दिबे**—दिखलाई देगा; **आमि......सम्भाषण** मैं उसी के सिंहासन, उसी के सम्भाषण की रचना करता हूँ ।

चक्रान्त—षड्यन्त्र; **आसि**—आता हूँ; **पूर्ण......डाला**—मेरी डलिया को पूर्ण करती है; **उतरोल**—कोलाहल; **गोलाप**—गुलाव; **किशलय**—किसलय; **आनि**—ला कर; **हानि**—आघात करता हूँ ।

छलना......सव—(तुम्हारी) सव छलना को जानता हूँ; **सुन्दरेर.......वेशे**—छद्म रण के वेश में सुन्दर के हाथों आनन्द के साथ सम्पूर्ण रूप से पराजय चाहते हो; **वारे......क'रे**—वार वार पञ्चशर (कामदेव) को अग्नि-तेज से जला कर; **द्विगुण.....शेषे**—वार वार दुगुना उज्ज्वल कर अन्त में (उसे) वचाओगे;

वारे वारे तारि तूण सम्मोहने भरि दिब ब'ले
आमि कवि संगीतेर इन्द्रजाल निये आसि चले
मृत्तिकार कोले ।।

जानि जानि, वारम्वार प्रेयसीर पीड़ित प्रार्थना
शुनिया जागिते चाओ आचम्बिते ओगो अन्यमना,
नूतन उत्साहे ।
ताइ तुमि ध्यानच्छले विलीन विरहतले;
उमारे काँदाते चाओ विच्छेदेर दीप्तदु:खदाहे ।
भग्नतपस्यार परे मिलनेर विचित्र से छवि
देखि आमि युगे युगे, वीणातन्त्रे वाजाइ भैरवी—
आमि सेइ कवि ।

आमारे चेने ना तव श्मशानेर वैराग्यविलासी—
दारिद्र्येर उग्र दर्पे खलखल ओठे अट्टहासि
देखे मोर साज ।

वारे......कोले—वार वार उसके (तूण) तरकस को सम्मोहन से भर दूँगा (ऐसा जान) मैं कवि मिट्टी की गोद में चल संगीत का इन्द्रजाल ले आता हूँ।

जानि......उत्साहे—हे अन्यमनस्क, जानता हूँ, जानता हूँ (तुम) प्रेयसी की पीड़ित प्रार्थना को सुन कर नूतन उत्साह में (भर) हठात् जागना चाहते हो; **ताइ......तले**—इसीलिये तुम ध्यान का भान किए हुए (वास्तव में) विरह में डूबे हुए रहते हो; **उमारे.....दाहे**—विरह के दीप्त दु:ख से जला कर उमा को रुलाना चाहते हो; **भग्नतपस्यार......युगे**—तपस्या के भग्न होने पर मिलन की वह विचित्र तस्वीर मैं युग-युग देखता हूँ; **वीणा......कवि**—वीणा के तारों में भैरवी बजाता हूँ, मैं वही कवि हूँ।

आमारे......विलासी—तुम्हारे श्मशान के वैराग्य-विलासी (वैराग्य में ही आनन्द लेने वाले) मुझे पहचानते नहीं; **दारिद्र्येर......साज**—मेरी साज-सज्जा को देख कर दारिद्र्य के उग्र दर्प से खल खल अट्टहास कर उठते हैं;

हेनकाले मधुमासे मिलनेर लग्न आसे,
उमार कपोले लागे स्मितहास्यविकशित लाज।
सेदिन कविरे डाक' विवाहेर यात्रापथतले,
पुष्पमाल्यमाङ्गल्येर साजि लये सप्तर्षिर दले।
कवि सङ्गे चले॥

भैरव, सेदिन तव प्रेतसङ्गीदल रक्त-आँखि
देखे तव शुभ्रतनु रक्तांशुके रहियाछे ढाकि
प्रातःसूर्यरुचि।
अस्थिमाला गेछे खुले माधवीवल्लरीमूले,
भाले माखा पुष्परेणु—चिताभस्म कोथा गेछे मुछि!
कौतुके हासेन उमा कटाक्षे लक्षिया कवि-पाने—
से हास्ये मन्द्रिल बाँशि सुन्दरेर जयध्वनिगाने
कविर पराने॥

अक्टूबर–नवम्बर १९२३ 'पूरवी'

हेनकाले—ऐसे ही समय; मधुमासे—वसन्त ऋतु में; मिलनेर......आसे—मिलन का लग्न (शुभ मुहूर्त) आता है; से दिन......तले—उस दिन कवि को विवाह के यात्रा पथ पर पुकारते हो; पुष्प......चले—मंगल की पुष्पमाला की डलिया लिए हुए सप्तर्षि के दल में कवि साथ साथ चलता है।

सेदिन.......देखे—उस दिन तुम्हारे संगी प्रेतगण लाल नेत्रों से देखते हैं; तव......रुचि—तुम्हारा शुभ्र (उज्ज्वल) शरीर प्रातःकालीन सूर्य की दीप्ति वाले लाल वस्त्र से ढँका हुआ है; अस्थि......मूले—हड्डियों की माला माधवी लता के नीचे खुल (दूर हो) गई है; भाले.....मुछि—ललाट पर फूलों की धूलि (पराग) लगी हुई है, चिता भस्म (न-जाने) कहाँ पुँछ गया है; कौतुके......पाने—कवि की ओर कटाक्ष से देखती हुई उमा कौतुक से हँसती हैं; से हास्ये......पराने—उस हास्य से कवि के प्राणों में सुन्दर की जयध्वनि के गान से बाँसुरी गुञ्जित हो उठी।

पूर्णता

१

स्तब्ध राते एक दिन
निद्राहीन
आवेगेर आन्दोलने तुमि
वलेछिले नतशिरे
अश्रुनीरे
धीरे मोर करतल चुमि—
'तुमि दूरे याओ यदि,
निरवधि
शून्यतार सीमाशून्य भारे
समस्त भुवन मम
मरुसम
रुक्ष हये यावे एकेवारे।
आकाश-विस्तीर्ण क्लान्ति
सव शान्ति
चित्त हते करिवे हरण—
निरानन्द निरालोक
स्तब्ध शोक
मरणेर अधिक मरण।'

आवेगेर.....चुमि—व्याकुलता से आलोड़ित हो, सिर झुका, आँखों में आँसू भर, धीरे से मेरे करतल का चुम्बन कर तुमने कहा था; **तुमि......एकेवारे**—तुम अगर दूर चले जाओ तो असीम शून्यता (सूनेपन) के भार से मेरा समस्त संसार संपूर्ण रूप से मरुभूमि के समान अनन्त काल के लिये रूखा हो जाएगा; **आकाश......हरण**—आकाश के सदृश फैली हुई (मेरी) क्लान्ति मेरे चित्त की सम्पूर्ण शान्ति को हरण कर लेगी; **मरणेर.......मरण**—मरण से भी बढ़ कर मरण।

२

शुने, तोर मुख खानि
वक्षे आनि
बलेछिनु तोरे काने काने—
'तुइ यदि यास दूरे
तोरि सुरे
वेदना-विद्युत् गाने गाने
झलिया उठिवे नित्य,
मोर चित्त
सचकिवे आलोके आलोके।
विरह विचित्र खेला
सारा वेला
पातिवे आमार वक्षे चोखे।
तुमि खुँजे पावे प्रिये,
दूरे गिये
मर्मेर निकटतम द्वार—
आमार भुवने तवे
पूर्ण हवे
तोमार चरम अधिकार।'

शुने—सुन कर; तोर......काने—तुम्हारे मुख को वक्ष पर (खींच) ला कर कानों-कानों में तुम से कहा था; तुइ.......दूरे—तू यदि दूर चली जा; तोरि..... नित्य—तुम्हारे ही सुर में वेदना की विजली गान-गान में नित्य चमक उठेगी; मोर......आलोके—मेरा चित्त प्रत्येक आलोक से त्रस्त हो उठेगा; विरह....... चोखे—सव समय विरह के रंग-वेरंग के खेल मेरे वक्ष और मेरी आँखों को (स्मरण कर) ले कर खेलोगी; तुमि.......द्वार—दूर जा कर प्रिये, तुम मर्म (हृदय) के निकटतम द्वार को खोज पाओगी; आमार.......अधिकार—मेरी दुनिया पर तव तुम्हारा अधिकार पूर्ण हो जाएगा।

३

दुजनेर सेइ वाणी
कानाकानि,
शुनेछिल सप्तर्षिर तारा;
रजनीगन्धार वने
क्षणे क्षणे
वहे गेल से वाणीर धारा।
तार परे चुपे चुपे
मृत्युरूपे
मध्ये एल विच्छेद अपार।
देखा शुना हल सारा,
स्पर्शहारा
से अनन्ते वाक्य नाहि आर
तवु शून्य शून्य नय,
व्यथामय
अग्निवाष्पे पूर्ण से गगन।
एका-एका से अग्निते
दीप्त गीते
सृष्टि करि स्वप्नेर भुवन।।

१ अक्टूबर १९२४ 'पूरबी'

दुजनेर......तारा—हम दोनों की कानों कानों की वे बातें सप्तर्षिमंडल के तारागणों ने सुनी थीं; रजनी......धारा—रजनीगन्धा के वन में वाणी की वह धारा क्षण-क्षण बहती रही; तार......अपार—इसके बाद चुपके-चुपके अपार विच्छेद मृत्यु के रूप में बीच में आया; देखा......सारा—देखना-सुनना खतम हो गया; स्पर्श......आर—स्पर्शहीन (हम दोनों के संसर्ग से विच्युत) वह वाक्य (हमारी वाणी) अब और अनन्त (आकाश) में नहीं है।

आशा

मस्त ये-सब काण्ड करि, शक्त तेमन नय;
जगत्-हितेर तरे फिरि विश्व जगत्मय।
सङ्गीर भिड़ बेड़े चले; अनेक लेखापड़ा,
अनेक भाषाय वकावकि, अनेक भाङागड़ा।
क्रमे क्रमे जाल गेँथे याय, गिँठेर परे गिँठ,
महल परे महल ओठे, इँटेर परे इँट।
कीर्तिरे केउ भालो वले, मन्द वले केह,
विश्वासे केउ काछे आसे, केउ करे सन्देह।
किछु खाँटि, किछु भेजाल, मसला येमन जोटे,
मोटेर 'परे एकटा किछु हये ओठेइ ओठे।

किन्तु ये-सब छोटो आशा करुण अतिशय,
सहज वटे शुनते लागे, मोटेइ सहज नय।

मस्त......नय—वड़े-वड़े काम करता हूँ (वे) उतने कठिन नहीं हैं; **जगत् ......नय**—संसार की भलाई के लिये समस्त विश्व में घूमता हूँ; **सङ्गीर......चले**—साथियों की भीड़ वढ़ती चलती है; **अनेक लेखापड़ा**—वहुत लिखना पढ़ना (चलता है); **अनेक......वकावकि**—अनेक भापाओं में गिटपिट (चलता है); **अनेक भाङागड़ा**—अनेक विनाश और निर्माण (के कार्य चलते रहते हैं); **क्रमे ......गिँठ**—क्रम-क्रम से जाल वुनता जाता है, गाँठों पर गाँठें (वैठती जाती हैं); **महल......इँट**—महल के ऊपर महल उठते जाते हैं, ईंट के ऊपर ईंटें (सजती जाती हैं); **कीर्तिरे......सन्देह**—कीर्ति को कोई अच्छा कहता है, कोई खराव कहता है, कोई विश्वास कर निकट आता है, कोई सन्देह करता है; **किछु...... ओठे**—कुछ विशुद्ध, कुछ मिलावट, जैसा मसाला जुटता है, अन्त में एक कुछ उठता ही उठता है।

किन्तु......नय—किन्तु जितनी छोटी आशाएँ हैं वे अत्यन्त करुण हैं, सुनने में तो सहज अवश्य लगती हैं लेकिन एकदम सहज नहीं हैं;

एकटुकु सुख गाने सुरे फुलेर गन्धे मेशा,
गाछेर-छायाय-स्वप्न-देखा अवकाशेर नेशा,
मने भावि चाइले पाव; यखन तारे चाहि,
तखन देखि चञ्चला से कोनोखानेइ नाहि।
अरूप अकूल वाष्पमाझे विधि कोमर बेँधे
आकाशटारे काँपिये यखन सृष्टि दिलेन फेँदे,
आद्ययुगेर खाटुनिते पाहाड़ हल उच्च,
लक्ष युगेर स्वप्ने पेलेन प्रथम फुलेर गुच्छ।

वहुदिन मने छिल आशा
धरणीर एक कोणे
रहिव आपन मने;
धन नय, मान नय, एकटुकु वासा
करेछिनु आशा।
गाछटिर स्निग्ध छाया, नदीटिर धारा,
घरे आना गोधूलिते सन्ध्याटिर तारा,

एकटुकु.....मेशा—फूलों के गन्ध से घुले-मिले गान और सुर का थोड़ा-सा आनंद; गाछेर.....देखा—पेड़ों की छाया में स्वप्न देखना; अवकाशेर नेशा—छुट्टी का नशा; मने.....नाहि—मन में सोचता हूँ इच्छा होने से ही पाऊँगा (लेकिन) जव उन्हें खोजता हूँ तव देखता हूँ कि वह चञ्चला (आशा) कहीं नहीं है; अरूप.....फेँदे—अरूप, अकूल वाष्प के वीच आकाश को कँपा ब्रह्मा ने जव कमर वाँध सृष्टि का निर्माण आरम्भ कर दिया; आद्ययुगेर......गुच्छ—(उस) आदि युग के (ब्रह्मा के) कठिन परिश्रम से पहाड़ ऊँचा हुआ (और) लाखों युग स्वप्न देखने के वाद उन्होंने प्रथम फूलों का गुच्छा पाया।

वहुदिन.....मने—वहुत दिनों (तक) मन में आशा थी कि धरती के एक कोने में अपने मन से, अपनी इच्छा के अनुसार रहूँगा; धन......आशा—धन की नहीं, मान की नहीं, एक छोटे से वासस्थान की आशा की थी; गाछटिर—पेड़ की; घरे......तारा—गोधूलि वेला में सन्ध्या के तारा को घर में ले आना (घर से देखना);

चामेलिर गन्धटुकु जानालार धारे,
भोरेर प्रथम आलो जलेर ओ पारे।
ताहारे जड़ाये घिरे
भरिया तुलिवे धीरे
जीवनेर कदिनेर काँदा आर हासा;
धन नय, मान नय, एकटुकु वासा
करेछिनु आशा।

वहुदिन मने छिल आशा
अन्तरेर ध्यानखानि
लभिवे सम्पूर्ण वाणी;
धन नय, मान नय, एकटुकु वासा
करेछिनु आशा।
मेघे मेघे एँके याय अस्तगामी रवि
कल्पनार शेष रङ समाप्तिर छवि,
आपन स्वप्नलोक आलोके छायाय
रङ रसे रचि दिव तेमनि मायाय।
ताहारे जड़ाये घिरे
भरिया तुलिवे धीरे
जीवने कदिनेर काँदा आर हासा।

चामेलिर.....धारे—खिड़की के किनारे मात्र चमेली का गन्ध; **भोरेर......पारे**—प्रातःकाल का प्रथम आलोक जल के उस पार; **ताहारे......हासा**—हास्य और क्रन्दन इन सबों को अपने में लिपटाए हुए (मेरे) जीवन के (इन) कै दिनों (कुछ दिनों) को धीरे से भर देंगे।

अन्तरेर......वाणी—अन्तर का चिन्तन सम्पूर्ण रूप से वाणी प्राप्त करेगा (वाणी के द्वारा चिन्तन सम्पूर्ण रूप से प्रकाश पाएगा); **मेघे......छवि**—अस्ताचल-गामी सूर्य मेघों में समाप्ति के चित्र को कल्पना के शेप रंग से अंकित कर जाता है; **आपन.......मायाय**—अपने स्वप्न-लोक को आलोक और छाया में रङ्ग और रस से उसी प्रकार के इन्द्रजाल-जैसा निर्मित कर दूंगा;

धन नय, मान नय, धेयानेर भाषा
करेछिनु आशा।

वहुदिन मने छिल आशा
प्राणेर गभीर क्षुधा
पावे तार शेष सुधा;
धन नय, मान नय, किछु भालोबासा
करेछिनु आशा।
हृदयेर सुर दिये नामटुकु डाका,
अकारणे काछे एसे हाते हात राखा,
दूरे गेले एका वसे मने मने भावा,
काछे एले दुइ चोखे कथा-भरा आभा।
ताहारे जड़ाये घिरे
भरिया तुलिबे धीरे
जोवनेर कदिनेर काँदा आर हासा।
धन नय, मान नय, किछु भालोबासा
करेछिनु आशा।

१९ अक्टूबर १९२४ 'पूरबी'

धेयानेर भाषा—गभीर चिन्ता की भाषा (गभीर चिन्ता को प्रकाश करने वाली भाषा)।

प्राणेर......सुधा—प्राणों की गभीर क्षुधा अपनी (तृप्ति के लिये) शेष सुधा पाएगी; किछु भालोबासा—थोड़ा-सा प्यार; हृदयेर.......डाका—हृदय का सुर दे कर (अंतरंगता के साथ) सिर्फ नाम ले कर पुकारना; अकारणे........राखा—अकारण पास आ कर हाथों में हाथ रखना; दूरे......भावा—दूर जाने पर अकेले वैठ मन ही मन चिन्ता करना; काछे......आभा—पास आने पर दोनों आँखों में वाणी से पूर्ण चमक (बोलती-सी आँखें)।

आशंका

भालोवासार मूल्य आमाय दु-हात भरे
यतइ देबे वेशी करे,
ततइ आमार अन्तरेर एइ गभीर फाँकि
आपनि धरा पड़वे ना कि ?
ताहार चेये ऋणेर राशि रिक्त करि
याइ ना निये शून्य तरी।
वरं रब क्षुधाय कातर भालो से-ओ,
सुधाय भरा हृदय तोमार
फिरिये निये चले येयो।

पाछे आमार आपन व्यथा मिटाइते
व्यथा जागाइ तोमार चिते,
पाछे आमार आपन वोझा लाघव तरे
चापाइ वोझा तोमार 'परे,
पाछे आमार एकला प्राणेर क्षुब्ध डाके
रात्रे तोमाय जागिये राखे,

भालोवासार......करे—(मेरे) प्रेम का मूल्य (अपने) दोनों हाथ भर जितना ही वेशी (वढ़ा कर) मुझे दोगी; **ततइ.....कि**—उतनाही क्या मेरे अन्तर की यह गभीर वञ्चना पकड़ाई नहीं देगी; **ताहार......तरी**—उससे (अच्छा तो यह है कि) ऋण की राशि (धन) को खाली कर सूनी नौका ले जाँय; **वरं**—वरन्; **रव.......से-ओ**—क्षुधासे पीड़ित रहूँगा वह भी अच्छा; **सुधाय......येयो**—सुधा से भरे हुए अपने हृदय को लौटा कर लिए चली जाना।

पाछे.....चिते—पीछे (कहीं) मैं अपनी व्यथा मिटाने (जा कर) तुम्हारे चित्त में व्यथा (न) जगा दूँ; **पाछे.....'परे**—पीछे मैं अपना वोझा हल्का करने के लिये तुम्हारे ऊपर वोझा (न) लाद दूँ; **पाछे......राखे**—पीछे (कहीं) मेरे अकेले (निःसंग) प्राण की क्षुब्ध पुकार रात्रि में तुम्हें जगा (न) रखे;

सेइ भयेतेइ मनेर कथा कइ ने खुले;
भुलते यदि पार तबे
सेइ भालो गो येयो भुले।

विजन पथे चलेछिलेम, तुमि एले
मुखे आमार नयन मेले।
भेवेछिलेम वलि तोमाय, सङ्गे चलो,
आमाय किछु कथा वलो।
हठात् तोमार मुखे चेये की कारणे
भय हल ये आमार मने।
देखेछिलेम सुप्त आगुन लुकिये ज्वले
तोमार प्राणेर निशीथ रातेर
अन्धकारेर गभीर तले।

तपस्विनी, तोमार तपेर शिखागुलि
हठात् यदि जागिये तुलि,
तवे ये सेइ दीप्त आलोय आड़ाल टुटे
दैन्य आमार उठवे फुटे।

सेइ.....खुले—इसी भय से ही मन की वात खुल कर नहीं कही; भुलते.....भुले—अगर भूल सको तो वही अच्छा, भूल जाना।

विजन......चलेछिलेम—विजन पथ में चला था; तुमि......मेले—मेरे मुख की ओर आँखें खोले हुए (मेरे मुख की ओर देखती हुई) तुम आईं; भेवेछिलेम ......चलो—सोचा था तुमसे कहूँ, (मेरे) साथ चलो; आमाय......वलो—मुझसे कुछ कहो; हठात्......मने—हठात् तुम्हारे मुख की ओर देखने पर (न-जाने) किस कारण से मेरे मन में भय हुआ; देखेछिलेम....तले—देखा था, तुम्हारे प्राणों की गभीर रात्रि में अन्धकार के गहरे तल में सोई हुई अग्नि छिप कर जल रही है।

तोमार......तुलि—तुम्हारे तप की शिखाओं को हठात् अगर जाग्रत कर दूँ; तवे......फुटे—तव उस दीप्त आलोक में मेरा आवरण टूट जाएगा (दूर हो जाएगा) और मेरा दैन्य स्पष्ट हो उठेगा;

हवि हबे तोमार प्रेमेर होमाग्निते
एमन की मोर आछे दिते।
ताइ तो आमि वलि तोमाय नतशिरे
तोमार देखार स्मृति निये
एकला आमि याव फिरे।

१७ नवम्बर १९२४ 'पूरवी'

बिदाय

कालेर यात्रार ध्वनि शुनिते कि पाओ।
तारि रथ नित्यइ उधाओ
जागाइछे अन्तरीक्षे हृदयस्पन्दन,
चक्रे-पिष्ट आँधारेर वक्ष-फाटा तारार क्रन्दन।

ओगो वन्धु, सेइ धावमान काल
जड़ाये धरिल मोरे फेलि तार जाल—,
तुले निल द्रुत रथे
दु:साहसी भ्रमणेर पथे
तोमा हते वहुदूरे।
मने हय अजस्र मृत्युरे

हवि......दिते—ऐसा क्या देने को मेरे पास है जो तुम्हारे प्रेम की होमाग्नि में हविस् होगा; **ताइ.....फिरे**—इसीलिये तो नत मस्तक हो मैं तुमसे कहता हूँ कि तुम्हारे दर्शन की स्मृति को ले कर मैं अकेला लौट जाऊँगा।

कालेर.....पाओ—काल की यात्रा की ध्वनि को क्या सुन पा रहे हो; **तारि ......उधाओ**—उसी का रथ वरावर भागता रहता है; **जागाइछे**—जगा रहा है; **चक्रे-पिष्ट**—पहिये से चूर्ण-विचूर्ण; **आँधारेर**—अंधकार का; **वक्ष-फाटा**—फटे हुए वक्ष वाले; **तारार**—ताराओं का।

सेइ—वही; **जड़ाये......जाल**—अपना जाल फेंक कर मुझे जकड़ लिया; **तुले निल**—उठा लिया; **तोमा......दूरे**—तुम से वहुत दूर; **मने......चूड़ाय**—लगता है असंख्य मृत्युओं को पार कर आज नव प्रभात की शिखर-चूड़ा पर

पार हये आसिलाम
आजि नव प्रभातेर शिखरचूड़ाय,
रथेर चञ्चल वेग हाओयाय उड़ाय
आमार पुरानो नाम।
फिरिबार पथ नाहि;
दूर हते यदि देख चाहि
पारिबे ना चिनिते आमाय।
हे बन्धु, बिदाय।

कोनोदिन कर्महीन पूर्ण अवकाशे,
वसन्त बातासे
अतीतेर तीर हते ये-रात्रे बहिबे दीर्घश्वास,
झरा बकुलेर कान्ना व्यथिबे आकाश,
सेइक्षणे खुँजे देखो, किछु मोर पिछे रहिल से
तोमार प्राणेर प्रान्ते; विस्मृतप्रदोषे
हयतो दिबे से ज्योति,
हयतो धरिबे कभु नामहारा स्वप्नेर मुरति।

आया; **हाओयाय......नाम**—मेरे पुराने नाम को हवा में उड़ाता है; **फिरिबार.....नाहि**—लौटने का रास्ता नहीं है; **दूर......आमाय**—दूर से यदि देखो (तो) मुझे पहचान नहीं सकोगे; **बिदाय**—विदाई।

कोनोदिन—किसी दिन; **पूर्ण अवकाशे**—पूरी छुट्टी पा कर; **बातासे**—हवा में; **अतीतेर......दीर्घश्वास**—अतीत के तीर से जिस रात्रि में दीर्घश्वास बहेगी; **झरा......आकाश**—झड़े हुए बकुल (मौलसिरी) का क्रन्दन आकाश को व्यथित करेगा; **सेइक्षणे......देखो**—उसी क्षण में खोज कर देखना; **किछु......प्रान्ते**—तुम्हारे प्राणों के उस प्रान्त में कुछ मेरा पीछे रह गया है; **विस्मृत......ज्योति**—विस्मृत सन्ध्या में हो सकता है वह प्रकाश दे; **हयतो.....मुरति**—हो सकता है कि कभी बिना नाम के स्वप्न की मूर्ति धारण करेगा;

तबु से तो स्वप्न नय,
सब-चेये सत्य मोर, सेइ मृत्युञ्जय,
से आमार प्रेम।
तारे आमि राखिया एलेम
अपरिवर्तन अर्घ्य तोमार उद्देशे
परिवर्तनेर स्रोते आमि याइ भेसे
कालेर यात्राय।
हे बन्धु, विदाय।

तोमार हय नि कोनो क्षति
मर्त्येर मृत्तिका मोर, ताइ दिये अमृत-मुरति
यदि सृष्टि करे थाक, ताहारि आरति
ह'क तव सन्ध्यावेला।
पूजार से-खेला
व्याघात पावे ना मोर प्रत्यहेर म्लान स्पर्श लेगे;
तृषार्त आवेगवेगे
भ्रष्ट नाहि हबे तार कोनो फुल नैवेद्येर थाले।

तबु......नय—तौभी वह तो स्वप्न नहीं है; **सब......प्रेम**—सब से बढ़ कर (वह) मेरा सत्य है, वह मृत्युञ्जय मेरा प्रेम है; **तारे......एलेम**—उसे मैं रख आया; **तोमार उद्देशे**—तुम्हारे लिये; **परिवर्तनेर.......भेसे**—परिवर्तन के स्रोत में मैं वह जाऊँ; **कालेर यात्राय**—काल की यात्रा (के साथ)।

तोमार......क्षति—तुम्हारी कोई क्षति नहीं हुई है; **मर्त्येर......थाक**—मृत्युलोक की मेरी मृत्तिका से अगर अमर मूर्ति की सृष्टि (तुमने) कर ली हो; **ताहारि.......सन्ध्यावेला**—सन्ध्या वेला में उसीकी आरती तुम उतारो; **पूजार.......लेगे**—मेरे प्रति दिन के म्लान स्पर्श के लगने से पूजा के उस खेल में विघ्न नहीं होगा; **तृषार्त.......थाले**—नैवेद्य की थाली में उसका कोई भी फूल तृषातुर आवेग के वेग से भ्रष्ट नहीं होगा।

तोमार मानसभोजे सयत्ने साजाले
ये भावरसेर पात्र वाणीर तृषाय,
    तार साथे दिव ना मिशाये
या मोर धूलिर धन, या मोर चक्षेर जले भिजे।
    आजो तुमि निजे
    हयतो वा करिबे रचन
मोर स्मृतिटुकु दिये स्वप्नाविष्ट तोमार वचन।
    भार तार ना रहिबे, ना रहिबे दाय।
        हे बन्धु, विदाय।

    मोर लागि करियो ना शोक,
आमार रयेछे कर्म, आमार रयेछे विश्वलोक।
    मोर पात्र रिक्त हय नाइ,
शून्येरे करिब पूर्ण, एइ व्रत वहिब सदाइ।
उत्कण्ठ आमार लागि केह यदि प्रतीक्षिया थाके
    से-इ धन्य करिबे आमाके।
    शुक्ल पक्ष हते आनि
    रजनीगन्धार वृन्तखानि

तोमार......तृषाय—जिस भाव-रस के पात्र को वाणी की तृषा से अपने मानस भोज के लिये (तुमने) यत्नपूर्वक सजाया; **तार......भिजे**—जो मेरी धूलि का धन है, जो मेरी आँखों के जल से भीगा हुआ है उसके (मानस भोज के) साथ मिला नहीं दूँगा; **आजो......वचन**—हो सकता है कि आज भी तुम स्वयं ही मेरी स्मृति के द्वारा स्वप्नाविष्ट अपने वचनों (शब्दों) की सृष्टि करोगे; **भार.....दाय**—न उसका बोझ रहेगा और न उसका दायित्व।

मोर......शोक—मेरे लिये शोक न करना; **आमार......विश्वलोक**—मेरे लिये (मेरा) कार्य है, मेरा संसार है; **मोर......नाइ**—मेरा पात्र खाली नहीं हुआ है; **शून्येरे......सदाइ**—शून्य को पूर्ण करूँगा, यही व्रत सदा धारण करूँगा; **उत्कण्ठ......आमाके**—मेरे लिये उत्कण्ठित हो यदि कोई प्रतीक्षा करता रहेगा, वही मुझे धन्य करेगा; **हते**—से; **आनि**—ला कर;

ये पारे साजाते
अर्घ्यथाला कृष्णपक्ष राते,
ये आमारे देखिवारे पाय
असीम क्षमाय
भालोमन्द मिलाये सकलि,
एबार पूजाय तारि आपनारे दिते चाइ बलि।
तोमारे या दियेछिनु, तार
पेयेछ निःशेष अधिकार।
हेथा मोर तिले तिले दान,
करुण मुहूर्तगुलि गण्डूष भरिया करे पान
हृदय-अञ्जलि हते मम।
ओ गो तुमि निरुपम,
हे ऐश्वर्यवान,
तोमारे या दियेछिनु से तोमारि दान;
ग्रहण करेछ यत ऋणी तत करेछ आमाय।
हे वन्धु, विदाय।

२५ जून १९२८ 'महुया'

ये.....साजाते—जो सजा सकता है; **ये.....सकलि**—भला वुरा सव को मिला कर जो असीम क्षमा के साथ मुझे देख पाएगा; **ए वार......वलि**—इस वार उसकी पूजा में अपने को वलि देना चाहता हूँ; **तोमारे......अधिकार**—तुम्हें जो दिया था उसका निःशेष अधिकार (तुमने) पाया है; **हेथा......दान**—यहाँ मेरा क्षण-क्षण दान है; **करुण......मन**—करुण मुहूर्त मुख भर-भर मेरी हृदय-अञ्जलि से पान करता है; **तोमारे......दान**—तुम्हें जो दिया था वह तुम्हारा ही दान था; **ग्रहण.......आमाय**—(तुमने) जितना ग्रहण किया है उतना ही मुझे ऋणी वनाया है।

पान्थ

शुधायो ना मोरे तुमि मुक्ति कोथा, मुक्ति कारे कइ,
आमि तो साधक नइ, आमि गुरु नइ।
आमि कवि, आछि
धरणीर अति काछाकाछि,
ए पारेर खेयार घाटाय।
सम्मुखे प्राणेर नदी जोयार-भाँटाय
नित्य वहे निये छाया आलो,
मन्द भालो,
भेसे-याओया कत की ये, भुले-याओया कत राशिराशि
लाभक्षति कान्नाहासि,—
एक तीर गड़ि तोले अन्य तीर भाङिया भाङिया;
सेइ प्रवाहेर 'परे उषा ओठे राङिया राङिया
पड़े चन्द्रालोकरेखा जननीर अङ्गुलिर मतो;
कृष्णराते तारा यत
जप करे ध्यानमन्त्र; अस्तसूर्य रक्तिम उत्तरी
वुलाइया चले याय, से-तरङ्गे माधवीमञ्जरि

शुधायो......कइ—मुझ से न पूछना कि मुक्ति कहाँ है (और) मुक्ति किसे कहता हूँ; **आमि......नइ**—मैं तो साधक नहीं हूँ, मैं गुरु नहीं हूँ; **आमि.....काछा-काछि**—मैं कवि हूँ, धरती के अत्यन्त निकट हूँ; **ए पारेर......घाटाय**—इस पार, नौका के घाट पर; **सम्मुखे......भालो**—सामने ज्वार-भाटा वाली प्राणों की नदी, प्रकाश और छाया तथा अच्छे और बुरे को ले कर बराबर बहती है; **भेसे......ये**—बह जाने वाला कितना क्या; **भुले.....हासि**—विस्मृत हो जाने वाले कितने राशि-राशि लाभ और हानि, क्रन्दन और हँसी; **एक......भाङिया**—एक तीर (तट) को काट-काट कर दूसरे तीर को गढ़ (निर्माण कर) डालती है; **सेइ....मतो**—उसी प्रवाह पर उषा लाल हो उठती है—तथा जननी की उंगली के समान चन्द्रमा के प्रकाश की रेखा पड़ती है; **कृष्ण......मन्त्र**—(उसी प्रवाह पर) काली रात में जितने तारा हैं वे ध्यान मन्त्र का जप करते हैं; **अस्त......याय**—(उस प्रवाह को) अस्त होने वाला सूर्य अपने रक्तिम उत्तरीय से छू कर चला जाता है;

भासाय माधुरीडालि,
पाखि तार गान देय ढालि ।

से तरङ्गनृत्यछन्दे विचित्र भङ्गीते
चित्त यवे नृत्य करे आपन सङ्गीते
ए विश्व प्रवाहे,
से छन्दे वन्धन मोर, मुक्ति मोर ताहे ।
राखिते चाहि ना किछु, आँकड़िया चाहि ना रहिते,
भासिया चलिते चाइ सवार सहिते
विरहमिलनग्रन्थि खुलिया खुलिया,
तरणीर पालखानि पलातका वातासे तुलिया ।

हे महापथिक,
अवारित तव दशदिक ।
तोमार मन्दिर नाइ, नाइ स्वर्गधाम,
नाइको चरम परिणाम;
तीर्थ तव पदे पदे;

से......डालि—उस तरङ्ग में माधवी मञ्जरी सुन्दर डाली को वहाती है; पाखि ......ढालि—पक्षी अपने गान (उस तरङ्ग में) ढाल देते हैं ।

से....प्रवाहे—उस तरङ्ग के नृत्य के छन्द में जव चित्त इस विश्व-प्रवाह में अपने सङ्गीत के साथ विचित्र भंगी में नृत्य करता है; से.....ताइ—उस छन्द में मेरा वन्धन है (और) उसी में मेरी मुक्ति है; राखिते......रहिते—(मैं) कुछ रखना नहीं चाहता (और) न चिपटा रहना चाहता हूँ; भासिया......सहिते—सभी के साथ वहता चलना चाहता हूँ; विरह.......खुलिया—विरह मिलन की गांठ को खोल कर; तरणीर......तुलिया—नौका के पाल को भागती हुई हवा में उड़ा कर ।

अवारित.....दिक—तुम्हारी दसों दिशाएँ वाधाहीन हैं; तोमार......परिणाम—तुम्हारा न मन्दिर है, न स्वर्गधाम है और न शेप परिणति है; तीर्थ.....पदे—पद पद पर तुम्हारा तीर्थ है;

चलिया तोमार साथे मुक्ति पाइ चलार सम्पदे,
चञ्चलेर नृत्ये आर चञ्चलेर गाने,
चञ्चलेर सर्वभोला दाने—
आँधारे आलोके,
सृजनेर पर्वे पर्वे, प्रलयेर पलके पलके।

७ मई १९३१ 'परिशेष'

प्रश्न

भगवान, तुमि युगे युगे दूत पाठायेछ बारे बारे
दयाहीन संसारे—
तारा वले गेल, 'क्षमा करो सबे', वले गेल, 'भालोबासो—
अन्तर हते विद्वेषविष नाशो।'
वरणीय तारा, स्मरणीय तारा, तबुओ बाहिर-द्वारे
आजि दुर्दिने फिरानु तादेर व्यर्थ नमस्कारे॥

आमि ये देखेछि, गोपन हिंसा कपट रात्रि-छाये
हेनेछे निःसहाये;

चलिया......सम्पदे—तुम्हारे साथ चल कर चलने के एश्वर्य में ही मुक्ति पाता हूँ; आर—और; सर्वभोला दाने—सब कुछ को भूल जाने वाले दान में; सृजनेर...... पलके—सृजन के प्रत्येक पर्व में और प्रलय के प्रत्येक क्षण में।

भगवान.....संसारे—भगवान, (इस) दयाहीन संसार में तुमने युग-युग में वार वार दूत भेज दिये हैं; तारा....सबे—वे कह गए, सब को क्षमा करो; भालोबासो —प्रेम करो; अन्तर.....नाशो—अन्तर से विद्वेष के विष का नाश करो; वरणीय —पूजनीय; ; तारा—वे; तबुओ........नमस्कारे—तौभी आज (इस) अशुभ समय में वाहर के दरवाज़े से एक निरर्थक नमस्कार कर उन्हें लौटा दिया है।

आमि......देखेछि—मैंने देखा है; रात्रि-छाये—रात्रि की छाया में; हेनेछे—आघात किया है; निःसहाये—असहायों को;

आमि ये देखेछि, प्रतिकारहीन शक्तेर अपराधे
विचारेर वाणी नीरवे निभृते काँदे
आमि ये देखिनु, तरुण बालक उन्माद हये छुटे
की यन्त्रणाय मरेछे पाथरे निष्फल माथा कुटे ॥

कण्ठ आमार रुद्ध आजिके, बाँशि संगीतहारा,
अमावस्यार कारा
लुप्त करेछे आमार भुवन दुःस्वप्नेर तले;
ताइ तो तोमाय शुधाइ अश्रुजले—
याहारा तोमार विषाइछे वायु, निभाइछे तव आलो,
तुमि कि तादेर क्षमा करियाछ, तुमि कि वेसेछ भालो ?।

दिसंबर-जनवरी १९३१–३२ 'परिशेष'

प्रतिकारहीन—जिसका प्रतिकार न किया जा सके; **शक्तेर अपराधे**—शक्तिशाली के अपराध से; **विचारेर वाणी**—न्याय की वाणी; **काँदे**—रोती है; **देखिनु**—देखा है; **उन्माद हये छुटे**—पागलों की तरह भागता है; **की यन्त्रणाय..... कुटे**—पत्थर पर व्यर्थ माथा पटक कर कितनी यन्त्रणा सह कर मरा है।

कण्ठ........आजिके—आज मेरा कण्ठ बंद है; **बाँशी**—बाँसुरी; **संगीतहारा**—संगीत खोई हुई; **अमावस्या......तले**—अमावस्या के कारागृह ने मेरे भुवन को दुःस्वप्न के तल में लुप्त कर दिया है; **ताइ.....अश्रुजले**—इसीलिये तो आँखों में आँसू भर तुमसे पूछता हूँ; **याहारा......भालो**—जो लोग तुम्हारी वायु को विषाक्त कर रहे हैं, तुम्हारे प्रकाश को बुझा रहे हैं, तुमने क्या उन्हें क्षमा किया है, तुमने क्या (उन्हें) प्यार किया है।

मृत्युञ्जय

दूर हते भेबेछिनु मने—
दुर्जय निर्दय तुमि, काँपे पृथ्वी तोमार शासने।
तुमि विभीषिका,
दुःखीर विदीर्ण वक्षे ज्वले तव लेलिहान शिखा।
दक्षिण हातेर शेल उठेछे झड़ेर मेघ-पाने,
सेथा हते वज्र टेने आने।
भये भये एसेछिनु दुरुदुरु वुके
तोमार सम्मुखे।
तोमार भ्रुकुटिभङ्गे तरङ्गिल आसन्न उत्पात,
नामिल आघात।
पाँजर उठिल कँपे,
वक्षे हात चेपे
शुधालेम, 'आरो किछु आछे नाकि,
आछे वाकि
शेष वज्रपात ?'
नामिल आघात ।।

दूर हते......मने—दूर से मन में सोचा था; दुःखीर......शिखा—दुःखी के विदीर्ण वक्ष में तुम्हारी लपलपाती लौ जलती है; दक्षिण......पाने—दाहिने हाथ का शेल झंझा के मेघ की ओर उठा है; सेथा.....आने—वहाँ से वज्र को खींच लाता है; भये......सम्मुखे—तुम्हारे सामने कांपती छाती से डरता-डरता आया था; तोमार.....उत्पात—तुम्हारी भृकुटि की भङ्गिमा से आसन्न उत्पात तरङ्गित हो उठा; नामिल—उतरा; पाँजर.....कँपे—पञ्जर काँप उठा; वक्षे......नाकि—छाती हाथ से दवा कर (मैंने) पूछा, 'और (भी) कुछ है न क्या'; आछे वाकि—वाकी है।

एइमात्र ? आर-किछु नय ?
भेङ्गे गेल भय ।
यखन उद्यत छिल तोमार अशनि
तोमारे आमार चेये बड़ो बले नियेछिनु गणि ।
तोमार आघात-साथे नेमे एले तुमि
येथा मोर आपनार भूमि ।
छोटो हये गेछ आज ।
आमार टुटिल सब लाज ।
यत बड़ो हओ,
तुमि तो मृत्युर चेये बड़ो नओ ।
'आमि मृत्यु चेये बड़ो' एइ शेष कथा ब'ले
याब आमि चले ।।

१ जुलाई १९३२ 'परिशेष'

एइमात्र—(बस) इतना ही; आर.......नय—और कुछ नहीं; भेङ्गे......भय—भय छूट गया; यखन......गणि—जब तुम्हारा वज्र प्रस्तुत था (मैंने) तुमको अपने से बड़ा समझ लिया था; तोमार......भूमि—अपने प्रहार के साथ तुम नीचे उतर आए जहाँ मेरी अपनी भूमि है; छोटो.......आज—आज छोटे हो गए हो; आमार.......लाज—मेरी सब लज्जा छूट गई; यत.......नओ—जितने बड़े होओ तुम तो मृत्यु से बड़े नहीं; आमि......चले—'मैं मृत्यु से बड़ा हूँ' यह अन्तिम बात बोल मैं चला जाऊँगा ।

प्रथम पूजा

त्रिलोकेश्वरेर मन्दिर ।
लोके वले स्वयं विश्वकर्मा तार भित-पत्तन करेछिलेन
कोन् मान्धातार आमले,
स्वयं हनुमान एनेछिलेन तार पाथर वहन करे ।
इतिहासेर पण्डित वलेन, ए मन्दिर किरात जातेर गड़ा,
ए देवता किरातेर ।
एकदा यखन क्षत्रिय राजा जय करलेन देश
देउलेर आङिना पुजारिदेर रक्ते गेल भेसे,
देवता रक्षा पेलेन नतुन नामे नतुन पूजाविधिर आड़ाले—
हाजार वत्सरेर प्राचीन भक्तिधारार स्रोत गेल फिरे ।
किरात आज अदृश्य, ए मन्दिरे तार प्रवेशपथ लुप्त ।

किरात थाके समाजेर वाइरे,
नदीर पूर्वपारे तार पाड़ा ।
से भक्त, आज तार मन्दिर नेइ, तार गान आछे ।
निपुण तार हात, अभ्रान्त तार दृष्टि ।

त्रिलोकेश्वरेर—त्रिलोकेश्वर का; **लोके वले**—लोगों का कहना है; **तार**—उसका; **भित-पत्तन करेछिलेन**—शिलान्यास किया था; **कोन्......आमले**—किसी मान्धाता के शासन-काल में (अति प्राचीन काल में); **एनेछिलेन......करे**—उसका पत्थर वहन कर ले आए थे; **वलेन**—कहते हैं; **ए**—यह; **जातेर गड़ा**—जाति का निर्माण किया हुआ है; **एकदा**—एक समय; **यखन**—जव; **करलेन**—किया; **देउलेर.....भेसे**—देवालय का आँगन पुजारियों के रक्त में वह गया; **देवता.....आड़ाले**—नूतन नाम, नूतन पूजा विधि की आड़ में देवता ने रक्षा पाई; **हाजार वत्सरेर**—हजार वर्षों का; **गेल फिरे**—पलट गया, वदल गया; **ए मन्दिरे**—इस मन्दिर में; **तार**—उसका।

किरात.....वाइरे—किरात समाज के वाहर रहता है; **पाड़ा**—मुहल्ला; **से**—वह; **नेइ**—नहीं है; **आछे**—है; **हात**—हाथ;

से जाने की क'रे पाथरेर उपर पाथर बाँधे,
की करे पितलेर उपर रूपोर फुल तोला याय—
कृष्णशिलाय मूर्ति गड़बार छन्दटा की।
राजशासन तार नय अस्त्र तार नियेछे केड़े,
वेशे वासे व्यवहारे सम्मानेर चिह्न हते से वञ्चित
वञ्चित से पुँथिर विद्याय।
त्रिलोकेश्वर मन्दिरेर स्वर्णचूड़ा पश्चिम दिगन्ते याय देखा,
चिनते पारे निजेदेरइ मनेर आकल्प,
वहुदूरेर थेके प्रणाम करे।

कार्तिक पूर्णिमा, पूजार उत्सव।
मञ्चेर उपरे वाजछे वाँशि मृदङ्ग करताल,
माठ जुड़े कानातेर पर कानात,
माझे माझे उठेछे ध्वजा।
पथेर दुइ धारे व्यापारीदेर पसरा—
तामार पात्र, रूपोर अलंकार, देवमूर्तिर पट, रेशमेर कापड़,

से......बाँधे—वह जानता है कैसे पत्थर के ऊपर पत्थर बाँधा जाता है; **की.....याय**—कैसे पीतल के ऊपर चाँदी का फूल काढ़ा जाता है; **कृष्ण......की**—काली शिला पर मूर्ति गढ़ने का छन्द क्या है; **नय**—नहीं है; **नियेछे केड़े**—काढ़ लिया है, ले लिया है; **वेशे.....वञ्चित**—वह वेश, वासस्थान और व्यवहार में सम्मान के चिह्न से वञ्चित है; **वञ्चित......विद्याय**—पोथी की विद्या से वह वञ्चित है; **चिनते......आकल्प**—अपने ही लोगों के मन के कल्पादर्श को पहचान पाता है; **वहु......करे**—वहुत दूर से ही प्रणाम करता है।

मञ्चेर उपरे—मञ्च के ऊपर; **वाजछे**—वज रहे हैं; **वाँशि**—वंशी; **माठ......ध्वजा**—(समस्त) मैदान को घेर कर एक के वाद एक तम्वू (लगे हुए हैं), वीच-वीच में ध्वजा फहरा रही है; **पथेर......पसरा**—रास्ते के दोनों किनारे व्यापारियों की विक्री वाली वस्तुओं का ढेर; **तामार**—ताँवे का; **रूपोर अलंकार**—चाँदी के गहने; **कापड़**—कपड़ा;

छेलेदेर खेलार जन्ये काठेर डमरु, माटिर पुतुल, पातार बाँशि;
अर्घ्येर उपकरण, फल माला धूप वाति, घड़ा घड़ा तीर्थवारि।
वाजिकर तारस्वरे प्रलापवाक्ये देखाच्छे वाजि,
कथक पड़छे रामायणकथा।
उज्ज्वलवेशे सशस्त्र प्रहरी घुरे बेड़ाय घोड़ाय चड़े;
राज-अमात्य हातिर उपर हाओदाय,
सम्मुखे वेजे चलेछे शिङा।
किंखावे ढाका पाल्किते धनीघरेर गृहिणी,
आगे पिछे किंकरेर दल।
संन्यासीर भिड़ पञ्चवटेर तलाय,
नग्न, जटाधारी, छाइमाखा;
मेयेरा पायेर काछे भोग रेखे याय—
फल, दुध, मिष्टान्न, घि, आतप तण्डुल।

थेके थेके आकाशे उठछे चीत्कारध्वनि,
जय त्रिलोकेश्वरेर जय।
काल आसवे शुभलग्ने राजार प्रथम पूजा,

छेलेदेर.....डमरु—लड़कों के खेलने के लिये लकड़ी के डमरू; **माटिर पुतुल**—मिट्टी के खिलौने; **पातार बाँशि**—पत्तों के वाजे; **वाति**—वत्ती; **घड़ा घड़ा**—घड़े के घड़े; **वाजिकर**—वाजीगर; **तारस्वरे**—उच्च स्वर से; **देखाच्छे वाजि**—इन्द्रजाल दिखला रहा है; **कथक पड़छे**—कथा-वाचक पढ़ रहा है; **घुरे......चड़े**—घोड़ा पर चढ़ कर (इधर उधर) घूम रहा है; **हातिर उपर**—हाथी के ऊपर; **हाओदाय**—हौदे में; **सम्मुखे......शिङा**—सामने सिंगा वजता हुआ चल रहा है; **किंखावे**—कीमखाव; **ढाका**—ढकी हुई; **पाल्कीते**—पालकी में; **पिछे**—पीछे; **भिड़**—भीड़; **पञ्चवटेर तलाय**—पञ्चवट (अश्वत्थ, वट, विल्व, आँवला और अशोक से निर्मित वन) के नीचे; **छाइमाखा**—भस्म लगाए हुए; **मेयेरा......याय**—स्त्रियाँ पैरों के पास भोग रख जाती हैं; **घि**—घी; **आतप तण्डुल**—अरवा चावल।

थेके......ध्वनि—रह-रह कर आकाश में जोर से ध्वनि उठती है; **आसवे**—आएगी;

स्वयं आसबेन महाराजा राजहस्तीते चड़े।
तांर आगमन-पथेर दुइ धारे
सारि सारि कलार गाछे फुलेर माला,
मङ्गल घटे आम्रपल्लव।
आर क्षणे क्षणे पथेर धुलाय सेचन करछे गन्धवारि।

शुक्ल त्रयोदशीर रात।
मन्दिरे प्रथम प्रहरेर शङ्ख घण्टा भेरी पटह थेमेछे।
आज चाँदेर उपरे एकटा घोला आवरण,
ज्योत्स्ना आज झापसा—
येन मूर्छार घोर लागल।

बातास रुद्ध—
धोँया जमे आछे आकाशे,
गाछपालागुलो येन शंकाय आड़ष्ट।
कुकुर अकारणे आर्तनाद करछे
घोड़ागुलो कान खाड़ा करे उठछे डेके
कोन अलक्ष्येर दिके ताकिये।

आसबेन—आएंगे; राजहस्तीते चड़े—राजहस्ती पर चढ़ कर; तांर—उनके; दुइ धारे—दोनों ओर; सारि सारि—पंक्ति की पंक्ति; कलार......माला—केले के पेड़ में फूल की माला; आर—और; क्षणे......वारि—क्षण-क्षण पथ की धूल सुगन्धित जलसे सींची जा रही है।

थेमेछे—रुक गए हैं; एकटा—एक; झापसा—धुंधला; येन......लागल—जैसे मूर्च्छा का नशा लगा हो; बातास—हवा; धोंया........आकाशे—धुँआ आकाश में जमा हुआ है; गाछ......आड़ष्ट—वृक्ष-लतादि जैसे शंका से जड़ बने हैं; कुकुर—कुत्ता; करछे—कर रहा है; घोड़ा......डेके—घोड़े कान खड़े कर हिनहिना उठते हैं; कोन.......ताकिये—किस अलक्ष्य (शून्य) की ओर देख कर;

हठात् गम्भीर भीषण शब्द शोना गेल माटिर नीचे—
पाताले दानवेरा येन रणदामामा वाजिये दिले—
गुरु-गुरु गुरु-गुरु।
मन्दिरे घन्टा वाजते लागल प्रवल शब्दे।

हाति वाँधा छिल,
तारा वन्धन छिँड़े गर्जन करते करते
छुटल चार दिके
येन घूर्णि-झड़ेर मेघ।
तुफान उठल माटिते—
छुटल उट महिष गरु छागल भेड़ा
ऊर्ध्वश्वासे, पाले पाले।
हाजार हाजार दिशाहारा लोक
आर्तस्वरे छुटे वेड़ाय—
चोखे तादेर धाँधा लागे,
आत्मपरेर भेद हारिये के काके देय द'ले।
माटि फेटे फेटे ओठे धोँया, ओठे गरम जल—
भीम सरोवरेर दिघि वालिर नीचे गेल शुषे।

शोना......निचे—मिट्टी के नीचे सुना गया; **दानवेरा.....दिले**—दानव गण ने जैसे रण का नगाड़ा वजा दिया; **वाजते लागल**—वजने लगा।

हाति...छिल—हाथी वँधे हुए थे; **तारा...दिके**—वन्धन तोड़ कर गर्जन करते हुए वे चारों ओर भागे; **येन...मेघ**—जैसे ववंडर के मेघ हों; **तुफान...माटिते**—मिट्टी में तूफान उठा; **छुटल**—भागे; **उट**—ऊँट; **महिष**—भैंस; **गरु**—गाय; **छागल**—वकरी; **भेड़ा**—भेड़; **पाले पाले**—दल के दल; **हाजार**—हज़ार; **दिशाहारा**—दिग्भ्रान्त; **लोक**—लोग; **छुटे वेड़ाय**—भागते फिरते हैं; **चोखे ......लागे**—उनकी आँखों में चौंध लगती है; **आत्म......द'ले**—अपने पराये का भेद भुला कर कोई किसीको रौंद देता है; **माटि....जल**—धरती फट कर धुआँ उठता है, गरम जल निकलता है; **भीम......शुषे**—वड़ा सरोवर वालू के नीचे सूख गया है;

मन्दिरेर चूड़ाय बाँधा बड़ो घण्टा दुलते दुलते
वाजते लागल टं टं।
आचम्का ध्वनि थामल एकटा भेङे-पड़ार शब्दे।

पृथ्वी यखन स्तब्ध हल
पूर्णप्राय चाँद तखन हेलेछे पश्चिमेर दिके।
आकाशे उठछे ज्वले-ओठा कानातगुलोर धोँयार कुण्डली,
ज्योत्स्नाके येन अजगर सापे जड़ियेछे।

परदिन आत्मीयदेर विलापे दिग्‌विदिक् यखन शोकार्त
तखन राजसैनिकदल मन्दिर घिरे दाँड़ालो,
पाछे अशुचितार कारण घटे।
राजमन्त्री एल, दैवज्ञ एल, स्मार्त पण्डित एल।
देखले वाहिरेर प्राचीर धूलिसात्।
देवतार वेदिर उपरेर छाद पड़ेछे भेङे।
पण्डित बलले, 'संस्कार करा चाइ आगामी पूर्णिमार पूर्वेइ,
नइले देवता परिहार करबेन ताँर मूर्तिके।'

मन्दिरेर.......टं टं—मन्दिर की चूड़ा पर बँधा हुआ घण्टा झुलते झुलते ढं ढं बजने लगा; आचम्का...शब्दे—टूट कर गिरने के शब्द के साथ हठात् आवाज़ बन्द हो गई।

यखन—जब; हल—हुई; पूर्ण......दिके—प्रायः पूर्ण चाँद उस समय पश्चिम की ओर झुक गया था; आकाशे.......कुण्डली—जलते हुए तम्बुओं से निकलने वाले धुआँ की कुण्डली आकाश में उठ रही है; ज्योत्स्ना.....जड़ियेछे—चाँदनी से जैसे अजगर साँप लिपटा हुआ हो।

परदिन........शोकार्त—दूसरे दिन आत्मीय स्वजनों के लिये (होने वाले) विलाप से जब दिग्‌विदिक् शोकार्त था; तखन—उस समय; घिरे दाँड़ालो—घेर कर खड़ा हो गया; पाछे......घटे—पीछे अशुचिता का कारण (न) उपस्थित हो जाय (अर्थात् कोई अछूत मन्दिर में घुस कर उसे अपवित्र न कर दे); एल—आया; दैवज्ञ—ज्योतिषी; देखले—देखा; छाद.....भेङ्गे—छत टूट कर गिर गई है; बलले—बोले; संस्कार.....पूर्वेइ—आगामी पूर्णिमा के पहले ही मरम्मत करना चाहिए; नइले......मूर्तिके—नहीं तो देवता अपनी मूर्ति को त्याग देंगे।

राजा वललेन, 'संस्कार करो।'

मन्त्री वललेन, 'ओइ किरातरा छाड़ा के करबे पाथरेर काज।

ओदेर दृष्टिकलुष थेके देवताके रक्षा करव की उपाये,

की हवे मन्दिर संस्कारे यदि मलिन हय देवतार अङ्गमहिमा।'

किरात-दलपति माधवके राजा आनलेन डेके।

वृद्ध माधव, शुक्लकेशेर उपर निर्मल सादा चादर जड़ानो—

परिधाने पीतधड़ा, ताम्रवर्ण देह कटि पर्यन्त अनावृत

दुइ चक्षु सकरुण नम्रताय पूर्ण।

सावधाने राजार पायेर काछे राखले एकमुठो कुन्दफूल,

प्रणाम करले स्पर्श बाँचिये।

राजा वललेन, 'तोमरा ना हले देवतालय-संस्कार हय ना।'

'आमादेर 'परे देवतार ए कृपा'

एइ व'ले देवतार उद्देशे माधव प्रणाम जानाले।

नृपति नृसिंहराय वललेन, 'चोख बेँधे काज करा चाइ,

देवमूर्तिर उपर दृष्टि ना पड़े। पारबे?'

राजा......करो—राजा बोले, 'मरम्मत करो'; **ओइ......काज**—उन किरातों को छोड़ कर कौन पत्थर का काम करेगा; **ओदेर.....उपाये**—उन सबों की कलुष दृष्टि से देवता की रक्षा किस उपाय से करूँगा; **की......महिमा**—मन्दिर को मरम्मत करने से क्या होगा अगर देवता की अङ्ग-महिमा मलिन हो; **आनलेन डेके**—बुलवा लिया; **शुक्लकेशेर उपर**—उजले केशों के ऊपर; **सादा**—उजली; **जड़ानो**—लिपटी हुई; **परिधाने पीतधड़ा**—पीले रंग का कौपीन पहने हुए; **दुइ**—दोनों; **नम्रताय पूर्ण**—विनम्रता से पूर्ण; **सावधाने.....फूल**—सावधानी से राजा के पैरों के पास एक मुट्ठी कुन्द फूल रखा; **प्रणाम......बाँचिये**—स्पर्श बचा कर प्रणाम किया; **राजा......ना**—राजा बोले, 'तुमलोगों के बिना देवालय मरम्मत नहीं होगा'; **आमादेर........कृपा**—हमलोगों के ऊपर देवता की यही कृपा है; **एइ.......जानाले**—यह कह देवता को लक्ष्य कर माधव ने प्रणाम जनाया; **चोख......चाइ**—आँख बाँध कर काम करना होगा; **देवमूर्तिर......पड़े**—देव-मूर्ति पर दृष्टि न पड़े; **पारबे**—(कर) सकोगे;

माधव वलले, 'अन्तरेर दृष्टि दिये काज करिये नेवेन अन्तर्यामी ।
यतक्षण काज चलबे, चोख खुलव ना ।'

बाहिरेर काज करे किरातेर दल,
मन्दिरेर भितरे काज करे माधव,
तार दुइचक्षु पाके पाके कालो कापड़े वाँधा ।
दिनरात से मन्दिरेर वाहिरे याय ना—
ध्यान करे, गान गाय, आर तार आङुल चलते थाके ।
मन्त्री एसे वले, 'त्वरा करो, त्वरा करो—
तिथिर परे तिथि याय, कवे लग्न हवे उत्तीर्ण ।'
माधव जोड़हाते वले, 'याँर काज ताँरइ निजेर आछे त्वरा,
आमि तो उपलक्ष्य ।'

अमावस्या पार हये शुक्लपक्ष एल आवार ।
अन्ध माधव आङुलेर स्पर्श दिये पाथरेर सङ्गे कथा कय,
पाथर तार साड़ा दिते थाके ।

अन्तरेर.......अन्तर्यामी—अन्तर की दृष्टि से अन्तर्यामी काम करा लेंगे; **यतक्षण......ना**—जव तक काम चलेगा आँखें नहीं खोलूँगा ।

वाहिरेर.....दल—किरातों का दल वाहर का काम करता; **भितरे**—भीतर; **तार......वाँधा**—उसकी दोनों आँखें ऐंठ ऐंठ कर काले कपड़े से वँधी हुई थीं; **से......ना**—वह मन्दिर के वाहर नहीं जाता; **गाय**—गाता; **आर......थाके**—और उसकी उंगलियाँ चलती रहतीं; **मन्त्री......करो**—मन्त्री आ कर कहता, 'जल्दी करो, जल्दी करो'; **तिथिर......उत्तीर्ण**—तिथि के वाद तिथि (वीतती) जाती है (पता नहीं) कव लग्न आजाय; **जोड़......वले**—हाथ जोड़ कर कहता; **याँर.......उपलक्ष्य**—जिनका कार्य है उन्हें स्वयं जल्दवाज़ी है, मैं तो उपलक्ष्य (मात्र हूँ) ।

पार हये—पार हो कर; **एल आवार**—फिर आया; **दिये**—से; **पाथरेर......कय**—पत्थर के साथ वातें करता; **पाथर.....थाके**—पत्थर अपनी प्रतिक्रिया वताता रहता;

काछे दाँड़िये थाके प्रहरी
पाछे माधव चोखेर बाँधन खोले।
पण्डित एसे बलले, 'एकादशीर रात्रे प्रथम पूजार शुभक्षण।
काज कि शेष हबे तार पूर्वे ?'
माधव प्रणाम करे बलले, 'आमि के ये उत्तर देब।
कृपा यखन हबे संवाद पाठाब यथासमये,
तार आगे एले व्याघात हबे, विलम्ब घटबे।'

षष्ठी गेल, सप्तमी पेरोल—
मन्दिरेर द्वार दिये चाँदेर आलो एसे पड़े
माधवेर शुक्लकेशे।
सूर्य अस्त गेल। पाण्डुर आकाशे एकादशीर चाँद।
माधव दीर्घनिश्वास फेले बलले,
'याओ प्रहरी, संवाद दिये एसो गे
माधवेर काज शेष हल आज।
लग्न येन बये ना याय।'

काछे......प्रहरी—पास में प्रहरी खड़ा रहता; **पाछे......खोले**—पीछे (कहीं) माधव आँख का बंधन (पट्टी) न खोल दे; **एसे बलले**—आ कर बोला; **काज.........पूर्वे**—उस के पहले क्या कार्य शेष होगा; **माधव......देब**—माधव प्रणाम कर बोला, 'मैं कौन (हूँ) जो उत्तर दूँ'; **कृपा......समये**—कृपा जब होगी यथासमय संवाद भेजूँगा; **तार......घटबे**—उसके पहले आने से व्याघात होगा, विलंब होगा।

षष्ठी गेल—षष्ठी (तिथि) गई; **पेरोल**—पार हुई; **दिये**—हो कर, से; **चाँदेर......केशे**—माधव के उजले केशों पर चाँदनी आ कर पड़ती है; **निश्वास फेले**—साँस ले कर; **बलले**—बोला; **याओ......आज**—जाओ प्रहरी, संवाद दे आओ माधव का कार्य आज समाप्त हो गया; **लग्न......याय**—लग्न जिस में निकल न जाय।

प्रहरी गेल।
माधव खुले फेलले चोखेर वन्धन।
मुक्त द्वार दिये पड़ेछे एकादशी-चाँदेर पूर्ण आलो
देवमूर्तिर उपरे।
माधव हाँटु गेड़े वसल दुइ हात जोड़ करे
एकदृष्टे चेये रइल देवतार मुखे,
दुइ चोखे वइल जलेर धारा।
आज हाजार वछरेर क्षुधित देखा देवतार सङ्गे भक्तेर।

राजा प्रवेश करलेन मन्दिरे।
तखन माधवेर माथा नत वेदीमूले।
राजार तलोयारे मुहूर्ते छिन्न हल सेइ माथा।
देवतार पाये एइ प्रथम पूजा, एइ शेष प्रणाम।

१३ अगस्त १९३२ 'पुनश्च'

खुले फेलले—खोल डाला; **माधव......करे**—दोनों हाथ जोड़ कर माधव घुटने टेक कर बैठ गया; **एक......मुखे**—देवता के मुख की ओर अनिमेष दृष्टि से देखता रहा; **दुइ......धारा**—दोनों आँखों से आँसुओं की धारा वह चली; **हाजार वछरेर**—हज़ार वर्षों के; **देखा**—दर्शन; **देवतार सङ्गे**—देवता के साथ; **भक्तेर**—भक्त का।

करलेन—किया; **तखन......मूले**—उस समय माधव का सिर वेदी के नीचे झुका हुआ था; **राजार......माथा**—राजा की तलवार से मुहूर्त भर में वह सिर छिन्न हुआ; **देवतार......पूजा**—देवता के पैरों में यह प्रथम पूजा (थी); **एइ..... प्रणाम**—यही अन्तिम प्रणाम (था)।

यावार समय हल विहङ्गेर

यावार समय हल विहङ्गेर। एखनि कुलाय
रिक्त हवे। स्तब्धगीति, भ्रष्ट नीड़, पड़िबे धुलाय
अरण्येर आन्दोलने। शुष्कपत्र जीर्णपुष्प-साथे
पथचिह्नहीन शून्ये याव उड़े रजनीप्रभाते
अस्तसिन्धु-परपारे। कतकाल एइ वसुन्धरा
आतिथ्य दियेछे; कभु आम्रमुकुलेर-गन्धे-भरा
पेयेछि आह्वानवाणी फाल्गुनेर दाक्षिण्ये मधुर;
अशोकेर मञ्जरि से इङ्गिते चेयेछे मोर सुर,
दियेछि ता प्रीतिरसे भरि; कखनो वा झंझाघाते
वैशाखेर, कण्ठ मोर रुधियाछे उत्तप्त धुलाते,
पक्ष मोर करेछे अक्षम; सव निये धन्य आमि
प्राणेर सम्माने। ए पारेर क्लान्त यात्रा गेले थामि
क्षणतरे पश्चाते फिरिया मोर नम्र नमस्कारे
वन्दना करिया याव ए जन्मेर अधिदेवतारे॥

२८ अप्रील १९३४ 'प्रान्तिक'

यावार......विहङ्गेर—विहङ्ग के जाने का समय हुआ; **एखनि......हवे**—अभी घोंसला खाली होगा; **पड़िवे धुलाय**—धूल में गिरेगा; **अरण्येर आन्दोलने**—अरण्य के आलोड़न से; **याव उड़े**—उड़ जाऊँगा; **परपारे**—दूसरे पार; **कत.....दियेछे**—कितने दिनों इस वसुन्धरा ने आतिथ्य किया है; **कभु**—कभी; **गन्धे-भरा**—गन्ध से भरा; **पेयेछि**—पाया है; **दाक्षिण्ये**—दया से; **से....सुर**—उसने इङ्गित द्वारा मेरा सुर चाहा है; **दियेछि.....भरि**—प्रीति रस से भर उसको (उसे) दिया है; **कखनो.....धुलाते**—अथवा कभी वैशाख की झंझा के आघात से उतप्त धूल से मेरा कण्ठ अवरुद्ध हुआ है; **पक्ष......अक्षम**—मेरे पंखों को अक्षम वनाया है; **सव.......सम्माने**—प्राणों के सम्मान से सव ले कर मैं धन्य हूँ; **ए.....थामि**—इस पार की क्लान्त यात्रा रुक जाने पर; **क्षणतरे......देवतारे**—क्षण भर के लिये पीछे की ओर फिर कर इस जन्म के अधिदेवता की विनम्र नमस्कार से वन्दना कर जाऊँगा।

प्रहर शेषेर आलोय राङा...

प्रहर शेषेर आलोय राङा सेदिन चैत्र मास—
तोमार चोखे देखेछिलाम आमार सर्वनाश।
ए संसारेर नित्य खेलाय प्रतिदिनेर प्राणेर मेलाय
बाटे घाटे हाजार लोकेर हास्य-परिहास—
माझखाने तार तोमार चोखे आमार सर्वनाश।
आमेर वने दोला लागे, मुकुल पड़े झ'रे—
चिरकालेर चेना गन्ध हाओयाय ओटे भ'रे।
मञ्जरित शाखाय शाखाय, मउमाछिदेर पाखाय पाखाय,
क्षणे क्षणे वसन्तदिन फेलेछे निश्वास—
माझखाने तार तोमार चोखे आमार सर्वनाश॥

सितंबर-अक्टूबर १९३४ 'गीतवितान ३'

प्रहर......मास—शेष प्रहर के आलोक से लाल उस दिन चैत्र मास में; **तोमार......सर्वनाश**—तुम्हारी आँखों में (मैंने) अपना सर्वनाश देखा था; **ए......खेलाय**—इस संसार के नित्य के खेल में; **प्रतिदिनेर......मेलाय**—प्रति दिन के प्राणों के मेले में (नाना प्राणियों के समागम में); **बाटे**—रास्ते में; **लोकेर**—लोगों के; **माझखाने तार**—उसके मध्य, उसके बीच; **आमेर**—आम के; **दोला लागे**—(वायु का) झोंका लगता है; **मुकुल.....झ'रे**—मञ्जरि झर पड़ती है; **चिर-कालेर......भ'रे**—चिर काल का परिचित गन्ध हवा में भर जाता है; **मञ्जरित......शाखाय**—मञ्जरि लगी हुई शाखाओं-शाखाओं में; **मउमाछिदेर.......पाखाय**—मधु-मक्खियों के पंखों में; **फेलेछे निश्वास**—निश्वास लिया है।

अवसन्न चेतनार गोधूलिवेलाय

देखिलाम, अवसन्न चेतनार गोधूलिवेलाय
देह मोर भेसे याय कालो कालिन्दीर स्रोत वाहि—
निये अनुभूतिपुञ्ज, निये तार विचित्र वेदना,
चित्र-करा आच्छादने आजन्मेर स्मृतिर सञ्चय,
निये तार बाँशिखानि। दूर हते दूरे येते येते
म्लान हये आसे तार रूप; परिचित तीरे तीरे
तरुच्छाया-आलिङ्गित लोकालये क्षीण हये आसे
सन्ध्या-आरतिर ध्वनि, घरे घरे रुद्ध हय द्वार,
ढाका पड़े दीपशिखा, नौका बाँधा पड़े घाटे।
दुइ तटे क्षान्त हल पारापार, घनालो रजनी,
विहङ्गेर मौनगान अरण्येर शाखाय शाखाय
महानिःशब्देर पाये रचि दिल आत्मबलि तार।
एक कृष्ण अरूपता नामे विश्ववैचित्र्येर 'परे
स्थले जले। छाया हये, बिन्दु हये, मिले याय देह
अन्तहीन तमिस्राय। नक्षत्रवेदिर तले आसि

देखिलाम—देखा; अवसन्न.....वेलाय—अवसन्न चेतना की गोधूलि-वेला में; मोर—मेरी; भेसे याय—वह जाती है; कालो—काली; स्रोत वाहि—स्रोत के ऊपर; निये—ले कर; तार—अपनी; चित्र......सञ्चय—आजन्म की स्मृति के संचय को चित्रित आच्छादन से ढँक कर; बाँशिखानि—बांसुरी; दूर......रूप—दूर से दूर जाते-जाते उसका रूप म्लान हो आता है; लोकालये—नगर, ग्राम आदि मनुष्यों के निवास स्थान में; आरतिर—आरती की; घरे....द्वार—घर घर का दरवाज़ा बन्द होता है; ढाका....दीपशिखा—दीप-शिखा ढँक (छिप) जाती है; नौका—घाटे—नौका घाट पर बाँध दी जाती है; दुइ......पार—दोनों तटों पर आर पार (होने का क्रम) शान्त हुआ; घनालो—घनी हो आई; महा......तार—महानिःशब्द (निस्तब्धता) के पैरों में अपनी आत्मबलि कर दी; कृष्ण—काली; नामे—उतरती है; 'परे—ऊपर; छाया हये—छाया हो कर; मिले याय—मिल जाती है; नक्षत्र....हाते—नक्षत्र वेदी के नीचे आ कर अकेला स्तब्ध खड़ा हो कर

एका स्तब्ध दाँड़ाइया, ऊर्ध्वे चेये कहि जोड़हाते—
हे पूषन्, संहरण करियाछ तव रश्मिजाल,
एबार प्रकाश करो तोमार कल्याणतम रूप,
देखि तारे ये पुरुष तोमार आमार माझे एक ।।

८ दिसम्बर १९३७ 'प्रान्तिक'

जन्मदिन

आज मम जन्मदिन। सद्यइ प्राणेर प्रान्तपथे
डुव दिये उठेछे से विलुप्तिर अन्धकार हते
मरणेर छाड़पत्र निये। मने हतेछे, की जानि,
पुरातन वत्सरेर ग्रन्थिवाँधा जीर्ण मालाखानि
सेथा गेछे छिन्न हये; नवसूत्रे पड़े आजि गाँथा
नव जन्मदिन। जन्मोत्सवे एइ-ये आसन पाता
हेथा आमि यात्री शुधु, अपेक्षा करिव, लव टिका
मृत्युर दक्षिण हस्त हते, नूतन अरुणलिखा
यबे दिवे यात्रार इङ्गित ।।

दोनों हाथ जोड़ ऊपर देख कहता हूँ; संहरण......जाल—अपनी किरणों के जाल को समेट लिया है; एबार......रूप—अब अपने कल्याणतम रूप को प्रकट करो; देखि......एक—देखूँ उस पुरुष को जो तुम्हारे और मेरे भीतर एक है।

सद्यइ......निये—अभी अभी प्राणों के प्रान्त पथ (सीमा की ओर जाने वाले पथ) में डुवकी लगा कर आगे चलने का अनुमति-पत्र मृत्यु से ले कर वह विलुप्ति के अन्धकार से वाहर निकला है; मने हतेछे—मन में हो रहा है, लग रहा है; की जानि—क्या जानें; ग्रन्थि वाँधा—ग्रन्थि से वँधी हुई; मालाखानि—माला; सेथा......हये—वहाँ छिन्न हो गई है; नवसूत्रे......गाँथा—नये सूत्र (सूते) में आज गूँथा जा रहा है; जन्मोत्सवे......शुधु—जन्मोत्सव के लिये यह जो आसन विछाया हुआ है, यहाँ मैं केवल यात्री मात्र हूँ। अपेक्षा करिव—प्रतीक्षा करूँगा; लव......हते—मृत्यु के दाहिने हाथ से टीका लूँगा; नूतन......इङ्गित—नवीन अरुण रेखा जव यात्रा का इंगित करेगी।

आज आसियाछे काछे
जन्मदिन मृत्युदिन; एकासने दोंहे वसियाछे;
दुइ आलो मुखोमुखि मिलिछे जीवनप्रान्ते मम;
रजनीर चन्द्र आर प्रत्युषेर शुकतारासम—
एक मन्त्रे दोँहे अभ्यर्थना ।।

प्राचीन अतीत, तुमि
नामाओ तोमार अर्घ्य; अरूप प्राणेर जन्मभूमि,
उदयशिखरे तार देखो आदि ज्योति । करो मोरे
आशीर्वाद, मिलाइया याक तृषातप्त दिगन्तरे
मायाविनी मरीचिका । भरेछिनु आसक्तिर डालि
काङालेर मतो—अशुचि सञ्चयपात्र करो खालि,
भिक्षामुष्टि धुलाय फिराये लओ, यात्रातरी बेये
पिछु फिरे आर्त चक्षे येन नाहि देखि चेये चेये
जीवनभोजेर शेष उच्छिष्टेर पाने ।।

हे वसुधा
नित्य नित्य वुझाये दितेछ मोरे—ये तृष्णा, ये क्षुधा

आसियाछे काछे—पास आए हैं; **एकासने......वसियाछे**—एक ही आसन पर दोनों बैठे हैं; **दुइ.....मम**—दोनों आलोक आमने-सामने मेरे जीवन की सीमा में मिलते हैं; **आर**—और; **दोंहे**—दोनों की ।

नामाओ—नीचे उतारो; **तोमार**—अपना; **मोरे**—मुझे; **मिलाइया याक**—विलीन हो जाय; **भरेछिनु......मतो**—आसक्ति की डाली को कङ्गाल के समान भरा था; **करो खालि**—खाली करो; **भिक्षामुष्टि......लओ**—भिक्षा की मुट्ठी धूल में लौटा लो; **यात्रा.....पाने**—यात्रा वाली नौका पर वहते, जीवन-भोज के उच्छिष्ट (जूठन) की ओर पीछे फिर कर कातर दृष्टि से बार बार न देखूं ।

नित्य....मोरे—नित्य प्रति मुझे समझा दे रही हो; **ये**—जो;

तोमार संसाररथे सहस्रेर साथे बाँधि मोरे
टानायेछे रात्रिदिन स्थूल सूक्ष्म नानाविध डोरे,
नाना दिके नाना पथे, आज तार अर्थ गेल क'मे
छुटिर गोधूलिवेला तन्द्रालु आलोके। ताइ क्रमे
फिराये नितेछ शक्ति, हे कृपणा, चक्षुकर्ण थेके
आड़ाल करिछ स्वच्छ आलो; दिने दिने टानिछे के
निष्प्रभ नेपथ्य-पाने। आमाते तोमार प्रयोजन
शिथिल हयेछे, ताइ मूल्य मोर करिछ हरण;
दितेछ ललाटपटे वर्जनेर छाप। किन्तु, जानि
तोमार अवज्ञा मोरे पारे ना फेलिते दूरे टानि।
तव प्रयोजन हते अतिरिक्त ये मानुष, तारे
दिते हबे चरम सम्मान तव शेष नमस्कारे।
यदि मोरे पंगु करो, यदि मोरे कर अन्धप्राय,
यदि वा प्रच्छन्न करो निःशक्तिर प्रदोषच्छायाय,
बाँध वार्धक्येर जाले, तबु भाङा मन्दिरवेदिते

तोमार—तुम्हारे; **बाँधि मोरे**—मुझे बाँध कर; **टानायेछे**—खींचता रहा है; **आज ......आलोके**—छुट्टी की गोधूलि-वेला के तन्द्राविष्ट आलोक में आज उसका अर्थ कम हो गया; **ताइ...कृपणा**—इसीलिये हे कृपणा, क्रमशः शक्ति को लौटा ले रही हो; **चक्षु......आलो**—आँख, कान से स्वच्छ आलोक को आड़ में कर रही हो; **दिने......पाने**—दिन-दिन कौन निष्प्रभ नेपथ्य की ओर खींच रहा है; **आमाते.... हरण**—तुम्हारे लिये मेरा प्रयोजन शिथिल हो गया (कम हो गया) इसीलिये मेरा मूल्य हरण कर रही हो; **दितेछ.......छाप**—ललाट पर परित्यक्त की छाप लगा रही हो; **किन्तु.....टानि**—लेकिन (मैं) जानता हूँ तुम्हारी अवज्ञा मुझे दूर खींच कर नहीं फेंक सकती; **तव......मानुष**—तुम्हारे प्रयोजन से अतिरिक्त जो मनुष्य है; **तारे.....नमस्कारे**—उसे अपने अन्तिम नमस्कार से सर्वोच्च सम्मान देना होगा; **कर**—करो; **यदि.....छायाय**—निःशक्ति (शक्ति हीनता) के प्रदोष-(सन्ध्या) की छाया से यदि ढक दो (छिपा दो); **बाँध....जाले**—बुढ़ापे के जाल में बाँधो; **तबु.....सगौरवे**—तौभी टूटे-फूटे मन्दिर की वेदी पर गौरव के साथ ही

प्रतिमा अक्षुण्ण रबे सगौरवे—तारे केड़े निते
शक्ति नाइ तव ॥

भाङो भाङो, उच्च करो भग्नस्तूप,
जीर्णतार अन्तराले जानि मोर आनन्दस्वरूप
रयेछे उज्ज्वल ह्ये। सुधा तारे दियेछिल आनि
प्रतिदिन चतुर्दिके रसपूर्ण आकाशेर वाणी,
प्रत्युत्तरे नाना छन्दे गेयेछे से 'भालोबासियाछि'।
सेइ भालोवासा मोरे तुलेछे स्वर्गेर काछाकाछि
छाड़ाये तोमार अधिकार। आमार से भालोबासा
सब क्षयक्षतिशेषे अवशिष्ट रबे; तार भाषा
हयतो हारावे दीप्ति अभ्यासेर म्लान स्पर्श लेगे,
तबु से अमृतरूप सङ्गे रबे यदि उठि जेगे
मृत्युपरपारे। तारि अङ्गे एँकेछिल पत्रलिखा
आम्रमञ्जरिर रेणु, एँकेछे पेलव शेफालिका
सुगन्धि शिशिरकणिकाय, तारि सूक्ष्म उत्तरीते
गेँथेछिल शिल्पकारु प्रभातेर दोयेलेर गीते

प्रतिमा अक्षुण्ण रहेगी; **तारे......तव**—उसे काढ़ (निकाल) लेने की तुम्हें शक्ति नहीं है।

भाङो भाङो—तोड़ो तोड़ो; **जानि**—जानता हूँ; **रयेछे......हये**—उज्ज्वल हो कर वर्तमान है; **तारे**—उसको; **दियेछिल आनि**—ला कर दिया था; **गेयेछे......भालोवासियाछि**—उसने गाया है कि 'प्यार किया है'; **सेइ ......अधिकार**—उसी प्रेम ने तुम्हारे अधिकार से छुड़ा कर (हटा कर) मुझे स्वर्ग के पास उठाया है; **आमार......रबे**—मेरा वह प्रेम सब कुछ नष्ट भ्रष्ट होने पर भी अवशिष्ट रहेगा; **तार......लेगे**—हो सकता है कि उसकी भाषा अभ्यास के म्लान स्पर्श के लगने से (अपनी) दीप्ति खो देगी; **तबु......पारे**—तौभी वह अमर रूप साथ रहेगा अगर मृत्यु के उस पार जग उठूँ; **तारि.....रेणु**——उसीके अंग पर आम्र-मञ्जरी की रेणु (पराग) ने चित्र रचना की थी; **एँकेछे**—अंकित किया है; **पेलव**—अत्यन्त कोमल; **कणिकाय**—छोटे कणों से; **तारि**—उसीके; **गेंथेछिल**—गूँथा था; **शिल्पकारु**—शिल्पकार, शिल्पी; **दोयेल**—एक पक्षी;

चकित काकलिसूत्रे; प्रियार विह्वल स्पर्शखानि
सृष्टि करियाछे तार सर्व देहे रोमाञ्चित वाणी—
नित्य ताहा रयेछे सञ्चित। येथा तव कर्मशाला
सेथा वातायन हते के जानि पराये दित माला
आमार ललाट घेरि सहसा क्षणिक अवकाशे—
से नहे भृत्येर पुरस्कार; की इङ्गिते, की आभासे
मुहूर्ते जानाये च'ले येत असीमेर आत्मीयता
अधरा अदेखा दूत; ब'ले येत भाषातीत कथा
अप्रयोजनेर मानुषेरे॥

से मानुष, हे धरणी,
तोमार आश्रय छेड़े यावे यबे, नियो तुमि गणि
या-किछु दियेछ तारे, तोमार कर्मीर यत साज,
तोमार पथेर ये पाथेय; ताहे से पावे ना लाज;
रिक्तताय दैन्य नहे। तबु जेनो, अवज्ञा करि नि
तोमार माटिर दान, आमि से माटिर काछे ऋणी—

प्रियार—प्रिया का; **स्पर्शखानि**—स्पर्श; **सृष्टि.....वाणी**—उसके सम्पूर्ण शरीर में रोमाञ्चित वाणी की सृष्टि की है; **ताहा**—वह; **रयेछे सञ्चित**—सञ्चित है; **येथा**—जहां; **सेथा**—वहाँ; **वातायन......अवकाशे**—वातायन से क्षण भर के अवकाश में न-जाने कौन मेरे ललाट को घेर कर माला पहना देता; **से**—वह; **नहे**—नहीं है; **की**—किस; **जानाये**—जना कर; **च'ले येत**—चला जाता; **असीमेर**—असीम की; **अधरा**—पकड़ाई नहीं देने वाला; **अदेखा**—दिखलाई नहीं पड़ने वाला; **बले......मानुषेरे**—(इस) अनावश्यक व्यक्ति से भाषातीत बात कह जाता।

से मानुष—वह मनुष्य (व्यक्ति); **तोमार......यब**—जब तुम्हारे आश्रय को छोड़ कर चला जाएगा; **नियो......तारे**—उसे तुमने जो कुछ दिया है (उसे) गिन लेना; **तोमार......साज**—कर्मचारी की तुम्हारी जितनी साज-सज्जा है; **तोमार.......पाथेय**—पथ का जो तुम्हारा पाथेय है; **ताहे.......लाज**—उससे वह लज्जा नहीं अनुभव करेगा; **रिक्तताय**—रिक्तता में; **नहे**—नहीं है; **तबु जेनो**—तौभी जान लो; **अवज्ञा.....ऋणी**—तुम्हारी मिट्टी के दान की (मैंने)

जानायेछि वारम्वार, ताहारि वेड़ार प्रान्त हते
अमूर्तेर पेयेछि सन्धान। यबे आलोते आलोते
लीन हत जड़यवनिका, पुष्पे पुष्पे तृणे तृणे
रूपे रसे सेइ क्षणे ये गूढ़ रहस्य दिने दिने
ह'त निश्वसित, आजि मर्तेर अपर तीरे बुझि
चलिते फिरानु मुख ताहारि चरम अर्थ खुँजि ।।

यबे शान्त निरासक्त गियेछि तोमार निमन्त्रणे
तोमार अमरावती सुप्रसन्न सेइ शुभक्षणे
मुक्तद्वार; बुभुक्षुर लालसारे करे से वञ्चित;
ताहार माटिर पात्रे ये अमृत रयेछे सञ्चित
नहे ताहा दीन भिक्षु लालायित लोलुपेर लागि।
इन्द्रेर ऐश्वर्य निये, हे धरित्री, आछ तुमि जागि
त्यागीरे प्रत्याशा करि, निर्लोभेर सँपिते सम्मान,
दुर्गमेर पथिकेरे आतिथ्य करिते तव दान
वैराग्येर शुभ्र सिंहासने। क्षुब्ध यारा, लुब्ध यारा,
मांसगन्धे मुग्ध यारा, एकान्त आत्मार दृष्टिहारा

अवज्ञा नहीं की है, मैं उस मिट्टी के निकट ऋणी हूँ; **जानायेछि**—जताया है; **ताहारि......सन्धान**—उसीके घेरे की सीमा से अमूर्त का पता पाया है; **यबे**—जब; **आलोते**—आलोक में; **हत**—होती; **सेइ क्षणे**—उसी क्षण में; **ये**—जो; **आजि**—आज; **बुझि**—लगता है; **आजि......खुँजि**—आज लगता है मृत्युलोक के दूसरे पार जाते (समय) उसीका चरम अर्थ खोजने के लिये मुख फेरा है।

गियेछि........निमन्त्रणे—तुम्हारे निमन्त्रण पर गया हूँ; **बुभुक्षुर.....वञ्चित**—भूखे की लालसा उससे वञ्चित कर देती है; **ताहार......लागि**—उसकी मिट्टी के पात्र में जो अमृत सञ्चित है वह दीन, लालायित, लोलुप भिक्षुक के लिये नहीं है; **इन्द्रेर......करि**—हे धरित्री, इन्द्र का ऐश्वर्य लिए हुए तुम त्यागी की आशा (प्रतीक्षा) में जगी हुई हो; **निर्लोभेर.....सम्मान**—निर्लोभी को सम्मान सौंपने (देने) के लिये; **दुर्गमेर पथिकेरे**—दुर्गम के पथिक को; **करिते**—करने के लिये; **यारा**—जो; **एकान्त**—बिल्कुल, एकदम; **दृष्टिहारा**—दृष्टि को खोया हुआ;

श्मशानेर प्रान्तचर, आवर्जनाकुण्ड तव घेरि
वीभत्स चीत्कारे तारा रात्रिदिन करे फेराफेरि—
निर्लज्ज हिंसाय करे हानाहानि ।।

शुनि ताइ आजि
मानुष–जन्तुर हुहुंकार दिके दिके उठे बाजि ।
तबु येन हेसे याइ येमन हेसेछि बारे बारे
पण्डितेर मूढ़ताय, धनीर दैन्येर अत्याचारे
सज्जितेर रूपेर विद्रूपे । मानुषेर देवतारे
व्यङ्ग करे ये अपदेवता बर्बर मुखविकारे
तारे हास्य हेने याब, ब'ले याब—'ए प्रहसनेर
मध्य अंके अकस्मात् हबे लोप दुष्ट स्वपनेर;
नाट्येर कबर-रूपे बाकि शुधु रबे भस्मराशि
दग्धशेष मशालेर, आर अदृष्टेर अट्टहासि ।'
बले याब, 'द्यूतच्छले दानवेर मूढ़ अपव्यय
ग्रन्थिते पारे ना कभु इतिवृत्ते शाश्वत अध्याय ।।'

श्मशानेर प्रान्तचर—श्मशान में चलने वाला; **घेरि**—घेर कर; **तारा**—वे; **करे फेराफेरि**—चक्कर काटते हैं; **हिंसाय**—हिंसा से; **हानाहानि**—मारकाट ।

शुनि...बाजि—इसीलिये आज मनुष्य-जन्तु का दिशाओं दिशाओं में ध्वनित हुंकार सुनता हूँ; **तबु...विद्रूपे**—तौभी जैसे हँसता जाऊँ, जिस प्रकार पंडितों की मूढ़ता, गरीबों पर धनियों के अत्याचार, तथा शृंगार करने वालों के रूप के विद्रूप पर बार बार हँसा हूँ; **मानुषेर...करे**—मनुष्य के (भीतर के) देवता को व्यङ्ग करता है; **ये**—जो; **अपदेवता**—अपकृष्ट देवता (दुष्ट प्रकृति के लोग); **मुखविकारे**—मुंह के विकार द्वारा (मुँह बना कर); **तारे...याब**—उन्हें हास्य (उपहास) का आघात कर जाऊँगा; **ब'ले याब**—कह जाऊँगा; **ए**—इस; **हबे**—होगा; **नाट्येर...मशालेर**—केवल जले हुए मशाल की भस्मराशि अभिनय की समाधि के रूप में बाकी रह जाएगी; **आर...अट्टहासि**—और (रह जाएगा) भाग्य का अट्टहास; **बले याब**—कह जाऊँगा; **द्यूत...अध्याय**—द्यूत के छल से दानव का मूढ़ अपव्यय कभी भी इतिहास में शाश्वत अध्याय नहीं गूँथ सकता (अर्थात् दानव कल बल छल में जितनी ही अपनी शक्ति का अपव्यय क्यों न करे वह इतिहास में शाश्वत अध्याय नहीं जोड़ सकता) ।

वृथा वाक्य थाक्। तव देहलिते शुनि घण्टा बाजे,
शेष-प्रहरेर घण्टा; सेइ सङ्गे क्लान्त वक्षोमाझे
शुनि विदायेर द्वार खुलिवार शब्द से अदूरे
ध्वनितेछे सूर्यास्तेर रङे राङा पुरबीर सुरे।
जीवनेर स्मृतिदीपे आजिओ दितेछे यारा ज्योति
सेइ क'टि वाति दिये रचिब तोमार सन्ध्यारति
सप्तर्षिर दृष्टिर सम्मुखे; दिनान्तेर शेष पले
रबे मोर मौनवीणा मूर्छिया तोमार पदतले।—
आर रबे पश्चाते आमार नागकेशरे चारा
फुल यार धरे नाइ, आर खेयातरीहारा
ए पारेर भालोवासा—विरहस्मृतिर अभिमाने
क्लान्त हये रात्रिशेषे फिरिबे से पश्चातेर पाने॥

८ मई १९३८ 'सेंजुति'

वृथा.......थाक्—व्यर्थ की (इन) बातों को जाने दो; **तव......घण्टा**—तुम्हारी देहली (दहलीज़) पर सुनता हूँ घण्टा बजता है, शेष प्रहर का घण्टा; **सेइ......शब्द**—उसीके साथ (अपने) क्लान्त वक्ष में विदाई के द्वार के खुलने का शब्द (की आवाज़) सुनता हूँ; **से.....सुरे**—वह अदूर (निकट ही) सूर्यास्त के रंग में रंगा हुआ पुरवी (राग) के सुर में ध्वनित हो रहा है; **जीवनेर.....सम्मुखे**—जीवन के स्मृति-दीप में जो आज भी ज्योति देते हैं उन कई बत्तियों को ले कर सप्तर्षियों की दृष्टि के सामने तुम्हारी सन्ध्या-आरती करूँगा; **दिनान्तेर.....पदतले**—दिनान्त के शेप क्षण में मेरी मौन वीणा तुम्हारे पदतल में मूर्च्छित पड़ी रहेगी; **आर......नाइ**—और मेरे पीछे नागकेशर का नया पौधा रहेगा जिसमें फूल नहीं आए हैं; **आर.....वासा**—और आर-पार होने वाली नौका को नहीं पाने वाला (मेरा) इसपार का प्यार रहेगा; **विरह......पाने**—विरह की स्मृति की मनोवेदना से क्लान्त हो कर रात्रि के शेप में वह (मेरा प्रेम) पीछे की ओर फिर कर (देखेगा); **अभिमान**—प्रियजन के त्रुटिपूर्ण आचरण के कारण मनोवेदना।

जपेर माला

एका वसे आछि हेथाय यातायातेर पथेर तीरे
यारा विहान वेलाय गानेर खेया आनल वेये प्राणेर घाटे,
आलोछायार नित्य नाटे
साँझेर वेलाय छायाय तारा मिलाय धीरे ।।

आजके तारा एल आमार स्वप्नलोकेर दुयार घिरे,
सुरहारा सब व्यथा यत एकतारा तार खुंजे फिरे ।
प्रहर परे प्रहर ये याय, वसे वसे केवल गनि
नीरव जपेर मालार ध्वनि
अन्धकारेर शिरे शिरे ।।

३० अक्टूबर १९४० 'रोगशय्याय'

जपेर माला—जप की माला; एका.....तीरे—यातायात के रास्ते के किनारे यहाँ अकेला वैठा हुआ हूँ; यारा......घाटे—जो भोर वेला में गान की आर-पार करने वाली नौका को खेकर प्राणों के घाट पर ले आए; आलोछायार—प्रकाश और अंधकार के; नाटे—रंगमञ्च पर; साँझेर......धीरे—सन्ध्या वेला वे छाया में धीरे-से विलीन हो जाते हैं।

आजके......घिरे—आज वे सव मेरे स्वप्नलोक के द्वार को घेरते हुए आए; सुरहारा......फिरे—खोए हुए सुर की जितनी सव व्यथाएँ हैं अपने एकतारा को खोजती फिरती हैं; प्रहर......याय—प्रहर के वाद प्रहर जाते हैं (वीतते हैं); वसे......ध्वनि—वैठा वैठा केवल नीरव जप की माला की ध्वनि को गिनता रहता हूँ; अन्धकारेर......शिरे—अन्धकार की शिराओं-शिराओं में।

ऋणशोध

अजस्र दिनेर आलो,
जानि, एकदिन
दु चक्षुरे दियेछिले ऋण।
फिराये नेवार दावि जानायेछ आज
तुमि, महाराज।
शोध करे दिते हबे जानि,
तबु केन सन्ध्यादीपे
फेल छायाखानि।
रचिले ये आलो दिये तव विश्वतल
आमि सेथा अतिथि केवल।
हेथा होथा यदि पड़े थाके
कोनो क्षुद्र फाँके
नाइ हल पुरा
सेटुकु टुकुरा—
रेखे येयो फेले
अवहेले,
येथा तव रथ
शेष चिह्न रेखे याय अन्तिम धुलाय
सेथाय रचिते दाओ आमार जगत्।

अजस्र—अपरिमित; **दिनेर आलो**—दिन का प्रकाश; **जानि**—जानता हूँ; **दु......ऋण**—दोनों चक्षुओं को ऋण दिया था; **फिराये........महाराज**—हे महाराज, लौटा लेने का दावा आज तुमने जताया है; **शोध......जानि**—जानता हूँ (ऋण) परिशोध कर देना होगा; **तबु.....खानि**—तौभी क्यों सन्ध्या के दीपक में छाया कर देते हो; **रचिले......केवल**—जिस प्रकाश से (तुमने) जगत् की रचना की वहाँ मैं केवल अतिथि हूँ; **हेथा......टुकुरा**—यहाँ वहाँ अगर कोई छोटा छिद्र रह गया (और) उतना भर टुकड़ा पूरा नहीं हुआ हो; **रेखे.......अवहेले**—(तो) अवहेला के साथ फेंक कर रख जाना; **येथा.....जगत्**—जहाँ तुम्हारा रथ अन्तिम धूलि में शेष चिह्न रख जाय वहाँ मेरे जगत् की रचना करने दो;

अल्प किछु आलो थाक,
अल्प किछु छाया,
आर किछु माया।
छायापथे लुप्त आलोकेर पिछु
हयतो कुड़ाये पावे किछु—
कणामात्र लेश
तोमार ऋणेर अवशेष।

३ नवम्बर १९४० 'रोगशय्याय'

आमार कीर्तिरे आमि करि ना विश्वास

आमार कीर्तिरे आमि करि ना विश्वास।
जानि, कालसिन्धु तारे
नियत तरङ्ग घाते
दिने दिने दिवे लुप्त करि।
आमार विश्वास आपनारे।
दुइ वेला सेइ पात्र भरि
ए विश्वेर नित्यसुधा
करियाछि पान।

किछु—कुछ; थाक्—रहे; आर—और; माया—ममता; छायापथे....पिछु—छाया-पथ में लुप्त आलोक के पीछे; हयतो......अवशेष—हो सकता है कि चुनने से अपने ऋण के अवशेष का कण-मात्र लेश कुछ पाओगे।

आमार......विश्वास—अपनी कीर्ति का मैं विश्वास नहीं करता; जानि—जानता हूँ; नियत—नियमित; नियत......करि—नियमित (रूप से) प्रत्येक दिन के तरङ्गों के आघात से लुप्त कर देगा; आमार......आपनारे—मेरा विश्वास अपने आप में है; दुइ......पान—दोनों वेला उसी पात्र को भर कर इस विश्व की नित्य (अमर) सुधा का पान किया है;

प्रति मुहूर्तेर भालोवासा
तार माझे हयेछे सञ्चित।
दुःखभारे दीर्ण करे नाइ,
कालो करे नाइ धूलि
शिल्पेरे ताहार।
आमि जानि, याव यबे
संसारेर रङ्गभूमि छाड़ि,
साक्ष्य देबे पुष्पवन ऋतुते ऋतुते
ए विश्वेरे भालोवासियाछि।
ए भालोवासाइ सत्य, ए जन्मेर दान।
विदाय नेवार काले
ए सत्य अम्लान हये मृत्युरे करिवे अस्वीकार।

२८ नवम्बर १९४० 'रोगशय्याय'

प्रति......सञ्चित—उसमें प्रति मुहूर्त का प्यार सञ्चित हुआ है; दुःखभारे..... नाइ—दुःख के भार ने भीत नहीं किया; कालो.......ताहार—उसके शिल्प को धूल ने काला नहीं किया; आमि जानि—मैं जानता हूँ; याव......छाड़ि—जब संसार की रङ्गभूमि को छोड़ कर जाऊँगा; साक्ष्य देबे—साक्षी देगा; ऋतुते ऋतुते—प्रत्येक ऋतु में; ए.......वासियाछि—इस विश्व को प्यार किया है; ए......दान—यह प्रेम ही सत्य है, इस जन्म का दान है; विदाय......काले—विदाई लेने के समय; ए सत्य........अस्वीकार—यह सत्य अम्लान रह कर मृत्यु को अस्वीकार करेगा।

ऐकतान

विपुला ए पृथिवीर कतटुकु जानि !
देशे देशे कत-ना नगर राजधानी—
मानुषेर कत कीर्ति, कत नदी गिरि सिन्धु मरु,
कत-ना अजाना जीव, कत-ना अपरिचित तरु
रये गेल अगोचरे। विशाल विश्वेर आयोजन;
मन मोर जुड़े थाके अतिक्षुद्र तारि एक कोण।
सेइ क्षोभे पड़ि ग्रन्थ भ्रमणवृत्तान्त आछे याहे
अक्षय उत्साहे—
येथा पाइ चित्रमयी वर्णनार वाणी
कुड़ाइया आनि।
ज्ञानेर दीनता एइ आपनार मने
पूरण करिया लइ यत पारि भिक्षालब्ध धने ॥

आमि पृथिवीर कवि, येथा तार यत उठे ध्वनि
आमार बाँशिर सुरे साड़ा तार जागिबे तखनि—

ऐकतान—विभिन्न वाद्य यन्त्रों का मिलित स्वर में बजाना (concert); **विपुला......जानि**—इस विशाल पृथ्वी का कितनाभर जानता हूँ; **देशे-देशे**—देश-देश में; **कत-ना**—न-जाने कितने; **मानुषेर......कीर्ति**—मनुष्य की कितनी कीर्ति; **अजाना**—अज्ञात; **रये गेल**—रह गए; **मन.......कोण**—मेरा मन उसीके एक अत्यन्त छोटे (से) कोने में जुड़ा (युक्त) रहता है; **सेइ........याहे**—इसी क्षोभ स जो भ्रमण-वृत्तान्त के ग्रन्थ हैं पढ़ता हूँ; **उत्साहे**—उत्साह से; **येथा......आनि**—जहाँ भी चित्र खींच देने वाले वर्णन (पाता) हूँ बीन-चुन कर लाता हूँ; **ज्ञानेर.......धने**—अपने ज्ञान की इस दीनता को भिक्षा से प्राप्त धन से जितना भी होता है अपने मन से पूर्ण कर लेता हूँ।

आमि........कवि—मैं पृथ्वी का कवि हूँ; **येथा......ध्वनि**—उसकी ध्वनि जहाँ भी जितनी उठती है; **आमार.....तखनि**—मेरी बाँसुरी के सुर में उसी समय उसका स्पन्दन जाग उठता है;

एइ स्वरसाधनाय पौँछिल ना बहुतर डाक
रये गेछे फाँक।
कल्पनाय अनुमाने धरित्रीर महा-एकतान
कत-ना निस्तब्ध क्षणे पूर्ण करियाछे मोर प्राण।
दुर्गम तुषारगिरि असीम निःशब्द नीलिमाय
अश्रुत ये गान गाय,
आमार अन्तरे वारवार
पाठायेछे निमन्त्रण तार।
दक्षिणमेरुर ऊर्ध्वे ये अज्ञात तारा
महाजनशून्यताय रात्रि तार करितेछे सारा,
से आमार अर्धरात्रे अनिमेष चोखे
अनिद्रा करेछे स्पर्श अपूर्व आलोके।
सुदूरेर महाप्लावी प्रचण्ड निर्झर
मनेर गहने मोर पाठायेछे स्वर।
प्रकृतिर ऐकतानस्रोते
नाना कवि ढाले गान नाना दिक हते—
तादेर सवार साथे आछे मोर एइमात्र योग,
सङ्ग पाइ सवाकार, लाभ करि आनन्देर भोग;

एइ......डाक—इस स्वर-साधना में बहुतों की पुकार नहीं पहुँची; **रये.....फाँक**—कुछ त्रुटि रह गई है (कुछ बाकी रह गया है); **कल्पनाय......प्राण**—कल्पना और अनुमान से पृथ्वी का मिलित स्वर न-जाने कितने निस्तब्ध क्षणों में मेरे प्राणों को पूर्ण किया है; **नीलिमाय**—नीलिमा में; **अश्रुत.......गाय**—सुनाई नहीं पड़ने वाला जो गान गाता है; **आमार.......तार**—बार-बार मेरे अन्तर में उसका निमन्त्रण भेजा है; **ये**—जो; **महाजनशून्यताय......सारा**—विराट् जनशून्यता में रात्रि यापन कर रहा है; **से**—वह; **आमार**—मेरी; **चोखे**—आँखों में; **करेछे**—किया है; **महाप्लावी**—महा प्लावनकारी; **मनेर........स्वर**—मेरे मन की गहराई में स्वर भेजा है; **ढाले**—ढालते हैं; **नाना......हते**—नाना दिशाओं से; **तादेर......योग**—उन सभी से मेरा यही केवल योग है; **सङ्ग......सवाकार**—सबों का सङ्ग पाता हूँ; **लाभ......भोग**—आनन्द का भोग प्राप्त करता हूँ;

गीतभारतीर आमि पाइ तो प्रसाद—
निखिलेर संगीतेर स्वाद ।।

सब चेये दुर्गम ये—मानुष आपन अन्तराले,
तार कोनो परिमाप नाइ वाहिरेर देशे काले।
से अन्तरमय,
अन्तर मिशाले तवे तार अन्तरेर परिचय।
पाइने सर्वत्र तार प्रवेशेर द्वार;
वाधा हये आछे मोर वेड़ागुलि जीवनयात्रार।
चाषि खेते चालाइछे हाल,
ताँति ब'से ताँत वोने, जेले फेले जाल—
वहुदूरप्रसारित एदेर विचित्र कर्मभार,
तारि 'परे भर दिये चलितेछे समस्त संसार।
अतिक्षुद्र अंशे तार सम्मानेर चिरनिर्वासने
समाजेर उच्च मञ्चे वसेछि संकीर्ण वातायने।
माझे माझे गेछि आमि ओ पाड़ार प्राङ्गणेर धारे;
भितरे प्रवेश करि से शक्ति छिल ना एकेवारे।

भारतीर—सरस्वती का; आमि.....प्रसाद—मैं प्रसाद तो पाता हूँ।

सब....अन्तराले—सब से अधिक मनुष्य अपने अन्तराल (अन्तर) में दुर्गम है; तार.....काले—वाहर के देश-काल में उसका कोई परिमाप नहीं है; से.....परिचय—वह सम्पूर्ण (भाव से) अन्तर का है (और) अन्तर के साथ घुल-मिल जाने पर ही उसके अन्तर का परिचय मिलता है; पाइने.....द्वार—सर्वत्र उसमें प्रवेश का द्वार नहीं पाया; वाधा....यात्रार—मेरी जीवन-यात्रा के घेरे वन्द हैं; चाषि....हाल—किसान खेत में हल चला रहा है; ताँति.....बोने—ताँती (जुलाहा) वैठ कर ताँत वुन रहा है; जेले....जाल—मछुआ जाल फेंक रहा है; वहुदूर....कर्मभार—इनके विभिन्न कर्मों का वहुत दूर तक प्रसार है; तारि......संसार—उसीपर निर्भर कर (उसीका सहारा ले कर) समस्त संसार चल रहा है; अतिक्षुद्र....निर्वासने—उसके (संसार के) अत्यन्त ही क्षुद्र अंश (स्थान) में (जहाँ से) सम्मान चिरनिर्वासित है (वैठा हूँ); वसेछि—वैठा हूँ; माझे....धारे—वीच-वीच में उस मुहल्ले के आँगन (सीमा) के किनारे गया हूँ; भितरे......एकेवारे—भीतर प्रवेश करूँ यह शक्ति विल्कुल नहीं थी;

जीवने जीवन योग करा
ना हले, कृत्रिम पण्ये व्यर्थ हय गानेर पसरा।
ताइ आमि मेने निइ से निन्दार कथा—
आमार सुरेर अपूर्णता।
आमार कविता, जानि आमि,
गेलेओ विचित्र पथे हय नाइ से सर्वत्रगामी।।

कृपाणेर जीवनेर शरिक ये जन,
कर्मे ओ कथाय सत्य आत्मीयता करेछे अर्जन,
ये आछे माटिर काछाकाछि,
से कविर वाणी-लागि कान पेते आछि।
साहित्येर आनन्देर भोजे
निजे या पारि ना दिते, नित्य आमि थाकि तारि खोँजे।
सेटा सत्य होक;
शुधु भङ्गी दिये येन ना भोलाय चोख।
सत्य मूल्य ना दियेइ साहित्येर ख्याति करा चुरि।
भालो नय, भालो नय नकल से शौखिन मज़्दुरि।

जीवने...हले—जीवन के साथ जीवन का योग नहीं होने से; पण्ये—माल, सौदा; हय—होता है; गानेर—गान का; पसरा—बिक्री वाली वस्तु की ढेरी; ताइ...कथा—इसलिये मैं अपनी निन्दा की यह बात मान लेता हूँ; आमार—मेरे; सुरेर—सुर की; जानि आमि—मैं जानता हूँ; गेलेओ—जाने पर भी; हय...से—वह नहीं हुई; गेलेओ...सर्वत्रगामी—चित्र-विचित्र पथ पर जाने पर भी वह (मेरी कविता) सर्वत्रगामी नहीं हुई।

कृपाणेर....जन—किसान के जीवन में जो व्यक्ति शरीक हैं; कर्मे—काज में; ओ कथाय—तथा बातों में; करेछे—किया है; ये......काछाकाछि—जो मिट्टी के पास है; से......आछि—उस कवि की वाणी के लिये कान लगाए हुए हूँ; साहित्येर......दिते—साहित्य के आनन्द-भोज में जो मैं स्वयं नहीं दे सका; नित्य......खोँजे—(मैं) उसी की खोज में नित्य रहता हूँ; सेटा......होक—वह सत्य हो; शुधु......चोख—केवल भावभंगी द्वारा वह आँखों को जिसमें न बहला दे; सत्य.....नय—वास्तविक मूल्य दिये विना साहित्य में ख्याति (प्राप्त) करना चोरी है; भालो......मज़्दुरि—नकल करना

एसो कवि, अख्यातजनेर
निर्वाक् मनेर;
मर्मेर वेदना यत करियो उद्धार,
प्राणहीन ए देशेते गानहीन येथा चारि धार,
अवज्ञार तापे शुष्क निरानन्द सेइ मरुभूमि
रसे पूर्ण करि दाओ तुमि।
अन्तरे ये उत्स तार आछे आपनारि
ताइ तुमि दाओ तो उद्वारि।
साहित्येर ऐकतान-सङ्गीतसभाय
एकतारा याहादेर ताराओ सम्मान येन पाय—
मूक यारा दुःखे सुखे,
नतशिर स्तब्ध यारा विश्वेर सम्मुखे।
ओगो गुणी,
काछे थेके दूरे यारा, ताहादेर वाणी येन शुनि।
तुमि थाको ताहादेर ज्ञाति,
तोमार ख्यातिते तारा पाय येन आपनारि ख्याति—
आमि बारंबार
तोमारे करिव नमस्कार॥

२१ जनवरी १९४१ 'जन्मदिने'

अच्छा नहीं, (वह) शौकीनी के लिये मज़दूरी करने जैसा है; एसो—आओ; अख्यात........मनेर—अख्यात जन के निर्वाक् मन के; मर्मेर—हृदय की, मर्म की; यत—जितनी; करियो—करना; ए देशेते—इस देश में; येथा—जहाँ; चारि धार—चारों ओर; सेइ—उसी; रसे......तुमि—तुम रस से पूर्ण कर दो; अन्तरे......आपनारि—उसके अन्तर में उसका जो अपना ही उत्स है; ताइ...... उद्वारि—उसे ही तुम उद्वेलित कर दो; याहादेर—जिन लोगों का; ताराओ ......पाय—वे भी जिसमें सम्मान पाँय; यारा—जो; काछे......शुनि—जो पास रह कर भी दूर हैं उनकी वाणी जिसमें सुनूँ; तुमि........ज्ञाति—तुम उन्हीं के सगोत्र रहो; तोमार.......ख्याति—तुम्हारी ख्याति से जिसमें वे अपनी ख्याति पाँय; आमि......नमस्कार—मैं तुम्हें वारम्वार नमस्कार करूँगा।

हिंस्र रात्रि आसे चुपे चुपे

हिंस्र रात्रि आसे चुपे चुपे,
गतबल शरीरेर शिथिल अर्गल भेङे दिये
अन्तरे प्रवेश करे,
हरण करिते थाके जीवनेर गौरवेर रूप।
कालिमार आक्रमणे हार माने मन।
ए पराभवेर लज्जा ए अवसादेर अपमान
यखन घनिये ओठे, सहसा दिगन्ते देखा देय
दिनेर पताकाखानि स्वर्णकिरणेर रेखा-आँका;
आकाशेर येन कोन् दूर केन्द्र हते
उठे ध्वनि 'मिथ्या मिथ्या' वलि।
प्रभातेर प्रसन्न आलोके
दुःखविजयीर मूर्ति देखि आपनार
जीर्णदेह दुर्गेर शिखरे॥

२१ जनवरी १९४१ 'आरोग्य'

हिंस्र......चुपे—हिंसक रात्रि चुपके-चुपके आती है; गतबल—जिसका बल चला गया है; गतबल......करे—शक्तिहीन शरीर की कमज़ोर अर्गला को तोड़ कर अन्तर में प्रवेश करती है; करिते थाके—करती रहती है; कालिमार ......मन—कालिमा के आक्रमण से मन हार मानता है; ए—इस; पराभवेर—पराजय की; यखन......ओठे—जब घनीभूत हो उठते हैं; देखा देय—दिखाई देता है; दिनेर........आँका—स्वर्णकिरणों की रेखा से चित्रित दिन की पताका; आकाशेर......वलि—आकाश के जैसे किसी दूर केन्द्र से 'मिथ्या मिथ्या' कहती हुई ध्वनि उठती है; देखि—देख कर; आपनार—अपनी।

ए जीवने सुन्दरेर पेयेछि मधुर आशीर्वाद

ए जीवने सुन्दरेर पेयेछि मधुर आशीर्वाद,
मानुषेर प्रीतिपात्रे पाइ ताँरि सुधार आस्वाद !
दु:सह दु:खेर दिने
अक्षत अपराजित आत्मारे लयेछि आमि चिने ।
आसन्न मृत्युर छाया येदिन करेछि अनुभव
सेदिन भयेर हाते हय नि दुर्बल पराभव
महत्तम मानुषेर स्पर्श हते हइ नि वञ्चित,
ताँदेर अमृतवाणी अन्तरेते करेछि सञ्चित ।
जीवनेर विधातार ये दाक्षिण्य पेयेछि जीवने
ताहारि स्मरणलिपि राखिलाम सकृतज्ञ मने ।।

२८ जनवरी १९४१ 'आरोग्य'

ए जीवने—इस जीवन में; सुन्दरेर—सुन्दर का; पेयेछि—पाया है; मानुषेर—मनुष्य के; पाइ—पाता हूँ; ताँरि........आस्वाद—उन्हीं की सुधा का आस्वाद पाता हूँ; लयेछि....चिने—मैंने पहचान लिया है; आसन्न....पराभव—आसन्न मृत्यु की छाया का जिस दिन अनुभव किया है उस दिन भय के हाथों दुर्बल पराजय नहीं हुई; महत्तम......वञ्चित—महत्तम व्यक्तियों के स्पर्श से वञ्चित नहीं हुआ; ताँदेर—उनलोगों की; अन्तरेते—अन्तर में, हृदय में; करेछि–किया है; जीवनेर......जीवने—जीवन में विधाता का जो आनुकूल्य पाया है; ताहारि......उसीकी; राखिलाम—रखा ।

मधुमय पृथिवीर धूलि

ए द्युलोक मधुमय, मधुमय पृथिवीर धूलि—
अन्तरे नियेछि आमि तुलि,
एइ महामन्त्रखानि
चरितार्थ जीवनेर वाणी।
दिने दिने पेयेछिनु सत्येर या-किछु उपहार
मधुरसे क्षय नाइ तार।
ताइ एइ मन्त्रवाणी मृत्युर शेषेर प्रान्ते बाजे—
सब क्षति मिथ्या करि अनन्तेर आनन्द विराजे।
शेषस्पर्श निये याव यबे धरणीर
बले याव, 'तोमार धूलिर
तिलक परेछि भाले;
देखेछि नित्येर ज्योति दुर्योगेर मायार आड़ाले।
सत्येर आनन्दरूप ए धूलिते नियेछे मुरति,
एइ जेने ए धुलाय राखिनु प्रणति।'

१४ फरवरी १९४१ 'आरोग्य'

पृथिवीर—पृथिवी की; द्युलोक—स्वर्गलोक; अन्तरे......तुलि—मैंने हृदय में धारण कर लिया है; एइ......वाणी—यह महामन्त्र चरितार्थ (सफल) जीवन की वाणी है; दिने.......उपहार—दिन-दिन सत्य का जो-कुछ उपहार पाया था; नाइ—नहीं है; तार—उसका; ताइ—इसीलिये; बाजे—ध्वनित होती है; करि—कर के; शेष........धरणीर—धरणी का जब शेष स्पर्श ले कर जाऊँगा; बले याव—कह जाऊँगा; तोमार......भाले—तुम्हारी धूलि का तिलक ललाट पर लगाया है; देखेछि.......आड़ाले—दुर्दिन की माया की ओट में नित्य की ज्योति (मैंने) देखी है; सत्येर.......मुरति—सत्य का आनन्द रूप इस धूलि में मूर्ति धारण किए हुए है; एइ......प्रणति—यही जान कर इस धूलि में अपनी प्रणति (नमस्कार) रख जाता हूँ।

शून्य चौकि

रौद्रताप झाँझाँ करे
जनहीन वेला दुपहरे।
शून्य चौकिर पाने चाहि,
सेथाय सान्त्वनालेश नाहि।
वुकभरा तार
हताशेर भाषा येन करे हाहाकार।
शून्यतार वाणी ओठे करुणाय भरा,
मर्म तार नाहि याय धरा।
कुकुर मनिवहारा येमन करुण चोखे चाय,
अवुझ मनेर व्यथा करे हाय-हाय;
की हल ये, केन हल, किछु नाहि वोझे—
दिनरात व्यर्थ चोखे चारि दिके खोँजे।
चौकिर भाषा येन आरो वेशि करुणकातर,
शून्यतार मूक व्यथा व्याप्त करे प्रियहीन घर।।

२६ मार्च १९४१ 'शेष लेखा'

रौद्रताप—धूप की गर्मी; करे—करती है; दुपहरे—दोपहर में; शून्य ......चाहि—खाली चौकी की ओर देखता हूँ; सेथाय—वहाँ; नाहि—नहीं है; वुक......हाहाकार—जैसे उसका भरा हुआ हृदय हताश (निराशा) की भाषा में हाहाकार करता है; शून्यतार.....धरा—करुणा से भरी हुई शून्यता की वाणी उठती है उसका मर्म पकड़ाई नहीं देता (समझ में नहीं आता); कुकुर.....हाय—मालिक को खो देने वाला कुत्ता जैसे करुण दृष्टि से देखता है (उसी प्रकार) ना-समझ मन की व्यथा हाय-हाय करती है; की....वोझे—क्या हुआ, कैसे हुआ, कुछ नहीं समझता; दिनरात......खोँजे—दिनरात वृथा आँखों से चारों ओर खोजता है; चौकिर.....कातर—चौकी की भाषा जैसे और अधिक करुण, कातर है; शून्यतार—शून्यता की; व्याप्त करे—व्याप्त करती है।

आमार ए जन्मदिन-माझे आमि हारा

आमार ए जन्मदिन-माझे आमि हारा
आमि चाहि वन्धुजन यारा
ताहादेर हातेर परशे
मर्त्येर अन्तिम प्रीतिरसे
निये याव जीवनेर चरम प्रसाद,
निये याव मानुषेर शेष आशीर्वाद।
शून्य झुलि आजिके आमार;
दियेछि उजाड़ करि
याहा किछु आछिल दिवार,
प्रतिदाने यदि किछु पाइ——
किछु स्नेह, किछु क्षमा——
तबे ताहा सङ्गे निये याइ
पारेर खेयाय यावो यवे
भाषाहीन शेषेर उत्सवे॥

६ मई १९४१ — 'शेष लेखा'

आमार......हारा—मैं अपने इस जन्मदिन में खो गया हूँ; **आमि......परशे**—मैं चाहता हूँ कि जो लोग (मेरे) वन्धु हैं उनके हाथों के स्पर्श से; **मर्त्येर......प्रीतिरसे**—मृत्युलोक के अन्तिम प्रीति-रस में; **निये याव......प्रसाद**—जीवन का चरम प्रसाद ले जाऊँगा; **शून्य.....आमार**—मेरी झोली आज शून्य (खाली) है; **दियेछि......दिवार**—जो-कुछ देने को था (उसे) दे कर उजाड़ (खाली) कर दिया है; **प्रतिदाने......पाइ**—प्रतिदान में अगर कुछ पाऊँ; **किछु**—कुछ; **तवे......याइ**—तब उसे साथ में ले जाऊँगा; **पारेर......उत्सवे**—भाषाहीन शेष उत्सव में जब पार करने वाली नौका में जाऊँगा।

रूप-नारानेर कूले

रूप-नारानेर कूले
जेगे उठिलाम;
जानिलाम ए जगत्
स्वप्न नय।
रक्तेर अक्षरे देखिलाम
आपनार रूप;
चिनिलाम आपनारे
आघाते आघाते
वेदनाय वेदनाय;
सत्य ये कठिन,
कठिनेरे भालोवासिलाम—
से कखनो करे ना वञ्चना।
आमृत्युर दुःखेर तपस्या ए जीवन—
सत्येर दारुण मूल्य लाभ करिवारे,
मृत्युते सकल देना शोध क'रे दिते ।।

१३ मई १९४१ 'शेष लेखा'

रूप-नारानेर कूले—रूप-नारान (नदी) के किनारे पर; जेगे उठिलाम—जाग उठा; जानिलाम........नय—जाना (कि) यह जगत् स्वप्न नहीं है; रक्तेर ....रूप—रक्त के अक्षरों में अपना रूप देखा; चिनिलाम......वेदनाय—प्रत्येक आघात में, प्रत्येक वेदना में अपनेको पहचाना; सत्य ये कठिन—कि सत्य कठिन (है); कठिनेरे.....वञ्चना—कठिन को (मैंने) प्यार किया है, वह कभी प्रतारणा नहीं करता (छलता नहीं); आमृत्युर......जीवन—मृत्यु पर्यन्त दुःख की तपस्या (है) यह जीवन; सत्येर......करिवारे—सत्य का कठिन मूल्य प्राप्त करने के लिये; मृत्युते......दिते—मृत्यु में समस्त देना-पावना (ऋण) चुका देने के लिये।

प्रथम दिनेर सूर्य

प्रथम दिनेर सूर्य
प्रश्न करेछिल
सत्तार नूतन आविर्भावे—
के तुमि ?
मेले नि उत्तर।

वत्सर वत्सर चले गेल,
दिवसेर शेष सूर्य
शेष प्रश्न उच्चारिल
पश्चिमसागरतीरे,
निस्तब्ध सन्ध्याय—
के तुमि ?
पेल ना उत्तर।।

२७ जुलाई १९४१ 'शेष लेखा'

प्रथम......तुमि—प्रथम दिन के सूर्य ने सत्ता के नूतन आविर्भाव से प्रश्न किया था, तुम कौन हो; मेले......उत्तर—उत्तर नहीं मिला; चले गेल—चले गए; उच्चारिल—उच्चारित किया; सन्ध्याय—सन्ध्या (काल) में; पेल ना उत्तर—उत्तर नहीं पाया।

तोमार सृष्टिर पथ

तोमार सृष्टिर पथ रेखेछ आकीर्ण करि
विचित्र छलनाजाले,
हे छलनामयी।
मिथ्या विश्वासेर फाँद पेतेछ निपुण हाते
सरल जीवने।
एइ प्रवञ्चना दिये महत्त्वेरे करेछ चिह्नित;
तार तरे राख नि गोपन रात्रि।
तोमार ज्योतिष्क तारे
ये-पथ देखाय
से ये तार अन्तरेर पथ,
से ये चिरस्वच्छ,
सहज विश्वासे से ये
करे तारे चिरसमुज्ज्वल।
बाहिरे कुटिल होक अन्तरे से ऋजु,
एइ निये ताहार गौरव।
लोके तारे बले विड़म्बित।
सत्येरे से पाय

तोमार......छलनामयी—हे छलनामयी, अपनी सृष्टि के पथ को विचित्र छलना के जाल से आकीर्ण कर रखा है; फांद—फन्दा; पेतेछ—बिछाया है, फैलाया है; हाते—हाथ से; एइ—इस; दिये—द्वारा; महत्वेरे........चिह्नित—महत्त्व को चिह्नित किया है; तार......रात्रि—उसके लिये गोपन रात्रि नहीं रखी; तोमार.......पथ—तुम्हारे ज्योतिर्मय ग्रह-नक्षत्रादि जो पथ दिखलाते हैं वह उसके अन्तर का पथ है; सहज.......समुज्ज्वल—सहज विश्वास से वह उसे चिर-समुज्ज्वल करता है; बाहिरे—बाहर; होक—हो; से—वह; ऋजु—सरल; एइ......गौरव—इसे ही ले कर उसका गौरव है; लोके.....विड़म्बित—लोक उसे दुःखित कहते हैं; सत्येरे.....अन्तरे—अपने आलोक से धौत (प्रक्षालित)

आपन आलोके धौत अन्तरे अन्तरे।
किछुते पारे ना तारे प्रवञ्चिते,
शेष पुरस्कार निये याय से ये
आपन भाण्डारे।
अनायासे ये पेरेछे छलना सहिते
से पाय तोमार हाते
शान्तिर अक्षय अधिकार॥

३० जुलाई १९४१ 'शेष लेखा'

हृदय-हृदय में वह सत्य को पाता है; किछुते......प्रवञ्चिते—किसी से वह प्रवञ्चित नहीं होता; निये......भाण्डारे—अपने भण्डार में वह ले ही जाता है; अनायासे........अधिक—जो विना किसी आयास के छलना से पार पाए हुए है वह तुम्हारे हाथों शान्ति का अक्षय अधिकार पाता है।

बंगला शब्दों के उच्चारण की कुछ विशेषताएँ

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ की १०१ कविताओं का यह संग्रह नागराक्षरों में प्रकाशित हो रहा है। बंगला कविता में आए हुए शब्द हू-ब-हू जैसे के तैसे हिन्दी में लिखे गए हैं। लेकिन बंगला उच्चारण की अपनी विशेषताएँ हैं। हिन्दी उच्चारण से उसमें अन्तर है। बंगला शब्दों के ठीक-ठीक उच्चारण के लिये उन विशेषताओं की जानकारी प्राप्त कर लेना आवश्यक है। पाठकों के सुभीते के लिये बंगला उच्चारण की कुछ विशेषताओं पर नीचे प्रकाश डालने की चेष्टा की जा रही है:

(१) बंगला में 'अ' का उच्चारण हिन्दी के 'अ' जैसा नहीं होता। वह 'अ' और 'ओ' के बीच में होता है। जैसे अंग्रेजी के 'not' में 'o'। बंगला में लिखते हैं 'खाब' लेकिन पढ़ते हैं 'खाबो' जैसा।

(२) ह्रस्व और दीर्घ इ, उ के उच्चारण में बंगला में काफी स्वतन्त्रता है। यह लचीलापन हिन्दी में नहीं है। दीर्घ ई और ऊ अगर पद के आदि में हों तो उनका उच्चारण प्रायः ह्रस्व जैसा होता है। जैसे 'ईश्वर' का उच्चारण 'इश्वर' और 'पूजा' का 'पुजा' होगा।

(३) एकार का उच्चारण 'ए' और 'ऐ' के बीच जैसा होता है। जैसे 'एक' को 'ऐक' जैसा पढ़ा जाता है।

(४) ऐकार का उच्चारण 'ओइ' जैसा होता है। जैसे, 'ऐकतान'—ओइकतान।

(५) अनुस्वार के उच्चारण में 'ग' का अंश निहित रहता है। जैसे, हिमांशु—हिमांग्शु।

(६) हिन्दी के समान, पद का अन्त्य वर्ण प्रायः हलन्त होता है। जैसे, आमार—आमार्, आँधार—आँधार्। लेकिन कविता में छन्दानुरोध से 'अ' के उच्चारण का भी अनुसरण होता है। जैसे 'बकुल-बागान' में 'बकुल' का उच्चारण बकुल (ो) जैसा भी हो सकता है।

(७) बंगला में 'क्ष' का उच्चारण पद के आदि में बराबर 'ख' होगा। जैसे, क्षिति—खिति; क्षमा—खमा। लेकिन अन्यत्र 'क्ष' का उच्चारण 'क्ख' होगा। जैसे, लक्षण—लक्खण।

(८) बंगला में 'ण' और 'न' दोनों का उच्चारण सदा 'न' ही होता है।

(९) बंगला में 'व' और 'ब' का अन्तर नहीं है। ये दोनों ही 'ब' पढ़े जाते हैं। तत्सम शब्दों के लिखने में भले ही 'व' को 'व' ही लिखा जाय लेकिन उसका उच्चारण 'ब' होता है। जैसे लिखा तो 'विवश' जाता है लेकिन पढ़ा 'बिबश' जाएगा।

(१०) अगर किसी दूसरी भाषा का कोई शब्द अपनाना पड़े और उसमें 'व' का उच्चारण रहे तो उसके लिये बंगला में 'ओय' लिखते हैं। जैसे, 'तेवारी' का 'तेओयारी'; 'हवा' का 'हओया'।

(११) 'य' के उच्चारण में एक विशेषता है। जब 'य' पद के आदि में हो तो उसका उच्चारण 'ज' होता है। जैसे, यात्रा—जात्रा; योग—जोग। लेकिन 'य' अगर पद के मध्य या अन्त में हो तो उसे 'य' ही पढ़ेंगे। जैसे, नियम—नियम; नयन—नयन; समय—समय।

(१२) बंगला में तीनों सकारों का उच्चारण तालव्य 'श' की तरह होता है लेकिन दन्त्य 'स' के साथ अगर किसी व्यञ्जन वर्ण का योग हो तो उसका उच्चारण 'स' ही होता है। जैसे, स्तब्ध—स्तब्ध; स्निग्ध—स्निग्ध।

(१३) अगर मकार के साथ किसी वर्ण का योग हो तो वह वर्ण सानुनासिक द्वित्व हो कर मकार का लोप कर देता है। जैसे, छद्म—छद्दँ; पद्म—पद्दँ। लेकिन पद के आदि में ऐसा होने पर द्वित्व नहीं होता। जैसे, स्मरण—सँरण; स्मृति—सृँति।

(१४) अगर यकार अथवा वकार के साथ किसी वर्ण का योग हो तो वह द्वित्व हो कर यकार-वकार का लोप कर देगा। जैसे, भृत्य—भृत्त; नित्य—नित्त; वाद्य—वाद्द। लेकिन पद के आदि में केवल वकार का लोप हो जाता है। जैसे, द्वार—दार; ज्वाला—जाला:

(१५) अगर यकार में रेफ हो तो पद के मध्य अथवा अन्त में रहने पर भी जकार हो जाता है। जैसे, सूर्य्य—सूर्ज्ज; धैर्य्य—धैर्ज्ज।

(१६) प्रस्तुत संग्रह में 'व' के बदले 'ओय' ही लिखा हुआ है, अतएव जहाँ पर 'ओय' हो वहाँ 'व' ही पढ़ना चाहिए। जैसे, पाओया—पावा; खाओया—खावा; याओया—जावा।

बंगला व्याकरण संबंधी कुछ ज्ञातव्य बातें

ऊपर बंगला शब्दों की उच्चारण-संबंधी विशेषताओं पर हम प्रकाश डाल चुके हैं। अब बंगला-व्याकरण की चर्चा करने जा रहे हैं। व्याकरण की थोड़ी-सी जानकारी प्राप्त कर लेना पाठकों के लिये अत्यन्त उपादेय सिद्ध होगा।

(क) क्रियारूप

बंगला में क्रिया के विभिन्न रूप हैं। क्रिया के इन विविध रूपों में जो अपरिवर्तित अंश है वही धातु है। धातु निर्णय का सहज उपाय यह है कि उत्तम पुरुष के

वर्तमान काल के धातुरूप के अन्तिम 'इ' को हटा देने से जो रूप रह जाता है वही धातु है। जैसे, आमि जाइ (मैं जाता हूँ)। इसमें 'जाइ' का 'इ' हटाने पर 'जा' रह जाता है। 'जा' धातु है। इसी प्रकार से 'आमि कराइ' में 'करा' धातु है।

वंगला में धातुओं के दो रूप हैं: (१) साधु और (२) चलित। 'लिखा', 'शुना' साधु रूप है और 'लेखा' 'शोना' चलित रूप। क्रियापद 'कहियाछे' साधु रूप है और 'कयेछे' चलित रूप है। अर्थ की दृष्टि से इन दोनों में कोई भेद नहीं है। वोलने में चलित रूप का प्रयोग होता है और लिखने में साधु रूप का। वैसे आजकल के लेखक लिखने में भी चलित रूप का ही प्रयोग करते हैं।

सकर्मक और अकर्मक के अलावा वंगला में क्रिया के दो भेद और हैं: समापिका और असमापिका।

धातु में जिस विभक्ति के योग करने से समापिका क्रियापद वनता है उसे 'तिङ' कहते हैं और उस क्रियापद को 'तिङन्त' पद कहते हैं। जैसे, कर् धातु से तिङन्त पद करे, करेन, करिस, करि आदि। इसी प्रकार से जिस प्रत्यय के योग करने से असमापिका क्रियापद अयवा विशेष्य-विशेषण वने उसे 'कृत' कहते हैं और क्रियापद को 'कृदन्त' पद कहते हैं। जैसे कर् धातु से कृदन्त पद (असमापिका क्रिया) करिते (करते), करिया (करके), करते, क'रे आदि।

(णिजन्त धातु) प्रेरणार्थक धातु वनाने के लिये वंगला के धातुरूप में 'आ' प्रत्यय लगाते हैं; जैसे कर् से णिजन्त धातु 'करा' होगा।

वंगला में कर्ता के लिङ्ग के अनुसार क्रिया नहीं वदलती। जैसे, मेयेरा जाच्छे (लड़कियाँ जा रही हैं); छेलेरा जाच्छे (लड़के जा रहे हैं)।

क्रिया के तीन काल हैं: भूत, भविष्य और वर्तमान। लेकिन वंगला की क्रिया का काल-विभाग हिन्दी की तरह नहीं होता।

वंगला के क्रियापद में वचन-भेद नहीं है। जैसे, से जाइतेछे (वह जा रहा है), ताहारा जाइतेछे (वे लोग जा रहे हैं)।

पुरुष तीन प्रकार के हैं: प्रथम, मध्यम और उत्तम। प्रथम पुरुष के गौरवार्थक और सामान्य दो रूप हैं। जैसे, तिनि करेन (वे करते हैं), से करे (वह करता है)। मध्यम पुरुष के गौरवार्थक, सामान्य और तुच्छ तीन रूप हैं। जैसे, आपनि करेन (आप करते हैं), तुमि कर (तुम करते हो) तथा तुइ करिस (तू करता है)। उत्तम पुरुष का केवल एक रूप है। जैसे, आमि करि (मैं करता हूँ)।

वंगला के काल-भेद तथा नाम निम्नलिखित हैं। वंगला व्याकरणों में दो प्रकार से उनके नाम दिए हुए हैं। नित्यप्रवृत्त, विशुद्ध, अद्यतन, अनद्यतन, परोक्ष,

भूत-सामीप्य, वर्तमान-सामीप्य आदि नाम संस्कृत व्याकरण के अनुकरण पर रखे गए हैं। सहज भाव से समझने के लिये उनका नामकरण निम्नलिखित ढंग से किया जाता है :

नाम	उदाहरण
नित्यवृत्त वर्तमान	करे (करता है)।
घटमान ,,	करितेछे (कर रहा है)।
पुराघटित ,,	करियाछे (किया है)।
अनुज्ञा ,,	कर (करो)।
साधारण अतीत	करिल (किया)।
नित्यवृत्त ,,	करित (करता)।
घटमान ,,	करितेछिल (कर रहा था)।
पुराघटित ,,	करियाछिल (किया था)।
साधारण भविष्यत्	करिबे (करेगा)।
अनुज्ञा ,,	करिओ (करोगे)।

क्रिया की विभक्तियाँ
(चलित)

विभक्ति का नाम	प्रथम पुरुष सामान्य	प्रथम और मध्यम गौरवार्थक	मध्यम सामान्य	मध्यम तुच्छ	उत्तम पुरुष
नित्यवृत्त वर्तमान	ए	एन	अ	इस	इ
घटमान ,,	छे	छेन	छ	छिस	छि
पुराघटित ,,	एछे	एछेन	एछ	एछिस	एछि
अनुज्ञा ,,	उक	उन	अ	—	—
साधारण अतीत	ले	लेन	ले	लि	लाम
नित्यवृत्त ,,	त	तेन	ते	तिस	ताम
घटमान ,,	छिल	छिलेन	छिले	छिलि	छिलाम
पुराघटित ,,	एछिल	एछिलेन	एछिले	एछिलि	एछिलाम
साधारण भविष्यत्	बे	बेन	बे	बि	ब (बो)
अनुज्ञा ,,	बे	बेन	ओ	इस	—

(साधु)

विभक्ति का नाम	प्रथम पुरुष सामान्य	प्रथम और मध्यम गौरवार्थक	मध्यम सामान्य	मध्यम तुच्छ	उत्तम पुरुष
नित्यवृत्त वर्तमान	ए	एन	अ	इस	इ
टमान ”	इतेछे	इतेछेन	इतेछ	इतेछिस	इतेछि
राघटित ”	इयाछे	इयाछेन	इयाछ	इयाछिस	इयाछि
नुज्ञा ”	उक	उन	अ	—	—
साधारण अतीत	इल	इलेन	इले	इलि	इलाम
नित्यवृत्त ”	इत	इतेन	इते	इतिस	इताम
घटमान ”	इते-छिल	इते-छिलेन	इते-छिले	इते-छिलि	इते-छिलाम
पुराघटित ”	इया-छिल	इया-छिलेन	इया-छिले	इया-छिलि	इया-छिलाम
साधारण भविष्यत्	इबे	इबेन	इबे	इबि	इब
अनुज्ञा ”	इबे	इबेन	इओ (इयो)	इस	—

क्रिया की इन विभक्तियों के प्रयोग को निम्नलिखित उदाहरण से समझा जा सकता है।

'काट्' (काटना) धातु के नित्यवृत्त वर्तमान का चलित और साधु रूप निम्नलिखित होगा।

चलित	साधु
काटे, काटेन, काट, काटिस, काटि	चलित जैसा ही होगा

घटमान अतीत का रूप निम्नलिखित होगा।

चलित रूप—काटछिल, काटछिलेन, काटछिले, काटछिलि, तथा काटछिलाम

साधु रूप—काटितेछिल, काटितेछिलेन, काटितेछिले, काटितेछिलि, तथा काटितेछिलाम।

साधारण भविष्यत् का रूप निम्नलिखित होगा।

चलित रूप—काटबे, काटबेन, काटबे, काटबि, काटबो।

साधु रूप—काटिबे, काटिबेन, काटिबे, काटिबि, काटिबो। इसी प्रकार से अन्य रूप भी समझे जा सकते हैं।

बहुत लोग 'लाम' के स्थान पर 'लुम' अथवा 'लेम' का प्रयोग करते हैं। जैसे, 'काटलाम' (काटा) के बदले 'काटलुम' अथवा 'काटलेम' लिखते हैं।

इसी प्रकार से 'ताम' के बदले 'तुम' अथवा 'तेम' का प्रयोग करते हैं। जैसे, 'काटताम' (काटता) के स्थान पर 'काटतुम' अथवा 'काटतेम' लिखते हैं।

साधारण अतीत में सकर्मक क्रिया में 'ले' तथा अकर्मक क्रिया में 'ल' लगाते हैं। यह चलित रूप में होता है। जैसे, करले (किया), खेले (खाया), दिले (दिया) तथा गेल (गया), शुल (सोया), दौड़ल (दौड़ा)। वैसे इसका व्यतिक्रम भी देखा जाता है। बहुत लोग 'करल' (किया), 'बलल' (बोला) आदि लिखते हैं।

(ख) कारक

बंगला में कारक सात हैं: कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, सम्बन्ध तथा अधिकरण।

कारक की कई विभक्तियों को मूल विभक्ति कहा जा सकता है। वैसे प्रयोग में आने वाली कई विभक्तियां मुख्यतः कर्ता, कर्म, सम्बन्ध और अधिकरण सूचक हैं। जैसे के, र, ते क्रमशः कर्म, सम्बन्ध और अधिकरण कारक की विभक्तियाँ हैं। प्रत्येक कारक की अलग अलग विभक्तियाँ नहीं हैं। निम्नलिखित कई विभक्तियाँ भिन्न भिन्न कारकों में प्रयुक्त होती हैं:

विभक्ति	कारकों के नाम
ए, य, ते, ये	कर्ता, करण, सम्प्रदान, अधिकरण
रा, एरा	कर्ता (बहुवचन)
दिगके, दिके, देर	कर्म, सम्प्रदान (बहुवचन)
के, रे	कर्म, सम्प्रदान (एकवचन)
एर (येर), र, कार	सम्बन्ध (एकवचन)
दिगेर, देर	सम्बन्ध (बहुवचन)
देर	कर्म (बहुवचन)
एते	अधिकरण (एकवचन)

बहुत स्थानों पर पद योग करने से कारक निष्पन्न होता है। जैसे, बाड़ी थेके (घर से), पेन्सिल दिये (पेन्सिल से), मानुषेर द्वारा (मनुष्य से) आदि। द्वारा, दिये आदि करण कारक सूचक हैं तथा थेके, अपादान कारक सूचक। लेकिन द्वारा, दिया आदि को अव्यय मानना उचित है। इनका प्रयोग विभक्ति के बाद भी मिलता है। जैसे, मन्त्रेर द्वारा (मन्त्र से)। इसमें 'एर' सम्बन्ध कारक की विभक्ति है उसके बाद 'द्वारा' का प्रयोग हुआ है।

टा और टि का प्रयोग व्यक्ति, जन्तु अथवा पदार्थवाचक शब्दों के साथ होता है। जैसे, छेलेटा (लड़का), कविताटि (कविता)। इसमें अर्थ ज्यों का त्यों रहा। टा का प्रयोग अनादर सूचक है और 'टि' का प्रयोग आदरसूचक।

गुला, गुलो, गुलि का प्रयोग व्यक्ति, जन्तु अथवा पदार्थवाचक शब्दों के साथ होता है। इनसे वहुवचन सूचित होता है। 'गुला' 'गुलो' अनादरसूचक हैं और 'गुलि' आदरसूचक। लोकगुलो (लोग सव), जिनिसगुलो (वस्तुएँ), मेयेगुलि (लड़कियाँ)।

'खाना', 'खानि' का प्रयोग केवल पदार्थवाचक शब्दों के साथ होता है। 'खाना' अनादर सूचक है और 'खानि' आदर सूचक। जैसे मुखखानि (मुख), कागज-खाना (कागज)।

'गण', 'रा', 'एरा' (येरा) का प्रयोग व्यक्ति, जन्तु अथवा वड़ी वस्तुओं के लिये होता है। जैसे देवगण, छेलेरा (लड़के)।

'ए', 'य', 'ते', 'ये' के प्रयोग की विधि इस प्रकार है: अकारान्त अथवा व्यञ्जनान्त शब्द हो तो 'ए'का प्रयोग होता है। जैसे मानुषे, विद्युते। आकारान्त अथवा एकारान्त शब्द हो तो 'य' और 'ते' का व्यवहार होता है। जैसे छेलेय, सेवाय। अगर इनसे भिन्न स्वरान्त शब्द हो तो 'ते' का व्यवहार होता है। जैसे, छुरिते। एकाक्षर शब्द अथवा अन्त में दो स्वर आवें तो 'ये' का प्रयोग होता है। जैसे, गाये (शरीर में), दइये (दही में)।

विभिन्न कारकों में विभक्ति के प्रयोग

कर्ता कारक :

साधारणत: कर्ता, एकवचन में कोई विभक्ति नहीं होती। जैसे, राम खाछे (राम खा रहा है)।

कर्तृवाच्य के प्रयोग से कभी कभी कर्ता में 'ए' विभक्ति लगती है। जैसे, लोके वले (लोग कहते हैं)।

कर्ता अनिर्दिष्ट होने पर अथवा कर्ता में करण या अधिकरण का भाव रहने पर ए, य, ते, ये, योग करते हैं। जैसे, पोकाय केटेछे (कीड़े ने काटा है), वेदे वले (वेद में कहा गया है)। वृष्टिते भासिये दिले (वर्षा से वहा दिया)।

एकजातीय क्रिया करते समय 'ए' का प्रयोग होता है। जैसे, पण्डिते पण्डिते तर्क चलेछे (पण्डितों में तर्क हो रहा है)।

वहुवचन में गण, रा, एरा(येरा) का प्रयोग होता है। जैसे, पण्डितेरा वलेन (पण्डित लोग कहते हैं)। आदरसूचक या समूहवोधक क्रिया होने पर रा के वदले एरा का प्रयोग होता है। जैसे, वउएरा (वहुएँ)। गुलो, गुला, गुलि का प्रयोग वहुवचन में होता है।

कर्म कारक :

एकवचन में साधारणत: कोई विभक्ति नहीं होती। जैसे, डाक्तार डाक (डाक्टर को बुलाओ)। वैसे इसका कोई निर्दिष्ट नियम नहीं है। कभी विभक्ति का लोप होता है कभी नहीं होता। जैसे, भगवानके डाक (भगवान को पुकारो)।

कर्मपद प्राणिवाचक अथवा व्यक्ति का नाम हो तो 'के' विभक्ति का प्रयोग होता है और अप्राणिवाचक या क्षुद्र प्राणिवाचक शब्दों में 'के' का प्रयोग नहीं होता। पद्य में रे, ए, य का प्रयोग होता है। जैसे, गुरुरे डाकिया (गुरु को पुकार कर), गुरुजने कर नति (गुरुजन को प्रणाम करो)। बहुवचन होने पर गणके, दिगके, दिके, देर का प्रयोग होता है।

द्विकर्मक क्रिया के गौण कर्म में के, दिगके, दिके, देर का प्रयोग होता है। मुख्य कर्म में विभक्ति नहीं लगाते। जैसे, छेलेके दुध दाओ (लड़के को दूध दो)।

कर्मवाच्य के प्रयोग पर कर्म में कभी कभी 'के' विभक्ति होती है। जैसे, रामके बला हय नाइ (राम से कहा नहीं गया है)।

कर्मकर्तृवाच्य के प्रयोग पर भी कर्म में कभी कभी 'के' विभक्ति होती है। जैसे, तोमाके कृश देखाइतेछे (तुम दुबले दीखते हो)।

करण कारक :

करण कारक में साधारणत: द्वारा, दिया विभक्ति होती है और कभी कभी इन दोनों के बदले 'हइते' विभक्ति प्रयुक्त होती है। कभी कभी 'ए' विभक्ति भी होती है।

'द्वारा' और 'दिया' अथवा 'दिये' का प्रयोग व्यक्ति, जन्तु अथवा पदार्थवाचक शब्दों में होता है। सम्बन्ध-विभक्ति के बाद भी 'द्वारा' का प्रयोग होता है। व्यक्ति वाचक शब्दों के बहुवचन में 'दिया' अथवा 'दिये' का प्रयोग नहीं होता। जैसे, भृत्य द्वारा, अश्वेर द्वारा, साबान दिया (साबुन से)।

केवल व्यक्तिवाचक शब्दों में कर्म-विभक्ति के बाद 'दिया' अथवा 'दिये' का व्यवहार होता है। जैसे, चाकरदिगके दिये (नौकरों से), चाकरके दिये (नौकरसे)।

केवल जन्तु अथवा पदार्थवाचक शब्दों के बाद ए, य, ते, ये, जोड़ा जाता है। जैसे, मेवाय तुष्ट (मेवा से तुष्ट), एइ कल गरुते चले (यह कल बैल से चलता है)।

सम्प्रदान कारक :

सम्प्रदान कारक की विभक्ति प्राय: कर्म कारक के समान है। जैसे, दरिद्रके धन दाओ [दरिद्र को (के लिये) धन दो]।

कभी कभी ए, य, ते, ये का भी व्यवहार होता है।

अपादान कारक :

इस कारक की विभक्तियाँ हइते, ह'ते, थेके, अपेक्षा, आदि हैं। जैसे, गृह हइते (गृह से)। तिन दिन थेके (तीन दिनों से)।

कभी कभी 'दिया' का भी व्यवहार होता है। जैसे, ताहार मुख दिया एमन कथा बाहिर हइबे ना (उसके मुँह से ऐसी बात नहीं निकल सकती)।

'निकट' आदि शब्दों में अपादान कारक की विभक्ति विकल्प से लोप होती है। जैसे, आमि ताहार निकट ए कथा शुनियाछि (मैंने उससे ऐसी बात सुनी है)।

तुलना करते समय सम्बन्ध कारक की विभक्ति के बाद अपेक्षा, चेये, चाइते आदि लगाते हैं। जैसे, तोमार चेये वृद्ध (तुमसे अधिक वृद्ध)।

कभी कभी सप्तमी की 'ए' विभक्ति भी अपादान में प्रयुक्त होती है। जैसे, मेघे वृष्टि हय (मेघ से वृष्टि होती है)।

सम्बन्ध कारक :

र, एर, इस कारक की विभक्तियाँ हैं। साधारणतः शब्दों के अन्त में 'र' योग करने से सम्बन्ध कारक सूचित होता है। 'एर' का योग शब्दों में उस समय होता है जब उनका एकवचन का रूप हो तथा वे अकारान्त, व्यञ्जनान्त, एकाक्षर शब्द हों अथवा उनके अन्त में दो स्वर हों। जैसे, मायेर (माँ का), जामाइयेर (दामाद का)। 'र' विभक्ति का उदाहरण—दयार (दया का), चुरिर (चोरी का)।

'र' विभक्ति का प्रयोग उस हालत में भी होता है जब कि मनुष्य के नाम का उच्चारण अकारान्त हो। जैसे, अमूल्यर (अमूल्य का)। लेकिन शिव का शिवेर होगा क्योंकि शिव के उच्चारण में व हलन्त की तरह उच्चरित होता है।

विशेषण-पदों में केवल 'र' योग करते हैं। जैसे, भालर जन्य (अच्छे के लिये)।

समय अथवा अवस्थान वाचक शब्दों में 'कार' योग करते हैं। जैसे, आजिकार (आज का), उपरकार (ऊपर का)।

व्यक्ति, जन्तु अथवा बड़ी वस्तु वाचक बहुवचन शब्दों में देर, दिगेर, गणेर का योग करते हैं। जैसे, छेलेदेर (लड़कों का), जन्तुदिगेर (जन्तुओं का)। व्यक्ति, जन्तु तथा पदार्थवाचक शब्दों में गुलार, गुलोर, गुलिर, सकलेर, समूहेर आदि का प्रयोग होता है। जैसे, मेयेगुलिर (लड़कियों का)। जिनिसगुलोर (वस्तुओं का), प्राणि सकलेर (प्राणियों का)।

अधिकरण कारक :

ए, य, ते, ये, अधिकरण कारक की विभक्तियाँ हैं।

अधिकरण दो प्रकार के हैं : कालबोधक और आधारसूचक। क्रिया जब किसी काल में समाप्त होती है तब उसे कालवाचक अधिकरण कहते हैं और जब

किसी स्थान पर समाप्त होती है तब वहाँ आधार अधिकरण का भाव आ जाता है। 'प्रभाते आमरा बेड़ाइया थाकि' (भोर में हमलोग टहला करते हैं)।—यह कालवाचक अधिकरण का उदाहरण है।

आधार अधिकरण तीन तरह के हैं—ऐकदेशिक, वैषयिक और अभिव्यापक।

ऐकदेशिक—ऋषि वने थाकितेन (ऋषि वन में रहते थे)।

वैषयिक—आमि विद्याय आपनार निकट बालक (विद्या में मैं आपके निकट बालक हूँ)।

अभिव्यापक—तिले तैल आछे (तिल में तेल है)।

कालवाचक शब्द के बाद कभी विभक्ति योग नहीं करते। जैसे, एक समय आमि बिश क्रोश हाँटिते पारिताम (एक समय था जब मैं बीस कोस चला जाता था); ए समय से कोथाय (इस समय वह कहाँ है)। लेकिन अगर विशेषण पद समयवाचक शब्द के पहले न हो तो विभक्ति अवश्य प्रयुक्त होती है। जैसे, दिने घुमाइओ ना (दिन में न सोना)।

क्रिया गमनार्थक होने पर कभी-कभी अधिकरण की विभक्ति नहीं लगती। जैसे, काशी पाठाओ (काशी भेजो); कलिकाता याइब (कलकत्ता जाऊँगा)।

बहुवचन में गण, गुला, गुलो, गुलि, सकल आदि के बाद विभक्ति का योग होता है। जैसे, कथागुलिते (बातों में); जीवगणे (जीवों में)।

(ग) सर्वनाम

बंगला में सर्वनाम के मुख्य भेद निम्नलिखित हैं:

पुरुषवाचक सर्वनाम—आमि (मैं), तुमि (तुम); से (वह) इत्यादि।

निर्देशक वा निर्णयसूचक सर्वनाम—ताहा (तद्); इहा (यह); उहा (वह) इत्यादि।

प्रश्नवाचक सर्वनाम—कि (क्या), के (कौन) आदि।

सापेक्ष वा समुच्चयी सर्वनाम—ये

अनिर्देश वा अनिश्चयसूचक सर्वनाम—केह, केउ (कोई) आदि।

आत्मवाचक सर्वनाम—निजे, आपनि, स्वयं आदि।

साकल्यवाचक सर्वनाम—उभय, सकल, सब आदि।

पुरुषवाचक सर्वनाम तीन प्रकार के हैं:—उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष, प्रथम पुरुष।

कर्ताकारक के एकवचन में इन पुरुषों के निम्नलिखित रूप हैं :

	सामान्य	तुच्छ	गौरवार्थ
उत्तम पुरुष	आमि (मैं)		
मध्यम पुरुष	तुमि (तुम)	तुइ (तू)	आपनि (आप)
प्रथम पुरुष	से, ताहा, ता (वह)		तिनि (वे)
	ये, याहा, या (जो)		यिनि (जो)
	के (कौन), कि (क्या)		के, किनि (कौन)
	ए, इहा (यह)		इनि (ये)
	ओ, उहा (वह)		उनि (वे)

व्यक्तिबोधक—तिनि, यिनि, के (किनि), इनि, आपनि, तुमि, तुइ, आमि।

व्यक्ति वा जन्तुवाचक—से, ये, के।

व्यक्ति, जन्तु वा पदार्थवाचक—ए, ओ।

पदार्थ वा क्षुद्र जन्तुवाचक—ताहा (ता), याहा (या), कि, इहा, उहा।

वचन और कारक भेद से सर्वनाम के रूप में परिवर्तन होता है। लेकिन स्त्रीलिंग और पुलिंग भेद से सर्वनाम के रूप में परिवर्तन नहीं होता।

याहाते, ताहाते आदि का प्रयोग क्रिया-विशेषण की तरह होता है।

से, ये, कि, ए, ओ का प्रयोग विशेषण की तरह भी होता है। जैसे, से दिन (उस दिन)।

कारकों की विभक्ति सहित सर्वनामों के रूप

आमि (मैं)

(पुलिंग और स्त्रीलिंग में)

	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	आमि, मुइ	आमरा, मोरा
कर्म	आमाके, आमारे, आमाय, मोरे	आमादिगके, आमादेर, आमादेरके, मोदिगके, मोदिगेरे, मोदेर, मोदिगके
करण	आमाद्वारा, आमार द्वारा, आमाके दिया, आमा-हइते (ह'ते), आमा-कर्तृक	आमादिग (-दिगेर) द्वारा, दिया, कर्तृक; आमादेर दिया, द्वारा

	एकवचन	बहुवचन
सम्प्रदान	आमाके, आमारे, आमाय, मोरे	आमादिगके, आमादेर, आमादेरे मोदेर, मोदेरे, मोदिगके
अपादान	आमा हइते, आमा ह'ते	आमादेर (आमादिग) हइते
सम्बन्ध	आमार, मोर (मझु), मम	आमादिगेर, आमादेर, मोदेर
अधिकरण	आमाय, आमाते, मोते	आमादिगेते, आमादिगेर सकले, मोदिगे

तुमि (तुम)

(स्त्रीलिंग और पुलिंग में)

	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	तुमि, तुइ	तोमरा, तोरा
कर्म	तोमाके, तोमार, तोके, तोरे, तोर	तोमादिगके, तोदेर, तोदिके
करण	तोमाद्वारा, तोमाकर्तृक, तोर द्वारा	तोमागिदेर द्वारा, तोदेर द्वारा
सम्प्रदान	(कर्म कारक के जैसा रूप होता है)	
अपादान	तोमा हइते, तोर हइते	तोमादेर हइते, तोदेर हइते
सम्बन्ध	तोमार, तोर, तव	तोमादिगेर, तोमादेर, तोदेर
अधिकरण	तोमाते, तोमाय, तोके, तोय	तोमादिगते, तोमादेर सकले, तोमादिगते

तुइ शब्द का व्यवहार तीन अर्थों में होता है :

(१) तुच्छार्थ में—निर्लज्ज तुइ क्षत्रिय समाजे (क्षत्रिय समाज में तू निर्लज्ज है)।

(२) स्नेह-वात्सल्य में—तुइ आमार नयनमणि (तू मेरी आँखों की मणि है)।

(३) देवतादि के संबोधन में—तुइ कि बुझिबि श्यामा मरमेर वेदना [श्यामा (माँ काली) तू मर्म की वेदना को क्या समझेगी]।

करण और अपादान का अलग रूप नहीं है। कर्म वा संबंध कारक के रूपों में दिया, द्वारा, हइने योग करने से इन दोनों कारकों का रूप हो जाता है।

प्रथम पुरुष के रूप :

तिनि (वे)

	चलित रूप		साधु रूप	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	तिनि	ताँरा	तिनि	ताँरा
कर्म, सम्प्रदान	ताँके	ताँदिके, ताँदेर	ताँहाके	ताँहादिगके
सम्बन्ध	ताँर	ताँदेर	ताँहार	ताँहादिगेर, ताँहादेर
अधिकरण	ताँते	—	ताँहाते	—

उपर्युक्त क्रम से अर्थात् पहली पंक्ति में कर्ता, द्वितीय में कर्म-सम्प्रदान, तृतीय में सम्बन्ध और चतुर्थ में अधिकरण कारक के अन्य सर्वनामों के रूप नीचे दिए जा रहे हैं।

यिनि (जो) का रूप तिनि की तरह ही होता है।

इनि (ये)

चलित		साधु	
एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
इनि	एँरा	इनि	इँहारा
एँके	एँदिके, एँदेर	इँहाके	इँहादिगके
एँर	एँदेर	इँहार	इँहादिगेर, इँहादेर
एँते	—	इँहाते	—

उनि (वे)

चलित		साधु	
एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
उनि	ओँर	उनि	उँहारा
ओँके	ओँदिके, ओँदेर	उँहाके	उँहादिगके
ओँर	ओँदेर	उँहार	उँहादिगेर, उँहादेर
ओँते	—	उँहाते	—

आपनि (आप)

चलित		साधु	
एकवचन	वहुवचन	एकवचन	वहुवचन
आपनि	आपनारा	आपनि	आपनारा
आपनाके	आपनादिके, -देर	आपनाके	आपनादिगके
आपनार	आपनादेर	आपनार	आपनादिगेर,-देर
आपनाते	—	आपनाते	—

से (वह)

चलित		साधु	
एकवचन	वहुवचन	एकवचन	वहुवचन
से, ता	तारा	से, ताहा	ताहारा
ताके	तादिके, तादेर	ताहाके	ताहादिगके
तार	तादेर	ताहार	ताहादिगेर, ताहादेर
ताते (ताय)	—	ताहाते (ताय)	—

ये, याहा (जो) का रूप से, ताहा जैसा होगा।

के (कौन)

चलित		साधु	
एकवचन	वहुवचन	एकवचन	वहुवचन
के, कि	कारा	के, कि	काहारा
काके	कादिके, कादेर	काहाके	काहादिगके
कार	कादेर	काहार	काहादिगेर, काहादेर
काते, किसे	—	काहाते	—

ए, इहा (यह)

चलित		साधु	
एकवचन	वहुवचन	एकवचन	वहुवचन
ए	एरा	ए, इहा	इहारा
एके	एदिके, एदेर	इहाके	इहादिगके
एर	एदेर	इहार	इहादिगेर, इहादेर
एते	—	इहाते	—

ओ, उहा (वह)

चलित		साधु	
एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
ओ	ओरा	ओ, उहा	उहारा
ओके	ओदिके, ओदेर	उहाके	उहादिगके
ओर	ओदेर	उहार	उहादिगेर, उहादेर
ओते	—	उहाते	—

ए, इहा, इनि से निकटस्थ वस्तु या व्यक्ति का निर्देश होता है और ओ, उहा, उनि से दूरस्थ वस्तु या व्यक्ति का निर्देश होता है।

'ताय' (उसको, उसमें) का प्रयोग प्रायः पद्य में होता है।

'किसे' केवल पदार्थवाचक है।

प्रथम पंक्ति की सूची

पृष्ठ-संख्या

पृष्ठ-संख्या